विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के नवीन दिशा-निर्देश के अनुरूप

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED
& REFEREED JOURNAL

# द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 74 अंक : 12

मार्च, 2025

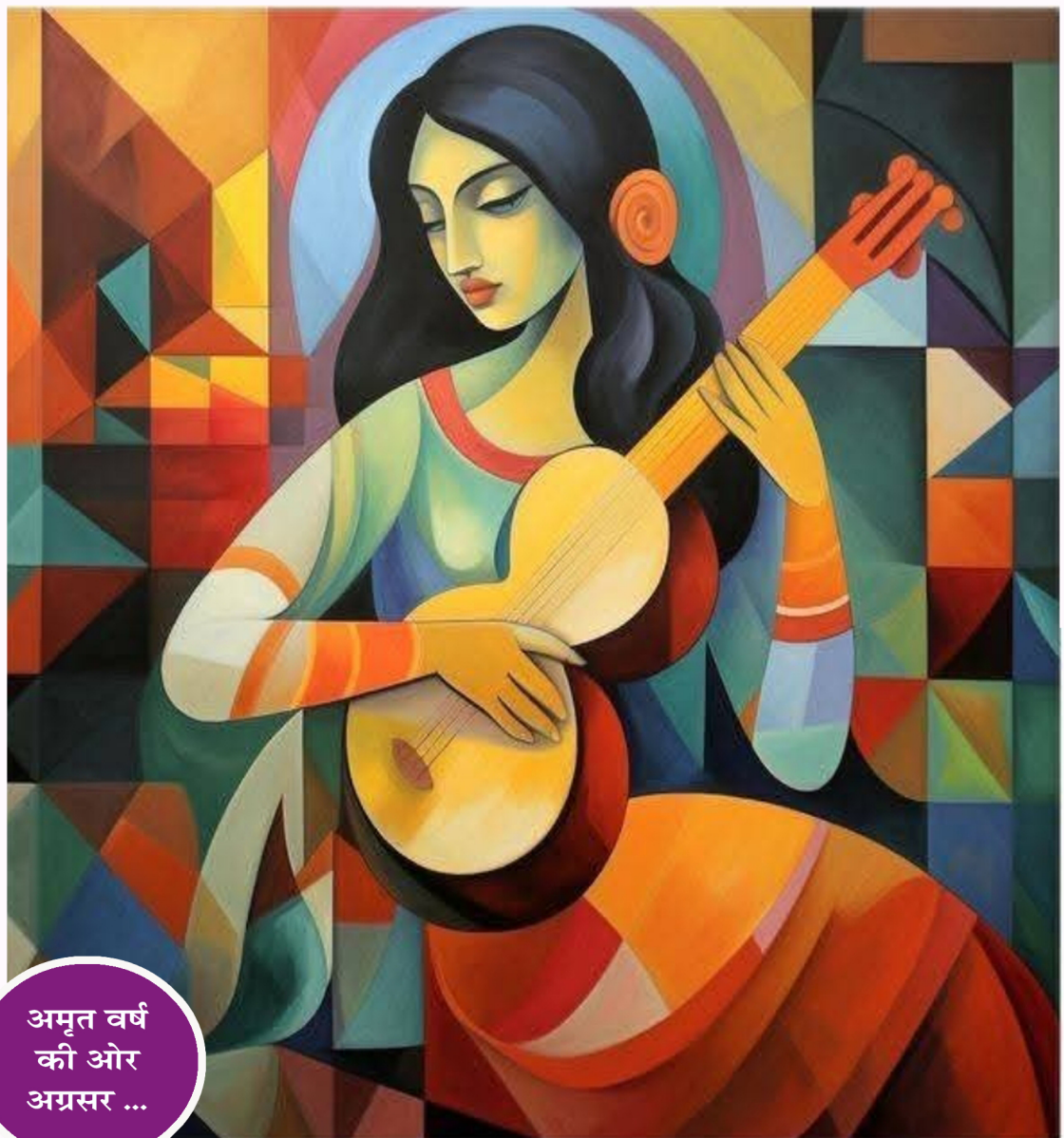

अमृत वर्ष
की ओर
अग्रसर ...

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

# द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

**PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL**
**www.arpsguwahati.com**

**वर्ष : 74** **अंक : 12** **मार्च, 2025**

*परामर्श मंडल*

**भारतभूषण महंत** (असम) • **प्रो. आर. एस. सर्राजु** (तेलंगाना) • **प्रो. किरण हाजरिका** (पंजाब)
• **प्रो. प्रदीप के शर्मा** (सिक्किम) • **प्रो. एच. एन. वाघेला** (गुजरात) • **डॉ. रीतामणि वैश्य** (असम)

*संपादक मंडल*

**प्रो. देवाशीष महापात्र** (तेजपुर) • **डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन** (गुवाहाटी) • **प्रो. दिलीप कुमार मेधी** (गुवाहाटी)
• **डॉ. अनुशब्द** (तेजपुर) • **डॉ. कुसुम कुंज मालाकार** (गुवाहाटी) • **डॉ. जुरी दत्त** (तेजपुर)
• **डॉ. अंबेश्वर गोगोई** (गुवाहाटी) • **डॉ. प्रांजल शर्मा वशिष्ठ** (गुवाहाटी) • **डॉ. स्वप्नाली दास** (गुवाहाटी)

*प्रधान संपादक*

**डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया**

*संपादक*

**प्रो. मोहन**

*कार्यकारी संपादक*

**रामनाथ प्रसाद**

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

**DWIBHASHI RASTRASEWAK :** A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature, Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

*प्रकाशक :*

**असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति**

गुवाहाटी-32

*संपादकीय कार्यालय :*

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32

फोन : 9101541395, 9101541380

ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा. लिमिटेड, इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

© सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

# विषय सूची


| क्रम | विषय | लेखक | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| | **हिंदी विभाग** | | |
| | *संपादकीय* | | *5* |
| 1. | भारतीय ज्ञान-परंपरा और भारतबोध | ✍ डॉ. अमित कुमार<br>✍ डॉ. आकांक्षा तिवारी | 6 |
| 2. | व्याधगीता : कैसे एक 'शूद्र' ने 'ब्राह्मण' को धर्म का पाठ पढ़ाया | ✍ डॉ. प्रेरणा मल्होत्रा | 13 |
| 3. | नदी संस्कृति की कथा-व्यथा : तितास एक नदी का नाम | ✍ प्रो. यशवंत सिंह | 17 |
| 4. | असमीया कविता में राष्ट्रीय चेतना : स्वाधीनता आंदोलन के विशेष संदर्भ में | ✍ डॉ. मालबिका शर्मा | 24 |
| 5. | समकालीन हिंदी कविताओं में युवा महिला सशक्तिकरण : प्रातिनिधिक कविताओं के संदर्भ में | ✍ नमिता.के.<br>✍ डां. प्रभुसेन डी | 31 |
| 6. | स्त्री-विमर्श का बृहद आख्यान : आवां | ✍ डॉ. मजीद शेख | 36 |
| 7. | लोकनाट्य कुशान पाला : एक अवलोकन | ✍ डॉ. चन्दना शर्मा | 43 |
| 8. | यशपाल के उपन्यास 'झूठा सच' में विभाजन त्रासदी | ✍ डॉ. अन्नु<br>✍ डॉ. बलजीत कौर | 47 |
| 9. | 'अविरल काव्यधारा की सरसता में बहता उपन्यास 'जिंदगीनामा' | ✍ पूनम लाकरा<br>✍ प्रो. आर.पी. गंगवार | 50 |
| 10. | चंद्रकुँवर बर्त्वाल का काव्य-दर्शन | ✍ डॉ. ममता थपलियाल | 54 |
| 11. | नारी की परिस्थितियाँ, चुनौतियाँ और प्रगति पर एक परिप्रेक्ष्य | ✍ नीलाक्षी पावे | 62 |
| 12. | डॉ. अनामिका के काव्य में आधुनिकता | ✍ नीतू यादव | 70 |
| 13. | वर्तमान संदर्भ में हिंदी भाषा की व्यापकता | ✍ सुश्री अन्नू इंदौरा | 75 |
| 14. | उदय प्रकाश की कहानियों में स्त्री संघर्ष | ✍ शिल्पा दत्त | 79 |
| 15. | भूमंडलीकरण और 21वीं सदी के हिंदी उपन्यास (स्त्री लेखन के विशेष संदर्भ में ) | ✍ नेहा साव | 83 |
| 16. | मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में नारी चेतना ('साकेत' महाकाव्य के विशेष संदर्भ में) | ✍ चारुलता देवी | 88 |
| 17. | मराठा स्वतंत्रता आंदोलन के प्रेरक के रूप में छत्रपति संभाजी : एक ऐतिहासिक अध्ययन | ✍ सूर्य प्रकाश | 93 |
| 18. | राजेश जोशी की कविताओं में अभिव्यक्त यथार्थ | ✍ मनीषा कुमारी<br>✍ डॉ. अरविद कुमार यादव | 98 |
| 19. | मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं की आत्मकथाओं में नारी चेतना | ✍ कसीरा जहाँ<br>✍ डॉ. नूरजहाँ रहमातुल्लाह | 104 |

## অসমীয়া বিভাগ


| | | | |
|---|---|---|---|
| 20. | প্রবীণা শইকীয়াৰ উপন্যাসৰ বিষয়বস্তুৰ সংবেদনশীলতা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন | ✍ ড° মৌচুমী বৰদলৈ হাজৰিকা | 109 |
| 21. | হোমেন বৰগোহাঞিৰ 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসত প্রতিফলিত বর্ণ বৈষম্য আৰু সামাজিক অৱদমনৰ ছবি ঃ এক আলোচনা | ✍ মিথুন দাস<br>✍ ড° প্রভাত ভূঞা | 114 |
| 22. | নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ "এজন বুঢ়া মানুহ" উপন্যাসত সমাজ পৰিৱর্তন | ✍ ড° জুমি বর্মন | 120 |
| 23. | শংকৰদেৱৰ ধর্মীয় দর্শন আৰু ঈশ্বৰতত্ত্ব | ✍ ড° মৰমী চৌধুৰী | 127 |
| 24. | অসমৰ মহাফেজখানাৰ ভাষা (১৮৩৬-৭৩) ঃ এক চমু অধ্যয়ন | ✍ ড° স্বপন জ্যোতি নাথ | 131 |
| 25. | পাশ্চাত্য আৰু জোনাকী যুগৰ ত্রিমূর্তিৰ কবিতাত প্রকৃতি চিত্রণ ঃ এক বিশ্লেষণ | ✍ ৰাজেন দাস | 136 |
| 26. | ঔপনিবেশিক যুগত অসমলৈ অহা পূর্ববংগীয় প্রব্রজনকাৰী সকলৰ পুনৰ সংস্থাপন ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক আলোচনা | ✍ বিনয় কুমাৰ নাথ | 148 |
| 27. | অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ অভিধানবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন | ✍ লক্ষীপ্রসাদ দিহিঙ্গীয়া | 153 |
| 28. | নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ দৃষ্টিৰে বিহুগীতৰ ভাষা ঃ এটি অধ্যয়ন | ✍ হিনাশ্রী দিহিঙীয়া | 161 |
| 29. | বয়ঃসন্ধিকাল সংগ্রামৰ কাল ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন ('বুলবুল কেন চিং' চলচ্চিত্রৰ বিশেষ উল্লিখনসহ) | ✍ বিন্দিয়া ছিদ্দিকা | 170 |
| 30. | প্রব্রজন অধ্যয়ন তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে অসমীয়া উপন্যাস ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন (চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ ৰূপাবৰিৰ পলস আৰু দীপক কুমাৰ বৰকাকতীৰ উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈৰ তুলনামূলক বিশ্লেণেৰে) | ✍ দেৱাশিস বুঢ়াগোহাঁই | 175 |
| 31. | মায়ঙৰ তন্ত্র-মন্ত্র সাধনা ঃ এক ক্ষেত্রভিত্তিক অধ্যয়ন | ✍ আইমী বৰা | 184 |
| 32. | নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ মৃত্যুঞ্জয় উপন্যাসৰ চৰিত্র ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন | ✍ স্বাগতা মহন্ত | 189 |
| 33. | মহাপুৰুষ শংকৰদেৱৰ সৃষ্টিত বিজ্ঞানমনস্কতা (নামঘৰৰ বিশেষ উল্লিখনেৰে) | ✍ মঞ্জু দাস | 196 |
| 34. | অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটক ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন | ✍ উপাসনা বৰা | 200 |


❑ ❑ ❑

संपादकीय

# तुलनात्मक साहित्य और भारत

भारत एक विविधताओं से भरा देश है जहाँ भाषाई, सांस्कृतिक, साहित्यिक और सामाजिक बहुलता का अनूठा संगम देखने को मिलता है। भारतीय उपमहाद्वीप की यह बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक संरचना न केवल इसकी पहचान है, बल्कि इसकी साहित्यिक परंपराओं का भी मूल आधार है। ऐसी विविधताओं के मध्य समरसता की खोज करना, तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाकर साहित्य का अध्ययन करना न केवल समीचीन है, बल्कि आवश्यक भी है। इसी संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य की संकल्पना भारत के लिए विशेष महत्व रखती है।

तुलनात्मक साहित्य एक ऐसी विधा है जिसमें विभिन्न भाषाओं, साहित्यिक परंपराओं, संस्कृति और ऐतिहासिक संदर्भों में रचे गए साहित्य का परस्पर अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन केवल साहित्यिक पाठों के तुलनात्मक विश्लेषण तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह साहित्य और संस्कृति, इतिहास, समाज, विचारधाराओं और भाषिक प्रवृत्तियों के अंतर्संबंधों को भी उजागर करता है।

पश्चिमी विश्व में तुलनात्मक साहित्य का जन्म 19वीं शताब्दी में हुआ और यह विधा 20वीं शताब्दी में जाकर एक शास्त्र के रूप में स्थापित हुई। भारत में भी इसकी प्रासंगिकता अत्यधिक है, परंतु संस्थागत रूप में इसका विकास अपेक्षित स्तर तक नहीं हुआ है।

भारत में 22 संविधान मान्य भाषाओं सहित 1652 से अधिक मातृभाषाएँ बोली जाती हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी साहित्यिक परंपरा, इतिहास और सांस्कृतिक चेतना है। हिंदी, उर्दू, असमिया, बोडो, बंगला, तमिल, मराठी, मलयालम, तेलुगु, ओड़िया, कन्नड़ जैसी भाषाओं में अत्यंत समृद्ध साहित्य रचा गया है। इन सभी साहित्यिक परंपराओं में एक ओर जहाँ विशिष्टता है, वहीं दूसरी ओर गहराई से देखने पर इनमें एक अद्‌भुत अंतर्संबंध भी मिलता है। उदाहरण के लिए, भक्ति आंदोलन का प्रभाव उत्तर और दक्षिण भारत के लगभग सभी साहित्यिक भाषाओं पर पड़ा। तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई, कबीर, शंकरदेव, माधवदेव, नामदेव, चैतन्य, तुकाराम, अक्कमहादेवी और अंडाल जैसे संतों की वाणी ने क्षेत्रीय सीमाओं को पार कर एक साझा साहित्यिक चेतना को जन्म दिया।

यदि इन परंपराओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए, तो भारतीय साहित्य की एक व्यापक और एकीकृत समझ संभव हो सकती है। हालांकि वर्तमान में अनेक विश्वविद्यालयों में तुलनात्मक अध्ययन पर व्यापक शोध कार्य हो रहे हैं। विभिन्न साहित्यिक धारणाओं और कृतियों के अंतर्संबंधों को उजागर करना ही तुलनात्मक साहित्य का लक्ष्य है।

भारतीय भाषाओं का साहित्यिक विकास आपसी संपर्क, अनुवाद, पुनर्रचना और सांस्कृतिक आदान-प्रदान से प्रभावित रहा है। संस्कृत, फारसी, पाली, प्राकृत और अंग्रेजी जैसी भाषाएँ भारतीय भाषाओं के साहित्यिक विकास में निर्णायक भूमिका निभा चुकी हैं। उदाहरणस्वरूप, बंगला के रवींद्रनाथ ठाकुर और हिंदी के जयशंकर प्रसाद के नाटकों में भारतीय परंपरा के साथ-साथ पाश्चात्य रंगमंच की तकनीकों का भी प्रभाव देखा जा सकता है। मलयालम साहित्य में वल्लथोल नारायण मेनन के काव्य और हिंदी में मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं में राष्ट्रवादी चेतना की समान धारा मिलती है।

यदि इस तरह की समानताओं को व्यवस्थित रूप से तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए, तो न केवल भारतीय साहित्य के विविध पक्षों की समग्रता स्पष्ट होती है, बल्कि सांस्कृतिक एकता की धारणा भी प्रबल होती है। ❑

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विरासत

# भारतीय ज्ञान-परंपरा और भारतबोध

**डॉ. अमित कुमार**

असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग
आर्य कन्या डिग्री कॉलेज
(संघटक-इलाहाबाद विश्वविद्यालय)
प्रयागराज-211003 उत्तर प्रदेश
9451053821
dramitau@gmail.com

**डॉ. आकांक्षा तिवारी**

फ्लैट न. 10, साई विहार अपार्टमेंट
चर्च लेन, प्रयागराज-211002 (उत्तरप्रदेश)
7905299193
drakankshamishrav@gmail.com

**शोध-सार :**

भारतीय ज्ञान-परंपरा और भारतबोध एक ऐसी धरोहर है, जो न केवल भारतीय समाज और संस्कृति की जड़ों को महत्वपूर्ण बनाती है, अपितु वैश्विक स्तर पर भी एक मार्गदर्शक सिद्धांत प्रस्तुत करती है। भारतीय ज्ञान परंपरा को हम भारतीय जीवन दृष्टि का व्यावहारिक स्वरूप भी कह सकते हैं। भारतबोध के माध्यम से भारतीयता के गहन दर्शन और जीवन के मूल्यों को अवलोकित किया जा सकता है, जो कि भारत की प्राचीन और समृद्ध ज्ञान परंपरा से ही अभिसिंचित होता है। भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध विरासत है, जो दर्शन, विज्ञान, गणित, कला, संस्कृति, ज्योतिष, धातु विज्ञान और आध्यात्मिकता जैसे विषयों का अद्भुत सम्मिश्रण है। वेदों, उपनिषदों और इतिहास जैसे ग्रंथों में निहित प्राचीन ज्ञान से आच्छादित भारतीय ज्ञान प्रणाली अतीत और वर्तमान के बीच एक सेतु का काम करती है, जो भारत बोध की अवधारणा को उजागर करती है और भारत की राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक पहचान के बारे में एक जागरूक समझ बनाती है। इस लेख का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध के बीच जटिल संबंधों का पता लगाना है, भारतीय ज्ञान परंपरा के ऐतिहासिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक आयाम भारत बोध को न केवल एक भौगोलिक या राजनीतिक पहचान के रूप में प्रस्तुत करता है, बल्कि एक सभ्यतागत और दार्शनिक चेतना के रूप में भी प्रस्तुत करता है, जो सहस्राब्दियों में विकसित हुई है। इस लेख के माध्यम से भारतीय ज्ञान परंपरा की विशेषताओं और भारत बोध के विचार को समझाना है, जो कि भारतीय चेतना, संस्कृति व सभ्यता की विशिष्टता को प्रतिपादित करता है।

**बीज शब्द :**

भारत, ज्ञान-परंपरा, भारतबोध, भारतीयता, आध्यात्मिकता, दर्शन, चेतना, परंपरा, साहित्य, संस्कृति।

**विश्लेषण :**

भारत विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यताओं में से एक है और इसकी ज्ञान परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल भौतिक विज्ञान और दर्शनशास्त्र के क्षेत्रों में अद्वितीय है, बल्कि इसमें सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विचारों का गहन चिंतन भी शामिल है। भारतीय ज्ञान परंपरा वेदों, उपनिषदों, पुराणों,

धर्मशास्त्रों और दार्शनिक ग्रंथों पर आधारित है। यह परंपरा केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि वैज्ञानिक, गणितीय और औषधीय दृष्टिकोण से भी समृद्ध है। भारतीय ज्ञान परंपरा के विशद विवेचन में लोक कल्याण और सनातन परंपरा की भावना दृष्टिगत होती है। सनातन परंपरा में लोक कल्याण और विश्व प्राणी मात्र की सुख प्राप्ति (लौकिक और अलौकिक सुख) का भाव निहित है। इसे ज्ञान की धारा में नवोन्मेष कर ज्ञान के मूल तक पहुँचना हमारा दायित्व बनता है। विश्व का संपूर्ण साहित्य इतिहास की घटनाओं के लेखा-जोखा मात्र से समेकित है, जबकि इसके विपरीत भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान के मूल स्वरूप की खोज हमेशा एक केंद्र बिंदु रही है। भारतीय ज्ञान प्रणाली में जगत के उत्तम विचारों को परिष्कृत कर ग्रहण करने की परंपरा सतत चली आ रही है और साथ ही नवीन ज्ञान का सृजन कर उसे एक सनातन स्वरूप प्रदान किया गया है।

ऋग्वेद में ऋषि यह कामना करते हैं कि विश्व के सभी उत्तम और कल्याणकारी विचार हमारी तरफ आएँ। 'आ नो भद्रा: क्रतवो यन्तु विश्वत: ' भारतीयों और विश्वजन के लिए आचार-आध्यात्म और संपूर्ण साहित्य का आधार भारतीय ज्ञान प्रणाली ही है। वेद इसके मूल हैं। भारतीय दर्शन एवं धर्म का मूल वेद ही है। विश्व ज्ञान प्रणाली की समस्त जानकारी वैदिक साहित्य में विद्यमान है। इसलिए इसे अनादि और अपौरुषेय कहा गया है। आर्यों की सभ्यता और संस्कृति वैदिक साहित्य के आधार पर जीवंत बनी हुई है।

पाठक (2024) लिखते हैं कि भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान क्या है? इस संदर्भ में इसके अनेक उत्तर प्राप्त हो सकते हैं- यथा ज्ञान सूचना है, ज्ञान तर्क है, ज्ञान अनुभव है, ज्ञान परिपक्वता है, ज्ञान एक साधन है, ज्ञान एक विधि है, ज्ञान बुद्धिमता है, ज्ञान विचारों की आधारशिला है, ज्ञान सत्य तक पहुँचाने का साधन है, ज्ञान एक सोच है, ज्ञान अंत: प्रज्ञा है और ज्ञान शक्ति है। भारतीय दर्शन के अनुसार ज्ञान मानव जीवन का सार है। भारत में ज्ञान की यात्रा वैदिक काल, ब्राह्मण काल, आरण्यक काल, बौद्ध काल, जैन काल, सूत्र काल आदि तक निर्बाध रूप से रही है। भारतीय ज्ञान प्रणाली से ज्ञात होता है कि समस्त ज्ञान मानव के अंत:करण में अवस्थित है। आत्मा ज्ञान स्वरूप है, ज्ञान आत्मा का प्रकाश है। मानव प्राणी को बाहर से ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। उसके स्व की आत्मा के अनावरण से ही ज्ञान का प्रकटीकरण होता है। ज्ञान मानव मात्र में स्वभाव सिद्ध है। समस्त ज्ञान चाहे वह भौतिक हो अथवा आध्यात्मिक, मनुष्य की आत्मा में ज्ञान प्रक्रिया को समझने के लिए अंत:करण के स्वरूप और उसकी प्रकृति को समझना आवश्यक है। भारतीय ज्ञान प्रणाली की विषय-वस्तु बहुत ही वृहद है। इसका अंत नहीं है, असीम है अतुलनीय है, महनीय है और सर्वोत्कृष्ट है। अनेक कालखंडों में अनेक ऋषियों, मनीषियों, संतों, गुरुओं, योगियों, तपस्वियों, चिंतकों, दार्शनिकों, साहित्यकारों, शिक्षाविदों, वैज्ञानिकों, और कलाकारों ने अपने ज्ञान और अनुभव से विश्व को ज्ञान के प्रकाश से अभिसिंचित किया और विश्व को अपना परिवार स्वीकार करते हुए 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को चरितार्थ किया।

वैदिक वाङ्मय (वेद, उपनिषद, पुराण, दर्शन, विज्ञान, कला) भाषा-लिपि का विकास, अंक विद्या, गणित, रेखा गणित, वैदिक गणित, काल गणना, भारतीय वैदिक शिक्षा, खगोल विज्ञान, कला, साहित्य, प्राचीन विज्ञान, प्रौद्योगिकी, लोक परंपराएँ, पर्यावरण संरक्षण, स्वास्थ्य की भारतीय संचेतना- आयुर्वेद, अष्टांग योग, कृषि-उद्योग, अनुशासन-संस्कार, योग विज्ञान, यज्ञ विज्ञान, ग्रामोद्योग, व्यावसायिक शिक्षा व 64 कलाएँ आदि हिस्सा रही हैं। चार वेद, छह वेदांग, छह शास्त्र, 18 पुराण, 60 नीतियाँ, 108 उपनिषद, षडदर्शन, महाकाव्य, काव्य, नाट्यशास्त्र, शिल्पशास्त्र, वास्तुशास्त्र, युद्ध प्रणाली आदि इस ज्ञान परंपरा के आदि स्रोत हैं। धातु विज्ञान, नौवहन, सौर ऊर्जा, नौका विज्ञान, आयुध निर्माण, रत्न विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, वायुयान, मौसम विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, संचार विज्ञान, जल संरक्षण, जंतु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, शल्य चिकित्सा, अर्थ विज्ञान, यांत्रिकी, वाणिज्य, कृषि पशुपालन, रथयान, नक्काशी, वास्तुकला, विमान शास्त्र व आयुर्वेद आदि अनेक विषयों की शिक्षा गुरुकुलों में दी जाती थी। नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला, उदंतपुरी, जगत्दला, सोमापुरी आदि विश्वविद्यालयों में देश के ही नहीं, अपितु विदेश से भी हजारों की संख्या में विद्यार्थी

ज्ञान प्राप्त करते थे। भारतीय ज्ञान परंपरा में विद्या को पवित्र माना गया है। श्रीमद्भागवत गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि 'न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमहि विद्यते।' ज्ञान देना पवित्र कार्य है। ज्ञान देने का कार्य गुरु और आचार्य करते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में गुरु और आचार्य की श्रेष्ठ परंपरा रही है, जिन्होंने विश्व को ज्ञान के प्रकाश रूपी पथ पर अग्रसर किया। भारतीय चिंतन के आध्यात्मिक होने के कारण शिक्षा में पाँच पंचकोशों के विकास को आवश्यक माना गया है। अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश तथा आनंदमय कोश है, जिन्हें पंचमय कोश माना गया है। शिक्षा द्वारा इन्हीं पंचकोशों का विकास लक्ष्य रहा है। संपूर्ण विश्व को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में योगदान देने वाले मेधातिथि, भास्कराचार्य, चाणक्य, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, बोधायन, महर्षि कणाद, महर्षि भारद्वाज, चरक, सुश्रुत, नागार्जुन, वराहमिहिर, महर्षि अगस्त्य, धनवंतरी, महर्षि कपिल, महर्षि पतंजलि, जैसे विद्वान मनीषियों का अवतरण इसी भारतीय ज्ञान परंपरा से ही हुआ है। विश्व को ज्ञान देने वाला यह राष्ट्र पूर्व में भी था, वर्तमान में है, और भविष्य में भी रहेगा तथा सदैव भारतीय ज्ञान परंपरा के पताका को फहराता रहेगा। यहाँ यह भी उल्लिखित करना उचित है कि भारतीय ज्ञान परंपरा पर आधारित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को हमारे देश द्वारा स्वीकार किया गया है। इसका क्रियान्वयन भी प्रारंभ हो गया है। यह नीति भारतीयता को बढ़ावा देती है। विद्यार्थियों का समग्र विकास ही इसका लक्ष्य है।

श्रीवास्तव (2024) के अनुसार भारतीय ज्ञान परंपरा में एक नैरंतर्य है, एक सातत्य है। इसी कारण यह परंपरा कहलाने की अधिकारिणी है। वर्तमान में भारतीय ज्ञान परंपरा को पाश्चात्य दृष्टिकोण के प्रभाव के चलते विभिन्न तथाकथित विद्वानों द्वारा इसे एक मत के रूप में या मतवाद के रूप में लेने का भ्रम किया जाता है, जबकि यह महज भ्रम है। मतवाद और परंपरा में मूलभूत तौर पर अंतर होता है। मतवाद और परंपरा की प्रकृति में और परिवहन में बहुत बड़ा फर्क है। हालाँकि वामपंथी विचारधारा से पोषित विद्वानों के द्वारा ऐसा भ्रम अधिकांशत: किया जाता है। पश्चिमी मतवाद सातत्य के मतवाद नहीं हैं। यदि मैं बहुत सम्मान भी करूँ तो कहूँगा कि वहाँ क्वांटम जंप या क्वांटम लीप है। एक फ्लैश में रूपांतरण है। परंपरा होने के लिए कालातिक्रमण करना होता है। परंपरा होने के लिए महाकाल या महाकाली की स्पिरिट चाहिए तथा परंपरा होने के लिए सनातन की स्पिरिट चाहिए। सनातन की स्पिरिट व्यक्ति विशिष्टता से नहीं बनी है। वह तो अपने व्यक्ति का इस हद तक विलय कर देने से बनी है कि हमें आज तक कई ग्रंथों के मूल लेखक तक का पता तक नहीं है। स्वयं सनातन का प्रवर्तक कौन है, हमें यह भी मालूम नहीं है। लिबरलिज्म के प्रवर्तक जॉन स्टुअर्ट मिल को हम जानते हैं, उपयोगितावाद के प्रवर्तक जेरेमी बेंथम को हम जानते हैं। फॉसिज्म के प्रवर्तक मुसोलिनी को हम जानते हैं। नाजीवाद के प्रवर्तक हिटलर को हम जानते हैं। अस्तित्ववाद के प्रवर्तक ज्याँ पॉल सार्त्र को हम जानते हैं। विखंडनवाद (डिकॉन्सट्रक्शनिज्म) के प्रवर्तक देरिदा को हम जानते हैं। स्ट्रक्चरलिज्म के प्रवर्तक क्लाड लेवी स्ट्रास को हम जानते हैं, पर सनातन का आदि पुरुष या प्रवर्तक कौन है? यह आज तक स्पष्ट नहीं हो पाया है। सनातन वह है, जो देश और काल से निरपेक्ष होता है। वही परंपरा हो सकता है और धर्म भी वही हो सकता है। इसलिए भारतीय ज्ञान परंपरा ही परंपरा है। शेष सभी मतवाद हैं और खेल देखिए कि उन्होंने हमें मतवाद बनाना चाहा, पेउ बनाने का प्रयास किया। हमें हिंदुइज्म की संज्ञा दी, मानो हम मार्किसज्म या लिबरलिज्म की तरह के कोई मतवाद हों। उस परंपरा को पेउ में अपघटित करने की कोशिश की गई, जो 'वादे वादे जायते तत्वबोध:' का विवेक रखती थी। स्वयं को तो वह क्रिश्चियनिटी कह रहे थे और स्वयं को तो इस्लाम कह रहे थे, पर हमें हिंदुइज्म कह रहे थे। सच तो यह है कि न्यायसूत्र में वाद का उपयोग विवाद के एक पक्ष के रूप में हुआ और सांख्य सूत्र में वाद शब्द का उपयोग दार्शनिक सिद्धांत या वितण्डा के साथ जुड़कर हुआ। मतवाद का मतलब ही सोच की एक विशिष्ट दिशा होती है, पर हमारे यहाँ तो तैंतीस कोटि देवी-देवता हैं। एक-एक के कभी अष्टोत्तरशतनाम तो कभी सहस्त्रनाम हमारे ग्रंथों में अध्ययन किया जा सकता है। हमारी ज्ञान परंपरा में जो समग्रता है, जो कंप्रिहेंसिवनेस है, वह मतवादों में हो ही नहीं सकती।

मतवाद प्राय: दूसरों के प्रति, उनके विरुद्ध एक प्रतिक्रिया होते हैं और उस कारण वे अनचाहे भी उन्हीं के द्वारा नियंत्रित होते हैं, जिनके खिलाफ वे बने हैं। ज्ञान परंपरा प्रतिक्रियावादी नहीं होती। वह अपनी प्रकृति में, अपने एसेंस में ही सदैव रहती है। पश्चिमी मतवाद गहरे तात्विक अर्थों में प्रतिक्रियावादी हैं, लेकिन इसके बावजूद वामपंथी हमारे परंपरा-प्रेमियों को रिएक्शनरी अर्थात प्रतिक्रियावादी कहते ही नहीं थकते। मतवाद, विरोधी विचारधारा को सहन नहीं कर पाता, वे परंपरा को भी मतवाद की तरह ही देखने की भूल करते हैं, जबकि परंपरा तो एक नदी है, जो लगातार बहती हुई चली जा रही है । इसलिए भारतीय ज्ञान परंपरा मतवादियों को खासकर पश्चिमी मतवादियों को समझ में नहीं आती। वह उनके समझ से परे है (राष्ट्र धर्म, अक्टूबर 2024)।

**भारत बोध :** 'भारत बोध' एक व्यापक अवधारणा है, जो भारतीय सभ्यता, संस्कृति, विचारधारा और जीवन मूल्यों को समझने और अनुभव करने का प्रयास है। यह न केवल भौगोलिक दृष्टि से भारत को समझता है, बल्कि भारतीयता के सांस्कृतिक और दार्शनिक मूल्यों की भी विवेचना करता है। भारत बोध का आधार निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है :-

**एकता में अनेकता** - भारतीय समाज में विभिन्न भाषाएँ, धर्म, जातियाँ, और संस्कृतियाँ होने के बावजूद एक गहरी सांस्कृतिक एकता दिखाई देती है।

**धर्म और नैतिकता** - भारतीय दृष्टिकोण में धर्म का अर्थ केवल धार्मिक आचरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह नैतिकता, सत्य, अहिंसा और सामाजिक जिम्मेदारी को भी समाहित करता है।

**अध्यात्मवाद** - भारतीय ज्ञान परंपरा में जीवन का अंतिम उद्देश्य आध्यात्मिक उन्नति और आत्मा की मुक्ति मानी जाती है।

**समन्वयवाद** - भारतीय संस्कृति और दर्शन में विभिन्न विरोधाभासी विचारों का समन्वय होता है। इसमें द्वैत और अद्वैत, कर्म और भक्ति, सांख्य और योग जैसे विचारों का संतुलन शामिल है।

**भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध का आपसी संबंध :** भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध एक-दूसरे के पूरक हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा का अध्ययन करने पर हमें यह स्पष्ट होता है कि भारत बोध का आधार उसकी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर और दर्शन में निहित है। उदाहरणत :-

**वेदांत और भारत बोध** - वेदांत दर्शन के अनुसार, सारा विश्व एक आत्मा से जुड़ा हुआ है, जो भारतीयों के 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धांत को स्पष्ट करता है। यह विचार भारत बोध के केंद्रीय तत्वों में से एक है।

**धर्म और समाज** - भारतीय धर्मशास्त्रों में वर्णित सामाजिक और नैतिक मूल्यों ने भारतीय समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत बोध इसी सांस्कृतिक, सामाजिक और नैतिक समझ का प्रतिफल है।

**आध्यात्मिकता और भारत बोध** - भारतीय ज्ञान परंपरा में भौतिक और आध्यात्मिक जीवन को संतुलित रखने की बात कही गई है, जिससे भारत बोध में गहरी आध्यात्मिकता का समावेश होता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में भारत-बोध की अवधारणा अंतर्निहित है - यह भारत के अद्वितीय सभ्यतागत लोकाचार और पहचान के बारे में जागरूकता प्रदान करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत-बोध के बीच का अंतर्संबंध उस तरीके को दर्शाता है, जिस तरह से प्राचीन भारतीय विद्वान, ऋषि और विचारक भारत को केवल एक भौतिक क्षेत्र के रूप में नहीं, बल्कि अपनी बौद्धिक और आध्यात्मिक विरासत की विशेषता वाले एक जीवंत इकाई के रूप में देखते थे।

**समकालीन संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध :** आज के वैश्विकरण और तकनीकी युग में भी भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध की प्रासंगिकता बनी हुई है। चाहे वह योग और ध्यान की महत्ता हो, या भारतीय सामाजिक और नैतिक मूल्य हों, इनका प्रभाव विश्वभर में फैल रहा है। पश्चिमी देशों में भी भारतीय ज्ञान परंपरा के अध्ययन में रुचि बढ़ी है, विशेष तौर पर आध्यात्मिकता और योग के क्षेत्रों में काफी उन्नति देखी जा सकती है। वृहदारण्यक उपनिषद का एक श्लोक है-

सर्वे भवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया:।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद्दु:खभाग्भवेत्।।

(सभी प्राणी सुखी हों, सभी रोग से मुक्त हों। सभी शुभ को देखें, तथा किसी को किसी भी तरह से कष्ट न हो।)

यह श्लोक भारतीय विचार के सार को समाहित करता है - जो व्यक्तिगत कल्याण से आगे बढ़कर सार्वभौमिक कल्याण को अपनाता है। यह भारत-बोध को परिभाषित करने वाले व्यापक विश्व दृष्टिकोण को दर्शाता है, जो सभी जीवन रूपों की परस्पर संबद्धता पर जोर देता है तथा भारतीय ज्ञान प्रणाली की समग्र और समावेशी प्रकृति को उजागर करता है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली की जड़ें वैदिक परंपरा से आती हैं। वेद भारतीय विचार और ज्ञान की नींव हैं। ये ग्रंथ केवल धार्मिक ग्रंथ ही नहीं हैं, बल्कि विज्ञान, ब्रह्मांड विज्ञान और नैतिकता पर ज्ञान के भंडार भी हैं। उदाहरण के लिए, ऋग्वेद में ऐसे भजन हैं, जो गहन ब्रह्मांड संबंधी अंतर्दृष्टि को दर्शाते हैं, जबकि अथर्ववेद में चिकित्सा और उपचार पर व्यापक जानकारी शामिल है। भारत-बोध का सबसे अच्छा निरूपण ऋग्वेद के इस श्लोक से समझा जा सकता है :-

भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम देवा: भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा:।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनुभिर्व्यशेम देवहितं यदायु:।।

(हे देवो, हम अपने कानों से शुभ सुनें, अपनी आँखों से शुभ देखें और स्थिर अंगों से स्तुति करें। हम अपना पूरा जीवन ईश्वर की सेवा में जिएँ।)

यह श्लोक जीवन के वैदिक दृष्टिकोण को आध्यात्मिक उत्थान, ज्ञान और सेवा की ओर एक यात्रा के रूप में दर्शाता है। वैदिक ग्रंथ भारत को न केवल कर्मकांडों की भूमि के रूप में, बल्कि सत्य और परम वास्तविकता (ब्रह्म) की खोज के लिए दार्शनिक केंद्र के रूप में भी स्थापित करते हैं। वैदिक विचार जीवन को एक एकीकृत समग्रता के रूप में देखता है, जहाँ व्यक्ति, समाज, प्रकृति और ब्रह्मांड एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं।

ज्ञान की खोज उपनिषद, जिन्हें अक्सर वेदों के अंत (वेदांत) के रूप में जाना जाता है, ये भारतीय ज्ञान प्रणाली को और समृद्ध करते हैं। आत्मान (स्वयं) और ब्रह्म (परम सत्य) जैसी अवधारणाएँ उपनिषद दर्शन की आधारशिला के रूप में काम करती हैं। ईशा उपनिषद में एक श्लोक है, जो भारत की गहरी आध्यात्मिक और दार्शनिक विरासत का उदाहरण देता है :-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध: कस्यस्विद्धनम्।।

(यह सब इस परिवर्तनशील ब्रह्मांड में जो कुछ भी विद्यमान है-उसे भगवान द्वारा आच्छादित किया जाना चाहिए। त्याग के माध्यम से अपनी रक्षा करो और किसी के धन का लालच मत करो।)

यह श्लोक भारतीय दर्शन के मूल मूल्यों, जैसे त्याग, अनासक्ति और संतोष, जो भारत-बोध के भारतीय लोकाचार का केंद्र हैं, उस भावना को स्पष्ट करता है। यह प्राचीन भारतीय ऋषियों के विश्व दृष्टिकोण को प्रकट करता है, जिन्होंने भारत को आध्यात्मिक साधकों और बुद्धिमान पुरुषों की भूमि के रूप में देखा था, जो सत्य, नैतिकता और ज्ञान की खोज के लिए समर्पित थे।

**ऐतिहासिक और पौराणिक अंतर्दृष्टि :** रामायण व महाभारत और पुराण न केवल ऐतिहासिक और पौराणिक अभिलेखों के रूप में काम करते हैं, बल्कि भारत की सांस्कृतिक चेतना को आकार देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये ग्रंथ राम, सीता, कृष्ण और अर्जुन जैसे महान व्यक्तित्वों के जीवन की कहानियों के माध्यम से नैतिक और आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। वे धार्मिक जीवन जीने का एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जो धर्म की भारतीय समझ का केंद्र है, वह नैतिक व्यवस्था जो ब्रह्मांड को बनाए रखती है। रामायण में वर्णित शासन के स्वर्णिम युग, राम राज्य की अवधारणा इस बात का एक प्रमुख उदाहरण है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली किस तरह भारत-बोध से जुड़ी हुई है। राम राज्य एक आदर्श राज्य का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ शासक और नागरिक धर्म के सत्य और न्याय मानक सिद्धांतों से बंधे होते हैं। यह एक न्यायपूर्ण और सामंजस्यपूर्ण समाज के लिए भारतीय आकांक्षा को दर्शाता है, जहाँ सभी नागरिकों की भलाई को प्राथमिकता दी जाती है। एक ऐसा दृष्टिकोण, जिसने सहस्राब्दियों से भारत की राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना को आकार दिया है।

रामो विग्रहवान धर्मः सत्यसन्धः पराक्रमः।
राजा सर्वस्य लोकस्य देवानां इव वासवः।।

(राम धर्म के अवतार हैं, सत्य में दृढ़ हैं, और वीर हैं। वे सभी लोगों के राजा हैं, जैसे देवताओं में इंद्र हैं।)

रामायण का यह श्लोक इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे भगवान राम, एक नैतिक धार्मिकता का आदर्श, न केवल शक्ति से, बल्कि बुद्धि और धर्म के पालन से शासन करते हैं। यह भारत-बोध के केंद्रीय विचार को पुष्ट करता है, जहाँ शासकों और समाज से सत्य, न्याय और नैतिक जीवन के मूल्यों को बनाए रखने की अपेक्षा की जाती है।

**भारत-बोध में सभ्यतागत एकता :** भारत-बोध की अवधारणा में भारत की सभ्यतागत एकता निहित है, जो समय के साथ राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के बावजूद हजारों सालों से कायम है। एक एकीकृत सांस्कृतिक और आध्यात्मिक इकाई के रूप में भारत का विचार भौगोलिक और राजनीतिक सीमाओं से परे है, जो विभिन्न परंपराओं, भाषाओं और धर्मों को गले लगाता है। त्योहारों, अनुष्ठानों और प्रथाओं के माध्यम से मनाई जाने वाली 'विविधता में एकता' भारत-बोध की रीढ़ है।

इस समझ को महोपनिषद के श्लोक में देखा जा सकता है :-

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

(यह मेरा है, वह किसी और का है, यह संकीर्ण सोच वालों की सोच है। इस तरह की सोच छोटे चित्त वाले लोग करते हैं, बड़े दिल वालों के लिए तो पूरा संसार ही परिवार है।)

यह संस्कृत श्लोक भारतीय चिंतन की समावेशी प्रकृति को दर्शाता है, जिसमें व्यक्ति और समाज के संकीर्ण भेदों को भुला दिया गया है। और सामूहिक पहचान इस अहसास में विलीन हो जाती है कि दुनिया एक परिवार है (वसुधैव कुटुम्बकम्)। ऐसे आदर्श एकता की चेतना को बढ़ावा देते हैं, जो भारत की पहचान का केंद्र रही है और जिसने सदियों से इसके विश्व दृष्टिकोण को आकार दिया है।

**धर्म और न्याय का दर्शन :** भारतीय ज्ञान परंपरा का धर्म (धार्मिकता) पर जोर भारत-बोध का नैतिक आधार है। धर्म केवल व्यक्तिगत व्यवहार को ही नियंत्रित नहीं करता, बल्कि प्राचीन भारतीय समाज की संपूर्ण सामाजिक-राजनीतिक संरचना को नियंत्रित करता है। नैतिकता की यह प्रणाली आध्यात्मिक या धार्मिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं थी, बल्कि राज्य के शासन तक विस्तारित थी, जैसा कि मनुस्मृति और अर्थशास्त्र जैसे प्राचीन ग्रंथों में व्यक्त किया गया है। महाभारत में, हमें निम्नलिखित श्लोक मिलता है जो धर्म के सार को समाहित करता है :-

धर्मेण हीनः पशुभिः समानः।

(धर्म के बिना मनुष्य पशु के समान है।)

यह शक्तिशाली कथन सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में नैतिक आचरण के महत्व पर जोर देता है। इस प्रकार भारत-बोध की अवधारणा इस समझ से उत्पन्न होती है कि भारत की भूमि केवल एक राजनीतिक इकाई नहीं है, बल्कि धर्म की भूमि है, जहाँ न्याय, नैतिकता और धार्मिकता सर्वोपरि हैं।

**आध्यात्मिक ज्ञान और योगिक परंपराएँ :** योग और आध्यात्मिक प्रथाओं के रूप में दुनिया को भारत का योगदान ज्ञान और ज्ञान के केंद्र के रूप में इसकी वैश्विक पहचान को और मजबूत करता है। भगवद्गीता की शिक्षाएँ, जो भगवान कृष्ण और अर्जुन के बीच एक वार्तालाप है, जीवन, कर्तव्य और आध्यात्मिक मुक्ति के मार्ग पर कालातीत मार्गदर्शन प्रदान करती है। श्रीमद्भगवद्गीता का प्रसिद्ध श्लोक है :-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्तवकर्मिणी।।

(आपको अपने निर्धारित कर्तव्यों को करने का अधिकार है, लेकिन आप अपने कर्मों के फलों के हकदार नहीं हैं। कभी भी अपने आप को अपने कार्यों के परिणामों का कारण न समझें, न ही निष्क्रियता से आसक्त हों।)

यह श्लोक कर्म योग के सार को दर्शाता है, जो निःस्वार्थ कर्म का मार्ग है, जो भारतीय ज्ञान प्रणाली में एक मौलिक अवधारणा है। यह कर्तव्य और जिम्मेदारी

के भारतीय लोकाचार को दर्शाता है, जो व्यक्तियों और समुदायों की चेतना को व्यक्तिगत लाभ के बजाय अधिक अच्छे के लिए कार्य करने के लिए आकार देता है। यह विश्वदृष्टि भारत-बोध का अभिन्न अंग है, जहाँ व्यक्तियों को एक बड़े ब्रह्मांडीय क्रम के हिस्से के रूप में देखा जाता है, जो समाज और बड़े पैमाने पर दुनिया के कल्याण में योगदान देता है।

**निष्कर्ष :** भारतीय ज्ञान परंपरा वह है, जिसमें विविध विषयों के ज्ञान का विशाल भंडार समाहित है। इस परंपरा ने भारत-बोध को आकार देने में एक केंद्रीय भूमिका निभाई है। एक सभ्यता के रूप में भारत की अनूठी पहचान की चेतना को जीवंत करती है। वेदों, उपनिषदों, इतिहास और पुराणों में निहित आध्यात्मिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक अंतर्दृष्टि आधुनिक काल के साथ भी गूँजती रहती है, जो ब्रह्मांड के साथ सद्भाव में जीवन जीने के तरीके पर कालातीत मार्गदर्शन प्रदान करती आ रही है। भारत-बोध, जैसा कि भारतीय ज्ञान परंपरा के माध्यम से व्यक्त किया गया है कि यह राष्ट्रवाद या सांस्कृतिक गौरव से परे है। यह भारत के शाश्वत आध्यात्मिक मिशन की प्राप्ति है-एक ऐसा मिशन जो धर्म को बनाए रखना, शांति को बढ़ावा देना और सभी प्राणियों के बीच एकता की भावना को बढ़ावा देना चाहता है। संस्कृत श्लोकों के कालातीत ज्ञान के माध्यम से, भारत बोध का सार पीढ़ियों को प्रेरित करता रहता है, जो वैश्विक समुदाय में ज्ञान, आध्यात्मिकता और सांस्कृतिक समृद्धि के प्रकाश स्तंभ के रूप में भारत की भूमिका की पुष्टि करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध एक ऐसी धरोहर है, जो न केवल भारतीय समाज और संस्कृति की जड़ों को सशक्त बनाता है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी एक मार्गदर्शक सिद्धांत प्रस्तुत करता है।

भारत बोध के माध्यम से भारतीयता के गहन दर्शन और जीवन के मूल्यों को समझा जा सकता है, जो कि भारत की प्राचीन और समृद्ध ज्ञान परंपरा से अविच्छेद रूप से जुड़ा हुआ है। विश्व में सर्वत्र शांति की कामना का विचार भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध का मूल तत्व है। वर्तमान में यदि भारतीय ज्ञान परंपरा और भारत बोध के सिद्धांतों को दुनिया आत्मसात करे तो शायद समय-समय पर विभिन्न देशों के बीच होने वाली अस्थिरता और अशांति से सुगमतापूर्वक बचा जा सकता है। ❑

**संदर्भ :**


- शिक्षा अंक (1988). गीता प्रेस, गोरखपुर।
- ईशादि नौ उपनिषद (शांकरभाष्यार्थ). गीता प्रेस, गोरखपुर।
- श्रीवास्तव, एम. (2024). संश्लेषणवादी भारतीय ज्ञान परंपरा. राष्ट्रधर्म पत्रिका. राष्ट्रधर्म प्रकाशन लिमिटेड, लखनऊ।
- पाठक, आर. पी. (2024). भारतीय ज्ञान परंपरा का उद्भव और विकास. हिंदी केंद्रीय विभाग, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, नेपाल।
- मुरारी, एम. (2023). जंबुद्वीपे भरतखंडे. प्रभात प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
- सलूजा, सी. (2023). शिक्षा भारतीय परिप्रेक्ष्य. संस्कृतसंवर्धनप्रतिष्ठानम, नई दिल्ली।
- किरण, सी. (2013). शिक्षा सामाजिक परिप्रेक्ष्य. हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
- काटदरे, सी. (2017). शिक्षा का समग्र विकास प्रतिमान. पुनरुत्थान प्रकाशन सेवा ट्रस्ट, अहमदाबाद।
- काटदरे, सी. (2017). भारतीय शिक्षा के व्यावहारिक आयाम. पुनरुत्थान प्रकाशन सेवा ट्रस्ट, अहमदाबाद।
- काटदरे, सी. (2017). वैश्विक संकटों का निवारण भारतीय शिक्षा. पुनरुत्थान प्रकाशन सेवा ट्रस्ट, अहमदाबाद।
- मिश्र, वी. (2010). हिंदू धर्म जीवन में सनातन की खोज. वाग्देवी प्रकाशन, नोएडा।
- कुमार, आर. (2016). हिंदू प्रतिभा के दर्शन. सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली।
- अग्रवाल, ओ. पी. (2016). प्राचीन भारत अध्यात्म और विज्ञान. सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली।
- सावरकर, वी. डी. (2021). हिंदुत्व. हिंदी साहित्य सदन, नई दिल्ली।
- हरदास, एम. बी. एस. (2015) वेदों में शिक्षा पद्धति. सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली।
- Radhakrishnan, S. (1953). The Principal Upanishads. HarperCollins.
- Dharampal. 1953). The Beautiful Tree: Indigenous Indian Education in the Eighteenth Century. Biblia Impe& Private Limited.
- Dasgupta, S. (1922). A History of Indian Philosophy, Vol. I. Cambridge University Press.
- Dalal, R. (2010). The Vedas: An introduction to Hinduism's sacred te&ts. Penguin Books.
- Bhattacharya, N.N. (2000). Indian Philosophy and Cultural Identity. Indian Council of Philosophical Research.
- Mookerji, R. K. (1998). Ancient Indian Education: Brahmanical and Buddhist. Motilal Banarsidass Publishers.
- Singh, H. (2001). Takshashila: The Story of an Ancient University. Aryan Books International.
- Easwaran, E. (2007). The Upanishads (wnd ed.). Nilgiri Press.
- Sharma, Arvind. (1990). The Hindu Worldview: An Introduction. Orbis Books
- Vivekananda, Swami. (1907). The Complete Works of Swami Vivekananda. Advaita Ashrama.

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

सीरव

# व्याधगीता : कैसे एक 'शूद्र' ने 'ब्राह्मण' को धर्म का पाठ पढ़ाया

**डॉ. प्रेरणा मल्होत्रा**

एसोसिएट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
संयुक्त निदेशक, हिंदू अध्ययन केंद्र
दिल्ली विश्वविद्यालय
9868981489
prernamalhotra@english.du.ac.in

**सारांश :**

महाभारत की श्रीमद्भागवद्गीता विश्व विख्यात है, जिसका विश्व की कई भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और यह हजारों वर्षों से कर्म के मार्ग को अपनाते हुए धर्म के बारे में शिक्षा देती आई है। किंतु हिंदू ग्रंथों में श्रीमद्भागवद्गीता जैसी चिर-परिचित गीता के अतिरिक्त भी बहुत सारी गीताएँ हैं, जिनके बारे में कम लोग जानते हैं। गीता का अभिप्राय गुरु द्वारा शिष्य को दिए गए धर्म-ज्ञान के उपदेश से है। इस लेख के माध्यम से हम एक विशिष्ट गीता की बात करेंगे, जिसे व्याधगीता कहा जाता है। यह महाभारत के वन पर्व के अंतर्गत एक प्रसंग के माध्यम से जानने को मिलती है, जिसमें धर्मव्याध नाम का एक व्याध अर्थात एक कसाई एक संन्यासी को धर्म की शिक्षा देता है। संन्यासी व्याध का शिष्य होकर वह ज्ञान प्राप्त करता है, जो उसे वेद-उपनिषद पढ़कर भी प्राप्त नहीं हुआ था। यह कथा आधुनिक समय में वर्ण और जाति को लेकर चल रहे विमर्शों का भी खंडन करती है और संदेश देती है कि धर्म का पालन कोई व्यक्ति किसी भी वर्ण और जाति में रहते हुए कर सकता है। इसके अतिरिक्त इससे यह भी संदेश मिलता है कि व्यक्ति का कर्म ही सर्वोत्तम धर्म है। यदि व्यक्ति कसाई के तुच्छ कार्य को भी ईश्वर में समर्पित होकर और अपने परिवारजनों की सेवा करते हुए करता है तो उसी में ही उसका धर्म पालन निहित है। यदि कोई स्त्री गृहिणी होते हुए भी अपने कर्तव्य का उचित निर्वहन करती है तो वह एक संन्यासी ब्राह्मण से उच्चतर हो जाती है और उसे भी अंतर्दृष्टि प्राप्त हो जाती है।

**बीज शब्द :**

व्याधगीता, महाभारत, वर्णाश्रम व्यवस्था, धर्म, धर्मव्याध, वन पर्व, कर्म, श्रीमद्भागवद्गीता।

**प्रस्तावना :**

धर्मव्याध की कथा महाभारत के वन पर्व के अंतर्गत युधिष्ठिर को मार्कंडेय मुनि द्वारा बताई गई। इस कथा में एक व्याध निम्न कुल में जन्म लेकर न केवल धर्म की गहन समझ विकसित कर पाता है, बल्कि अंतर्दृष्टि के माध्यम से एक संन्यासी के जीवन के अनुभवों और विचारों को जान पाता है। अपितु ज्ञान की गंभीर बातें उसके समक्ष करता है, जो उस संन्यासी के चक्षु खोलकर उसके जीवन का मार्ग बदल देती

हैं। इसके अतिरिक्त एक गृहिणी जो एक पतिव्रता स्त्री है और घर के जनों की सेवा-सुश्रुषा करती रहती है, वह भी कैसे ब्रह्मज्ञानी हो जाती है, इसका वर्णन इसी कथा में किया गया है। यदि कोई व्यक्ति निष्पाप होकर अपने मन को वश में करके कर्म करता जाता है तो उससे बढ़कर कोई धर्मात्मा नहीं होता। व्यक्ति ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर ही धार्मिक हो सकता है या फिर निम्न कुल में जन्म लेकर भी धर्म का पालन श्रेष्ठ रूप में कर सकता है, इसके बारे में विस्तृत विवरण है।

**धर्मव्याध की कथा :**

कौशिक नाम का एक महान तपस्वी संन्यासी एक वृक्ष के नीचे तपस्या में लीन था कि तभी एक बगुले ने उसके ऊपर बीट कर दी। कौशिक ब्राह्मण ने जब ऊपर वृक्ष की ओर क्रोध से बगुले के प्रति अनिष्टभाव से देखा तो तप के प्रभाव से वह पक्षी रक्तरंजित होकर नीचे गिर गया। उसे इस अवस्था में देखकर कौशिक व्यथित हुए और उन्हें पश्चाताप होने लगा, किंतु उसके उपरांत वे भिक्षा लेने के लिए गाँव की ओर निकल पड़े। एक घर के आगे जाकर जब उन्होंने भिक्षा माँगी तो घर के अंदर से एक स्त्री की आवाज आई, जिसने उन्हें रुकने के लिए कहा। इसी बीच उस स्त्री के पति बाहर से घर लौटे और वह अपने पति को भोजन देने और उनकी सेवा करने में जुट गई। ब्राह्मण घर के बाहर प्रतीक्षा करता रहा। वह पति-परायण स्त्री अपने कार्य में इतनी व्यस्त हो गई कि वह बाहर खड़े ब्राह्मण को विस्मृत कर बैठी। जब उसे स्मृति हुई तो वह ग्लानि करते हुए भिक्षा देने के लिए घर के बाहर आई। उसे देखकर ब्राह्मण उसके व्यवहार पर क्रोधित हो उठ और कहने लगे कि यदि उन्हें भिक्षा नहीं देनी थी तो रुकने के लिए क्यों कहा। इस पर स्त्री ने कहा कि थक-हार कर जब उसके पति लौटे तो उन्हें भोजन देना उसका परम कर्तव्य था और वह उसका ही निर्वहन कर रही थी। ब्राह्मण ने कहा कि क्या वह जानती नहीं कि गृहस्थी का धर्म है कि वह ब्राह्मण को भिक्षा अवश्य दे। अहंकार के वश में होकर जब ब्राह्मण ने स्त्री को क्रोधित होकर यह वचन कहे तो वह संन्यासी से बोली कि वह कोई बगुला नहीं है, जो क्रोध-दृष्टि से भस्म हो जाएगी। क्षमायाचना करते हुए वह बोली कि मनस्वी ब्राह्मण पूजनीय होते हैं, किंतु ब्राह्मण होकर इतना क्रोध करना भी उचित नहीं है। उसने कहा कि उसके लिए पति की सेवा सर्वोत्तम है, उसी में ही उसे आनंद है और वही उसका धर्म है।

वास्तव में, उस स्त्री की धर्मपरायणता के कारण ही उसके भीतर अंतर्दृष्टि विकसित हो पाती है, जिसके माध्यम से वह ब्राह्मण के जीवन से संबंधित पेड़ के नीचे की घटना को जान पाती है। वह ब्राह्मण को क्रोध न करने का संदेश देते हुए बताती है कि ब्राह्मण होने की पात्रता क्या है। वह कहती है कि जो धर्मज्ञ है, आत्म भाव से भरा है, क्रोध और काम जिसके वश में हैं, वही ब्राह्मण हो सकता है। ब्राह्मण का धर्म स्वाध्याय करना और इंद्रियों का निग्रह करना है। वह संन्यासी से कहती है कि यद्यपि उन्होंने स्वाध्याय किया है और धर्मज्ञ भी हैं, परंतु उन्हें धर्म का यथार्थ ज्ञान अभी तक नहीं हो पाया है और यदि वे यह ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो मिथिला नगरी में धर्मव्याध नाम के व्यक्ति के पास जाकर परमधर्म के विषय में जान सकते हैं, जो व्यक्ति व्यवसाय से कसाई, परंतु जितेंद्रीय है और अपना कर्म करते हुए धर्म का सर्वोत्तम पालन कर रहा है।

जब वह ब्राह्मण रास्ता पूछता हुए धर्मव्याध के घर पहुँचे तो उन्होंने देखा कि वह कसाईखाने में बैठा हुआ पशुओं का मांस बेच रहा था और लोग उसे खरीद रहे थे। जैसे ही धर्मव्याध ने ब्राह्मण को देखा तो उनके चरणों में प्रणाम किया और बताया कि वह ही व्याध है, जिसकी खोज में वे पतिव्रता स्त्री के कहने पर आए हैं।

ब्राह्मण फिर से आश्चर्यचकित हो गया कि कैसे व्याध को अंतर्दृष्टि से पता चला कि उसे यहाँ स्त्री के द्वारा भेजा गया है। इस पर उसने व्याध से श्रद्धापूर्वक पूछा कि वे तो इतने धर्मात्मा हैं तो फिर यह व्यवसाय क्यों कर रहे हैं। व्याध ने बताया कि पैतृक कर्म होने के कारण वह धर्म की तरह उस कर्म का पालन कर रहा है । इसके अतिरिक्त, वह अपने वृद्ध जनों की सेवा करता है, सत्य वचन करता है, यथाशक्ति दान देता है, अतिथि को देवता समान समझता है और अपने कुटुंबजनों का भरण-पोषण करता

है। इसके उपरांत व्याध ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सबके गुण बताए। उसने कहा कि शूद्र का कर्तव्य सेवा कार्य है, वैश्य का कृषि है, क्षत्रिय का संग्राम है और ब्राह्मण का कर्म ब्रह्मचर्य, तप, मंत्र, जप और सत्य वादन है। इसके उपरांत व्याध ने राजा के कर्तव्यों की चर्चा की कि राजा का धर्म सभी वर्णों के लोगों की रक्षा करना है। उस समय मिथिला में राजा जनक राज्य करते थे और उसने राजा जनक के विषय में बताया कि वे धर्मात्मा हैं, अपनी इंद्रियों पर संयम करते हैं और प्रजा पर पिता की तरह अनुग्रह करते हैं। स्वयं के विषय में उसने बताया कि वह बिना किसी जानवर को मारे, मरे हुए जानवरों का मांस बेचता है, स्वयं मांस नहीं खाता है और जीवन में संयम का पालन करता है ।

इसके उपरांत धर्मव्याध ने शिष्टाचार, हिंसा और अहिंसा, कर्म और धर्म के संबंध को लेकर भी विस्तृत उपदेश किया। निष्काम भाव से कर्म करने और जीवन में संयम रखकर अधर्म से बचने की प्रेरणा दी। शिष्टाचार के संबंध में बताया कि यज्ञ, दान, तप, वेद और सत्य भाषण- ये पंच पवित्र गुण शिष्टाचार के अंतर्गत आते हैं। इसके अतिरिक्त, काम-क्रोध को वश में करके मोह और लोभ से दूर रहकर धर्म का पालन करना ही शिष्टता कहलाती है। शिष्टाचारी व्यक्ति जीवन में नियम से रहते हैं और धर्म पर स्थित होकर अपना कर्म करते रहते हैं। अहिंसा को जीवन में महत्वपूर्ण बताते हुए उसने न्याययुक्त बातों को धर्म कहा और अनाचारयुक्त बातों को अधर्म। धर्म और अधर्म के बीच का अंतर स्पष्ट करते हुए उसने धर्म के लक्षण बताए, जिसमें वेदवर्णित को धर्म का पहला लक्षण और धर्म शास्त्रों में प्रतिपादन को दूसरा लक्षण माना है और इसी क्रम में शिष्टाचार धर्म का तीसरा लक्षण है।

स्वयं के कर्म के बारे में बताते हुए धर्मव्याध ने कहा कि उसकी वर्तमान स्थिति उसके पूर्व कर्मों का फल है। हिंसा के विषय में उसने बताया कि अन्य कर्मों में भी हिंसा उपस्थिति रहती है। यूँ देखा जाए तो कृषि में भी हिंसा होती है, जब हल चलाया जाता है, वृक्षों और औषधियों को काटने से भी हिंसा होती है, और कई लोग असावधानी से चलते हुए ही भी जीव-जंतुओं के साथ हिंसा कर बैठते हैं। इस दृष्टि से सोचा जाए तो जाने-अनजाने हिंसा हो जाती है। इसके उपरांत व्याध ने सत्य धर्म और असत्य धर्म के बारे में और ब्रह्म की प्राप्ति के उपायों पर संभाषण किया। शुभ कर्मों से देवत्व की प्राप्ति होती है और इसी प्रकार अशुभ कर्मों से व्यक्ति पाप का भागी बनता है। इसके उपरांत ब्राह्मण ने इंद्रिय और उनके निग्रह के विषय में प्रश्न पूछे और व्याध ने पाँच महाभूतों, सत्संग, ब्रह्मज्ञान और तीन गुणों के स्वरूप के बारे में भी विस्तृत रूप से उपदेश दिया। प्राण वायु से लेकर परमात्मा से साक्षात्कार के तरीके वर्णित किए। स्वयं के माता-पिता के विषय में बताया और साथ ही अपने पूर्व जन्म की कथा भी कह सुनाई, जिसमें अनजाने में उससे एक ऋषि को बाण लग गया था और उस श्राप के कारण अगले जन्म में व्याध के रूप में जन्म मिला था।

धर्म और मोक्ष से संबंधित सभी विषयों के बारे में विस्तृत विवरण करने के उपरांत प्रत्यक्ष धर्म का दर्शन कराने के लिए व्याध ने अपने घर के भीतर ब्राह्मण को ले जाकर अपने माता-पिता के दर्शन कराए और बताया कि उसका प्रत्यक्ष धर्म माता-पिता की सेवा है। उसके माता-पिता उसके इंद्रिय संयम और मन, कर्म और वचन से सेवा के कारण सदैव आशीर्वाद देते थे। व्याध ने कहा कि उसके माता-पिता ही उसके भगवान हैं, परम देवता हैं, आराध्य हैं। वे उसके सर्वोच्च हैं, उसके लिए अग्नि, वेद, यज्ञ सब वही हैं। वह परिवार के साथ उनकी सेवा में लगा रहता है और गृहस्थ धर्म का पालन करता है, यही सनातन धर्म है।

अंत में व्याध ने ब्राह्मण से कहा कि वे धर्मज्ञ और बुद्धिमान हैं, किंतु उन्होंने अपने माता-पिता की आज्ञा के बिना ज्ञान अध्ययन किया और अपने माता-पिता को प्रसन्न नहीं किया है। अत: अब उन्हें उनकी सेवा करनी चाहिए।

इस प्रकार कौशिक ब्राह्मण अपने घर को चले गए और जाकर अपने माता-पिता की सेवा करके अपने कर्म और धर्म का पालन किया। जाने से पूर्व जब व्याध ने अपने पूर्व जन्म का व्याख्यान कर स्वयं को शूद्र कहा तो कौशिक ब्राह्मण को तब तक ज्ञान हो चुका था और

उन्होंने व्याध से तुरंत कहा कि वे तो उन्हें इस रूप में भी ब्राह्मण ही मानता है, इसमें उसे कोई संशय नहीं है। जो ब्राह्मण होकर दुष्कर्म कर रहे हैं और पतन के मार्ग पर पर चल रहे हैं, वे शूद्र के समान हैं और जो शूद्र होकर भी सत्य धर्म में स्थित हैं, वही सच्चे ब्राह्मण हैं।

धर्मव्याध के बारे में इतना सुंदर व्याख्यान मार्कंडेय जी ने युधिष्ठिर को कह सुनाया, यही व्याध-गीता कहलाती है।

**व्याधगीता की समकालीन समाज में प्रासंगिकता :** व्याधगीता का प्राथमिक उद्देश्य धर्म की गहन समझ प्रदान करना है। इसमें धर्म का अर्थ केवल धार्मिक अनुष्ठानों या तप में संलग्न होना नहीं, बल्कि अपने कर्तव्यों का निर्वहन है। महाभारत में व्याधगीता के माध्यम से यह संदेश मिलता है कि

'धर्मो हि परमो लोके, धर्मेण विधृतं जगत्।'

(महा.भा. , वनपर्व, अध्याय 207, श्लोक 31 )

अर्थात संसार में धर्म ही परम सत्य है और संपूर्ण जगत धर्म के द्वारा ही संचालित है।

कर्म के विषय में प्रचलित है :-

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'

(श्रीमद्भागवद्गीता 2/47)

अर्थात व्यक्ति का अधिकार केवल कर्म करने में है, फल पर नहीं। यह कर्मयोग का एक अनिवार्य सिद्धांत है, जो गीता में व्याख्यायित है। व्याध का जीवन हमें यह सिखाता है कि सच्चा संतोष तभी प्राप्त हो सकता है, जब हम अपने कार्य को समाज और परिवार की भलाई के लिए करें।

वर्ण के विषय में व्याधगीता गंभीर चिंतन प्रदान करती है कि वर्ण कर्तव्य पर आधारित सामाजिक संरचना है, इसका जन्म व कुल से संबंध नहीं है। वर्ण व्यवस्था भारतीय समाज की एक विशेषता रही है जो समाज में विभिन्न भूमिकाओं के वितरण को दर्शाती है। व्याधगीता में व्याध अपने उपदेश और जीवन जीने के तरीके से यही समझाता है कि कोई व्यक्ति केवल अपने कर्म और गुणों से श्रेष्ठ या सामान्य बनता है।

व्याधगीता में वर्ण की संकीर्णता से परे ज्ञान प्राप्ति का संदेश मिलता है। व्याध, जो समाज में एक निम्नवर्गीय समझे जाने वाले कसाई हैं, वे ज्ञान और धर्म का मार्गदर्शन करते हैं। यह कथा यह संकेत करती है कि ज्ञान और धर्म किसी वर्ण विशेष का अधिकार नहीं, बल्कि कर्म और निष्ठा का परिणाम है।

'न जात्या ब्राह्मणो धर्मं, न जात्या शूद्रता भवेत्।
कर्मणा जायते शूद्रः, कर्मणा जायते द्विजः॥'

(महाभारत, वनपर्व, अध्याय 208, श्लोक 15)

अर्थात ब्राह्मण और शूद्र की पहचान उनकी जाति से नहीं, बल्कि उनके कर्म से होती है। व्यक्ति का कर्तव्य उसकी जाति की सीमाओं से परे है। यह व्याधगीता का सबसे महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी संदेश है, जो समाज में जाति के आधार पर बने विभाजनों को चुनौती देता है और कर्म के आधार पर व्यक्ति का मूल्यांकन करने का संदेश देता है।

मनुस्मृति में भी वर्ण व्यवस्था को कर्तव्य और गुणों के आधार पर परिभाषित किया गया है। इसमें कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति ज्ञान प्राप्त कर ब्राह्मण बन सकता है, शौर्य के गुणों से क्षत्रिय और व्यापारिक ज्ञान से वैश्य बन सकता है। वर्ण का असली मर्म कर्मों में छिपा है, न कि जन्म में।

व्याधगीता आज के समय में अत्यंत प्रासंगिक है। इस कथा के केंद्र में मानवता, कर्तव्यनिष्ठा, और नैतिकता का महत्व है, जो किसी भी काल खंड में समाज को सही दिशा में संचालित करने के लिए अनिवार्य हैं।

समकालीन समाज के लिए व्याधगीता एक आदर्श प्रेरणा स्रोत है, जो हमें एक संकीर्ण दृष्टिकोण से उबार कर कर्म, धर्म और वर्ण की वास्तविकता को समझने का मार्गदर्शन देता है। इस प्रकार, व्याधगीता का अध्ययन न केवल हमारे आध्यात्मिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि समाज में समरसता और न्याय के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। ❑

**संदर्भ सूची :**

1. व्यासदेव, महाभारत, गीताप्रेस गोरखपुर
2. https://www.vedic-management.com/vyadha-gita-what-is-it-and-why-do-most-get-it-wrong/
3. https://archive.org/details/VyadhaGita/page/nz/mode/wup

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

अतीत मंथन

# नदी संस्कृति की कथा-व्यथा : तितास एक नदी का नाम

**प्रो. यशवंत सिंह**

हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय, कांचीपुर,
इम्फाल-795003 (मणिपुर)
9612169840
dryashwantsingh66@gmail.com

बांग्ला साहित्य के ख्याति-प्राप्त उपन्यासों में 'तितास एकटि नदीर नाम' प्रमुख है, जो पहली बार सन 1956 ई. में प्रकाशित हुआ। इसके लेखक अद्वैत मल्लबर्मन का जन्म 1 जनवरी, 1914 ई. को पूर्वी बंगाल (अब बांग्लादेश) के एक महुआरे मालो परिवार में हुआ। इनका परिवार बाह्य मणवाड़िया जिले के गोकर्णघाट गाँव में निवास करता था, जिससे सटकर तितास नदी बहा करती थी, जो कभी मालो मछुआरों के जीवन की धुरी थी। इन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा अभावों व कठिनाइयों के बावजूद वजीफे की राशि से पूरी की तथा अपने हित-चिंतक शिक्षकों की मदद से उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु कुमिल्ला कॉलेज (वर्तमान में बांग्लादेश) में भर्ती हुए। लेकिन अनेक प्रतिकूल प्रभावों के चलते वे अपनी आगे की पढ़ाई जारी नहीं रख सके तथा 1934 ई. में कलकत्ते में आकर पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लेखन-कार्य करके अपना जीवन-यापन करने लगे।

अद्वैत मल्लबर्मन का मूल बांग्ला उपन्यास 'तितास एकटि नदीर नाम' सबसे पहले 'मुहम्मदी' मासिक पत्रिका में धारावाहिक रूप में छपकर चर्चा में आया। इस उपन्यास की पांडुलिपि कहीं रास्ते में खो जाने के कारण लेखक ने तितास-कथा को पुनर्सृजित किया। लेकिन 1956 ई. में इसके प्रकाशन के समय तक लेखक जीवित नहीं रह सके। इस बांग्ला उपन्यास का हिंदी अनुवाद सन 2016 ई. में प्रकाशित हुआ; जो कलकत्ता विशविद्यालय के हिंदी विभाग में प्रोफेसर एवं अध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त विदुषी चंद्रकला पांडेय एवं उस समय प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता के हिंदी विभाग में सहायक प्राध्यापक ऊर्जावान जयकौशल की जुगलबंदी का पाथेय है। सुप्रसिद्ध फिल्म निर्माता एवं पटकथा लेखक श्री ऋत्विक घटक ने सन 1973 ई. में अद्वैत मल्लबर्मन के इसी मूल बांग्ला उपन्यास पर एक फिल्म का निर्माण किया; जिसे 2010 ई. में आयोजित '63वें काँस फिल्मोत्सव' में काँस क्लासिक्स वर्ग के अंतर्गत प्रदर्शित किया गया था।

भारतीयता की अवधारणा में नदियाँ प्राकृतिक संरचनाएँ मात्र नहीं रहीं तथा न ही इन्हें कभी भू-भौतिक पदार्थ की तरह अभिव्यक्त किया गया। भारतीय दृष्टि सदैव प्रकृति को एक जीवित सत्ता के रूप में स्वीकार करती रही है तथा उसका दैवीय सत्ता के रूप में अनुभव करती रही है। अत: नदियों को देवी-स्वरूप मानने

वाले हमारे देश ने नदी-संस्कृति को महत्ता प्रदान की है, इनकी धाराओं के साथ ही भारतीय संस्कृति का प्रवाह निरंतर गतिशील रहा है। घने-जंगलों से निकलकर मनुष्य ने इन्हीं नदियों के तट पर अनेक सभ्यताएँ विकसित कीं, जिनमें प्राचीनतम समय से फूलती-फलती आ रही मछुआरा संस्कृति का प्रमुख स्थान है। तितास एक ऐसी ही नदी का नाम है, जिसके दोनों किनारों के मध्य जल-ही-जल प्रवाहमान है, जो स्वप्न की गति से निरंतर बहती जाती है। इसकी प्रकृति न तो विशाल मेघना एवं पद्म नदियों की तरह सर्वग्रासी है और न ही कृश-काय ग्राम्य-नदियों जैसी विपन्न-क्षीण। गाँव के किसी अल्हड़ बालक के लिए भले-ही इसे तैरकर पार करना मुश्किल हो, लेकिन किसी मछुआरे को डिंगी अर्थात छोटी नाव में अपनी बालिका-वधू को बैठाकर नदी के उस पार ले जाने में रंचमात्र भी डर नहीं लगता है। कृष्णपक्ष का भाटा उसके अंतराल से थोड़ा-सा जल भले-ही सोख लेता हो, पर शुक्लपक्ष में उमड़ा ज्वार उसे पुन: उज्जीवित कर देता है, लेकिन उसे कभी-भी उन्मत्त नहीं बनाता है। अत: तितास कुछ मील दूर बहने वालीं मेघना व पद्मा नदियों की तरह प्रलयंकारी न होकर शांत नदी है।

नदियाँ निरंतर धरती का वात्सल्य अपनी धाराओं से छलकाती रहती हैं। उनके कूल-कगार, कछार निरंतर अपने आस-पास को संपन्न एवं जीवंत बनाए रखते हैं। तितास नदी के किनारों पर बसे मालो-मछुआरों की महिलाएँ अपने पति और बेटों को आँधी-तूफानी रात में मछली पकड़ने के लिए भेजने से नहीं डरतीं। पत्नियों को लगता है कि उनके पति तितास नदी की धारा में जहाँ भी हों उनके पास ही हैं। जबकि मछुआरों की माएँ सोचती हैं तितास भी तो उनकी माँ है, वह कैसे उनका बुरा कर सकती है? तितास के किनारे बसे छोटे-छोटे गाँव, एक के बाद दूसरे घाट, उन घाटों पर अपने गोल-मटोल बच्चों को नहलाती-धुलाती नई-माएँ, कलसी लेकर डुबकी लगाती ननद-भौजाइयाँ, दूर कहीं एक के बाद दूसरी गतिमान पालदार व खुली नावें, नदी की बीच धारा में अठखेलियाँ करती किसी नाव में पाल के भीतर बैठी नई-नवेली दुल्हन, नदी-जीवन की जीवंत छटा बिखेरते प्रतीत होते हैं। साथ ही, तितास नदी का जल मछलियों से भरपूर है, जो इसके किनारों पर बसे मालो-मछुआरों की जीविका का एकमात्र आधार है। हठात एक युवा मालो मछुआरा नदी में डाले अपने जाल पर नजरें टिकाए रसभरी तान छेड़ देता है -

*'पहले थी ब्राह्मण की बेटी, करती थी शिवपूजा*
*पड़ी प्रेम में मछुआरे के, कैसे कटे पाट की डोरी*
*हाय रे! क्या था मेरे नसीब में।'*[1]

भारतवर्ष की नदियों-सरस्वती-सिंधु, गंगा-यमुना, कृष्णा-कावेरी, नर्मदा-ब्रह्मपुत्र की तरह तितास नदी का पोथियों में सुरक्षित कोई इतिहास तो नहीं मिलता, जिस पर गर्व किया जा सके। लेकिन इस नदी के तीरवासी मछुआरे ही इसकी सबसे बड़ी सच्चाई हैं, जो इसके जल में अपनी काठ की नावें तैराते हैं। भोर होते ही उनकी माँएँ, बहनें अथवा भाभियाँ उन्हें कथरी समेट उठ बैठने के लिए चेतातीं हैं और वे दौड़कर तितास के किनारे पहुँच जाते हैं, अपनी नावें नदी के जल में प्रवाहित कर देते हैं, मछली पकड़ने के लिए जाल फेंकते हैं, जिससे उनकी जीविका चलती है। इसी तितास नदी के किनारे पर 'गोकनघाट' गाँव बसा हुआ है। इतना विशाल गाँव कि दिनभर का कोलाहल रात की नीरवता में भी गुँजायमान रहता है। मालो मछुआरे इसी गाँव के दक्षिण टोले में बसे हैं, जिसे मालोपाड़ा कहा जाता है, जहाँ पर किशोर व सुबल नामक दो युवक दीनानाथ मछुआरे की बेटी बासंती के लिए 'माघ मंडल व्रत' समापन अनुष्ठान हेतु एक घरनुमा आकृति की चौयारी बनाते हैं। सजी-सजाई चौयारी लेकर बासंती जब अन्य कुँवारी लड़कियों के साथ तितास नदी में सिराने जाती है तो सुबल आगे बढ़कर उसे लूट लेता है। बासंती को सुबल का यह बर्ताव अच्छा नहीं लगता, क्योंकि वह अपनी माँ की तरह किशोर को पसंद करती है तथा उसी के साथ शादी करने का उसका मन है। इस अवसर पर मालो स्त्रियाँ गीत गा रहीं हैं -

*'सखी हे, बिछ गई है झुलों की सेज!*
*काला चाँद तो अब तक नहीं लौटा,*
*कैसे कटेगी काली-अंधियारी रात।'*[2]

नदियाँ धरती की प्राण शिराएँ हैं। यदि धरती पर नदियाँ न होतीं तो धरती इतनी उर्वर कदापि न होती। उनमें बहता जल आसपास के खेतों को उपजाऊ बनाने के

साथ ही मछुआरों को पर्याप्त मात्रा में मछलियाँ उपलब्ध कराता है। लेकिन जाड़े के समय तितास नदी में मछलियों का भंडार कम हो जाने के कारण मालो मछुवारे उत्तर की ओर प्रवास पर जाते हैं। इन्हीं में से एक नाव पर किशोर अपने साथी सुबल व अनुभवी मछेरे तिलक चाँद को लेकर अधिक मछलियों की तलाश में परदेश को निकल पड़ा। तितास जहाँ पर विशाल मेघना नदी से मिलती है, वहाँ कई मालो परिवार रहते हैं, नदी किनारे घाट पर कई छोटी-बड़ी नावें बंधी खड़ी हैं, किनारे पर गड़ी बाँस की खपच्चियों पर जाल फैले हुए हैं, जमीन पर इधर-उधर छोटे-बड़े गड्ढों में नावों की तलहरी में लगाने हेतु गाव भरा हुआ है। सामने मेघना नदी का विराट पाट फैला हुआ है, जिस पर इन्हें आगे की यात्रा करनी है। तभी मेघना नदी में दूर से आती एक नाव को देखकर किशोर गा उठा -

*'नदी किनारे जा बाँसुरी बजाई,*
*प्रेम के मधुसे मन मीठा हो गया*
*यह किस कुजगह पाँव पड़ गया,*
*यह तो खेया घाट नहीं है!'*[3]

नदियों का प्रवाह मानवीय चेतना को संबल प्रदान करता है। जिन प्राकृतिक शक्तियों से मनुष्य ने कर्मठता का पाठ सीखा, उनमें नदियों की भूमिका प्रमुख है। विशाल मेघना नदी पर निरंतर जलयात्रा करते हुए मछुआरे 'नया काँदा' पर पड़ाव डालते हैं, जहाँ पर तीस-चालीस मालो-परिवार नए-नए आकर बसे हैं। यहाँ से मेघना नदी का विस्तृत किनारा धनुषाकार मुड़ गया है। इस जगह की अथाह जलराशि में बहुत-सारी मछलियाँ मिलती हैं। यहाँ पर आते-आते मेघना की विराटता में कमी आई है, दूर छायादार वृक्षों वाला एक गाँव दिख रहा है, जहाँ से उजानी नगर की खाड़ी स्पष्ट दिखलाई पड़ती है। यात्रा के अंतिम पड़ाव पर मछुआरे अपने गंतत्य शुकदेवपुर पहुँचकर मुखिया बाँसीराम मोड़ल के घाट पर अपनी नाव में लंगर डालते हैं तथा रात्रि में नदी तट के मुखिया का आतिथ्य ग्रहण करते हैं। अगले दिन सुबह नदी में जाकर मछुआरे मछलियाँ पकड़ने का उपक्रम करते हैं, पहले ही प्रयास में उन्हें बहुत-सारी मछलियाँ प्राप्त होती हैं, जिन्हें देखकर मुखिया खुशी से कहता है- *'छोटे जल्ला, तुमने तो अच्छी साइत की।'*[4]

किशोर, सुबल व तिलक चाँद के दल को मछलियाँ पकड़ते-पकड़ते होली-पूर्णिमा आ पहुँची, बसंत पूरे यौवन पर आकर सबके मनों में सुगबुगाहट पैदा कर रहा था। शुकदेवपुर के इलाके में भी रंगों की धमाचौकड़ी शुरू हो गई। होली-उत्सव के अवसर पर किशोर की नजर एक मालो किशोरी पर पड़ी, जिसे देखकर वह मुग्ध हो गया। इस दौरान उन दोनों का मिलन होता है तथा उनके मध्य परस्पर एक गोपन प्रेम जन्मता है। शुकदेवपुर के मालो मछुआरों का समीपवर्ती बासुदेवपुर गाँव के लोगों से पुराना झगड़ा चला आ रहा था, आपसी समझौते के लिए गाँव के मुखिया मोड़ल उस दिन बासुदेवपुर गए थे। लेकिन इसके पहले ही बासुदेवपुर वासियों ने होली-उत्सव में मदमस्त शुकदेवपुर वासियों पर हमला कर दिया। दोनों ही पक्षों में भयंकर मारपीट हुई, जिसे देखकर वह मालो किशोरी बेहोश होकर गिर पड़ी। मारपीट के दौरान किशोरी के कुचल जाने का भय था, लेकिन प्रवासी किशोर अपनी जान पर खेलकर किशोरी की प्राण रक्षा करता है। अत: अगले ही दिन शुकदेवपुर के मुखिया मोड़ल की पत्नी की सहायता से प्रवासी किशोर के साथ उस मालो किशोरी की 'माला-बदल रस्म' संपन्न हो जाती हैं, इस शर्त के साथ कि किशोर अपने देश लौटकर इस माला-बदल किशोरी के साथ विधिवत विवाह कर लेगा।

किशोर इस माला-बदल किशोरी को पाकर बहुत खुश हुआ तथा उससे प्रणय करने के लिए इंतजार करती बासंती उसके साथी सुबल के लिए शेष रह गई। प्रवास से अपने गोकनगाँव वापस लौटते समय उनकी नाव पर जल-दस्यु हमला करके सोते हुए मछुआरों को बाँधकर नाव को लूटते हैं। वे किशोरी का अपहरण करने का प्रयास भी करते हैं, लेकिन नववधू किशोरी उनके चंगुल से छूटकर नदी की धारा में कूद पड़ती है और तैरते-तैरते बेहोश होकर किनारे पर जा लगती है। इधर नाव में जब सब जागे तो किशोरी गायब मिली। इस आकस्मिक आघात से किशोर विक्षिप्त हो जाता है। इसी समय नदी की बीच धारा में एक अकड़े हुए स्त्री-शरीर को बहता देखकर तिलक व सुबल को यह विश्वास हो जाता है कि वही किशोर की माला-बदल बऊ है। तभी दहशत में

आकर तिलक चिल्ला उठा- *'अरे सुबला, इधर आ जल्दी - देख -लगता है, किशोर पागल हो गया।'*[5]

नदियों का जीवन मानवीय कल्पना के अनेक दृश्य-बिंबों को जागृत करता रहा है। मनुष्य ने नदियों के व्यक्तित्व में जिस नारी स्वभाव की खोज की, वह नारी स्वभाव अनेक पुरुषवाची विशेषणों में अभिव्यक्त होता है। उपन्यास के कथाक्रम में आगे किशोर की माला- बदल बऊ अब चार वर्षीय अनंत की माँ बन गई है। दरअसल, जब वह जल-दस्युओं के चंगुल से छूटकर नदी में कूदी थी, तब अनंत उसके गर्भ में था। गौरांग व नित्यानंद नाम के दो मालो वृद्धजनों ने उसे नदी के किनारे बेहोशी की हालत में पाया। उन्होंने उस अबला किशोरी को पिता की तरह सहारा दिया, उसे अपनी बेटी की तरह सम्मान व सुरक्षा दी। इन्हीं के यहाँ बालक अनंत का जन्म हुआ। अब वह अबला किशोरी अपने माँ-बाप के पास वापस नहीं जाना चाहती तथा उसे बस इतना ही याद है कि किशोर व सुबल तितास नदी के किनारे बसे गोकनगाँव से शुकदेवपुर आए थे। अत: वह अनंत की माँ के रूप में अपनी ससुराल जाने का निश्चय करती है। इस बीच गाँव वापस लौटने पर सुबल की शादी बासंती से होती है तथा सुबल एक अन्य नाव-दुर्घटना में मृत्यु को प्राप्त होता है। जब अनंत की माँ के रूप में अबला किशोरी गोकनगाँव के घाट पर नाव से उतरी तो उसका सामना अपने पागल पति किशोर से होता है, लेकिन वह अपने पति को पहचान नहीं पाती। मालोपाड़ा के मछुआरों के सहयोग से उसके लिए एक झोपड़ी निर्मित होती है तथा सुबल की विधवा पत्नी बासंती उसके दुखी व अभावों से युक्त जीवन का सहारा बनती है।

अद्वैत मल्लबर्मन ने अपने इस उपन्यास लेखन में मालो मछुआरों के लोक जीवन का जीवंत चित्रण किया है। एक दिन मालोपाड़ा में जाति-पंचायत बैठती है। उस दिन शाम होने के कुछ पहले ही दो मालो लड़के घर-घर घूमकर निमंत्रण देने लगे-

*'घर में रहने वालों, सुन लो हमारी बात*
*भारत के घर में होगी आज, दस जनों की मुलाकात*
*तुम सबको भी न्योता, पान-तमाकूखाना*
*और दसों लोगों की दसियों बातें सुनना।'*[6]

पंचायत में बहुत सारी जातिगत समस्यओं पर विचार-विमर्श होने के उपरांत अनंत की माँ की बात उठती है कि वह किस जाति की है? किस गाँव से उसका संबंध रहा है? पंचायत के आदेशानुसार जब सुबला बहू बासंती ने उससे यह सब पूछा तो वह रो पड़ी और कहा-बहिन लोग मैं अपनी जाति ठिकाने के बारे में कुछ भी नहीं जानती! अंततः पंचायत ने मंगला, सुबला और पागल किशोर की जमात में अनंत की माँ को शामिल कर लिया।

मालो मछुआरों का जीवन जन्म, विवाह और मरण संस्कारों से रचा-बसा है। हर किसी के जीवन में इन तीनों घटनाओं की अनिवार्यता के बावजूद कुछ ही मालो परिवार ऐसे भाग्यशाली होते हैं, जिनके घरों में इन तीनों को क्रम से घटते देखा जाता है। जिनमें मालोपाड़ा के कालोबरन के परिवार में एक के बाद एक, तीन-तीन लड़कों के विवाहों की उलुक-ध्वनि अर्थात स्त्रियों द्वारा होंठों से की जाने वाली मंगल-ध्वनि गूँजी। इस परिवार में झम-झम करतीं तीन-तीन बहुएँ आईं, तीनों फली-फूली लताएँ हैं, होड़ लगाकर बारी-बारी से बच्चे जनती जा रही हैं, बच्चों का जन्मोत्सव धूम-धमाके से मनाया जाता है, अन्नप्राशन का तो कहना ही क्या है? लेकिन मालो टोले के अभागे रामकेशव के घर में विवाह की घटना शायद ही घटे? क्योंकि विवाह के पहले ही उसका एकमात्र बेटा किशोर पागल होकर लौटा है। कहाँ तो पिता को आशा थी कि उसका बेटा प्रवास से बहुत सारा धन लेकर वापस आएगा, उसकी धूमधाम से शादी होगी, लेकिन उसकी तो सारी आशा-आकांक्षाओं पर मानो तुषारापात ही हो गया।

बंगाल में प्रचलित काली-पूजा उत्सव मालो टोले में बड़ी भव्यता से संपन्न होता है, जिसमें अनंत की माँ सहायक पुजारिन के रूप में शामिल होती है। बालक अनंत यह सब देखकर विस्मित होता है। इस उत्सव के दौरान रामकेशव ने अपने पागल बेटे किशोर को घर में बाँधकर रखा, उसने खुद भी न काली-पूजा देखी, न प्रसाद लिया और न ही रात्रि में पाला जात्रा और कबि गान देखने-सुनने गया। लेकिन उत्तरायण संक्रांति का पर्व आने पर उसने अपने पागल बेटे की मंगल-कामना के लिए घर में बुलाकर कुछ लोगों को भोजन कराने की इच्छा व्यक्त की। दरअसल, मालो लोग काली-पूजा के समय साज-सज्जा, गाने-बजाने एवं आमोद-प्रमोद पर खर्चा करते हैं, जबकि पौष संक्रांति में वे खाने-पीने में खर्च करते हैं। इसकी तैयारी पाँच-छह दिन पहले से ही शुरू हो जाती, गुड़ीकोटा अर्थात पतंग-उत्सव की धूम रहती, स्त्रियों में चावल से मूड़ी भूनने और सत्तू कूटने/पीसने की जोड़-तोड़ होती, टूटे चावलों को धोकर सुखाया जाता और उसका पीठा बनाया जाता। इसी उपक्रम के लिए अनंत की माँ, सुबला बऊ व मंगला बऊ रात्रि के समय रामकेशव के घर एकत्र हुईं। पागल किशोर को नींद नहीं आती, वह इन स्त्रियों को घूरकर देखता रहता है। अचानक मंगला बऊ को आधी रात के समय किस्सा सुनने की इच्छा हुई, वह अनंत की माँ को पकड़कर बोली - *'एक परस्ताव सुनाओ ना बहिन! नए देश से आई हो, इस गाँव में नई हो। तुम्हारे पास तो सुनाने लिए दुनिया भर के किस्से होंगे।'*[7] तीनों स्त्रियों के मध्य दुख-सुख से भरे इस वार्तालाप के प्रसंगों से ही अनंत की माँ समझ जाती है कि पागल किशोर ही उसका माला-बदल पति है। वहीं दूसरी ओर सुबला बहू बासंती को भी इस बात का कुछ-कुछ अहसास हो जाता है कि यही वह स्त्री है, जिसके बिछोह में किशोर आज पागल अवस्था में है।

अब अनंत की माँ किसी भी तरह पागल किशोर के साहचर्य में आने का प्रयास करती है, वह उसके लिए एक दिन खाना बनाकर ले जाती है, उसको एक दिन पकड़ कर नदी-स्नान के लिए ले जाती है। एक तरह से वह अपनी पुरानी स्मृतियों को सामने लाकर किशोर को पुनः होशमंद बना लेना चाहती है। इसी प्रयास में होली-उत्सव के दिन वह पागल किशोर के मुख पर अबीर मल देती है, जिससे किशोर का उन्माद बढ़ जाता है, उत्तेजना में वह उसे गोद में उठाकर चिल्लाने लगता है - डाकुओं ने सती को हाथ लगा दिया, बचाओ, मारो आदि। होली

के हुल्लड़ में मदमस्त गाँव वाले पागल किशोर के इस आचरण को स्त्री-अपमान समझकर उसकी जमकर पिटाई कर देते हैं, जिससे मरणासन्न किशोर सारी रात कराहता है तथा दूसरे दिन सुबह होते-होते उसके प्राण-पखेरू उड़ गए। इस आघात के कुछ ही दिनों बाद अनंत की माँ ने भी अपने बेटे को बेसहारा छोड़ प्राण त्याग दिए। अनंत ने अपने माँ की चिता को अग्नि दी तथा अपने गले में 'छड़ा' अर्थात लोहे का छोटा-सा टुकड़ा धारण किया। इस समय किसी के मुख से अनायास निकल पड़ा- *'लगता है पागल ने इसको पहचान लिया था। चार दिन पहले ही मर गई होती तो दोनों को एक ही चिता पर सुला देते। परलोक में दोनों का मिलन हो गया होता।'*[8]

माँ की मृत्यु के बाद अनंत अनाथ हो गया। अपने घर में व्याप्त आर्थिक अभाव एवं माता-पिता की अनिच्छा के बावजूद सुबला बहू बासंती ने अनंत को आश्रय दिया। लेकिन निरंतर उपेक्षा एवं मारपीट से तंग आकर अनंत अपनी मौसी बासंती का घर छोड़ देता है। तदुपरांत उसे उदयतारा एवं उसके भाई बनमाली के गाँव में आश्रय मिला। इसी गाँव से बनमाली व उदयतारा के साथ अनंत तितास नदी में नौका-दौड़ देखने जाता है। दौड़ वाली इतनी नावों को एक साथ देखकर अनंत फूला नहीं समाता, नजदीक से गुजरती एक नाव से 'सारी-गीत' का स्वर साफ सुनाई पड़ता है-

*'साधारण काठ से बनी नाव झुनर-झुनर करती नाव जीत आय, पर नाव की पूँछ कहाँ गई?'*[9]

संयोगवश दूसरी नाव में बैठी बासंती की नजर जब अनंत पर पड़ती है तो वह अपनी नाव से कूदकर अनंत से लिपट जाती है। अब अनंत को लेकर यहाँ दो नि:संतान औरतों-बासंती एवं उदयतारा में हिंसक झड़प होती है, जिसमें बासंती पराभूत होती है। वह अपनी पराजय से शर्मिंदा एवं आहत होकर घर से बाहर निकलना बंद कर देती है। इसी समय मालोपाड़ा के मछुआरा-संस्कृति पर बाजारू 'जात्रा-गान' और 'सखी-गान' कब्जा करने लगते हैं। बासंती स्व-संस्कृति प्रेमी मछुआरों को प्रोत्साहित करके इस बाजारू अपसंस्कृति को रोकने का प्रयास करती है। लेकिन मालो मछुआरों की आपसी फूट एवं उनकी एकजुटता में दरार पड़ जाने के कारण बासंती का यह प्रयास असफल हो जाता है। मालो टोले के कुछ युवक अगली होने वाली नौटंकी में 'सखी' बनकर नाचे, उन्होंने बाएँ हाथ को कमर में रखकर दाहिने हाथ की उँगली ठुड्डी पर टिकाए हुए बाजारू गीत गाए-

*'चुप-चुप शर्म से चले जाएँगे, धीरे-धीरे चलो, हे सखियो! हमारी आँखों में धूल झोंक, सखी ने अपना प्रेम छिपा लिया। अब तो भँवरे गुंजार करने लगे, रात न हो जाए, चुप-चुप चलो।'*[10]

नदियाँ जो बरसात के समय सदानीरा रहती हैं, वे पौष-माघ का जाड़ा आते-आते सूखने लगी हैं, उनमें पानी का बहाव क्रमश: कम होने लगा है। पहले गर्मियों में भी जिन नदी-घाटों पर नावें चलती थीं, वे अब नाव-घाट की जगह पाँव-घाट बनने लगे हैं, उनमें फसले लहलहाने लगी हैं। समय बीतते जाने के साथ ही तितास नदी का पानी भी क्रमश: कम होने लगा है। अथाह जल से आप्लावित रहने वाली इस नदी के बीच के टीले उभरने लगे हैं, उसके तटबंध सीमित होकर सूखने लगे हैं। इस सूखी जमीन पर दूर-दराज से आने वाले दबंग किसान और जमींदार कब्जा करके फसलें उगाना शुरू कर देते हैं, जिससे मालो मछुआरों की जीविका बाधित होती है। मालो मछुआरों का संबंध तो तितास नदी की जमीन से न होकर सिर्फ उसके जल से ही था। अत: वे आजीविका के अभाव में एक-एक करके भुखमरी के शिकार होकर मरते जाते हैं, उनके खाली पड़े जालों को चूहे कुतर जाते हैं। अब मालोपाड़ा में सिर्फ दो लोग-किशोर का पिता रामकेशव व सुबला बऊ बासंती ही शेष बचते हैं। उधर उदयतारा के आश्रय में दूसरे गाँव में रह रहे अनंत का एक वैष्णव साधु की मदद से स्कूल में दाखिला हो जाता है। अनंत उसी गाँव की नाई जाति की एक स्त्री से प्रेरणा पाकर अपनी स्कूली शिक्षा पूरी कर आगे की पढ़ाई हेतु कुमिल्ला (वर्तमान बांग्लादेश) जाकर पूर्णत: शहरी बाबू हो जाता है।

उपन्यास में कथानक का अंत अत्यंत कारुणिक है। सूखती तितास नदी के तट पर लोटा भर जल की लालसा लिए बासंती दिखलाई पड़ती है। नीम बेहोशी की हालत में उसे अपना पूरा जीवन चलचित्र की तरह घूमता नजर आता है। उसकी आँखों के सामने से अनंत भूखे-नंगे लोगों को भात बाँटता गुजरता है। पर यह तो उसका

सपना मात्र था, जो यथार्थ से टकराकर धराशाई हो जाता है। वास्तविकता तो यह थी कि कभी जहाँ पर तितास नदी का जलप्रवाह होता था, वहाँ पर अब धू-धूकर तपती रेतराशि ही शेष है। अत: मरणासन्न बासंती की पूर्वदीप्ति कथा हिंदी की अमर कहानी 'उसने कहा था' की पूर्व दीप्ति पद्धति का स्मरण करा देती है, जिसमें अनंत की माँ की व्यथा भी समाहित है, जिसे जीवन-पर्यंत सुहागिन होने का दर्जा नसीब नहीं हुआ। वर्तमान समय के तथाकथित विकासवाद की होड़ में नदियाँ सूख रही हैं धरती पर से और उनकी स्मृतियाँ विलुप्त हो रही हैं, हमारी चेतना से। लेकिन नदियाँ जैसे धरती पर भौतिक रूप से बहती हैं, वैसे ही उनको हमारी चेतना में भी बहना चाहिए। लेखक ने एक छोटी-सी नदी तितास के विलुप्त होने के वृत्तांत को सरस्वती नदी की तरह हमारी स्मृति में सँजोकर रखने, हम सब के अंतर्मन में बैठाए रखने का सराहनीय कार्य किया है। साथ ही, उस तितास नदी के किनारों पर फली-फूली मछुआरा-संस्कृति को कालजयता प्रदान की है, जिसमें अब केवल मालो-लोगों की नि:श्वासें ही शेष थीं, जिन्होंने कभी यहाँ पर तड़प-तड़प कर दम तोड़ा था। ❑


**संदर्भ सूची :**

1. तितास एक नदी का नाम, मूल लेखक-अद्वैत मल्लबर्मन, हिंदी अनुवाद - चंद्रकला पांडेय एवं जयकौशल, मानव प्रकाशन, कोलकाता, संस्करण-2016 ई., पृष्ठ संख्या-39
2. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-50
3. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-57
4. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-71
5. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-93
6. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-114 व 115
7. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-150
8. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-171
9. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-262
10. तितास एक नदी का नाम, पृष्ठ संख्या-283

**सहायक ग्रंथ सूची :**

1. भारत की नदियाँ, श्यामसुंदर दुबे, ग्रंथलोक, दिल्ली, संस्करण-2013 ई.।
2. लोक में जल, श्यामसुंदर दुबे, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, द्वितीय संस्करण-2018 ई.।
3. बोल्गा से गंगा, राहुल सांकृत्यायन, किताब महल, इलाहाबाद, पुनर्मुद्रण-2021 ई.।
4. मानव-समाज, राहुल सांकृत्यायन, लोकभारती पेपरबैक्स, इलाहाबाद, संस्करण-2012 ई.।
5. बाङ्ला साहित्य का इतिहास, सुकुमार सेन, हिंदी अनुवाद-निर्मला जैन, साहित्य अपादेमी, नई दिल्ली, संस्करण-2004 ई.।
6. भारतमाता धरतीमाता, राममनोहर लोहिया, लोकभारती पेपर-बैक्स, इलाहाबाद, पहला संस्करण-2010 ई.।
7. भारतीय साहित्य, संपा.-डॉ. मूलचंद गौतम, राधाकृष्ण, नई दिल्ली, पहला संस्करण-2009 ई.।
8. हिंदी उपन्यास : समय से संवाद, रोहिणी अग्रवाल, आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा), संस्करण-2016 ई.।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

राष्ट्रबोध

# असमीया कविता में राष्ट्रीय चेतना

## स्वाधीनता आंदोलन के विशेष संदर्भ में

**डॉ. मालबिका शर्मा**

सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग
राधा गोविंद बरुवा महाविद्यालय
गुवाहाटी-781025
9435551073
malabika.sarma123@gmail.com

**शोध-सार :**

भारत की अन्य भाषाओं की तरह असमीया भाषा की कविताओं की भी एक विशिष्ट पहचान है। असमीया कविता प्राचीन काल से ही समृद्ध है व इसकी अपनी एक अच्छी विरासत है। ग्रामीण गीत-कविता के सहज, सरल आनुभूतिक कमनीयता प्रारंभिक स्तर की कविताओं में उपलब्ध है। शंकर-पूर्व युग के कवि माधव कंदली और पीतांबर, मनकर, दुर्गावर इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। माधव कंदली की कविताओं में जहाँ छंदोवद्ध वर्णन का सौंदर्य पाया जाता है, वहीं पीतांबर, दुर्गावर, मनकर की कविताओं में सरल गीत की प्रचुरता देखने को मिलती है। शंकर युग के प्रमुख कवि श्रीमंत शंकरदेव की कविताओं में सात्विक गांभीर्य तथा माधवदेव की कविताओं में प्राचीन विरासत की मौलिकता और काव्य सौष्ठव दिखाई देते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में असमीया कविता नई अनुभूतियों से सजीव होकर अभिव्यक्त हुई है। वास्तव में असमीया कविता का विकास एक विचित्र प्रकार की दिशा और दशा तथा परिवर्तन का इतिहास है।

जैसा की साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है, अत: तत्कालीन समाज को उस समय के साहित्य में देखा जा सकता है। कवि न समाज की उपेक्षा कर सकता है और न ही अपने युग की। वस्तुत: कवि समसामयिकता से संबद्ध रहता है। 19वीं शती के उत्तरार्द्ध से प्रारंभ हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव असमीया साहित्य पर भी पड़ने लगा।

स्वाधीनता आंदोलन भारतीय इतिहास की एक ऐतिहासिक घटना है। इस आंदोलन में भारत के अन्य राज्यों के साथ-साथ असम ने भी भरपूर योगदान दिया था। परिणामस्वरूप तत्कालीन समय की कविताओं में स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव देखा जाता है।

असमीया साहित्य-जगत में राष्ट्रीय चेतना एक उल्लेखनीय पक्ष है, जो प्राचीन काल से पारंपरिक रूप से चली आ रही है और इसका चरम निदर्शन हम आधुनिक असमीया कविता में देख सकते हैं।

जोनाकी-युग की कवियों ने देश के प्रति असीम प्रेम अभिव्यक्त करने के साथ-साथ देश और समाज की दुर्दशा का चित्र भी उकेरा है। इसके साथ ही देश के

गौरवशाली अतीत का भी गुणगान किया है। इतना ही नहीं, इन कवियों ने कविताओं के माध्यम से एक शक्तिशाली, सुंदर और स्वस्थ मातृभूमि की प्रतिष्ठा का स्वप्न भी देखा है।

वास्तव में पराधीनता के समय में मानव के हृदय में सुप्त देशप्रेम जागृत करने वाले असमीया कवियों में उल्लेखनीय हैं- लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा, अंबिकागिरी रायचौधुरी, ज्योतिप्रसाद आगरवाला, विष्णुप्रसाद राभा, नलिनीबाला देवी आदि। इन कवियों के ओजस्वी राष्ट्रीय गीत और कविता ने सभी जाति, धर्म, वर्ण के लोगों को जागृत किया। उक्त प्रमुख कवियों का अनुसरण करते हुए राज्य के कई देशप्रेमी लोगों ने भी स्वाधीनता से संबंधित गीत, कविताओं की रचना की, जो आम जनता के बीच बहुत लोकप्रिय बने।

वस्तुत: साहित्य में गीत, कविता एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। अत: कहा जा सकता है कि स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने में इन गीत, कविताओं ने मुख्य भूमिका अदा की थी।

**बीज शब्द :**

राष्ट्रीय चेतना, असमीया साहित्य, कविता, स्वाधीनता आंदोलन, देशप्रेम।

**प्रस्तावना :**

भारत की अन्य भाषाओं की तरह असमीया भाषा की कविताओं की भी एक विशिष्ट पहचान है। असमीया कविता प्राचीन काल से ही समृद्ध है व इसकी अपनी एक अच्छी विरासत है। ग्रामीण गीत-कविता के सहज, सरल आनुभूतिक कमनीयता प्रारंभिक स्तर की कविताओं में उपलब्ध है। शंकर-पूर्व युग के कवि माधव कंदली और पीतांबर, मनकर, दुर्गावर इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। माधव कंदली की कविताओं में जहाँ छंदोवद्ध वर्णन का सौंदर्य पाया जाता है, वहीं पीतांबर, दुर्गावर, मनकर की कविताओं में सरल गीत की प्रचुरता देखने को मिलती है। शंकर युग के प्रमुख कवि श्रीमंत शंकरदेव की कविताओं में सात्विक प्राणमय गांभीर्य तथा माधवदेव की कविताओं में हृदयस्पर्शी निर्मल करुणा के दर्शन होते हैं। इस प्रकार ऊपर उल्लेखित कवियों की कविताओं प्राचीन विरासत की मौलिकता और काव्य सौष्ठव दिखाई देते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य से प्रभावित असमीया कविता नई अनुभूतियों से सजीव होकर अभिव्यक्त हुई है। फलस्वरूप भावना जगत में परिवर्तन, विस्तार और क्रांति परिलक्षित हुई है। वैयक्तिक अनुभूति के माध्यम से बहिर्जगत का चित्रण और राष्ट्रीय चेतना तथा स्वदेश प्रेम के गीत और कविता रचे जाने लगे। युग चेतना के मार्गदर्शक जोनाकी युग की 'त्रिमूर्ति' चंद्रकुमार आगरवाला, लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा, हेमचंद्र गोस्वामी के उदय ने असमीया साहित्य में संजीवनी शक्ति ही प्रदान नहीं किया; अपितु समग्र भाव जगत में एक नवीन स्पंदन ला दिया और एक नवीन चेतना का संचार किया। इससे पहले भी देशप्रेम के उद्घोषक के रूप में आनंदराम ढेकियाल फूकन, हेमचंद्र बरुवा तथा गुनाभिराम बरुवा ने सशक्त रूप में असमीया भाषा को विविध साहित्य रूपों में स्थापित किया। पाश्चात्य साहित्य और बांग्ला साहित्य के प्रभाव से प्रभावित असमीया रोमांटिक युग की काव्य धारा के विविध विषय में पराधीनता का विषाद और राष्ट्रीय चेतना भी पूर्ण रूप से अभिव्यक्त हुई है।

**विषय का उद्देश्य :**

राष्ट्रीय चेतना से तात्पर्य है - राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा, राष्ट्र का गौरव-गान तथा राष्ट्र के प्रति उस देश के नागरिकों की समग्र सोच और अनुभूति। स्वाधीनता आंदोलन भारतवर्ष की अस्मिता की खोज है। इस आंदोलन में भारत के अन्य राज्यों के साथ-साथ असम ने भी भरपूर योगदान दिया था। जैसा की साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है, इसीलिए कवि न समाज की उपेक्षा कर सकता है और न अपने युग की। कवि समसामयिकता से संबद्ध रहता है। अत: 19वीं शदी के उत्तरार्द्ध से प्रारंभ हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव, पराधीनता के प्रति क्षोभ का भाव तथा अंग्रेजी शासन के प्रति विद्रोह एवं क्रांति के स्वर असमीया कविता में प्रस्फुटित होना नितांत स्वाभाविक है। स्वाधीन देश के हर स्वाधीन नागरिक को अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का अधिकार होता है। इसीलिए साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का अध्ययन सामाजिक

जीवन में प्राण-तत्व की भूमिका निभाता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत विषय का चयन किया गया। परंतु यह विषय इतना व्यापक है कि इसे एक शोध पत्र में समेट लेना संभव नहीं है। अत: इस क्षेत्र में प्रवेश करने की दृष्टि मात्र से प्रस्तुत शोध पत्र का चयन किया गया है।

**विषय का महत्व :**

असमीया साहित्य जगत में राष्ट्रीय चेतना एक उल्लेखनीय पक्ष है, जो प्राचीन काल से पारंपरिक रूप से चली आ रही है और जिसका चरम निदर्शन आधुनिक असमीया कविता में परिलक्षित होता है। राष्ट्रीय चेतना तथा देशप्रेम की कविताओं में विशेषत: दो उल्लेखनीय तत्व पाए जाते हैं- विद्रोह और आत्मा। चूँकि कवियों के मर्मस्पर्शी हृदय में जिस प्रकार देश के प्रति असीम प्रेम है, उसी प्रकार देश की दुर्दशा के लिए क्षोभ भी है। डॉ. सत्येन शर्मा ने अपने 'असमीया साहित्यर समीक्षात्मक इतिवृत्त' नामक ग्रंथ में इस संबंध में इस प्रकार कहा है - 'अतीतर जय गान, पराधीनतार ग्लानि-अवसाद, जातीय ऐक्यर कारणे उदात्त आह्वान, आन कथात कबितात स्वदेश प्रीतिर प्रवाह बेजबरुवाते आरंभ हय आरु स्वाधीनता आंदोलनत सेइ भाव-परिपुष्ट हय। विंश शताब्दीर तृतीय-चतुर्थ (1920-40) दशकत तेने भाबर जोवार आहे।' (शर्मा 287, 2004) अर्थात डॉ. सत्येन शर्मा के अनुसार देशप्रेम का चरम उत्कर्ष भारत के स्वाधीनता आंदोलन के प्रारंभिक रूप में हुआ है और उसका चरम निदर्शन बीसवीं शताब्दी की कविताओं में देखा जाता है। वस्तुत: 19वीं शती के उत्तरार्द्ध से ही स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव असमीया कविता पर प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से देखा जा सकता है। वास्तव में पराधीनता के समय से ही असमीया कवि तथा गीतिकारों ने कविता और गीतों के माध्यम से जनता के हृदय में सुप्त देशप्रेम जागृत करने का प्रयास किया था। इन कवियों के ओज भरे राष्ट्रीय गीत और कविता ने सभी जाति, धर्म, वर्ण के लोगों को जागृत किया। वस्तुत: साहित्य में गीत, कविता एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। इसीलिए स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने में इन गीत-कविताओं ने मुख्य भूमिका अदा की थी।

**विषय की सीमावद्धता :**

प्रस्तुत शोध-पत्र के विषय के अंतर्गत स्वाधीनता-आंदोलन से प्रभावित असम के कुछ प्रमुख कवियों के

राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण गीत और कविताओं को सामान्य रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया।

**अध्ययन की पद्धति एवं व्यवहृत सामग्रियाँ :**

प्रस्तुत शोध-पत्र के अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। इसी पद्धति से राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण असमीया कविता (स्वाधीनता आंदोलन के विशेष संदर्भ) का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। विश्लेषण करते समय अध्ययन की सुविधा के लिए असमीया कविता संबंधी विभिन्न विद्वानों द्वारा रचित ग्रंथ और भारत तथा असम के इतिहास संबंधी ग्रंथों की सहायता ली गई है।

**विषय की आलोचना :**

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं शताब्दी में साहित्य में राष्ट्रीय चेतना तेजी से उभरी। देशवासियों ने ब्रिटिश शासन की दुर्भावना को समझा और देश की एकता को गहराई से महसूस किया। चूँकि साहित्यकार अपने युगीन परिवेश से अछूता नहीं रह सकता, यही कारण है की उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के असमीया कवि समाज की कविताओं में जो राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की लहर दौड़ रही थी, यही राष्ट्रीय चेतना का स्वर इस काल के साहित्य में परिलक्षित होता है। वस्तुत: स्वाधीनता आंदोलन की धूम, देश में मची हलचल ने कवियों को राष्ट्रवादी काव्य की गंगा बहाने के लिए प्रेरित किया। स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने के लिए और जनता के हृदय में सुप्त देश-प्रेम तथा स्वाधीन भारत का स्वप्न जगाने के लिए नवीन चंद्र बरदलै अंबिकागिरी रायचौधुरी, ज्योतिप्रसाद आगरवाला, विष्णुप्रसाद राभा, नलिनीबाला देवी आदि कवि तथा गीतकारों ने गीत और कविताओं की रचना की। उक्त प्रमुख कवि और गीतिकारों का अनुसरण करते हुए राज्य के विभिन्न स्थानों के लोगों ने स्वाधीनता से संबंधित गीत-कविताओं की रचना की थी, जो साधारण जनता के बीच बहुत लोकप्रिय बने।

असम के इतिहास में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता का सूत्रपात 'यंडाबू संधि' से माना जाता है। पराधीनता की ग्लानि से पीड़ित असमीया लोगों ने गोमधर कुँवर और पियली फूकन के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह की घोषणा की। इसका प्रमाण इस लोकगीत में देखा जा सकता है :-

खामति, नगाटि, गारो, खाचीयाटी
लगते दफला, मिरि
रंगचिला हाबिते बर मेल पातिछे
फिरिंगिक धरोगोइ बुलि

(बरदलै1.2010)

सन 1857 में भारतवर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध जिस विद्रोह की घोषणा हुई थी, उस विद्रोह में असम से मणिराम देवान शहीद हुए थे। निम्न उल्लेखित लोकगीत इसका प्रमाण है :-

सोनर धोवाखोवात खालि तइ मणिराम
रूपर धोवाखोवात खालि
किनो रजाघरत द्रोह आचरिलि
डिङत चिपजरी ललि

(बरदलै, 2:2010)

इसके अतिरिक्त फुलगुरिर धाबा, पथरूघाटर रण आदि में भी असम की जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया था और विदेशी शासन और शोषण के विरुद्ध जन आंदोलन प्रारंभ किया था।

महात्मा गांधी के नेतृत्व में पूरे भारतवर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ हुआ। असम में भी नवीन चंद्र बरदलै, चंद्रनाथ शर्मा, तरुणराम फूकन, गोपीनाथ बरदलै आदि के नेतृत्व में असम की जनता ने असहयोग आंदोलन में पूरी तरह योगदान किया। 'कामरूप जातीय उन्नति विधायिनी सभा' के माध्यम से अंबिकागिरी रायचौधुरी ने असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए उदात्त भाषण देकर जनता का आह्वान किया। असम के अधिकांश लोगों ने आंदोलन के प्रचार-प्रसार कार्य में भाग लिया था। भारतवर्ष के स्वाधीनता आंदोलन का प्रतिफलन जिन कवियों की कविता और गीतों में हुआ है, उनमें सबसे प्रथम लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा का नाम उल्लेख किया जा सकता है। उन्होंने अपनी कविता और गीतों के माध्यम से जनता में देश-प्रेम जगाने के प्रयास किया था। निम्नलिखित गीत इस तथ्य को प्रमाणित करता है, यथा : -

आमि असमीया नहउ दुखीया
किहर दुखीया हम ?

सकलो आछिल सकलो आछे
नुबुजू नलओ गम।
(डेका हाजरिका,137.2006)

अर्थात हम असमीया दीन-हीन नहीं हैं। दीन-हीन क्यों होंगे। हमारे पास सब कुछ है। इसीलिए हम इसकी थाह लेना चाहते।

स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी कर्मवीर नबीन चंद्र बरदलै आंदोलन के साथ-साथ कविता और गीत लिखा करते थे। भारत वर्ष को पराधीनता से मुक्त करना ही उनके गीतों का मूल लक्ष था, यथा :-

आमार विषम पण
पूर्ण स्वाधीनता लभिम लभिम
आगत थई मरण
(तालुकदार .41.1995)

अर्थात हमारा मूल लक्ष स्वाधीनता है । स्वाधीनता के लिए हम मरने के लिए भी तैयार हैं।

स्वाधीन भारत स्वतंत्र भारत
बताहत बाजे सुर
भारत संतान जीयाई थाकोते
इ सुर नपरे उर
(बरदलै.25.2010)

अर्थात हवा में भी स्वाधीन भारत का सुर बज रहा है। जब तक भारतवासी जीवित रहेंगे, तब तक स्वाधीन भारत के लिए यह सुर बजता रहेगा ।

असमीया साहित्य के रोमांटिक युग प्रसिद्ध कवि अंबिकागिरी रायचौधुरी की कविता में स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष प्रभाव देखा जाता है। उनके द्वारा रचित ओजपूर्ण गीत और कविताओं ने स्वाधीनता आंदोलन में योगदान देने के लिए जनता को प्रेरित किया। सन 1926 के पांडू कांग्रेस अधिवेशन में उनके द्वारा रचित गीत गाया था। उक्त अधिवेशन का शुभारंभ उनके द्वारा रचित निम्नलिखित गीत से किया गया था :-

आजि बंदों की छन्देरे समागत विराट
नर नारायण रूप, नर नारायण रूप
लांछित पराधीन कुंचित चित-मन नाइक
फूल-चंदन-धूप नाइ फूल-चंदन-धूप
(बरदलै. 32.2010)

(अर्थात आज हमारे सामने नर नारायण का विशाल रूप है। किस छंद से उनकी वंदना की जाए, क्योंकि आज हम पराधीन हैं, लांछित हैं। इसीलिए हमारा मन संकोचित हो गया है। आज वंदना करने के लिए हमारे पास फूल-चंदन, धूप नहीं हैं।)

कवि रायचौधुरी ने देश के युवावर्ग को देश की स्वाधीनता के लिए जागृत करने के लिए निम्नलिखित कविता के माध्यम से आह्वान किया :-

जाग डेका तेज, वज्र कठिन
भाङि पुनु गढ़ा हातूरी लोइ
स्वदेश सेवात भंदामी बोर
भाङि उरी जक चूर्ण हय
(बरदलै.32.2010)

(अर्थात हे युवा शक्ति ! आलस्य त्याग कर पुन: हथौड़ा लेकर निर्माण करो, क्योंकि देश सेवा में भंडामी नहीं होना चाहिए।)

महात्मा गांधी जब गुवाहाटी आए थे, तब नवीनचंद्र बरदलै ने अंबिकागिरी रायचौधुरी का परिचय गांधीजी के साथ इस प्रकार कराया था कि ये आज से पाँच/छह साल पहले से ही गीतों के माध्यम से जनता के बीच स्वाधीनता आंदोलन के अहिंसा-तत्व के प्रचार-प्रसार में लगे हुए हैं।

सन 1921 में कवि को बंदी बनाकर जेल में रखा गया। जेल में शौचालय साफ करते समय उन्होंने कविता के माध्यम से देश का जनता का आह्वान करने का प्रयास किया कि अगर जनता अभी स्वाधीनता के प्रति सचेत नहीं होगी, तब विश्व दरबार में भारतवर्ष का कोई स्थान नहीं रहेगा, यथा :-

वीर बेशेरे धर झारू धर
जातिर जीवन कर मनोहर
सारि पुचि चुके कोने
जत जि आछे जाहि जाबर
नहले जे विश्व सभात नहब तोर भार ठाइ
(बरदलै.35.2010)

(अर्थात वीर वेश धारण करके जाति को साफ करो। जिस प्रकार झाड़ू से एक स्थान का कूड़ा-कटका साफ किया जाता है, उसी प्रकार देश के कोने-कोने में

करो, नहीं तो विश्व दरबार में बैठने के लिए स्थान नहीं मिलेगा।)

स्वाधीनता आंदोलन के समय का एक उल्लेखनीय कवि हैं- ज्योतिप्रसाद आगरवाला, जिनके द्वारा रचित गीत और कविता ने असहयोग आंदोलन को नवीन चेतना प्रदान की थी। उदाहरण के रूप में उनके द्वारा रचित निम्नलिखित गीत ले सकते हैं :-

गाँधीर कथा शुनिबले सदाय हुचियार
मइ भलन्टियार
उजनित बोले साइट गहरी (सत्याग्रह)
नमनीत भेलेनडार
कोनोए बोले चेछासेवक
तथापिऊ मूर गरम बुकुत स्वराजर जुई
ज्वलिछे भमक भमक
स्वाधीनता आनिबले
देशत लगाऊ खलक

(बरदलै.45.2010)

(अर्थात गांधीजी का आदेश सुनने के लिए स्वयं सेवक सदा सावधान रहते हैं। कोई इन्हें सत्याग्रही वालंटियर और कोई स्वयंसेवक कहता है। जो भी हो, उनके हृदय में स्वराज्य की आग धधक रही है और स्वाधीनता लाने के लिए देश में हलचल मचाने को तैयार हैं।

असमीया जाति को प्रेरणा देने के लिए वे लिखते हैं:-

लूइटर पारे आमि डेकालरा
मरिबले भय नाइ।
मुकुटि मेघर महान मेजि
तेजाल फिरींगती छाइ
---
आमि आगे बाढ़ि
डिङि पाति पाति
तेजरे बलिशाल जामे बुलाइ

(बरदलै.34.2010)

ज्योति प्रसाद आगरवाला के साथ- साथ असम के स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी कवि के रूप में विष्णु प्रसाद राभा का नाम ले सकते हैं। उनके द्वारा रचित ओजमयी गीतों ने जनता को स्वाधीनता के लिए प्रेरणा दिया था, यथा :-

'अ असमीया डेका दल
---
असमीया समनीया आगबाढ़ि जाऊँ बल
आगबाढ़ि जाऊँ बल

(दास .137.2008)

(अर्थात हे असमीया तरुण दल! हम एकसाथ आगे बढ़ेंगे।)

स्वाधीनता आंदोलन में नलिनी बाला देवी की भूमिका भी उल्लेखनीय है। असहयोग आंदोलन में उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई थी। जिस दिन भारतवर्ष की स्वाधीनता घोषणा की गई थी, उसी दिन ही कवि ने निम्नलिखित गीत की रचना की थी, यथा :-

पोनद्धर अगस्तर मुक्तिर प्रथम प्रभात
हिमाद्रिर शिखरत त्रिरंगा पताका उरे दुंदुभि ध्वनित

(देवी. 213.2012)

(अर्थात पंद्रह अगस्त स्वाधीन भारत का प्रभात। हिमालय शिखर पर तिरंगा लहर रहा है।)

इसके अतिरिक्त कनक चंद्र शर्मा, पद्मधर चलिहा के ओजमयी गीतों ने स्वाधीनता आंदोलन को शक्तिशाली बनाया था। उदाहरण के रूप में पद्मधर चलिहा का निम्नलिखित गीत उल्लेखनीय है :-

सौ जे स्वराज निचान
उन्नत शिरे होवा आगुवान

( बरदलै.64,2010)

(अर्थात स्वराज्य का झंडा लहरा रहा है। इसीलिए सिर उठाकर आगे बढ़ो।)

इन प्रमुख कवियों के अतिरिक्त अनेक कवि तथा गीतिकार हैं, जिहोंने भी स्वाधीनता के प्रति जनता को जागृत करने के लिए गीत और कविता की रचना की।

अत: उनके गीत और कविताओं में भी स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव देखा जाता है, यथा :-

42 चनते अ कनकलता
गाँधीजीर वाणीरे अ' कनकलता
लैछिला आशीर्वाद, अ' कनकलता

करिला एम. भि पाछ, अ' कनकलता
झंडा उराऊते प्राणटि एरिला
(बरदलै.83.2010)

( अर्थात सन 1942 में गांधीजी की वाणी से आशीर्वाद पुष्ट कनकलता ने एम.भि पास किया था। किंतु तिरंगा झंडा लहराते समय प्राण त्याग किया।

पानवारीत बागरिल गाड़ी।
बाबाजीए खुडाले डाढ़ी।।
हुचरी बाबु उ दलौ चराई।
गाँधीर नाम लोई आह उलाइ।।

**निष्कर्ष :**

स्वाधीनता आंदोलन का समय राष्ट्रीय चेतना के उत्कर्ष का समय था। उस समय हर भारतीय जनमानस में राष्ट्रप्रेम का भाव समुद्र की लहरों की तरह हिलोरे मार रहा था। अत: असमीया कविता और गीतों में स्वाधीनता आंदोलन का पूर्ण प्रतिफलन पाया जाता है और असमीया कवियों की कविताएँ देश के प्रति अनुराग की भावना जगाने के साथ-साथ जननी जन्म भूमि के पावन चरणों पर श्रद्धानत होकर आत्मबलिदान कर देने की प्रेरणा प्रदान करती हैं। इस प्रकार तत्कालीन असमीया कविता में जहाँ एक ओर पराधीनता के प्रति क्षोभ का भाव अभिव्यक्त किया गया है, वहीं दूसरी ओर देश के गौरवपूर्ण अतीत का गुणगान करते हुए देश के प्रति प्रेम का भाव प्रकट हुआ है। कविता तथा गीत एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। इसीलिए पराधीनता के समय में देशवासियों के हृदय में सुप्त देशप्रेम को जगाने के लिए कवियों ने ओजमय गीत-कविताओं की रचना की थी। इन गीत-कविताओं से अनुप्रेरित अनेक अनाम कवियों ने बिहूगीत, विवाह गीत आदि में भी स्वाधीनता आंदोलन की भावना को व्यक्त किया था। अत: तत्कालीन समय के अधिकांश गीत-कविताओं में स्वाधीनता आंदोलन की पूर्ण छवि देखी जाता है। ❑

**संदर्भ ग्रंथों की सूची :**


1. गोगोई, लीला (संपा)- आधुनिक असमीया साहित्य परिचय, बनलता, 2002
2. डेका हजारिका, करबी : असमीया कविता, बनलता, 2006
3. देवी, नलिनी बाला - एरिअहा दिनबोर, लॉयर्स बुक स्टॉल, 2012
4. दास, योगेश तथा अन्य (संपा ) - अंबिकागिरी रायचौधुरी, असम प्रकाशन परिषद, 1968
5. पुजारी, डॉ. अर्चना (संपा) - असमीया कवितार विचार विश्लेषण, ज्योति प्रकाशन, 2000
6. दास, योगेश तथा अन्य (संपा) - विष्णु प्रसाद राभा, राभा रचनावली, प्रकाशन संघ, 2008
7. पुजारी, डॉ. अर्चना (संपा) - असमीया कवितार विचार विश्लेषण, ज्योति प्रकाशन, 2000
8. फुकन, नीलमणि (सम्पा) - कुरि शतिकार असमीया कविता, असम प्रकाशन परिषद, 2005
9. बरदलै, निर्मलप्रभा (संपा) - स्वाधीनता संग्रामर असमीया गीत और कविता, साहित्य अकादमी, 2010
10. शर्मा, डॉ. सत्येन -असमीया साहित्यर इतिवृत
11. शइकिया, नगेन - असमीया कविता आरु अन्यान्य विषय, चंद्र प्रकाश, 1966
12. हाजरिका, बिमल कुमार - रूपकोंवर, कलागुरु, सुधाकंठ आरु अन्यान्य, वाणी प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2011

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

# समकालीन हिंदी कविताओं में युवा महिला सशक्तिकरण

## प्रातिनिधिक कविताओं के संदर्भ में

**नमिता.के.**

शोधार्थी, हिंदी अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग,
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय,
मैसुरु - 570006
9945734942
namithak4942@gmail.com

**डां. प्रभुसेन डी**

शोध निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष,
हिंदी अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय,
मैसुरु - 570006
9945653167
drprabhusankasouhindi@gmail.com

**लेख का सार :**

यह लेख समकालीन हिंदी कविताओं में युवा महिला सशक्तिकरण के उभरते विषय का विश्लेषण करता है। ये कविताएँ महिलाओं की स्थिति का वर्णन करते हुए सामाजिक परिवर्तन के लिए एक प्रभावी माध्यम बन गई हैं। वे रुढ़ियों को तोड़ने, आत्मनिर्भरता और समानता के लिए संघर्ष करने वाली युवा महिलाओं की आवाज़ों को उजागर करती हैं। लेख में यह बताया गया है कि हर क्षेत्र—शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक—में सशक्त होना आवश्यक है। युवा महिलाएँ शिक्षा प्राप्त करके अपने अधिकारों को पहचान रही हैं और सदियों से चले आ रहे उत्पीड़न एवं भेदभाव को समाप्त कर एक समान समाज की स्थापना कर रही हैं। वर्तमान में, महिलाओं में जागरूकता और आत्मनिर्भरता का नया उत्साह देखने को मिल रहा है, जिससे न केवल उनके जीवन में सुधार हो रहा है, बल्कि समाज और देश का भी विकास हो रहा है। इस प्रकार, युवा महिलाओं का सशक्तिकरण समाज के समग्र लाभ के लिए महत्वपूर्ण है।

**मुख्य शब्द :**

सुरक्षित भविष्य, लैंगिक भेद-भाव, जागरूकता, सशक्त, आत्मनिर्भरता, शिक्षा, कौशल, स्वतंत्रता, समानता, आत्मविश्वास।

**प्रस्तावना :**

वर्तमानकालीन समाज में युवा पीड़ी का महत्व बढ़ रहा है आधुनिक युग में युवाओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। एक राष्ट्र के विकास में युवावर्ग का योगदान अधिक होती है। युवापीड़ी आज के आत्मनिर्भर समाज की शक्ति है और उस शक्ति से ही राष्ट्र की रक्षा और विकास संभव है। हर एक स्तर पर युवावर्ग को प्रबुद्ध बनाने की प्रक्रिया को युवा सशक्तिकरण कहते हैं। युवा सशक्तिकरण की जब बात आती है तब युवामहिला बहुत मायने रखती है। समाज की उन्नति में युवामहिला का योगदान अग्रगण्य है। युवा सशक्तिकरण का उद्देश्य समाज में एक ऐसी शक्ति का संचालन करना है जिससे हर एक की सोच में सकारात्मकता आए और उनकी यह शक्ति से राष्ट्र में विकास हो। युवामहिला को अपने व्यक्तित्व, शैक्षिक और आर्थिक आदि विषयों में विकास का अवसर मिले एवं वे देश के एक आदर्श नागरीक बन सके यही 'युवामहिला सशक्तिकरण' है।

**समकालीन कविताओं में युवा महिला सशक्तिकरण :**

सशक्तिकरण की भावना को लोगों में समर्थ रूप से जागृत करने का दायित्व साहित्य का भी है । समाज की तरह साहित्य भी गतिशील है, साहित्य समाज में हो रहे परिवर्तन का साक्षी है। हम देख सकते हैं कि साहित्य के हर एक विधा ने मनुष्य को सशक्त एवं आत्मनिर्भर बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ा है। हर एक साहित्यकार ने अपने इस दायित्व को बखूबी निभाया है और आज भी निभा रहा है। साहित्य की एक प्रमुख विधा कविता है। कविता साहित्य का वह विधा या रूप है जो व्यक्ति को हृदय से प्रभावित करती है। समकालीन कविता जो अधिक से अधिक जीवन के निकट गयी है, इसमें न तो भावावेग है न तो कल्पना का अतार्किक विस्तार। वह जीवन के व्यापार, अनुभवों के सच्चाई को अपनाती है। अत: समकालीन कविता अपने परिवेशगत यथार्थ की अभिव्यक्ति है। अपनी दिशा एवं दृष्टि में यह नई पीड़ी की संघर्ष से सशक्तिकरण तक की गाथाओं से भरी जीवन की कविता है।

**समाज में प्रभावी परिवर्तन :**

भारतीय संप्रदाय में वैदिक काल में नारी को बहुत सम्मान दिया जाता था। कालांतर में यह बदलता गया, मध्यकाल में आते-आते यह बहुत विकार रूप ले चुका था। आजादी के बाद कानूनी स्तर पर नारी को सक्षम और सशक्त बनाने के लिए प्रयास किया गया, किंतु सामाजिक स्तर पर जो बदलाव आना चाहिए था। वह परिलक्षित नहीं हुआ, जिसका मुख्य कारण हमारी पुरूष प्रधान मानसिकता जिसे हम बदल नहीं सके। इस वजह से नारी के प्रति सबका रवैया दोयम दर्जे का रहा। यही कारण है कि जिस नारी को वैदिक काल में सम्मान देकर शक्ति माना जाता था। वही आज उसके लिए सशक्तिकरण की आवश्यकता का महसूस की गयी । फिलीपिन की सूजन मैगनों की कविता में हम देख सकते हैं कि-

'विश्व की औरतों
अपनी शक्ति पहचानो
जंजीर को तोड़ो
मुक्त होकर
अपने लिए नए विश्व की घोषणा करो
जहाँ वर्ग और जाति न हो
सब स्वतंत्र और समान हो
जहाँ न्याय हो
ताकि हम मनुष्य की तरह जी सके ।'[1]

इस कविता में सशक्त हो रही युवा नारी की आवाज हम सुन सकते हैं । समाज में लिंग के आधार पर भेदभाव, पुरूष वर्चस्व तथा पितृ सत्तात्मकता का विरोध करकर युवा नारी को आत्मनिर्भर बनाना ही युवा महिला सशक्तिकरण है। इसका तात्पर्य यह नहीं की सभी नारियाँ पुरूष विरोधी है। उसके बदले नारी को सशक्त करना, उसमें आत्मविश्वास जगाना यही स्त्री सशक्तिकरण है। नारी के विषय में एक कथन हमेशा कहा जाता है- यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमंते तत्र देवता:। इसका तात्पर्य है जहाँ नारी की पूजा होती है अर्थात् सम्मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं मतलब जहाँ नारी का सम्मान होता है वहाँ सुख, समृद्धि व शांति का वास होता है। नारी को आदर सम्मान देना भी भारतीय संप्रदाय माना जाता है। हमारे धर्म ग्रंथों में नारी को देवी के रूप में देखा गया है वही उसे अबला बताकर परम्परा और संप्रदाय के नाम पर बांधा भी जाता है। ऐसा नहीं है कि पहले की महिलाओं ने अपने इस बंधनों को तोड़ने के लिए लड़े नहीं। पहले की स्त्रियाँ लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए लड़ रही थी । शिक्षा, रोजगार, मतदान आदि विषयों के लिए लड़ रहे थे। परंतु आज नारी इन अधिकारों के साथ-साथ घर, परिवार, समाज में भी अपनी अस्मिता को बचाने के लिए अपने आपको सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक, राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों में अपने आपको सबल कर रही है । सही मायने में इसी को युवा महिला सशत्किकरण कह सकते हैं।

**सुरक्षित भविष्य :**

महिलओं को सशक्त बनाने से न केवल वे आत्मनिर्भर बनेगी साथ ही साथ उनकी भविष्य भी सुरक्षित बन सकती है। युवा महिला की बात करें तो सबसे पहले वीरांगनी रानी लक्ष्मीबाई का नाम सबसे पहले याद आती है। अंग्रेजों के खिलाफ उस समय में झाँसी की रानी ने

लड़ा था। उनके आगे अच्छे-अच्छे अंग्रेज भी हार मानते थे और डरते थे ।

'लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयं वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसके तलवारों के वार,
नकली युद्ध, व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना, दुर्ग तोड़ना ये थे उसके प्रिय खिलवार,
महाराष्ट्र-कुल-देवी उसकी भी आराध्य भवानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी।'[2]

प्रस्तुत कविता स्त्री में छिपी शक्ति और क्षमता को दर्शती है। अपने आप में आत्मविश्वास रखने और अपनी क्षमताओं पर विश्वास करने के लिए प्रोत्साहित करती है उसके साथ ही अपने सपनों को पूरा करने और एक बेहतर भविष्य के लिए प्रोत्सहित करती है।

**लैंगिक भेद-भाव की पहचान :**

भारतीय संस्कृति में लड़कियों को लक्ष्मी, दुर्गा, शक्ति कहा जाता है। वही दूसरी तरफ उसे अबला माना जाता है और उसकी कोई जगह ही नहीं कहकर बताया जाता है। अनामिका द्वारा लिखित 'बेजगह' कविता में कवयित्री कहती है कि-

जगह, जगह क्या होती है?
यह, वैसे, जान लिया था हमने
अपनी पहली कक्षा में ही !
याद था हमें एक-एक अक्षर
आरम्भिक पाठों का-
'राम, पाठशाला जा!
राधा खाना पका!
राम आ बताया खा!
राधा, आ झाड़ई लगा!
भैया अब सोएगा,
जाकर बिस्तर बिछा!
आहा, नया घर है !
राम, देख, यह तेरा कमरा है !
और मेरा?'
'ओ पगली,
लड़कियाँ हवा, धूप, मिट्टी होती है
उनका कोई घर नहीं होता!' [3]

प्रस्तुत कविता में अनामिका जी ने लड़का और लड़की के बीच जो भेद-भाव होता है उसे बताते हुए कहती है कि यह भेदभाव घर परिवार से ही प्रारंभ होती है। घर में लड़की से हर काम करवाया जाता है और जब जगह की बात आती है तो उसकी कोई जगह ही नहीं है यह बताया जाता है। लड़कियों को हवा, मिट्टी, धूप कहा जाता है इनका कोई घर नहीं होता, ठीक उसी प्रकार लड़कियों का कोई घर नहीं होता। इस कविता के माध्यम से महिलाओं को समाज में अपनी जगह बना ने के लिए प्रोत्साहित करती है।

**जागरूकता अभियान :**

समकालीन कविताओं को अगर हम ध्यान से देखेंगे तो सिर्फ स्थितियों का वर्णन ही नहीं हालात को बदलने की एक आवाज भी सुनाई देती है। इसलिए कई बार हम कविताओं में इसे देख सकते हैं।

'कोमल है, कमजोर नहीं तू।
शक्ति का नाम ही नारी है॥
जग को जीवन देनेवाली।
मौत भी तुझसे हारी है॥' [4]

उपर्युक्त कविता अपनी क्षमता तक पहुंचने के लिए युवा महिलओं की प्रेरणा को दर्शतीहै। और इस बात पर भी जोर दिया गया है कि स्त्री को सबल और शक्तिशाली बनना है। साररूप में कहा जा सकता है कि सशक्तिकरण एक मानसिक आस्था है, उसे शक्ति के विचार से ली गई है। स्त्री साक्षात शक्ति है, सबला है। भारतीय समाज में नारी का स्थान पूजनीय है। वह कभी 'बेटी' के रूप में कभी 'बहन' के रूप में कभी 'पत्नी' एवं 'प्रेमिका' के रूप में इस प्रकार महिलाएँ कई रूपों में जीवन व्यतीत करते हुए एक सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज की निर्माण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। युवकों व पुरूषों में व्याप्त सभी गुणों के अतिरिक्त, युवतियों में और महिलाओं में बहुत से विशेष गुण विधा मान है। इन्हीं गुणों के कारण वह सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में सबला बन रही है।

**शिक्षा और कौशल विकास :**

युवा महिला सशक्तिकरण में शिक्षण का महत्वपूर्ण योगदान है। महिलओं को शिक्षा और कौशल विकास के

अवसर प्रदान करना महत्वपूर्ण है। एक लड़की जब शिक्षित होती है तो केवल दो परिवार ही नहीं बल्कि दो पीढ़ियाँ शिक्षित बन जाती है।

'अक्षर के जादू ने
उस पर असर बड़ा बेजोड़ किया
चुप रहना छोड़ दिया
लड़की ने डरना छोड़ दिया
हँसकर पाना सीख लिया
रोना पछताना छोड़ दिया
घुटघुटकर अब नहीं मरेगी,
मंच पे चढ़कर बोलेगी
समय और शिक्षा ने
उसके चिंतन का रूख मोड़ दिया है॥' [5]

प्रस्तुत कविता में कवि ने नारी की शैक्षणिक सशक्तिकरण के बारे में बताया है। उनका मानना है कि शिक्षण के कारण स्त्री के मन में एक नया आत्मविश्वास जगा है। शिक्षण के कारण वह दुनिया के हर एक कोने में जाकर काम कर पा रही है। नारी आज सही मायने में हर जगह पर अपना नाम कमा रही है तो वह शिक्षण के कारण ही है। शिक्षा की वजह से आज नारी सशक्त होकर हर मुश्किलों का सामना कर कर अपना राह खुद तय कर रही है। युवा महिला सशक्तिकरण के कारण ही आज देश भी आगे बढ़ रहा है।

**स्वतंत्रता और समानता :**

शिक्षा के साथ-साथ आत्मविश्वास भी होना आवश्यक है जब युवा महिला में आत्मविश्वास जागृत होता है तो वह अपनी क्षमता से बढ़कर काम करती है । हर एक काम में अपना नेतृत्व लेकर सशक्त रूप से कार्य करती है । प्रतिभा अहिरे की कविता 'हे दोस्त' में वे कहते हैं-

'नहीं मानती खुद को अर्द्धांगिनी
मैं सिर्फ एक शरीर नहीं हूँ
तुम मुझे अर्द्धांगिनी कहकर मेरा अपमान मत करो
मैं हूँ एक संपूर्ण शरीर स्वतंत्र मस्तिष्क
मेरे कंधों, पैर और मस्तिष्क का
सदुपयोग जाननेवाली एक व्यक्ति हूँ
एक इंडिविजुअल।' [6]

यह कविता एक युवा महिला की आत्मजागरूकता और सामाजिक बन्धनों से मुक्ति की इच्छा को दर्शाती है और यह कविता सामाजिक सशक्तिकरण का उद्घोष करते हुए सामाजिक समानता की माँग करती है। युवा नारी अपनी शक्ति पहचानकर अपनी वजूद के लिए लड़ने में सशक्त व आत्मनिर्भर बनना चाहती है।

**निष्कर्ष :**

एक अच्छा नागरिक बनने के लिए हर एक क्षेत्र में अर्थात् शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में सशक्त होना आवश्यक है। महिलाओं के नेतृत्व गुणों का विकास करना भी आवश्यक है। युवा महिला आज शिक्षा हासिल करके समाज में अपना पहचान बनाके अपने आपको सशक्त और आत्मनिर्भर बनाकर सदियों से चले आ रहे उत्पीड़न व भेद भाव समाप्त कर एक ऐसी समाज की स्थापना कर दिया है जिसमें सबको बराबर का अधिकार मिले। आजकल समाज में हो रहे बदलाओं के कारण नारी के भीतर एक नया उमंग जागी है वह जागरूक और आत्मनिर्भर होती दिखायी पड़ रही है। इससे समाज और देश का विकास हो रहा है। महिला समाज से लड़कर अपने आपको सशक्त बना चुकी है। समाज ने हर एक मोड़ पर उसे अपनी जगह दिखाने की कोशिश की। इन सभी कठिनाइयों से संघर्ष करते हुए वह आगे आकर आत्मविश्वास से आज हर क्षेत्र पर अपना नाम बना रही है। युवा महिला सशक्तिकरण के बिना मानवता का विकास अधूरा है। इस बात को ध्यान में रखते हुए हमारे सरकार ने भी 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ', 'उज्ज्वला', 'निर्भया' आदि योजनाओं को शामिल कर चुके हैं । आजकल की लड़कियाँ और महिलाएँ सिर्फ घर गृहस्थी को सम्भालने तक ही सीमित नहीं रही है बल्कि गृहणी से लेकर एक सफल व्यवसायी की भूमिका को सहज ढंग से निभा रही है। व्यावसायिक क्षेत्र हो या पारिवारिक महिलाओं ने यह साबित कर दिया है कि वे हर काम कर सकती है जो कभी पुरूषों के योग्य समझा जाता था। आज नारी स्वयं को बेहतर साबित करने का एक भी मौका गवाना नहीं चाहती। वह खुद में छिपी ताकत को पहचानकर अपना स्वतंत्र अस्तित्व निर्माण करने का प्रयास करती है। शिक्षित,

आत्मनिर्भर बन जाने के कारण वह अपने ऊपर विश्वास करके अपने जीवन संबंधी निर्णयों को ज्यादा बेहतर तरीके से लेने की काबिलियत रखती है। आज की युवा नारी राम के वेश में छिपा हुआ रावण को पहचानकर उसे बेनकाब करने की काबिलियत भी रखती है। समाज में हर एक क्षेत्र में अपनी मेहनत और काबिलियत के बल पर युवानारी व महिलाओं ने अपनी एक अलग पहचान बना चुकी है। ❑

**संदर्भ :**


1. प्रतापमल, महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व,कुरूक्षेत्र मार्च 2008, पृ.सं. 06.
2. डॉ.सुषमा,काव्य सुषमा( बी.ए/बी.एससी पाठ्यक्रम हेतु), बोर्ड चेयरपर्सन, डॉ.गिरिजा कुमारी.आर, संपादिका , राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली- 110006, 2018, पृ.सं. 73, 74.
3. डॉ.एस.ए. मंजुनाथ, काव्य मंगल, संपादक डॉ.एस.ए. मंजुनाथ, लोकभारती प्रकाशन, पृ.सं. 71, 72.
4. महिला विकास एवं सशक्तिकरण, मॉड्यूल-11, प्रथम संस्करण- 2016, समाजकार्य स्नातक पाठ्यक्रम (द्वितीय वर्ष), महात्मा गाँधी, चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट जिला- सतना (मध्यप्रदेश)- 485334. पृ.सं. 05.
5. श्यौराज सिंह 'बेचैन', क्रौंच हूँ मैं ,पृ.सं. 48.
6. यथार्थवाद और हिंदी दलित साहित्य,पृ.सं. 108
7. सुनिता बिष्ट, अनामिका की कविताओं में स्त्री विमर्श, Journal of Acharya Narendra Dev, Research Institute, ISSN: 0976-3287, Vol-28 (Jun-2019-Aug-2019)
8. अनामिका, अनामिका शिल्प, नारी विमर्श अनामिका की कविताएँ,विशेषांक-समकालीन हिंदी साहित्य और विमर्श, BY- GINA JOURNAL 43, ISSN: 2321-8037
9. Dr.Hemalatha Sharma, Asst.Prof., JCMM-Assandh Dist., Karnal, Haryana, India,"हिंदी साहित्य में नारी चेतना ISSN: 2230-7540, January-2012.
10. सं.रजनी तिलक, रजनी अनुरागीसं.रजनी तिलक, रजनी अनुरागी समकालीन भारतीय दलित महिला लेखन, स्वराज प्रकाशन, दिल्ली- 2011.
11. महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में महिला एवं बाल विकास विभाग के योगदान का मूल्यात्मक अध्ययन (छ.ग.के राजनाद गाँव जिला के विशेष संदर्भ में)।
12. स्नेह सृजन एवं स्त्री सशक्तिकरण (हिंदी साहित्य के परिपेक्ष्य में), संपादक : अरविंद वाजपयी,सह संपादक- प्रो.राम मोहन पाठक एवं प्रो. टी. आर.भट्ट,अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण: 2022.
13. बृजेन्द्र पांडेय, सहायक प्राध्यापक, मानव संसाधन विकास केंद्र, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर,महिला सशक्तिकरण की अवधारणा और हिंदी।
14. कस्त्वार रेखा स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ,राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2006.
15. राकेश कुमार,नारीवादी चिंतन और उत्तर-आधुनिकतावाद: नारीवादी विमर्श,आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा, 2004.
16. डॉ. प्रतिभा मुदलियार स्त्री विमर्श और समकालीन साहित्यिक संदर्भ।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

# स्त्री-विमर्श का बृहद् आख्यान : आवां

डॉ. मजीद शेख

सहयोगी प्राध्यापक एवं
शोध निर्देशक, हिंदी विभाग
प्रतिष्ठान महाविद्यालय, पैठण,
जिला - छत्रपति संभाजीनगर
पिन कोड - 431107 (महाराष्ट्र)
09765944586
majidmshaikh@gmail.com

**शोध सार :**

आवां में श्रमिक जीवन, श्रमिक आंदोलन और उनके अंतर्विरोध का विस्तार से विवेचन हुआ हैं। उपन्यास में घाटकोपर से लेकर कांजूर मार्ग, भांडुप, मुलुंड तक फैली-बस्तियों में रहनेवाले मजदूरों की जिंदगी का खुला और यथार्थ चित्रण मिलता है, जो अति दुर्गंधयुक्त हैं। वहां मनुष्य और सूअर में कोई अंतर नहीं है। उनके महिलाओं और बाल-बच्चों की स्थिति भी भयानक है। श्रमिक अस्थाई नौकरी के कारण त्रस्त हैं। लेखिका का मुख्य लक्ष्य केवल शोषित, उपेक्षितों के प्रति केवल सहानुभूति न होकर त्रस्त लोगों को शोषण के विरुद्ध मुखर आवाज उठाने के लिए प्रेरित करना रहा हैं।

**मुख्य शब्द :**

आवां, श्रमिक आंदोलन, नमिता, अनीसा, स्मिता, गौतमी, शिप्रा, नीलम्मा आदि।

उपभोक्ता संस्कृति के चंगुल में फंसी स्त्रियों की समस्याएं, स्त्रियों के बहुविध उत्पीड़न, श्रमिक संघर्ष, श्रमिक राजनीति के अंतर्विरोध, पूंजीपति वर्ग के शोषण, राजनेताओं के छल-छद्म, जातिवाद, दलित समस्याएं आदि मुख्य विषय इस उपन्यास में चित्रित हैं। आवां उपन्यास में व्यवस्था के खोखलेपन पर करारा व्यंग्य हैं। इस उपन्यास में कई कथाएं एवं उप-कथाएं हैं, जिसके माध्यम से युगीन समय में व्याप्त समग्र विसंगतियों पर जमकर प्रहार किया गया हैं। लेखिका का मुख्य लक्ष्य केवल शोषित, उपेक्षितों के प्रति सहानुभूति न होकर त्रस्त लोगों को शोषण के विरुद्ध मुखर आवाज उठाने के लिए प्रेरित करना भी रहा हैं। इस उपन्यास में शोषण के पूरे माध्यमों एवं मूल्यों का पर्दाफाश किया गया हैं। आम मनुष्य को सक्रिय बनाने हेतु आवां को एक हथियार के रूप में प्रयोग किया हैं। वर्तमान समय में उपभोक्ता संस्कृति का बोलबाला बढ रहा हैं, और इसके गिरफ्त में निम्न-मध्य वर्ग आ रहा हैं।

**व्यक्तित्व :**

सुपरिचित कथा-लेखिका चित्रा मुद्गल का बृहद उपन्यास आवां स्त्री-विमर्श का बृहद आख्यान है। आवां का बीज चाहे मुंबई ने रोपा, लेकिन खाद-पानी उसे

हैदराबाद से मिला और श्रमिकों के शहर कोलकाता में बैठकर वह लिखा गया। तो दिल्ली ने आधार कैंप का काम किया। इस रूप में यह लगभग पूरे भारतवर्ष का प्रतिनिधित्व करनेवाला हिंदी उपन्यास है। आवां का अर्थ है-मिट्टी के बर्तन पकाने का भट्ठा। चित्रा मुद्गल के शब्दों में, मैं अपनी अम्मा के मुंह से यदा-कदा सुनती रही हूं - मां की कोख, कुम्हार का आवां। यानी कि, जिस अतिरिक्त सार संभाल की आवश्यकता स्त्री की नाजुक कोख और कुम्हार के आवां के लिए होती है, उसकी उपेक्षा अनपेक्षित परिणाम का कारण बन सकती है। यह भी कि दोनों के भविष्य के विषय में पहले से कुछ नहीं कहा जा सकता।'[1] चित्रा जी का व्यक्तित्व निरंतर परिवर्तनशील रहा हैं, 'चित्रा आज में जीती है। और आज जो आज में जीते हैं, उन्हें समझना बहुत कठिन हो जाता है, क्योंकि वे आज वह नहीं रहे जो कल थे, और जो आज हैं वह संभवत: कल नहीं होंगे।' [2] आवां पर उन्हें वर्ष 2003 में व्यास सम्मान मिला था।

**आवां उपन्यास की रचना-प्रक्रिया :**

चित्रा जी ने व्यास सम्मान का स्वीकार करते समय जो भाषण दिया, उसमें आवां लिखने का कारण स्पष्ट किया है। 28 सितंबर, 1991 की सुबह जब वे अखबार पढ रही थी, तब उन्होंने यह देखा कि छत्तीसगढ के श्रमिकों के मसीहा शंकर गुहा नियोगी की हत्या हो गई। अचानक उन्हें महसूस हुआ कि अपनी उंगलियां ठंडी और सुन्न हो रही हैं। अखबार उनकी पकड से छूटकर गिर गया है। उन्होंने सोचा कि यह हत्या नियोगी की हत्या नहीं, संघर्ष को निष्क्रिय बनाने की है। वंचितों, दलितों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया जाता है। असल में उसका जाति और धर्म नहीं होता। इस संघर्ष की हत्या ने वर्षों पहले के लेखिका के ट्रेड यूनियन संबंधी अनुभवों को जगाया। उस वक्त तक उन्हें उन अनुभवों को रचना में परिणत करने का विचार नहीं था, लेकिन उपयुक्त वातावरण पाकर वे अनुभव आवां जैसे बृहद उपन्यास में परिणत हो गए। आवां लिखने से पहले उस समय जीवित देश के शीर्षस्थ श्रमिक नेता दत्ता सामंत से जो उनके गुरू थे, विषयवस्तु और दृष्टि को लेकर गहरी चर्चा हुई। उपन्यास लिखने के लिए साढे छह वर्ष लग गए। उनके मन की इच्छा थी कि सबसे पहले दत्ता सामंत को उपन्यास को सौंप देना है, पर दुर्भाग्य की बात यह हैं कि उपन्यास पूरा होने के पूर्व ही दत्ता सामंत की हत्या हुई यानी और एक संघर्ष की हत्या। लेकिन इसके पूर्व ही उपन्यास में अन्ना साहब की हत्या हुई थी। उसका तात्पर्य यह हैं कि उपन्यास के मजदूर नेता अन्ना साहब छत्तीसगढ के श्रमिकों के मसीहा शंकर गुहा नियोगी ही हैं।

**श्रमिक आंदोलन और मुंबई :**

मुंबई औद्योगिक महानगरी है। ट्रेड यूनियन की शुरूआत यहां से हुई, एक दौर में वह ट्रेड यूनियन का मुख्यालय था। पूंजीवाद के खिलाफ लडने के लिए निरंतर मजदूर वर्ग संगठित रहा है। औद्योगीकरण के कारण पूंजी का केंद्रीकरण हुआ है। और जहां पूंजी एकत्रित होती है, वहां अन्याय, अत्याचार भी बढता है। परिणाम मजदूर अपने अधिकारों के लिए संगठित होकर संघर्ष एवं विद्रोह करते हैं। आवां उपन्यास में मजदूरों के संघर्ष की यथार्थ गाथा है। चित्रा जी को ट्रेड यूनियन में कार्य करके जो अनुभव प्राप्त हुआ, वह श्रमिक मजदूर वर्ग की नस-नस को समझने और उसे संजीदगी के साथ अभिव्यक्ति देने में कारगर साबित हुआ है। उन्हें सोमैया कॉलेज में पढाई के दौरान श्रमिक नेता दत्ता सामंत के संपर्क में आकर श्रमिक आंदोलन से जुड+ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्रमिक महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागृत करनेवाली संस्था जागरण से जुडकर वह बीस वर्ष की आयु में सचिव बनीं। जहां उन्होंने महानगर में रहनेवाले झोपडपट्टी के लोगों को बिल्कुल करीब से देखा।

अन्ना साहब जैसे ट्रेड यूनियन के नेता को यहां मनुष्य से ऊपर उठाने का प्रयास हुआ हैं। गांधीजी ने समाज के उत्थान हेतु अपना समग्र जीवन समर्पित किया, परंतु उनके जीवन में भी कहीं-कहीं विचलन हुआ था। वही विचलन अन्ना साहब की जिंदगी में भी द्रष्टव्य है, लेकिन आजीवन गांधीजी जिस प्रकार देश और समाज के लिए प्रयत्नरत रहे, वैसे ही अन्ना साहब भी। यानी अन्ना साहब जैसे नेता को एक प्रकार से गांधीजी के समकक्ष मानकर ट्रेड यूनियन का महत्त्व उद्घोषित किया गया है। भारतवर्ष के इतिहास में ट्रेड यूनियन के स्थान को अंकित करते हुए इसकी आंतरिक वास्तविकता का पर्दाफाश भी

इस उपन्यास में हुआ है। 'तर्क-वितर्क को तो अदृश्य हाथों ने सिंघाडे की बेल-सा नोच किनारे फेंक दिया। कभी किसी ने उसके स्त्रीत्व को सराहा ही नहीं।' [3] चित्रा जी के अंतस् में यह भाव-बोध जागा कि स्त्री की क्षमता को उसकी देह से ऊपर उठकर स्वीकार न करनवाले रूग्ण समाज को झकझोर कर जगाना है। आवां के सर्जन के पीछे लेखिका का यही दृष्टिकोण रहा है। अपितु ट्रेड यूनियन पर केंद्रित राजनीतिक उपन्यास से भी अधिक यह स्त्री-विमर्श का बृहद आख्यान लगता है।

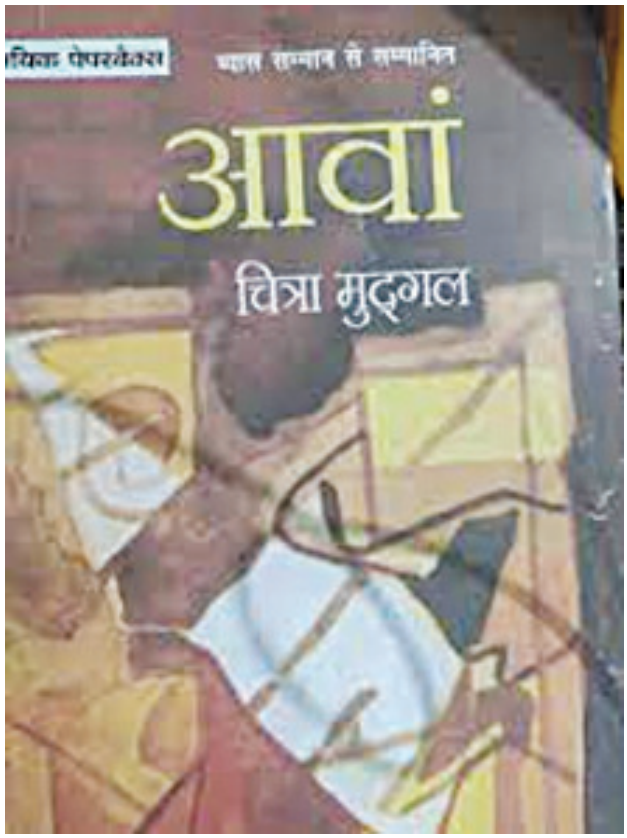


नारी-विमर्श आवां के मूल कथ्य का हिस्सा है। स्त्री पात्रों की काफी भरमार है और प्रत्येक पात्र की अपनी कहानी है जो आज की औरत की स्थिति और सोच का लगभग पूरा दृश्य सामने ले आती है।

**1. नमिता :**

आवां उपन्यास का कथा-विस्तार इक्कीस वर्षीय नमिता पर केंद्रित हैं, जो एक निम्न-मध्य वर्गीय युवती हैं। वह मजदूर यूनियन कामगार आघाडी के महासचिव देवीशंकर पांडे की सुपुत्री हैं। उसे अपने पिता का मजदूर आंदोलन एवं ट्रेड यूनियन की वास्तविकता को करीब से देखने का अवसर मिला हैं। विरोधी देवीशंकर पांडे पर छुरे से हमला करते हैं। किंतु कुछ समय पश्चात वे लकवे के शिकार हो जाते हैं।

नमिता पर पूरे परिवार का बोझ पड़ता है। बाबूजी, मां, छोटे भाई और बहन की देखभाल उसके कंधों पर आ जाती हैं। उसकी पढ़ाई छूट जाती है। घर का काम संभालने के लिए वह श्रमजीवी संस्था में पापड बेलती है, साडियों को फॉल टांकती है और ट्यूशन भी पढ़ाती हैं। कामगार आघाडी के प्रमुख अन्ना साहब उसे यूनियन कार्यालय में नौकरी दिलवाते हैं। परंतु उनके विकृत बर्ताव के कारण वह नौकरी छोड़ देती हैं। वह इन हालात में भी अपना स्वाभिमान खोना नहीं चाहती।

एक ट्रेन यात्रा के दौरान अकस्मात उसकी मुलाकात अंजना वासवानी से होती है। वह आभूषण व्यापार से जुड़ी हुई महिला है। नमिता की समस्याएं देखकर अंजना वासवानी उसको बाबा ज्वैलर्स में साढ़े तीन हजार की नौकरी देती है और साथ-साथ आभूषण के मॉडलिंग भी कराती है। क्रिस्टल में उनका जन्मदिन मनाती है। नमिता इन सब बातों से अचंभित हो जाती है। उसकी कई प्रश्नों के समाधान अंजना वासवानी इन शब्दों में करती हैं, 'सोने का खरापन मैं बिना अग्निपरीक्षा के अनुभव कर सकती हूं, नमिता।' [4] चिल्ड बियर पीने के मैडम वासवानी का आग्रह नमिता बड़ी शालीनता से नकारती हैं, 'संस्कारों की बात है, मैडम ! संस्कारों के प्रतिपक्ष में खडे होना मेरे लिए सहज नहीं।' [5]

नमिता जब से अंजना वासवानी के संपर्क में आती हैं वह अभावों की दुनिया से एक जादुई दुनिया में आगाज करती है। उपभोक्ता संस्कृति के दबाव में नमिता का मन बहुत जल्द परिवर्तित होता है। मैडम वासवानी के यहां काम करते हुए वह धनाढ्य आभूषण व्यापारी संजय कनोई

के संपर्क में आती है। नि:संतान संजय कनोई के प्रेमजाल में वह फंस जाती है। उसके संपर्क में नमिता ऐशो आराम की जिंदगी में डूब जाती है। संजय कनोई का जाल बहुत बड़ा है। परंतु कुछ समय पश्चात नमिता हकीकत समझ पाती है। सच्चाई वह तब समझती है जब संजय कनोई की औलाद की बिन ब्याही मां बनने जा रही है। पवार द्वारा फोन पर मिली अन्ना साहब की हत्या की अचानक सूचना से चक्कर खाकर वह गिर पड़ती है और गर्भस्राव हो जाता है। के.वनजा के शब्दों में, 'लेकिन उसके गर्भ में जो संतान है, वह पूंजीवाद का प्रतीक है। इसलिए उस संतान को जन्म देना नमिता जैसी मजदूरिन के लिए शोभा नहीं देता। अन्ना साहब की हत्या की खबर सुनते ही उसका गर्भ गिर जाता है। उसके गर्भ के गिरने का मतलब है पूंजीवाद से उसका मोचन।' [6] किंतु नमिता के विश्वास दिलाने पर भी संजय उसे मानने को तैयार नहीं। संजय का कहना है कि नमिता ने अपने कैरियर के लिए जान-बूझकर गर्भ गिराया है। आवेश में संजय कनोई अंजना वासवानी की वास्तविक भूमिका भी उजागर कर देता हैं, 'मुझे नहीं गवारा थी ऐसी किराये की कोख! मुझे सिर्फ उस लडकी से औलाद चाहिए थी जो पेशेवर न होज्.पवित्र हो, जो मुझ से प्रेम कर सके। सिर्फ मेरे लिए मां बने!' [7]

वास्तविकता का विकराल रूप उसके सामने प्रकट होता है। संजय के लिए वह केवल उपभोग की वस्तु रही, संतान निर्माण करनेवाली किराए की कोख मात्र थी। अपितु वह संजय कनोई और खोखले ऐशो आराम की जिंदगी छोडकर श्रमिक आंदोलन में पूरी तरह सक्रिय हो जाने का निश्चय करती है। मध्यवर्गीय आशा-आकांक्षाओं ने थोडी देर के लिए अपने लक्ष्य से उसे भ्रमित कर दिया था, परंतु उपभोक्ता संस्कृति का फरेब तुरंत उसकी समझ में आ जाता है। डॉ.कल्याणमल लोढा लिखते हैं, 'आवां की सुलगती आग नमिता ने इसी प्रकार शांत की। यह उसके चरित्र का अनोखापन नहीं, यथार्थ में समझौता से अधिक जीवन प्रकृत समाधान है।' [8]

आवां में यौन-शोषण, बलात्कार, स्त्रियों की भ्रूण हत्या आदि स्त्री-शोषण के प्रकारों को बडे परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता हैं। कुंती मौसी का पति किशोरी नमिता का कौमार्य भंग करता है। श्रमिक संगठन के अन्ना साहब जैसे बडे नेता भी नमिता को अपनी अतृप्त कामवासना का शिकार बनाते हैं। स्मिता के पिता मटका किंग अपनी बेटी को भी नहीं छोडता। स्मिता की बडी बहन कई बार गर्भपात करा चुकी है। सौतेले भाई विनोद ने गौतमी का बलात्कार किया। अपनी पत्नी में भारतीय सतीत्व को ढूंढनेवाला छायाकार सिध्दार्थ मेहता का भी कइयों के साथ दैहिक संबंध है। विवाहित संजय कनोई ने भी संतान प्राप्ति के लिए नमिता का इस्तेमाल किया। विवाह के विज्ञापनों में नौकरीपेशा लडकियों को प्राथमिकता देने की बात होती है।

भारतीय समाज-व्यवस्था में विवाह, मृत्यु और इससे संबंधित कर्मकांडों तथा रीति-रिवाजों द्वारा स्त्री की कामुकता (Sexuality) लैंगिकता पर नियंत्रण (Control) करने की पूरी कोशिश है। नमिता को पिता के मृत्यु पर क्रियाकर्म और मुखाग्नि देने का अधिकार नहीं, चूंकि नमिता औरत है। स्त्रियों के लिए यह सब शास्त्र सम्मत नहीं है। इसी प्रकार औरत के लिए शवयात्रा में कंधा देना शास्त्र सम्मत नहीं है। परंतु विमला बेन इस रूढि को तोड देती है। सुनंदा की मैयत विमला बेन अपने कंधे पर टेक लेती है। सोनोग्राफिस्ट मिसेज बतरा सोनोग्राफी करने के बाद हमेशा झूठ बोलती है कि तुम बेटे की मां बनने जा रही हो या बच्चा कमजोर है, इसलिए बताना कठिन हैं कि लडका या लडकी। गर्भ में लडकी है तो फौरन गर्भ गिराने की बात करती है।

**2. अनीसा :**

स्त्री कोई भी हो स्वयं वेश्या बनना नहीं चाहती। हालात उसे इस अनैतिक कार्य में धकेल देते हैं। इस चंगुल में फंसने पर फिर वापसी मुश्किल होती है। लगभग सभी स्त्री वेश्याएं इस दुष्कर्म से मुक्त होना चाहती हैं। बडी दिक्कतों के बावजूद यदि कोई बाहर आना चाहती हैं तो समाज उसे स्वीकार करता नहीं। आवां इस उपन्यास में अनीसा ऐसा ही चरित्र है। घाटकोपर रेल्वे स्टेशन वाली वेश्याओं में से एक थी अनीसा।

अनीसा ने इस अंधकार जीवन से बाहर निकलने का बडा प्रयास किया। उसने वेश्या व्यवसाय छोडकर जयहिंद आयल मिल में नौकरी आरंभ की है। परंतु उसके पूरे प्रयासों के पश्चात् भी मजदूर उसे देखते ही इशारेबाजी

करते हैं। अकेला पाकर कोने में खींच लेते हैं, किरपु दुसाध अनीसा की इच्छा के बगैर जबर्दस्ती करता है। उसके पेट में सात माह का गर्भ था। नशे में धुत दुसाध ने अनीसा के राजी न होने पर उसके पेट में लातें लगाई और उसका गर्भपात हो जाता है। परिणाम अनीसा और बच्चा दोनों की मौत हुई। 'दुसाध की मेहरारू फूला तो अनीसा की क्रूर हत्या के लिए दोषी अपने पति को नहीं, अनीसा को ही साबित कर रही।' [9] बावजूद अधिकांश लोगों की नजरों में अनीसा ही दोषी थी।

अर्थात् नैतिक मूल्यों से भोगवादी मूल्यों की ओर बढते समाज में नारी शोषण की स्थिति में बढोत्तरी हुई है। सदियों से दबी स्त्री, पुरूष विरोध में, नारी मुक्ति की मांग को यौन स्वेच्छाचार मानकर चलती है। इस कारण वैवाहिक जीवन और परिवार टूटने लगे हैं, अनेक स्त्री-पुरूष विवाह के बगैर साथ-साथ रहने लगे हैं। स्त्री-पुरूष समलैंगिकता, मुक्त यौनाचार, विवाह विच्छेद, आत्महत्याएं आदि का प्रतिशत बडा हैं।

**3. स्मिता :**

आवां उपन्यास में ऐसे कई पात्र हैं जो पुरूष-विरोध को ही नारी-मुक्ति का आधार मानते हैं। पिता मटका किंग मदन खत्री ने बडी बेटी को ही अपनी काम वासना का जरिया बनाया। इससे क्षुब्ध छोटी बेटी स्मिता ने उसे एक रात सीढियों से गिराकर मार डाला। 'मटका किंग हमेशा की भांति धुत्त होकर बिल्डिंग में घुसा था। हरामखोर के पांव फिसलते ही खोपडी लुढ़के नारियल-सी फट गई। घंटों सीढ़ियों पर अचेत पड़ा खून उगलता रहा।'[10] स्मिता सभी पुरूषों को उनकी मर्दानगी का सबक सिखाना चाहती है और इसकी शुरूआत वह अपने पिता से ही करती है। स्मिता के जीवन में पहले शरत था, अब विक्रम है। कंडोम के पैकेट से लेकर और भी आवश्यक शिक्षा वह अपने प्रेमी को दे देती है, 'मैं तेरे बच्चे की कुंआरी मां नहीं बनना चाहती और जो लडका कंडोम इस्तेमाल करना नहीं जानता, वह मेरा प्रेमी होने के काबिल नहीं।'[11] स्मिता साहसी लडकी है। वह आवश्यकता के अनुरूप जीवन-मूल्यों को तोडती भी है। पिता के दुष्कर्म का बदला लेनेवाली स्मिता अपने व्यवहारिक जीवन में भी संबंधों को उसी दृष्टि से देखती है। डॉ.विजय बहादुर सिंह ने लिखा हैं, 'चित्रा ने जैसे अपना सारा आक्रामक क्षोभ स्मिता में भर दिया है और वह उसका मूर्तिमान प्रचंड रूप बनी बैठी हो।'[12] स्मिता चुलबुली जरूर है, दिल की साफ है। नशे के ऐब से वह कोसों दूर है। वह स्वतंत्र प्रवृत्ति की है। लडके-लडकियों में भेद उसे मंजूर नहीं। वह बडे घर की होने पर भी उसकी जिंदगी तनावग्रस्त है। इसका एकमात्र कारण उसका पिता है। एक परिवार को पूर्ण रूप से स्वतंत्र और शांत बनाने में प्रत्येक सदस्य की भूमिका होती है। यहां पिता ने अपने अमानुषिक व्यवहार से पूरे परिवार को बर्बाद कर दिया। स्मिता का पिता मुंबई का मटका किंग है। चर्चगेट से लेकर बोरीवली तक और छत्रपति शिवाजी टर्मिनल से लेकर कल्याण तक इनका अखंड साम्राज्य है। अभावग्रस्त मनुष्यों को पैबंद-टंके सपने उनके मटका दांव की चौपड है। रोज शाम आंकडों के साथ करोडों के वारे-न्यारे खुलते-बंद होते उन दावों को झुठला देते कि किस्मतें ऊपर लिखी जाती है और उन्हें कोई और लिखता है। उसकी मां को वह शारीरिक और मानसिक रूप से निरंतर पीडा देता रहता है। शराब पीकर घर आकर वह सबसे नीच कर्म भी करने में हिचकता नहीं। वह शराबी राक्षस है। उसकी मां ने दो बार अपने देह पर मिट्टी का तेल उंडेल आंग लगाने का प्रयास किया है। बेटियां अकेली घर में रहने से डरती हैं। उस पिता के लिए पुत्री की देह कामेच्छा की पूर्ति का साधन बनती है। पिता के कारण उसकी दीदी मनोरोगी बन गई थी। पिता को उसका शरीर चाहिए था। असल में वह पिता से पीडित थी। स्मिता ने पिता की मृत्यु के बाद मनोचिकित्सक के द्वारा दीदी की चिकित्सा करवाई और वह सामान्य-सी बन गई। असल में वह पिता का स्नेह और वात्सल्य चाहती थी। उसने हमेशा उसकी आतंकित करती छवि में पिता को खोजा। स्मिता को नमिता के पिता का प्यार देखकर ईर्ष्या होती थी।

**4. गौतमी :**

अल्प आयु में ही निकट संबंधियों द्वारा त्रस्त कई स्त्रियां पुरूष विरोध में स्वच्छंद यौनाचार का स्वीकार करती हैं। उनकी सारी स्त्री-चेतना देह के तिलिस्म से

बाहर नहीं निकल पाती। गौतमी से उसके अपने सौतेले भाई विनोद ने बलात्कार किया । वह गर्भवती हो जाती है। आत्महत्या करने के लिए ट्रेन से कुदने की कोशिश करती है। लैकिन मैडम वासवानी उसे बचाती है। वहीं से उसकी काया पलट जाती है। गौतमी आभूषण निर्यात कंपनी की प्रबंध निदेशक बनती है। उसके पास धन-दौलत और फ्लैट है। परंतु ये सब उसकी कार्यकुशलता की बनिस्बत न होकर जिस्म के बल पर मिला है। नि:संतान पूंजीपति छेडा साहब के लिए बेटा पैदा किया। आज उनके पास धन-दौलत सबकुछ है, लेकिन उनका परिवार पूरी तरह से विच्छिन्न है। पति की जगह उसे एक अदद कठपुतली नौकर की आवश्यकता महसूस होती है।

**5. शिप्रा :**

वर्तमान समय में स्त्री-पुरूष संबंधों में प्रति-हिंसा बढी हैं, स्त्रियां एकजुट होकर रहना अधिक पसंद करने लगी हैं। 'स्त्री-पुरूष संबंधों में प्रतिहिंसा परस्पर इस सीमा तक खिंच गई हैं कि स्त्रियों ने एकजुट हो स्त्रियों के संग रहने की ठान ली।' [13] फिल्म निर्माता की बेटी कॉलेज में पढनेवाली शिप्रा हिल रोड के गार्सियाना ब्यूटी पार्लर में कामसुख भोगने के लिए जाया करती है। वहां कामसुख प्रदान करने चीनी लडकियां कार्यरत हैं। 'किस पार्लर में किस हुनर में विशेषज्ञ लडकियां कार्यरत हैं। चीनी और देशी लडकियों की कुशलता में क्या अंतर है। कामसुख पहुंचाने में चीनी लडकियों के कौशल का जवाब नहीं।' [14] संजय कनोई की पत्नी निर्मला का कहना है कि, पुरूषों की बनिस्बत कामकला में स्त्रियां अधिक निपुण हैं।

**6. नीलम्मा :**

हमारे संबंध आज पूरी तरह से व्यावसायिक बने हैं। लोगों की संवेदना हृदय से नहीं, मस्तिष्क से है। आवां की महत्वपूर्ण पात्र नीलम्मा पारिवारिक रिश्तों में भावुकता को स्थान देती है। वह पति के मृत्यु के बाद अपने बच्चों और बूढे ससुर के साथ रहती है। वह विपत्ति का मुकाबला साहस के साथ डटकर करती है। प्रेमी राघव और बच्चों के बीच जब चयन का प्रश्न आता हैं तो वह बच्चों को ही चुनती हैं। अमीर स्त्रियों की सेवा-मालिश की अनैतिक कमाई से उसका नैतिक विवेक उसे रोकता है। 'उस दोपहर मंझली मालकिन की मालिश से निपट उसने उनकी सहेली की मालिश की।'[15] वह आत्मसम्मान से जीना चाहती है। मूल्यों के प्रति सदैव सतर्क नीलम्मा ये सब छोडकर हैदराबाद में नमिता की सेविका बनती है। उसका नैतिक विवेक निरंतर भोग-उपभोग की वस्तु बनने से उसे बचाता है। नीलम्मा पूरी निष्ठा से नमिता की सेवा करती है। गर्भस्राव के कारण अचानक नर्सिंग होम जाने पर नमिता का बिल स्वयं भुगतान करती है। स्वयं के जीवन से अनुभूत और नीलम्मा के स्वाभिमानी व्यक्तित्व से प्रभावित नमिता में भी चेतना संचारित होती है। भोग-उपभोग की वस्तु बनने से नकार की चेतना वस्तुत: देह से ऊपर उठने की चेतना है। अपितु स्वयं स्त्री को सचेत रहना होगा, यही चेतना उसे श्रृंखला से स्वतंत्रता दिलाएगी। डॉ.विजय बहादुर सिंह के शब्दों में, 'एक तरफ सुनंदा का कुंआरा मातृत्व, दूसरी तरफ हिम्मत से भरा वैधव्य (नीलम्मा) यह संकेत करते हैं कि स्त्री को अपनी ही दुनिया रचनी होगी। पुरूष-वर्चस्वशाली समाज में स्त्री की आजादी स्वाधीनता और स्वाभिमान की कल्पना भी नहीं की जा सकती।'[16]

**निष्कर्ष :**

आवां में श्रमिक जीवन, श्रमिक आंदोलन और उनके अंतर्विरोध का विस्तार से विवेचन हैं। उपन्यास में घाटकोपर से लेकर कांजूर मार्ग, भांडुप, मुलुंड तक फैली-बस्तियों में रहनेवाले मजदूरों की जिंदगी का खुला और यथार्थ चित्रण मिलता है, जो अति दुर्गंधयुक्त हैं। वहां मनुष्य और सूअर में कोई अंतर नहीं है। उनके महिलाओं और बाल-बच्चों की स्थिति भी भयानक है। श्रमिक अस्थाई नौकरी के कारण त्रस्त हैं। अठारह महीने लंबी खिंची कपडा मिलोंवाली कामगार आघाडी की हडताल के बारे में मैडम वासवानी जैसी उच्च मध्यवर्गीय को घृणा है। मजदूरों ने दस किलोमीटर लंबा मोर्चा निकाला था। उस मोर्चे की लंदन के अखबारों ने खूब तस्वीरें छापी थी। शीर्षक दिया था विश्व का आठवां आश्चर्य मैडम ने ये टिप्पणी प्रशंसा भाव से नहीं वितृष्णा से की थी। बी.बी.सी. ने खूब मजे लिए। हडताली मजदूरों की भूख से बिलबिलाती औरतें और नंग-धडंग बच्चों को सडकों पर गाडियां

रोक-रोक कर भीख मांगते हुए देखा। कुछ घरों में जीवन से ऊबी हताश औरतों ने आत्महत्याएं की। यदि समाज के अन्य वर्ग मजदूरों के संघर्ष को अपने बुनियादी अधिकार की लडाई मानते तो अठारह महीने लंबी वह हडताल कभी विफल न होती। यानी हम निष्क्रिय असंवेदनशील, भावनाहीन समाज का पुर्जा बनकर जीवन व्यतीत कर रहें हैं। अर्थात् बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में लिखा गया आवां उपन्यास उद्देश्य की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण रहा है। नारी विमर्श इस उपन्यास का मुख्य लक्ष्य रहा है। साथ ही कई उद्देश्यों की स्थापना कथा-लेखिका ने की है। अत: नारी के अहम प्रश्नों को उठानेवाला आवां उपन्यास अपने उद्देश्य में पूरी तरह सफल रहा हैं। ❑

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**


1. सं. करुणाशंकर उपाध्याय, आवां विमर्श, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली (सं. 2018), पृ. 272
2. उपर्युक्त, पृ. 275
3. चित्रा मुद्गल, आवां, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली (सं. 2015), पृ. 283
4. उपर्युक्त, पृ. 195
5. उपर्युक्त, पृ. 64
6. के.वनजा, चित्रा मुद्गल : एक मूल्यांकन, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली (सं. 2016), पृ. 73
7. चित्रा मुद्गल, आवां, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली (सं. 2015), पृ. 539
8. सं. करुणाशंकर उपाध्याय, आवां विमर्श, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली (सं. 2018), पृ. 20
9. चित्रा मुद्गल, आवां, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली (सं. 2015), पृ. 363
10. उपर्युक्त, पृ. 370
11. उपर्युक्त, पृ. 205
12. सं. करुणाशंकर उपाध्याय, आवां विमर्श, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली (सं. 2018), पृ. 68
13. चित्रा मुद्गल, आवां, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली (सं. 2015), पृ. 261
14. उपर्युक्त, पृ. 216
15. उपर्युक्त, पृ. 514
16. सं.करुणाशंकर उपाध्याय, आवां विमर्श, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली (सं. 2018), पृ. 69

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोकरंग

# लोकनाट्य कुशान पाला : एक अवलोकन

**डॉ. चन्दना शर्मा**

सहयोगी अध्यापक, हिंदी विभाग
प्रागज्योतिष महाविद्यालय
गुवाहाटी, असम
पिन-781011
7002544837
Chandanasarmav1979@gmail.com

**भूमिका :**

नौवीं-दसवीं शताब्दी में संस्कृत नाटक की परंपरा क्षीण हो जाने पर जो असंबद्ध अविहित और असंगठित नाट्य धारा विकसित हुई, उसके दो प्रमुख रूप हैं। एक तो पूजा-कीर्तन के साथ मंदिरों में लीला शैली के नाटकों का प्रचलन और दूसरा भ्रमण करते हुए नटों के प्रहसन शैली के सामाजिक लोक पर नाटकों का प्रचलन।

लोक नाट्य परंपरा प्रधानतया मौखिक है और इसीलिए बहुत नाटक साहित्य सुरक्षित नहीं रह सका, किंतु फिर भी साहित्यिक अभिव्यक्ति की विविधता, संपन्नता और परिमाण की दृष्टि से लोक नाटक साहित्यिक नाटक से किसी प्रकार भी कमतर नहीं है। सामान्य रूप से यह समझा जा सकता है कि लोक नाटक नितांत रूपहीन कृति होता है और उसकी रचना के कोई नियम और व्यवहार नहीं होते हैं। इसी प्रकार उसकी प्रदर्शन पद्धति को भी नितांत शैलीविहीन समझा जाता है, किंतु वास्तव में यह बहुत ही भ्रांत धारणा है। लिखित और वाचिक दोनों प्रकार के लोक नाटकों के वास्तु निर्माण में एक निश्चित योजना रहती, जिसके द्वारा नाटकीय कथा के अनेक दृश्य और व्यापार खंड एवं ऐसे अनुपात और क्रम में समायोजित किए जाते हैं, जो नाटक को एकता और कथा प्रगति का वह भाव प्रदान करते हैं, जो किसी भी कलाकृति का अनिवार्य तत्व होता है। लोक नाटकों की वास्तु निर्माण में सबसे बड़ी बात यह है कि वह साहित्यिक नाटकों के समान सुयोजित और सुसंबंध नहीं होते। उनका रूप बंध, शिथिल और व्यापार बहुत ही व्यापक होता है।

**कुंजी शब्द :**

लोक नाटक, कुशान गान, प्रदर्शन कला, राजवंशी, गिदाल, जुरीवादन।

**शोध पद्धति :**

प्रस्तुत अध्ययन को संपूर्ण करने हेतु वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाया गया है। इस लेख को पूरा करने के लिए कुशान पाला या कुशान गान और उनके बारे में लिखे गए समीक्षात्मक लेख को संसाधन के रूप में लिया गया है।

**अध्ययन की सीमा :**

इस शोध आलेख में कुशान पाला या कुशान गान पर केवल एक सम्यक प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। इस पर बहुत अधिक विस्तृत रूप से चर्चा करना इस छोटे से लेख में संभव नहीं है।

**कुशान पाला :** कुशान पाला या कुशान गान असम के ग्वालपाड़ा अंचल में प्रचलित है, परंतु अनुसंधान में पता चला है कि इसका परिसर केवल असम में ही सीमित नहीं है। भारत के जलपाईगुड़ी, कोच बिहार, मेघालय अंचल में भी इसका प्रचलन है। यहाँ तक कि भारत की सीमावर्ती देशों में भी कुशान गान का चलन है। भूटान के दुर्वाच, नेपाल के झापा, बांग्लादेश के रंगपुर, मैमनसिंह आदि जगहों में भी कुशान गान का प्रचलन देखा जाता है। इस प्रकार से देखें तो कुशान गान केवल राष्ट्रीय ही नहीं, बल्कि एक अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शन कला है।

**कुशान गान का शाब्दिक अर्थ :** डॉ. नवीन शर्मा के अनुसार, *'कुशान गान का जन्म रामायण कथा के आधार पर हुआ है।'*[1] इस दृष्टि से कुशान गान की एक सुदीर्घ परंपरा है। कुशान शब्द की उत्पत्ति के संदर्भ में कई मत हैं। किसी-किसी पंडित के मतानुसार कुशान का उद्‌भव लव कुशी पद से हुआ है। लव कुशी पद का प्रचलन भी एकाधिक अर्थों में हुआ है। जैसे -

1. गायक कवि, गायक
2. अभिनेता, नट, नर्तक, नर्तकी
3. संवाद विक्रेता, संवाद देने वाला
4. आदि कवि वाल्मीकि के नाम
5. रामचंद्र के दो पुत्र (कुश और लव)

इस प्रकार देखा जाए तो यह सहज ही बोधगम्य है कि कुशान शब्द रामचंद्र के पुत्र कुश-लव के अतिरिक्त कुछ अन्य अर्थ को भी धारण करता है, क्योंकि कुशान गान एक प्रदर्शन कला है। अत: यह अपने आप ही गायक, अभिनेता, नर्तक, वादक आदि को अपने आप में समाहित करता है। अर्थात कुशान गान एक नृत्य-गीत-नाट्य संयोजन से समृद्ध प्रदर्शन कला है।

दूसरी तरफ कुछ आलोचकों का मानना है कि कुशान गान का संपर्क राम के पुत्र लव-कुश से है। उनके अनुसार सर्वप्रथम आदि कवि के शिष्य लव-कुश ने राम के राजदरबार में गीत रूप में रामायण के पदों की प्रस्तुति दी थी। अत: यह कथकता की परंपरा उसी समय से चली आ रही है और कुशान गान प्रदर्शन कला ने इसी परंपरा को आगे बढ़ाया है।

कुशान गान को कुशान पाला भी कहा जाता है। पाला शब्द का प्रयोग संस्कृत में उपलब्ध नहीं है। उड़िया, बांग्ला, असमिया आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं में इसका प्रचलन मिलता है। कहानी, नाटक, गीत, नृत्य, नाट आदि को सूचित करने के लिए पाला शब्द का प्रयोग होता है।

**कुशान गान के विषय एवं उद्देश्य :** कुशान गान की विषय-वस्तु रामायण आश्रित है। इस दृष्टि से इसे रामायण केंद्रित प्रदर्शन कला भी कह सकते हैं। इसमें पाला या नाट रामायण के एक-एक चरित्र की कहानियों का पल्लवन है। जैसे - दानी राजा हरिश्चंद्र, लक्ष्मण का शक्तिशाली, महीरावण वध, रावण वध आदि। आनंद प्रदान के साथ-साथ लोगों को आध्यात्मिक और लौकिक शिक्षा प्रदान करना ही इनका उद्देश्य है।

**भाषा :** भाषा की दृष्टि से देखें तो कुशान पाला में असम के कामता अंचल में प्रचलित भाषा का प्रयोग होता है। विशेषत: राजवंशी लोग इस भाषा का प्रयोग कथित और लिखित दोनों रूपों में करते हैं। अत: इसे राजवंशी भाषा भी कहा जाता है। द्विजेंद्र नाथ भकत के अनुसार, 'कुशान गान के नाटक की कहानी कवि (बांग्ला) कृतिवास रचित रामायण से लिया गया है। द्वितीय, दोहारी या दोहरी के अलावा अन्य चरित्र की बातचीत में बांग्ला भाषा का प्रयोग करते हैं। दोहरी द्वारा व्यवहृत भाषा कामता आंचल में प्रचलित असमिया भाषा है। कुशान गानाभिनय के बीच-बीच दोचार गीत पद गाए जाते हैं और इन गीतों की भाषा भी कथित असमिया है, जिसे आजकल राजवंशी भाषा भी कहा जाता है।'[2]

**प्रदर्शन स्थान :** कुशान गान मुख्यत: विभिन्न पूजा के उपलक्ष्य में आयोजित उत्सव में प्रदर्शित होता है, विशेषत: वासंती पूजा और अशोक अष्टमी के अवसर

पर। धुबड़ी जिले के विभिन्न अंचलों में तीन-चार दिनों तक मेला लगता है और वहाँ कुशान गान का प्रदर्शन होता है। संस्कारमूलक अनुष्ठान, जैसे - विवाह आदि के अवसरों पर भी कुशान गान का प्रदर्शन होता है। इसके अलावा व्यक्तिगत रूप से आयोजित होने वाले यात्रा, श्यामा-पूजा, मनसा-पूजा, वासंती-पूजा, दुर्गा-पूजा आदि में भी कुशान गान के प्रदर्शन के लिए लोगों को आमंत्रित करते हैं।

कुशान गान प्रारंभ होता है वाद्य वादन से। इसके साथ सभी मंच पर प्रवेश करते हुए वृत्ताकार बैठ जाते हैं और खोल वादन प्रारंभ होता है। उसके बाद श्लोक वंदना होती है, जिसमें सरस्वती और रघुनाथ वंदना प्रमुख है। इसके पश्चात मूल पाला प्रारंभ होता है। अंत में कुशान पाला का समापन रामायण के महत्व वर्णन से होता है। इसके पयार, संलाप आदि कृतिवास रामायण पर आधारित हैं। उदाहरणस्वरूप, राम नाम के महत्व को दर्शाने के लिए इस प्रकार गाया जाता है-

*'राम नाम लैया जेबा पंथ रैया जाय।*
*धनुर्वाण निया राम पीछे पीछे जाए।।'*[3]

**वाद्य यंत्र :** कुशान पाला में मृदंग, ताल, वीणा, दोतारा, वंशी का का प्रयोग होता है। यहाँ पर वीणा का प्रयोग अपरिहार्य है। अत: कुशान गान को दोतारा गान, वीणा कुशान, रावण कुशान और वेणा गान से भी पुकारा जाता है। घोड़े की पूँछ के बाल से वीणा वाद्य बनाया जाता है और गिदाल दोनों हाथों से उसे झंकारित करते हुए मधुर स्वरों की गुँजन करते हैं।

**साज-सज्जा :** कुशान गान में जो मुख्य गिदाल होता है, वह सफेद धोती चादर और कुर्ता पहनता है। पाली या प्याला भी धोती-कुर्ता ही पहनते हैं। दोहरी या दोहारी भी घुटनों तक लंबी धोती और बनियान पहनते हैं। बायन या बाइना भी धोती-कुर्ता पहनते हैं। साधारणत: ये लोग कंधे पर एक गामोछा धारण करते हैं। छोकरा या छोकरी नर्तकी साधारणत: साड़ी, घाघरा के साथ ब्लाउज और गहने भी पहनते हैं। यह पैरों में नूपुर या घुँघरू पहनते हैं। मूल नाट में हिस्सा लेने वाले अभिनेता भी साधारण पोशाक पहनकर ही अभिनय करते हैं। यहाँ किसी भी प्रकार का मुखौटा या मुखा नहीं पहना जाता।

**अभिनेता :** कुशान गान में मूलत: एक गिदाल, चार-पाँच पायल, एक-दो दोहारी, दो बाइन, एक या दो मंजीरा बजाने वाले, चार-पाँच छोकरे होते हैं। एक मूल या गिदाल होता है, जो प्रधान गायक और वीणा वादक होता है। वह निपुण नर्तक भी होता है। वह कुशान गान को परिचालित करता है। मंच का निर्देशक होता है और साधारणतया वही संचालक भी होता है। वह दोहरी या पाली की सहायता से दर्शक की रुचि के अनुसार गीत पदों की व्याख्या करते हुए आम भाषा में समझाता है।

**पालि :** कुशान गान में जो मूल सहायक गायक होता है, उसे पाली या पायल कहा जाता है। एक कुशान पाला में कम-से-कम चार-पाँच पालि होते हैं। ये लोग गायन, नृत्य और अभिनय में पारंगत होते हैं। इन्हीं में से जो सर्वश्रेष्ठ होता है, वह गिदाल के साथ सहायक रूप में कार्य करता है। उसे मुख्य पालि या डायनापालि कहा जाता है। अगर गिदाल बीच में कुछ भूल जाए तो मुख्य पाली इसे याद दिला देता है। पाली आवश्यकतानुसार चरित्र रूपायण में सहायता करता है। इसकी वेशभूषा साधारण होती है। वह धोती-कुर्ता पहनता है।

**दोहारी :** कुशान पाला में दोहारी एक विशिष्ट भूमिका निभाता है। दोहारी शब्द हिंदी के दोहरा शब्द से आया है, जिसका अर्थ है - पुन: पुन: बोलना। गिदाल के गाने के पश्चात दोहारी इसे पुन: गाता है। अर्थात दोहारी या दोयारी एक ही पद को बार-बार दोहराता है या बार-बार गाता है। यह पाला में हास्य रस का भी संचार करता है। अत: यह विदुषक का कार्य भी करता है। यह बीच-बीच में चंग या 'फयासा' द्वारा (व्यंग्य धर्मी अभिनय द्वारा) दर्शकों को हँसाता है।

**जुरीवादक :** ताल या मंजीरा बजाने वालों को जुरिवादक कहते हैं। कुशान पाला में ताल या मंजीरा का प्रयोग आवश्यक है। छोटे आकार के मंजीरा का प्रयोग कुशान पाला में किया जाता है। जो पाइल होते हैं, उनमें

से ही कोई एक या दो पाइल मंजीरावादन का कार्य करते हैं।

**छोकरा :** पहले बारह-तेरह वर्षीय लड़कों को लड़की की पोशाक पहनाकर छोकरी या नर्तकी बनाया जाता था। अभिनय के समय यही स्त्रियों के अभिनय भी किया करते थे। इन्हें छोकरा या छोकरी कहा जाता है। समय के साथ-साथ इसमें भी परिवर्तन आया और आजकल लड़कियाँ भी इस अभिनय को करने लगी हैं। उनकी पोशाक में असम के ग्वालपाड़ा अंचल के स्त्रियों का सादृश्य देखा जाता है। यह पैरों में घुँघरू या नूपुर पहनते हैं।

**बायन :** कुशान पाला में खोलवादन (एक प्रकार का मृदंग)। खोल बजाने वाले को बायन या बाइन कहा जाता है। खोल और तबलावादन के साथ पाला का प्रारंभ और समापन होता है। गाने के साथ, नृत्य के साथ और चंग प्रदर्शन के समय खोलवादन अनिवार्य है।

**निष्कर्ष :**

कुशान पाला असमिया लोक नाट्य की एक उत्कृष्ट परंपरा है। समय के साथ धीरे-धीरे यह विलुप्ति के कगार पर है। नई पीढ़ी को अगर इसके प्रति जागरूक किया जा सके तो इसका प्रचलन समाज में आगे भी बरकरार रहेगा। ❑


**संदर्भ :**

1. डॉ. नवीन शर्मा; असमर लोकनाट; पृष्ठ-134; वाणी प्रकाश, पान बाजार; 2010
2. विजेंद्र नाथ भकत; कुशान गान; पृष्ठ-1; धुबड़ी शाखा साहित्य सभा, धुबड़ी; 2001
3. डॉ. नवीन शर्मा; असमर लोकनाट; पृष्ठ-153; वाणी प्रकाश, पान बाजार; 2010

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

# यशपाल के उपन्यास 'झूठा सच' में विभाजन त्रासदी

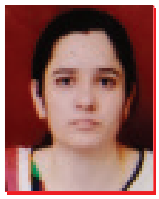

**डॉ. अन्नु**

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
राजकीय महिला महाविद्यालय,
लाखनमाजरा (रोहतक)
(स्थायी पता : मकान न. 783/
12,देव कॉलोनी, रोहतक
हरियाणा, पिन-124001)
857208280
annudangi007@gmail.com

**डॉ. बलजीत कौर**

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महिला
महाविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)
(स्थायी पता : मकान नंबर- 283,
सेक्टर-2, रोहतक
हरियाणा, पिन कोड-124001)
8930772165
bk7611941@gmail.com

भारत के इतिहास में विभाजन की त्रासदी एक अभूतपूर्व घटना है। परंतु आश्चर्य की बात है कि इस विभाजन की पृष्ठभूमि में न कोई प्राकृतिक प्रकोप था, न कोई भू-गर्भीय हलचल, जो स्थल को विभाजित करती, न कोई बाहरी आक्रमण और न ही कोई गृहयुद्ध या पूँजी बाजार की अस्थिरता। प्रत्यक्ष रूप से यह करोड़ों मनुष्यों का संवैधानिक रूप से अपना प्रतिनिधित्व करने वाले नेताओं के माध्यम से स्वेच्छा से लिया गया निर्णय था। यह निर्णय देश के इतिहास और सभ्यता के संदर्भ में लगभग उतना ही महत्वपूर्ण था और उसी प्रकृति के काल को खंडित करने वाला निर्णय था, जहाँ से सभ्यता और समाज या तो आत्महत्या की ओर मुड़ जाते या फिर धीरे-धीरे आत्मविनाश की ओर। लेखक यशपाल ने 'झूठा सच' विभाजन को आधार बनाकर ही लिखा है।

'झूठा सच' लिखने के पीछे का पहला कारण था यशपाल का अपने बालपन की भूमि लाहौर से प्रेम और विभाजन व समाज के विघटन की पीड़ा। यशपाल ने इसे बहुत गहराई से अनुभव किया था। 'झूठा-सच' के बीज इसी दौर में यशपाल के क्षुब्ध मन में पड़े। दूसरा कारण था- आम जनसमुदाय, जो सदा ही झूठ से ठगा गया है और दूसरी ओर झूठ का व्यवसाय करने वाले नेता हैं, जो अपने झूठ में सच का लबादा ओढ़कर जनता को छलते रहते हैं। वस्तुतः यशपाल ने उपन्यास का नामकरण भी इसी औचित्य को ध्यान में रखते हुए किया है।

विभाजन की त्रासदी यशपाल जी के बाहरी वातावरण का ही विध्वंस नहीं करती, अपितु उनके आंतरिक मनोभावों को भी गहराई से उद्वेलित करती है। बाहरी विध्वंस का पुन:निर्माण एक सीमा तक किया जा सकता है, परंतु आंतरिक विध्वंस हृदय में इस गहराई से छप जाता है कि उसे अंत तक मिटाया नहीं जा सकता। ऐसी ही छाप यशपाल जी के हृदय पर पड़ी। *'लाहौर पहुँच कर वे हैरान थे। क्या यह वही लाहौर है, जिसे अंतिम बार 1945 में दो दिन देखा था और जिसकी रंगीनी कल्पना में कायम थी। लगा मेले की जगह मरघट, उजाड़ रेलवे स्टेशन, शाहलमी दरवाजे का गुंजान तंग बाजार, परीमहल, मच्छी, हट्ठा, रंग-महल के बाजार-मोहल्ले जो विभाजन के दंगों में जला दिए गए थे, सड़क के दोनों ओर मलबे के ढेरों का मैदान दिखाई दिया।'*1

स्वाधीनता आंदोलन की पुरजोर कोशिशें जब भी हुईं, ब्रिटिश सरकार ने उसे विफल करने के लिए फूट डालने और विभाजन की प्रक्रिया को कायम रखा। 1857 का प्रथम स्वाधीनता संग्राम, बंग-भंग और 1906 में हुई मुस्लिम लीग की स्थापना- स्वाधीनता की तेजी को कम करने के लिए की गई। जयदेव पुरी, साहित्यिक अभिरुचि से परिपूर्ण, चेतनशील व्यक्ति इसलिए कम्यूनिस्टों के विरोध में हैं, क्योंकि वे दो कौमों के सिद्धांत को स्वीकार करते हैं, जिसका मतलब है देश का विभाजन। ब्रिटिश सरकार किस प्रकार मुस्लिम लीग की पीठ थपथपा रही है। यह पं. गिरधारी लाल के इस कथन से स्पष्ट है, *'भई लीग तो एबसडी डिमांड करेगी ही, एटली ने उन्हें बढ़ावा दिया है कि जिस तजबीज में लीग शामिल नहीं होगी, उसे ब्रिटिश सरकार मंजूर नहीं करेगी। जब आप डेमोक्रेसी की बात करते हैं तो लीग और कांग्रेस का क्या ख्याल? जो मैजोरिटी में हो उसकी बात मानिए।'*[2]

हिंदू-मुस्लिम के विभाजन और संप्रदाय विशेष के प्रति अलगाव की आँधी का प्रथम दर्शन यशपाल जी ने उस समय किया, जब हिंदू रक्षा समिति की दो औरतें सहायता के लिए चंदा इकट्ठा करने भालो पंथी गली में पहुँचती हैं और मुसलमान फेरी वालों को देखकर हिंदुओं को उनके खिलाफ उकसाती हैं। *'आखिर हिंदुओं के मोहल्ले में मुसलमान फेरी वालों का क्या काम है? और इस प्रकार सांप्रदायिकता की भावना भालो पंथी की गली को कुछ अधिक ही हिंदू बना देती है।'*[3]

डॉ. प्राणनाथ इस विभाजन की त्रासदी का मूल कारण सरकारी नौकरियों को हिंदू-मुसलमानों में सांप्रदायिक अनुपात में बाँटना, उनके चुनाव प्रचार का क्षेत्र अलग-अलग बना देना है। हिंदू समाज मुसलमानों के प्रति परस्पर भाईचारा, स्नेह, मिलाप जैसी भावनाओं को अपने अंतर्मन में नहीं सहेजता। हिंदू समाज की असहिष्णुता और मुसलमानों के प्रति उनकी घृणा इन सांप्रदायिक दंगों का मूल कारण है। *'मुसलमानों को मलेच्छ और अछूत समझने के दिन से ही यह बीज बो दिया गया था। हिंदू को आप अछूत बनाकर भी दबा सकते हैं, क्योंकि वह आपसे धर्म से बंधा है। मुसलमान तो उस धर्म से बंधा नहीं तो वह अछूत समझे जाने का अपमान क्यों बर्दाश्त करे? जिस नियम को हमने अपनी सत्ता की रक्षा के लिए अपनाया था, उसी नियम ने हमें खा लिया।'*[4]

'झूठा सच' में यशपाल जी ने विभाजन की त्रासदी के लिए राजनीति व राजनेताओं की स्वार्थ लिप्सा को उत्तरदायी माना, जो कि जनता को महज एक सीढ़ी समझते हैं, अपनी मंजिल, अपने लक्ष्य को हासिल करने के लिए। 'तुम्हारे कत्ल के लिए उत्तेजना दिलाने की जिम्मेदारी उन नेताओं की है, जो तुम्हारे जैसे इंसानों को सिंहासन बनाने के लिए जनता को ईंट-गारे की भाँति प्रयोग करना चाहते हैं।' परंतु यहाँ पर यशपाल जी आम जनसमुदाय को चेतनशील और विवेक संपन्न बनने का आह्वान करते हैं और आम जनसमुदाय से प्रश्न करते हैं कि *'क्या हम सर्वसाधारण स्वार्थों में अंध और क्रूर लोगों को सपनों के महल में पहुँचाने के लिए जीने बनते रहेंगे? क्या सर्व साधारण अपने नेताओं को मानवता की कसौटी पर जाँचकर नहीं परखेंगे। क्या अपने स्वार्थों के लिए सर्वसाधारण को अँधा बना देना ही धर्म की रक्षा, प्रजातंत्र और जनवाद है।'*[5]

राजनेता जनता के कल्याण की अतिशयोक्तिपूर्ण उक्तियों का बखान करते हैं, पर उनका असली चेहरा कुछ और ही होता है। जयदेव पुरी राजनेताओं की इसी मूल्यहीनता का प्रतिनिधित्व करता हुआ सामान्य व्यक्ति के लिए अलॉट हुई जमीन पैसे लेकर बेच देता है तो एक व्यक्ति प्रतिकार करता है। परंतु जयदेव पुरी उसके इस प्रतिकार पर उसे जेल भेज देता है। इसी प्रकार जयदेव पुरी उर्मिला के लिए कनक को धोखा देकर अपने राजनीतिक ढोंग और छद्म चरित्र को पुष्ट करता है।

देश विभाजन की इस विभीषिका और त्रासदी ने सर्वाधिक प्रभावित किया स्त्री को। प्राचीनकाल से ही कोई राजा मरता तो स्त्री को या तो जौहर करना पड़ता या विरोधी राजा के सामने समर्पण करना पड़ता। विभाजन के समय जो स्त्रियाँ बिछड़ गईं, उनके परिवार वालों ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। सामाजिक अपवाद व लोकाचार के कारण वापस लौटीं अनेक स्त्रियों को अपनाया नहीं गया। उपन्यास झूठा सच की बंती और चिंती ऐसी ही युवतियाँ हैं। बंती अपने घर के ही चौखट पर सिर फोड़कर

अपनी जान दे देती है। उसके ससुराल वाले उसे स्वीकारने को तैयार नहीं हैं, क्योंकि इस बीच वह जाने कहाँ-कहाँ रही है और क्या-क्या किया है। समाज की इस संकीर्ण मानसिकता में न जाने कितनी स्त्रियाँ अपनी जीवन लीला समाप्त कर डालती हैं। समाज के दोनों पक्ष स्त्री और पुरुष जब समान समझे जाते हैं तो यह वैविध्य सिर्फ नारी ही क्यों सहे। इस प्रकार यशपाल जी ने एक वैचारिक दृष्टिकोण का पाठक के मन में समावेशन किया है।

वस्तुत: विभाजन, उसकी पीड़ा, सांप्रदायिकता की त्रासदी प्रमुख रूप से मध्यम वर्गीय समाज को ही प्रभावित करती है। उच्च वर्ग तो अपने धन-दौलत से अपने चारों ओर सुरक्षा का अभेद आवरण बना लेता है। मरने में वालों में हमेशा छोटे-मोटे फेरी वाले भिश्ती, मोची, दिहाड़ी पर काम करने वाले मजदूर या फिर दौलूमामा जैसे लोग ही होते हैं।

झूठा सच में यशपाल जी ने मध्यम वर्गीय समाज को प्रमुखता से वाणी प्रदान की। जयदेव पुरी उच्च शिक्षा प्राप्त करके भी बेरोजगार घूमता है। तारा के माध्यम से यशपाल जी ने मध्यम वर्गीय समाज के उस पात्र को प्रकाशित किया, जो शिक्षा प्राप्ति को लेकर जुझारू रहता है। उपन्यास के आरंभ में तारा एक साधारण लड़की के रूप में पाठकों के सामने आती है। अपने परिवेश की विद्रूपताओं से लड़ने के लिए अपनी सारी सीमाओं के बीच हर मुमकिन कोशिश करती है। उसकी त्रासदी किन्हीं अर्थों में समूचे मध्यम वर्गीय समाज की त्रासदी है। राम ज्वाया, रामलुभाया, जयदेव पुरी, पंडित गिरधारी लाल, डॉक्टर प्राणनाथ व पंजाब के असंख्य परिवार मध्यवर्ग के विभिन्न स्तरों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

भारत-पाकिस्तान विभाजन की पुष्टि हो चुकी थी, फिर भी अपनी-अपनी मिट्टी से जुड़े व्यक्ति उससे अलगाव महसूस नहीं करते और विभाजन की इस प्रक्रिया को स्वीकारते नहीं हैं। विभाजन को वे मिथ्या या पागलपन करार देते हैं। काली पड़ोसी कहता है *'ताया यह सब पागलपन दो दिन का है, जो भागकर आए हैं, वे भी चार दिन में लौट जाएँगे। पाकिस्तान हुआ तो क्या और हिन्दुस्तान हुआ तो क्या, हम लोग तो लाहौरी हैं। डूंगी गली के पड़ोसी हैं। चल बैठ तू घर में तेरी दुकान जल गई है तो और बन जाएगी। रब्ब का भरोसा कर।'*[6]

धर्म के नाम पर हुए विभाजन से आम जनसमुदाय जो अपने परिवेश, अपनी संस्कृति और स्थान से गहराई से जुड़ा हुआ है, उसका अंत:करण इस त्रासदी से आहत है। धर्म के आधार पर विभाजन पर काफिले की मोटर का ड्राइवर कहता है, 'रब्ब ने जिन्हें एक बनाया था, रब्ब के बंदों ने बहस ओर जुल्म से उसे दो कर दिया।' यशपाल जी ने उपन्यास के अंत में सकारात्मक दृष्टिकोण रखा है और जनता जनार्दन की शक्ति को सर्वोपरि माना है। सूद जी की सत्रह हजार वोटों से हुई हार को दिखाकर बुद्धिजीवियों की सकारात्मकता को पुष्ट किया। जनता निर्जीव नहीं है। जनता सदा ही मूक नहीं रहती। देश का भविष्य नेताओं और मंत्रियों की मुट्ठी में नहीं है। देश जनता के हाथों में है। इस प्रकार यशपाल जी ने आशावाद और सकारात्मक का वैचारिक दृष्टिकोण पाठक के हृदय में समावेशित किया है। ❑

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**


1. यशपाल, झुठा सच, पृ. 193, आधार प्रकाशन, पंचकुला
2. वहीं, पृ. न. 197
3. वही, पृ. न. 456
4. वही, पृ. न. 539
5. वही, पृ. न. 272
6. वही, पृ. न. 539
7. वही, पृ. न. 709

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

# अविरल काव्यधारा की सरसता में बहता उपन्यास 'जिंदगीनामा'

**पूनम लाकरा**

शोधार्थी, हिंदी विभाग
बाबा साहेब भीमराओ अंबेडकर विश्वविद्यालय, विद्या विहार, राय बरेली रोड, लखनऊ, उ.प्र.: 226025
9013005172
poonamlakra154@gmail.com

**प्रो. आर.पी. गंगवार**

शोध निर्देशक, हिंदी विभाग
बाबा साहेब भीमराओ अंबेडकर विश्वविद्यालय, विद्या विहार, राय बरेली रोड, लखनऊ, उ.प्र. : 226025

**शोध सार :**

कृष्णा सोबती द्वारा रचित जिंदगीनामा एक कालजयी रचना है, जिसमें एक आंचलिक उपन्यास की सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं। इसके अंतर्गत अविभाजित पंजाब की साँझी संस्कृति और ग्रामीण जन जीवन का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत किया गया है। इसकी कथा वस्तु किसी एक मूल कथा पर आधारित न होकर लोक कथाओं एवं घटनाओं का समुच्य पेश करती है। इसके प्रारम्भिक पन्नों में अंकित हृदय ग्राह्य कविता पंजाब के सौंदर्य को विश्लेषित करती है। कविताओं का यह क्रम पूरी रचना में लगातार चलता रहता है, जो कभी भक्ति भावना, कभी पर्व-त्योहारों का उल्लास तथा कभी प्रेम का मधुर अहसास जगाकर इसमें वर्णित कहानी व किस्सों की रोचकता को बरकरार रखता है। इसमें प्रवाहित होने वाली निर्मल काव्य धाराएँ जहाँ एक तरफ जनसंस्कृति को सिंचित करती हुई चलती हैं तो दूसरी तरफ देश की समृद्ध ऐतिहासिक गौरव गाथाओं का बखान भी करती हैं। 'जिंदगीनामा' के विस्तृत फलक के जरिए हमें तत्कालीन पंजाब की सामाजिक परम्पराओं, सांस्कृतिक धरोहरों तथा राजनीतिक परिदृश्यों आदि के दर्शन कराए जाते हैं, जिनसे हम सहज ही जुड़ाव महसूस करने लगते हैं।

**प्रस्तावना :**

मानवीय जीवन की मूलभूत प्रक्रियाओं में सृजनशीलता का उल्लेखनीय स्थान होता है। इससे व्यक्ति में तर्क शक्ति एवं रचनात्मक गुण विकसित होते हैं। बेहतरीन सृजन क्षमताओं के आधार पर ही समाज में एक लेखक या कलाकार की छवि निर्मित होती है। इसके लिये उसे अपनी जीवन यात्रा के दौरान सृजन प्रक्रियाओं के विभिन्न दौर से गुजरना पड़ता है। यह प्रक्रिया विविध जीवनानुभवों, स्मृतियों, मान्यताओं एवं परिवेश का परिणाम होती है। यदि आधुनिक युग की सुविख्यात कथाकार कृष्णा सोबती के संदर्भ में सृजनात्मकता का विश्लेषण करें तो ज्ञात होगा कि उनकी हर रचना एक नये रूप एवं विशेष अंदाजे बयां के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत होती है। क्योंकि न तो उन्हें परम्परागत लेखन में विश्वास था और न ही वह किसी खास विमर्श के दायरे में सिमटकर लिखने की पक्षपाती थीं।

यूँ तो अनेक गद्य विधाओं में उन्होंने अपनी बहुमुखी प्रतिभा का व्यापक परिचय दिया है, मगर उनके द्वारा गद्य रचनाओं में कविता की मधुर स्वर लहरियों की जो धारा बहाई गयी है, वह अपने आप में एक अनूठी मिसाल है। खासकर जब हम 'समय सरगम', 'चन्ना', 'सूरजमुखी अँधेरे के' तथा 'जिंदगीनामा' आदि उत्कृष्ट रचनाओं को पढ़ते हैं तो उनकी काव्यात्मक प्रतिध्वनियाँ सहसा ही हमारे मन को तिरोहित कर लेती हैं और हम संगीत की लयात्मकता से भाव विभोर हो उठते हैं। इस दृष्टि से 'जिंदगीनामा' का विशेष महत्त्व है, जिसके पात्रों की गीतात्मक प्रवृत्ति ने इसे सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों की श्रेणी में स्थान दिलाया है। इसमें लेखिका ने विभिन्न कवित्त, भक्तिमय पदों, सूफी संगीत तथा रागात्मक पंक्तियों के जरिये पंजाब की लोक संस्कृतियों की रसधारा प्रवाहित की है, जिससे यह साबित होता है कि मूल रूप से एक कथाकार होते हुए भी उन्हें कविताओं में अत्यधिक रुचि थी। अपनी काव्यात्मक विशिष्टता के कारण यह उपन्यास पाठकों के बीच काफी प्रसिद्ध हुआ और अन्य रचनाओं में इसकी अलग पहचान बनी। परिणामस्वरूप इसे 1980 में साहित्य अकादमी पुरस्कार और 1981 में साहित्य शिरोमणी पुरस्कार प्राप्त हुआ। जिंदगीनामा उपन्यास के काव्य पक्ष पर गहन चिंतन प्रस्तुत करना तथा इसके परिप्रेक्ष्य में कृष्णा सोबती की सृजनात्मकता का मूल्यांकन एवं व्याख्या ही इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है।

**मूल आलेख :**

यूँ तो 'जिंदगीनामा' में 20वीं सदी के शुरुआती दो दशकों का काल खंड वर्णित है, परन्तु इसके माध्यम से लेखिका ने भारत का इतिहास, भौगोलिक परिवर्तन, भारत-पाक विभाजन, गाँवों की सामाजिक स्थिति एवं तत्कालीन समाज में व्याप्त जमींदारी व्यवस्था की विडम्बनाओं आदि का वास्तविक चित्र उकेरा है। अपनी किस्सागोई शैली के कारण यह उपन्यास पाठकों के बीच खासा लोकप्रिय हुआ। इसके विस्तृत अहाते के एक तरफ शाहनी की विशाल महिला मंडली है, जो पारम्परिक रूप से चरखा कातती है और पर्व-त्योहार, विवाह समारोह एवं बच्चों के जन्मोत्सव आदि विशेष अवसरों पर भव्य लोक संगीत आयोजित कर गाँव की विभिन्न परम्परागत मान्यताओं को जीवित रखती है तो दूसरी ओर शाहजी के नेतृत्व में सजाई गयी अनुभवी लोगों की मजलिस है, जो कभी देशी-विदेशी राजनीतिक गलियारे का चक्कर काटती है, कभी कानूनी पेचीदगियों में उलझी रहती है। कभी पंजाब की बहादुरी व सम्पन्नता का वर्णन करती है तो कभी जमींदारी प्रथा के समर्थन में पुरजोर आवाज बुलंद करती है।इस कृति में कोई नायक-खलनायक नहीं है। इसके विशाल प्रांगण में हर आयु वर्ग और पेशे से जुड़ा ग्रामीण जन अपनी-अपनी भूमिका निभाते नजर आते हैं।

इसका कथानक मूल रूप से डेरा जट्टा गाँव के इर्द-गिर्द घूमता है, जहाँ लेखिका का सुनहरा बचपन व्यतीत हुआ था। वहाँ की सांस्कृतिक विविधता एवं सादगीपूर्ण परिवेश ने उनके व्यक्तित्व पर गहरी छाप छोड़ी थी। यही वजह है कि दिल्ली के आधुनिक नगरीय वातावरण में एक लम्बा अरसा गुजार लेने के बावजूद भी उनकी बहुत-सी रचनाएँ ग्राम्य जीवन के इंद्रधनुषीय रंगों का दर्शन कराती हैं। उपन्यास के विस्तृत कथा विन्यास की शुरुआत ही मधुर कविता के साथ होती है, जिसमें पंजाब की प्राकृतिक शोभा की अनुपम छटा, उसकी शौर्य गाथा तथा समृद्धि की कहानी कही गयी है-

'गलबहियों-सी उमड़ती, मचलती दूध भरी छातियों-सी चनाब और जेहलम की धरती माँ बनी कुरते के बंद खोलती दूध की बूँदें धड़काने को कनक के सुनहली ढेरों पर चम-चम चमकती मीठी सजरी धूप चाँदी के चौकफूल पहने बर्फीली चोटियों को छू-छू आती ठंडी सुहानी हवाएँ। सरसों के पीले खेतों को हिलाती-डुलाती कुलाँचे भरती भागीभरे चनाब के अल्हड़ अनोखे पानियों पर जिसकी अमृत की बूँदों ने लहू के पेड़ खड़े कर दिये। हरे-भरे खेतों की मुंडेरों पर तने माथे पर अक्खड़ तेवर गेहुआँ रंग पर नखरीली मूँछों वाले भारी गौहरे चेहरों पर गन्दम की इलाही लाली बाँहों के चूड़े छनकाती मक्का-सी खिली-खिली शरबती आँखों वाली।' [1]

भारत सांस्कृतिक विविधताओं वाला देश है, जहाँ समय-समय पर अलग-अलग त्योहारों की धूम रहती है। यहाँ फसलों की बुआई-कटाई तथा ऋतुओं के आगमन को भी भव्यता के साथ मनाया जाता है। जहाँ देश के अन्य भागों में होली, दशहरा, दीपावली, ईद, मकर संक्राँती

तथा पोंगल इत्यादि मुख्य आकर्षण हैं, वैसे ही पंजाब का प्रमुख पर्व लोहड़ी और बैसाखी है, जो बड़े हर्ष-उल्लास से मनाया जाता है। इस अवसर पर गाँव के लोग एकत्र होकर हँसी-मजाक के बीच पारम्परिक रिवाजों को पूर्ण करते हैं। लेखिका ने गाँव के सौहार्दपूर्ण वातावरण में लोहड़ी के अनेक पक्षों की बारीकियों को चित्रित किया है-

जुग-जुग आता रहे यह कर्मों वाला दिहाड़ा, झोलियाँ भरती रहें, दुल्हनें देहरी चढ़ती रहें, सत्पुत्रियाँ होती रहें। 'बच्चों के होंठों में घुलती गुड़ की टुकड़ियाँ, मक्का के दानें हाँफती हुलारो-भरी मस्त कँवारियाँ। हवा में आग की सुर्ख-सुनहरी लपटें ऐसे हिलोरे लें ज्यों मनमौजन जिंदगी उन्हें हवा के हिंडोलों में झुलाती-डुलाती हो।' [2]

इस रचना में कृष्णाजी ने तुकबंदियों का अधिकाधिक प्रयोग किया है, जिसके कारण बच्चे बड़े, स्त्री-पुरुष सभी अपनी धुन में गुनगुनाते हैं और उपन्यास की रोचकता को बरकरार रखते हैं। यहाँ तक कि मदरसे की पढ़ाई के दौरान बच्चे भी अपने पाठ को याद करने, परस्पर मनोरंजन तथा हँसी-मजाक के लिये तुकबंदियों का सहारा लेते हैं। इससे सौहार्दपूर्ण वातावरण तो निर्मित होता ही है, लोक मानस में व्याप्त सामाजिक मान्यताओं की सहज अभिव्यक्ति भी होती है।

'शमाल में कोह हिमाला, जनूब में तेरा लाला, मशरिक में मुल्क ब्रह्मा, मड़रिब में तेरी अम्मा। ओले पड़ गये टपा-टप, फौजें चढ़ आईं दबा-दब! दौड़ो यारों दौड़ो, चलो मदरसा छोड़ो।' [3]

तीज-त्योहारों व अन्य अवसरों पर ग्रामीण महिलाओं-युवतियों एवं मिरासियों द्वारा सामुहिक रूप से इकट्ठा होकर जो गीत गाए जाते हैं, उनमें कहीं हीर-राँझा के रागात्मक संबंधों की गूँज सुनाई देती है तो कहीं उत्सवों का उल्लासपूर्ण परिवेश दृष्टव्य होता है। कहीं प्रकृति के मनोरम चित्र उभरते हैं और कहीं ईश्वरीय भक्ति की निष्छल धारा प्रवाहित होती है।

'कहें तो नौबत की तरह बजती रहें नौरंग चूड़े वालियाँ, मेरी जच्चा रानियाँ सुहे जोड़े पहन सुहागना मोतियाँ मांग सजावनी बैठ अंगना गोद भरावनी मेरे लाल जियो लख साल।' [4]

'मनसा करत सुख चरण तिहारे, मेरी मुरादें परसउ प्यारे, जो सुख आवे सो फल पावे, नौस नबी को लागे प्यारे।' [5]

इस उपन्यास के विस्तृत परिदृश्य में लेखिका ने विभाजन पूर्व पंजाब की समृद्धि, लोक संस्कृति की सौंधी महक तथा इसकी प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन तो किया ही है, प्रमुख देशी-विदेशी राजनीतिक घटनाक्रमों एवं ऐतिहासिक गौरव गाथाओं को भी विशेष महत्त्व दिया गया है। साथ ही भारत में ब्रिटिश सरकार की स्थापना, उसकी कार्य प्रणालियों और देश में उसकी बढ़ती ख्याति के संदर्भ में लोगों की प्रतिक्रियाओं से भी हमें अवगत कराया है-

'सलामत रहे अंग्रेज का राज, कोहेनूर वाला शहंशाही ताज नहरों से किया पंजाब आबाद यंग साहेब बहादुर जिंदाबाद।' [6]

लेखिका द्वारा प्रयुक्त इन कवित्तों में अनेक विशेषताएँ विद्यमान हैं। इनके माध्यम से कहीं सुफियाना प्रभाव आलोकित होता है तो कहीं पंजाबी की सरसता की झलक मिलती है। कहीं खड़ीबोली के विशुद्ध रूप के साथ-साथ सरल-सहज हिंदी की मधुरता परिलक्षित होती है और कहीं भाषाओं का मिश्रित रूप दृष्टिगोचर होता है। इनमें जहाँ एक तरफ खुशी के पलों का समावेश होता है वहीं दूसरी ओर मिलन की उत्तेजना और बिछड़ने का दर्द भी समाहित रहता है। साथ ही बच्चों की हँसी-ठिठोली की झलक भी मिलती है।

दामन बीबी फातिमा का छत्तर तान दिल्ली का हुकम मान जाबे का ताबा तान मक्के का। [7]

1947 में बढ़ते धार्मिक मतभेदों के परिणामस्वरूप विशाल भारत के भूखंड को दो टुकड़ों में विभाजित कर दिया गया। इस निर्णय की वजह से पंच दरियाओं की भूमि पंजाब के बीच विभाजन रेखाएँ खींच दी गयी, जिससे भारत और पाकिस्तान दो अलग देशों का निर्माण हुआ। इस ऐतिहासिक एवं दर्दनाक घटना को जिंदगीनामा उपन्यास में संजीदगी से उठाया गया है। एक मार्मिक कविता के जरिए विभाजन कालीन परिस्थितियों, परिणामों तथा विस्थापन की पीड़ा को भी बखूबी चित्रित किया गया है-

'इस धरती पर अब हमारे पुण्य शेष हो गये हैं। अब हमें बिछुड़ जाना है अपनी धरती से, अपनी माँ से, माँ की माँ

से और हम सब की माँ से। इसकी दूध भरी छातियों से अब दूध नहीं खून टपकता है। मत देखो पलटकर दौड़ चलो छोड़ चलो इस पानी को इस धरती को जिसने हर मौसम हर बहार में सूरमाओं की पनीरी उगाई थी। जिसने हाड़-माँस के इन्सानों में मेहनत करने और जिंदगी को जी भर-भर प्यार करने की ललक जगाई थी। लौ लगाई थी। अलविदा आबो के आब को। पंच दरियाओं के पंजाब को। झेलम और चनाब को अलविदा अपने पुरखों की याद को।' [8]

गौरतलब है कि डेराजट्टा गाँव का साधारण व खास तबका स्थानीय परम्परा का संरक्षक है और खुद को किसी न किसी रूप में गीत, संगीत तथा कवित्त से जोड़े रखता है। परंतु इस संदर्भ में राबयाँ का जिक्र करना आवश्यक हो जाता है, जो लालीशाह की देखभाल के लिये शाह परिवार में रहती है। उसका जीवन गीत-संगीत का पर्याय बन चुका है। उसका युवा मन हमेशा अपनी संस्कृति की थिरकन को गहराई से महसूस करता है। वह अपने हृदय के उद्गारों को गीत के विविध रूपों के जरिए व्यक्त करती है। उसकी मधुर स्वर लहरियाँ कभी सावन की फुहारों की वर्षा करती हैं, कभी भक्ति रस बरसाती हैं और कभी प्यार के रंग बिखेरती हैं। वह स्वयं कवित्त रचती है, उसे सुरों में पिरोती है। उसकी मधुर आवाज शाहजी को तो मंत्रमुग्ध करती ही है, शाहनी, चाची महरी तथा गाँव के अन्य लोग भी उसकी मीठी तान के मुरीद होकर बार-बार उससे गीतों की फरमाइश करते हैं।

'रंग रस जीने वालों के रे साजन प्रीत प्यारों के जिनके हृदय सूरज उनकी मुट्ठी धूप मस्तक उनके चंद्रमा जिनके घर में पूत।' [9]

'मैं सूरज अगन जलाऊँगी मैं प्यारा यार मनाऊँगी। सात समुन्दर दिल के अन्दर मैं दिल से लहर उठाऊँगी। मैं प्यारा यार मनाऊँगी। मैं बादल हो-हो जाऊँगी। मैं भर-भर मेंह बरसाऊँगी। न मैं ब्याही न मैं क्वाँरी पर बेटा गोद खिलाऊँगी इक दूणा अचरज गाऊँगी।' [10]

**निष्कर्ष :**

उपर्युक्त विवरणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि यदि आंचलिकता की दृष्टि से 'जिंदगीनामा' का अवलोकन किया जाए तो इसे सर्वश्रेष्ठ आंचलिक उपन्यासों की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसकी भाषा, परिवेश, घटनाओं की शृंखलाएँ तथा पात्र पूर्णत: स्थानीयता की रंगत से पाठक वर्ग को सराबोर करते हैं। बेहतरीन काव्य समायोजन की विशेषता इसकी प्रभावोत्पादकता में वृद्धि करती है, जो इसे अन्य उपन्यासों की तुलना में विशिष्ट स्थान दिलाती है। अत: हम कह सकते हैं कि कृष्णाजी की अद्भुत प्रतिभा का ही कमाल है कि हमें एक ही रचना में गद्य और पद्य दोनों का रसास्वादन मिल जाता है, जिसके कारण पाठकों में इसके प्रति रुचि एवं पठनीयता बरकरार रहती है। अपनी काव्यात्मक शैली के विषय में प्रकाश डालते हुए कृष्णाजी लिखती हैं-

मैं रात में लिखती हूँ। रात का अंधकार जब मेरे अकेले टेबल लैंप के रहस्य में आ सिमटता है तो शब्द मुझे नए राग, नई लय और नई धुन में आ मिलते हैं। [11] ❑


**संदर्भ सूची :**

1. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 8
2. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली, पृ. सं. 41 - 42
3. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली, पृ. सं. 146
4. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 112 - 113
5. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. 183
6. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 189
7. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 186
8. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 13-14
9. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 78
10. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 1979, नयी दिल्ली पृ. सं. 120
11. लेखक का जनतंत्र, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 2018, नयी दिल्ली, पृ. सं. 199

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

# चंद्रकुँवर बर्त्वाल का काव्य-दर्शन

**डॉ. ममता थपलियाल**

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अ.प्र.ब. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अगस्त्यमुनि, जनपद-रुद्रप्रयाग,
उत्तराखंड : 246421
9639253200, 8449695788
mamtasemwal19@gmail.com

**शोध-सार :**

हिमवंत कवि चंद्रकुँवर बर्त्वाल का काव्यवृक्ष छायावाद की उर्वरा भूमि में पल्लवित हुआ, जिसमें प्रकृति, प्रेम, विरह, मृत्युबोध, जिजीविषा, रहस्य, राष्ट्रीयता, बिंब, प्रतीक, मानवीकरण के साथ ही आँचलिकता का सुंदर परिपाक मिलता है। इस काव्यवृक्ष की शाखाएँ निराला और पंत की भाँति शोषक वर्ग की तीक्ष्ण भर्त्सना और विकल मानव के प्रति संवेदना तक फैली हुई हैं। चंद्रकुँवर का प्रकृति-चित्रण कलात्मक सौंदर्य तक सीमित नहीं है, उसमें हिमवंत का कोमल और कठोर जनजीवन अभिव्यक्त है। उसमें अमृत है तो विष भी है, सुकोमल फूल हैं तो खून से तर कर देने वाले काँटे भी हैं। इनकी कविता में धरती, आकाश, पर्वत, नदियाँ, निर्झर, बूँद, समुद्र, वृक्ष, फल, फूल, वर्षा, मेघ न जाने कितने दृश्य मूर्त हुए हैं। गोधली बेला में धेनुओं की घंटियों का मधुर नाद, चरवाहे जीतू की बाँसुरी की मधुर तान, हल चलाते किसान, कृषक कन्याएँ, बाँज की जड़ों का ठंडा पानी, बुरांश के रसामृत लाल पुष्प, देवदार और चीड़ के घने जंगल, काफल की मिठास, काफलपाकू पक्षी का मादक कलरव, रैमासी का दिव्य फूल इत्यादि अंचल-विशेष की जीवंतता के कारण छायावाद के स्तंभ कवियों की अपेक्षा कवि चंद्रकुँवर लोकजीवन के अधिक निकट दीखते हैं। कवि बर्त्वाल में आरंभ से ही प्रगतिशीलता थी। प्रगतिवादी दौर में शोषकों के खिलाफ इनका आक्रोश बढ़ जाता है। कंकड़-पत्थर, काँटा, छुर्री, बाँस का लट्ठ, आँधी, मैकाले के खिलौने, हिरोशिमा का शाप इत्यादि अनेक कविताओं में कवि की प्रगतिशीलता अधिक मुखर हुई है। चिंतनीय विषय है कि एक शताब्दी बीतने के पश्चात भी हिंदी के अधिकांश विद्वान साहित्य इतिहासकारों, आलोचकों की दृष्टि में प्रकृति और प्रगति का यह अमर कवि अदृश्य है।

**बीज शब्द :**

व्यक्तित्व-कृतित्त्व, प्रकृति-चिंतन, आत्मपरकता, आँचलिकता, प्रगतिशीलता, जन-जीवन।

छायावाद और प्रगतिवाद की सघन अनुभूतियों में साँस लेने वाले कवि चंद्रकुँवर बर्त्वाल का जन्म हिमालय की उपत्यका में बसे मालकोटी गाँव, वर्तमान

रुद्रप्रयाग जनपद (उत्तराखंड) में 20 अगस्त 1919 को हुआ था। पुरातन स्थली नागनाथ पोखरी में आरंभिक अक्षर बोध के समय प्रकृति का विराट स्वरूप देखकर कवि का बालमन चकित है, प्रकृति से इस गहन आत्मीयता को कवि-हृदय शब्द-वाणी देकर सदानीरा बना देता है –

ये बाँज बुराँस पुराने पर्वत से, यह हिम से ठंडा पानी!
ये फूल लाल संध्या से भी, इनकी यह डाल पुरानी!
इस खग का स्नेह काफलों से, इस की कूक पुरानी!
पीले फूलों में काँप रही, पर्वत की जीर्ण जवानी!
इस महा पुरातन नगरी में, महा चकित यह पर देशी,
अनमोल कूक, झँपती झुरमुट, गुंजार अमोल पुरानी![1]

प्रकृति का यह चितेरा कवि मिडिल पास करने के बाद हाईस्कूल की शिक्षा प्राप्ति के लिए पौड़ी के मैसम्योर कॉलेज गए। यहीं उनकी भेंट उनके परम मित्र शंभुप्रसाद बहुगुणा से हुई, जिन्होंने बाद में इनकी समग्र रचनाओं के संकलन प्रकाशित किए। इन्हें इंटरमीडिएट करने के लिए डी.ए.वी. कॉलेज देहरादून जाना पड़ा। 'देहरादून', 'मंसूरी', 'काफलपाकू', 'मेघलोचन' जैसी अनेक कविताएँ कवि ने देहरादून में ही रची थी। अपनी बौद्धिकता के बल पर कवि ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक पूर्ण किया। 1941 में इतिहास विषय में एम.ए. के लिए चंद्रकुँवर लखनऊ विश्वविद्यालय गए। यहाँ रहकर उन्होंने अनेक कविताएँ लिखीं। यहीं उनका परिचय निराला जी से हुआ। तपेदिक से ग्रस्त होने के कारण चंद्रकुँवर पुन: हिमालय की गोद में आ गए। उन्होंने अगस्त्यमुनि में जूनियर-हाईस्कूल की स्थापना में योगदान दिया। यहाँ कुछ समय अध्यापन के पश्चात स्वास्थ्य बिगड़ने पर अपने पैतृक गाँव पंवालिया की शांत घाटियों में लगभग सात वर्ष अपने काव्यसुमन अर्पित करते रहे। पंवालिया वह स्थान है, जहाँ की प्राकृतिक शोभा से कवि की शुष्क आत्मा हरित हो जाती है–

मेरे गृह से सुन पड़ती गिरिवन से आती
हँसी स्वच्छ नदियों की सुन पड़ती विपिनों की,
मर्मर ध्वनियाँ, सदा दीख पड़ते द्वारों से
खुली खिड़कियों से हिमगिरि के शिखर मनोहर,[2]

जिस प्रकार हारिणी कथा के नायक 'जीतू' की मनोरम छवि एवं उसकी मधुर बांसुरी के नाद पर मोहित होकर अप्सराओं ने उसे हर लिया था, उसी प्रकार प्रकृति के इस अमर कवि को भी मात्र 28 वर्ष 24 दिन की अल्पावस्था में 14 सितंबर 1947 को प्रकृति-सुंदरी ने हर लिया था। अंतिम विदा पर वे सांसारिक संबंधियों की अपेक्षा प्रकृति से विदाई माँगते हैं –

विदा-विदा हे हरित तृणों की सुंदर धरणी,
विदा-विदा हे मानव पशु पूजित जननी,
अब न तुम्हें पूजूँगा मैं इस नभ के नीचे,
तुम भी मुझे विदा दो हे प्रभु, हे परमेश्वर, [3]

चंद्रकुँवर बर्त्वाल के साहित्य का अधिकांश संपादन-प्रकाशन उनके परम मित्र शंभुप्रसाद बहुगुणा जी द्वारा किया गया, जिनमें प्रमुख संग्रह हैं – मेघनंदनी (1946), सुंदर-असुंदर (1949), कंकड़ पत्थर (1950), विराट हृदय (1950), विराट ज्योति (1950), पयस्विनी (1951), गीत माधवी (1951), मानस मंदाकिनी (1951), जीतू (1952), काफल पाक्कू (1952), प्रणयिनी (1952), नागिनी (एकांकी, कहानी, यात्रा-वृतांत) (1952), साकेत परीक्षण (1952), नाट्य नंदिनी (1953) आदि। डॉ. उमाशंकर सतीश ने 'चंद्रकुँवर बर्त्वाल का कविता संसार' (2004), श्री बुद्धिबल्लभ थपलियाल ने 'चंद्रकुँवर' (1999) तथा डॉ. योगम्बर बर्त्वाल ने 'चंद्रकुँवर बर्त्वाल : संपूर्ण काव्य साहित्य' (2022) नाम से इनकी रचनाओं का पुन: संकलन किया।

साहित्य-सृजन चंद्रकुँवर का परम ध्येय रहा और प्रकृति उनका ईष्ट है। सामान्य जन परमात्मा के सम्मुख वैभव माँगते हैं, और यह कवि स्वर्ग-सरि 'मंदाकिनी' से काव्य-सृजन की शक्ति माँगते हैं –

स्वर्ग-सरि मंदाकिनी! हे स्वर्ग-सरि मंदाकिनी!
मुझको डुबा निज काव्य में हे स्वर्ग-सरि मंदाकिनी! [4]

चंद्रकुँवर ने असंख्य विषयों पर काव्य रचा। 'यशस्वियों की पृथ्वी से लेकर सड़क पर मरे हुए एक कुत्ते तक पर उनकी कवि दृष्टि गई है।' [5] उनका कवित्त्व छायावाद की उर्वरा भूमि का वरण करते हुए भी अपनी नव्यता लिए हुए है। डॉ. योगम्बर बर्त्वाल के अनुसार – 'कवि की रचनाओं में प्राय: छायावाद की झाँकी भी मिलती है। रचनाकाल की दृष्टि से प्रगतिवाद के लक्षण भी मिलते हैं, हिमालय और गंगा कवि के मुख्य विषय

थे। राष्ट्रीय जागरण हो या स्वतंत्रता आंदोलन सामाजिक दृष्टि से सभी विषयों में कवि बर्त्वाल की स्पष्ट दृष्टि एवं भविष्य की कल्पना थी।' [6]

पर्वत प्रदेश का वासी होने के नाते उनकी कविताओं में धरती, आकाश, पर्वत, नदियाँ, निर्झर, वृक्ष, फल, फूल, पत्ते, बादल, वर्षा, पशु, पक्षी जाने कितने दृश्य मूर्त हो उठे हैं। प्रकृति-प्रेम कवि का प्रकृति-सानिध्य से उपजा है। उन्होंने स्वयं कहा है कि जाने कितनी रातें कितने दिन प्रकृति के साथ बीती –

तुम्हारे साथ अनेकों प्रात, मनोरम दो पहरें निर्वात,
अनेकों बीती सन्ध्याएँ, अनेकों रातें पुलकित गात! [7]

प्रकृति के माध्यम से भावों का प्रसार छायावाद का उत्स है। कवि हँसते हैं तो प्रकृति बच्चों की भाँति खिलखिला उठती है –

हँसी दिशाएँ, चमके तारे
बहीं सुशीत हवाएँ,
मेघों से घिर बनी मनोहर
रागारुण सन्ध्याएँ। [8]

कवि के रुदन में प्रकृति का रुदन मिलता है। मृत्युबोध से उठी गहन संवेदना प्राकृतिक प्रतीकों से अधिक मर्मस्पर्शी हो जाती है –

हाय आज के फूल न कल तक रह पाएँगे,
नयनों में ही कोमल स्वप्न बिखर जाएँगे,
आज हो रहा है मेरी कुंजों में गुंजन,
और उठेगा कल द्रुम-द्रुम में निष्फल रोदन! [9]

निजी भावों को प्रकट करने हेतु कवि के पास प्रकृति से बेहतर उपादान नहीं है। प्रिय-मिलन की आकांक्षा कवि समुद्र से मिलने जाती आतुर नदियों से बिम्बित करते हैं –

मेरी बाँहें सरिताओं सी आकुल होकर,
दिशा-दिशा में खोज रही हैं वह प्रिय सागर,
जिसे हृदय पर धर कर मिलती शांति चिरंतन,
जिसे देख कर कुछ न दीखता फिर पृथ्वी पर,
मेरी बाहें खोज रही हैं वह प्रिय सागर! [10]

कवि को मेघ और वर्षा का चित्रण करना अतिप्रिय रहा है। उनके मेघ और वर्षा, जहाँ अपनी शीतल बूँदों से धरती को हरित कर देते हैं –

जिन पर मेघों के नयन गिरे
वे सब के सब हुए हरे, [11]

वहीं प्रलयकारी वृष्टि से तहस-नहस होते पहाड़ी जनजीवन का कटु सत्य भी उजागर करते हैं –

मेघ गरजा
घोर नभ से मेघ गरजा
गिरी बरसा
प्रलय रव से गिरी बरसा
तोड़ शैलों के शिखर,
बहा कर धारें प्रखर
ले हजारों घने धुँधले निर्झरों को,
कह रही है वह नदी से
उठ अरी उठ
कई जन्मों के लिए तू आज भरजा,
मेघ गरजा, [12]

कहने का तात्पर्य है कि चंद्रकुँवर का प्रकृति-दर्शन पंत की भाँति कला-सौंदर्य तक सीमित नहीं है। कवि ने इस प्रदेश के अच्छे-बुरे, कोमल-कठोर सब अनुभव प्रकृति के माध्यम से प्रकट किए हैं। उसमें अमृत है तो विष भी, सुकुमार फूल हैं तो खून से तर कर देने वाले काँटे भी, घनघोर अंधकार है तो स्वर्णिम प्रभात भी।

मैंने जीवन भर पर्वत देखे,
दुर्गम, बर्फानी, उजाड़, हिम-धाम सरीखे
उठते गिरते पथ, का ही क्रम मैंने जाना,
हिम-शिखरों को नयनों ने सीखा अपनाना
गंगा गिरती है मेरे गिरी शिखरों से,
मैंने जीवन भर पर्वत देखे, [13]

इन पंक्तियों में स्वयं कवि का ही नहीं अपितु संपूर्ण हिमवंत-वासियों का पर्वत सा कठोरतम जीवन प्रतिबिंबित होता है। डॉ. असवाल कहते हैं कि 'प्रकृति चित्रण में बर्त्वाल प्रकृति का केवल रंग-रूप ही नहीं लेते बल्कि उसमें वहां की मिट्टी की सोंधी गंध है। वहां का जन-जीवन है, वहां का रहन-सहन है, वहां की विचारधारा और रूढ़ियाँ भी हैं। उनका परिचय इस प्रकृति से बहुत पुराना है बल्कि कवि के ही शब्दों में कहें तो जन्म-जन्मांतर का है, कवि की अंतिम इच्छा यही है कि यदि

यहीं उनका पुन:जन्म हो तो इन्हीं फूलों से लदी घाटियों, हिम से ढकी चोटियों के बीच हो।' [14]

छायावादी 'आत्मपरकता' चंद्रकुँवर के काव्य का प्राण है। यौवनावस्था में प्रेम, प्रेम से वंचना, तपैदिक के कारण मृत्युबोध, जिजीविषा, रोगग्रस्त अवस्था में प्रियजनों की अवहेलना आदि सबकुछ उनके काव्य में प्रस्फुटित हुआ है। उस वक्त क्षय रोग लाइलाज था। पंवालिया में वे अपने जीवन के चंद पल जी रहे थे। युवावस्था में मृत्युबोध उनके समस्त सपनों पर कहर बन गया था। नदी की गति के माध्यम से असमय मृत्यु का क्षोभ और इस काया की नश्वरता इन पंक्तियों में द्रष्टव्य है –

नदी चली जाएगी यह न कहीं ठहरेगी!
उड़ जाएगी शोभा रोके यह न रुकेगी!
झर जाएँगे फूल हरे पल्लव जीवन के,
पड़ जाएँगे पीत एक दिन शीत मरण से! [15]

कवि की मृत्युबोध से उपजी जिजीविषा अधिक समाजोपयोगी है। वर्तमान समाज जिस प्रकार नैतिक मूल्यों के ह्रास से त्रस्त है। जीवन की आपाधापी, आकांक्षा, एकाकीपन, संघर्ष और असफलता के निमित्त कई युवाओं में जीवन के प्रति भय, त्रास, नैराश्य, कुंठा, क्षोभ इत्यादि अनेक दुर्भावनाएँ भर जाती हैं। जिस कारण कई बार युवा पीढ़ी स्वयं या दूसरों के जीवन को नष्ट कर देने का दुष्कृत्य तक कर बैठते हैं। ऐसे में कवि की तमाम पीड़ाओं में जीने की स्वानुभूतियाँ और इस संसार को अपना सब कुछ अर्पित करने का भाव निश्चित तौर पर प्रेरणाप्रद है। कवि की जिजीविषा और सर्वस्व अर्पण के भाव का एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

मुझे प्रेम की अमर पुरी में अब रहने दो!
अपना सब कुछ दे कर कुछ आँसू लेने दो,
प्रेम की पुरी जहाँ रुदन में, अमृत झरता,
जहाँ सुधा का स्रोत उपेक्षित सिसकी भरता,
जहाँ देवता रहते लालायित मरने को,
मुझे प्रेम की अमर पुरी में अब रहने दो! [16]

इन पंक्तियों में कवि का जन्मभूमि के प्रति अगाध प्रेम और इस धरती को अमर पुरी कहकर 'देवभूमि' संज्ञा की सार्थकता भी द्रष्टव्य है।

जीवन और प्रकृति का मूल्य वही प्राणी समझ सकता है, जिसे मृत्यु के गरल दंत ने दबाया हो। कवि की मार्मिक भावनाओं में उनकी आत्मपीड़ा मिलती है। जिस जीवन को नैराश्य की अवस्था में हम निरर्थक समझते हैं और जिस प्रकृति का हम हितसाधन के लिए निरंतर क्षरण करते हैं, वह कितना अर्थपूर्ण और हितसाधक हैं, इन पंक्तियों से समझ सकते हैं–

कहाँ मिलेगी मर कर इतनी सुंदर काया,
जिस पर विधि ने है जग का सौंदर्य लुटाया,
हरे खेत ये विजन वनों की बहती नदियाँ,
पुष्पों में फिरती भिखारिणी ये मधुकरियाँ,
कहाँ मिलेगी मर कर इतनी शीतल छाया,
कहाँ मिलेगी मर कर इतनी सुंदर काया! [17]

इनके काव्य में यौवनावस्था की प्रेमानुभूतियाँ भी मिलती हैं। फर्क इतना है कि चंद्रकुँवर की प्रेयसी 'आँसू' की नायिका की भाँति छलना प्रतीत नहीं होती है बल्कि वह गीली आँखों से हर–पल कवि का चिंतन करती है। कवि कहते हैं –

प्यार मुझे कोई गीली आँखों से करती!
मेरे ही चिंतन में कोई डूबी रहती, [18]

चंद्रकुँवर प्रिय वियोग की आशंका में घनीभूत पीड़ा से द्रवित भी नहीं दीखते। जीवन की क्षणभंगुरता से परिचित होने के कारण कवि कहते हैं कि मुझे प्रिय का नाम जपने दो, यमुना जैसे नेत्रों में डूबने दो और उसके गंगा जैसे प्रिय वचनों में बहने दो –

मधुर स्वरों में मुझे नाम प्रिय का जपने दो!
मधु ऋतु की ज्वाला में जी भर कर तपने दो,
मुझे डूबने दो यमुना में प्रिय नयनों की,
मुझ को बहने दो गंगा में प्रिय वचनों की,
मुझे रूप की कुंजों में जी भर फिरने दो,
मधुर स्वरों में मुझे नाम प्रिय का जपने दो! [19]

यद्यपि कहीं–कहीं उनका प्रिय अज्ञात सत्ता का भान भी कराता है, प्रतीत होता है कि कवि–हृदय उसे जन्म–जन्म से खोज रहा है और उसके मिलन से कवि चिरंतन शांति में लीन हो जाएँगे। उसकी कल्पना मात्र से कवि को पृथ्वी पर कुछ नहीं दीखता।

चन्द्रकुँवर के काव्य में 'आंचलिकता' इन्हें छायावाद के चारों स्तंभों से विशिष्ट बनाती है। उत्तराखण्ड में 'स्वीली–घाम' जैसे लोक प्रचलित शब्द पर उन्होंने पूरी

कविता ही लिख डाली। पहाड़ों में गुलाबी-पीली धूप 'स्वीली-घाम' कहलाती है। 'हिमवंत में जन विश्वास है कि जो आसन्न-प्रसवा प्रसव के समय मर जाती है, वह अंधकार के लोक से अपने शिशु सहित इस समय धूप सेकने पृथ्वी पर आ जाती है और धूप उड़ने पर वह भी कहीं लीन हो जाती है।' [20] यह कविता असुविधाओं के कारण पहाड़ों में प्रसूताओं की असमय मृत्यु की ओर भी संकेत करती है।

इनकी कविताओं में हमें रैमासी का वह दिव्य फूल भी मिलेगा जो हिमवंत का प्रिय फूल है। जो बर्फ पिघलने पर ऊँचे बुग्यालों में खिलता है। माँ गिरिजा, जिनको दिनभर चुनकर अपने पावन दुकूल में भरकर लाती थी और अपने नाथ शंकर के चरणों में अर्पित करती थी। राईमासी की दिव्यता स्मरण कर कवि पृथ्वी से विस्मृत हो जाते हैं -

मेरी आँखों में आए वे राई मासी के दिव्य फूल!
मैं भूल गया इस पृथ्वी को मैं अपने को भी भूल गया! [21]

वह काफल-वृक्ष पर उगने वाला जंगली मीठा फल जिसको चखने के लिए ग्वाल-बाल हर पल लालायित रहते हैं और वह लोककथा की काफलपाकू पक्षी जो उत्तराखंड का पर्याय है, इनकी कविता के प्रिय विषय रहे हैं। डॉ. असवाल कहते हैं कि 'चंद्रकुंवर ठेठ हिमवंत का कवि है। उसी प्रकार से जिस प्रकार से 'राईमासी' ठेठ हिमवंत का फूल है या 'काफलपाकू' ठेठ हिमवंत का पक्षी है। जो निश्चित समय में ही हिमवंत में पाए जाते हैं।'[22]

काफल उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में उस वक्त पकता है, जब शायद ही कोई अन्य फल मिलता हो। इस फल का पकना और इसके साथ काफलपाकू पक्षी का मार्मिक ध्वनि करना - 'काफल पाकू, मैं ना चाखो' यहाँ के जनजीवन में सहज घुला-मिला है। 'काफलपाकू' कविता में कवि ने पूरे प्रदेश का सुंदर वर्णन किया है। इस कविता में मानव ही नहीं मानवेतर जीवों, पेड़-पौधों, नदी-निर्झरों की वेदना भी मिलती है। बसंतागमन की मादकता के पश्चात, चारों दिशाओं में फैली जेठ की तपन भरी दुपहरी की उदासी का चित्रण विश्व वेदना जान पड़ती है-

'हे मेरे प्रदेश के वासी!
छा जाती वसंत जाने से जब सर्वत्र उदासी,
झरते झर-झर कुसुम तभी, धरती बनती विधवा-सी,
गंध-अंध अलि होकर म्लान
गाते प्रिय समाधि पर गान' [23]

कवि आगे कहते हैं कि इस नंदन वनवासी पक्षी के आगमन से वनदेवी पुन: खिल उठती है 'क्षण-भर में कर देते तुम खग, इस पृथ्वी को नंदन।' [24]

यह कविता पहाड़ की वर्तमान मूलभूत समस्या पलायन का दर्द भी अभिव्यक्त करती है -

हे मेरे हिम-प्रदेश के वासी!
जन्म भूमि तज देश में रहने लगा प्रवासी!
सावन आया दु:ख से मेरे उमड़ी अतुल उदासी!
बरसी झर-झर-झर अश्रु धार!
शैलों पर छाया अंधकार! [25]

चंद्रकुँवर इलाहाबाद रहे, लखनऊ रहे किंतु मातृभूमि की प्राकृतिक शोभा कभी विस्मृत नहीं कर पाए। सावन की अंधेरी घनी रात में कवि अचानक उठकर, निज मातृभूमि का चिंतन कर भावुक हो उठते हैं। तभी उन्हें उस परिचित मधुर स्वर (काफल-पाक्कू, काफल-पाक्कू) का आभास होने लगा और वह ध्वनि शब्द-वाणी से चिरजीवी बन गई -

एक अंधेरी रात बरसते थे जब मेघ गरजते,
जाग उठा था मैं शय्या पर दु:ख से रोते-रोते,
करता निज जननी का चिंतन,
निज मातृ-भूमि का प्रेम स्मरण,
उसी समय तम के भीतर से मेरे घर के भीतर,
उसी समय लगा गूँजने धीरे एक मधुर परिचित स्वर -
'काफल-पाक्कू' 'काफल-पाक्कू' [26]

इसी प्रकार लोककथात्मक कविता 'जीतू' उत्तराखण्ड की प्राकृतिक पृष्ठभूमि पर रची गई है। इसमें पहाड़ के सरल जनजीवन को जीवंत किया गया है। यह कविता पहाड़-प्रेम, पलायन, पूँजीपति वर्ग के प्रति आक्रोश, वंचितों के प्रति सहानुभूति इत्यादि अनेक गहन संवेदनाओं को भी व्यक्त करती है। नायक 'जीतू' उस घाटी का चरवाहा है,

जहाँ असीम शांति है, सरि-पुलिनों में वसंत खिलता है, शीतल हवा, निर्मल जल और निष्पाप जन बसते हैं। उस पुण्य भूमि में सीमित संशाधन होने पर भी लोग सुखी हैं, क्योंकि वहाँ के लोग युद्धों, भूकम्पों और असम वित्त के वितरण की राजनीति से दूर हैं। कवि कहते हैं –

सुखी लोग थे वे नदियों के रम्य तटों पर
और पर्वतों के शिखरों पर अपनी भेड़ें
चुगा, बाँसुरी बजा शांति से जिन का जीवन
था व्यतीत हो जाता, युद्धों के भूकंपों –
के दुष्ट विचारों से, असम वित्त वितरण से,
दूर खिल रहा था सरोज उन के जीवन का,
थे न उन्होंने अपने सुख के लिए बनाए
वे प्रासाद, गरीबों के लोहू से जिनकी नींव सुदृढ़ हुई, [27]

भारत स्वाधीनता के पश्चात अज्ञेय 'साँप' कविता में जिस नगरीय जीवन की बढ़ती कुटिलता पर व्यंग्य करते हैं – 'साँप तुम सभ्य तो हुए नहीं, नगर में बसना तुम्हें कैसे आया।' [28] 'जीतू' कविता में यह समस्या चंद्रकुँवर भारत स्वाधीनता से पूर्व ही कर चुके थे। नगरीय जीवन की अपेक्षा ग्रामीण जीवन के भोलेपन का चित्रण करते हुए कवि कहते हैं –

'सभ्य समाजों की वह विविध कलाएँ, मन को
जो सिखलातीं कुटिल कर्म विधिपूर्वक करना,
झूठ बोलना, धन हारना, व्यभिचारी बनना,
सभ्य समाजों में फिरते ये कुटिल सर्प,
थे अभी न हिमगिरि के उस पुष्प-विपिन में पहुँचे,
वहाँ अभी था सत्य कंठ में, प्रेम हृदय में,
वाणी में शीतलता थी, गति में थी रिजुता; [29]

इसी कविता में कवि धार्मिक मतभेदों पर प्रहार करते हुए मानवता के धर्म को श्रेष्ठ बताते हैं। कवि का मानना है कि पहाड़ का जीवन धर्म के आधार पर समाज को कई हिस्सों में विभक्त करने से मुक्त है।

प्रगतिवाद के दौर में चन्द्रकुँवर की प्रगतिशील चेतना अधिक मुखर हुई। कौन कह सकता है कि जिस कवि की सृजनात्मकता हिमालय के सौष्ठव, वसंत के गीत, बाँज की जड़ों का ठंडा पानी, बुराँश के लाल फूल, चीड़ और देवदारु के घने जंगलों की शोभा, रैमासी के दिव्य फूल की सुगंधी, काफल के मीठे फल और काफलपाकू पक्षी का मादक कलरव से आरंभ होती है, वह बाद में कंकड़ पत्थर, काँटा, छुर्री, आँधी, बाँस का लट्ठ, मक्खियाँ, खटमल-विलाप, भूखे किसान इत्यादि अनेक शुष्क किंतु संवेदनशील प्रतिमानों से युक्त कविताओं का सृजन करेगा। कोयल की मधुर कूक से जिनके तार-तार झंकृत होकर हर्षोन्मत्त हो झूम उठते थे, वह कूक अब उन्हें रोना लगता है, उसके स्थान पर कवि को भूखे कौओं का रूखा कटु स्वर पसंद आने लगता है। वस्तुत: कवि की सामाजिक संवेदनशीलता रुग्णावस्था में भी पलायन नहीं कर पाई थी। 'कंकड़-पत्थर' कविता उनकी प्रगति चेतना का चरम है। यहाँ कंकड़-पत्थर शोषित वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, उसमें राजाओं, उमरावों के पाँव खून से तर करने की शक्ति है –

ये मोती हैं नहीं सुघर, ये न फूल पल्लव सुंदर,
ये राहों में पड़े हुए धूल भरे कंकड़-पत्थर!
राजाओं उमरावों के पाँवों से घृणा इन्हें,
मजदूरों के पाँवों को धरते ये अपने सिर पर!
भूल से इन्हें छू लें यदि कभी किसी राजा के पाँव
तो ये उस के तलुए काट कर दें उसे खून से तर, [30]

किंतु यही कंकड़-पत्थर जिनपर भिखारिणी नंगे पाँव चलती हैं, उनके लिए वह मख़मल बन जाते हैं –

किंतु माँग खाने वाली भिखारिणी के पाँव में,
बन जाते ये जैसे हों मखमल की कोई चादर! [31]

'काँटा' कविता में भी कवि शोषक वर्ग की अपेक्षा शोषित वर्ग को अधिक ताकतवर बताते हैं –

मैं काँटा हूँ फूल नहीं!
अरे फूल मैं तुझ से भी बहुत बड़ा हूँ भूल नहीं!
शक्तिमान मैं, तू नादान, तू छोटा, मैं बहुत महान!
मेरे प्राणों के भीतर है ताकत कोरी धूल नहीं!
मैं काँटा हूँ फूल नहीं! [32]

'भूखे किसान' कविता में कवि ने दो जून की रोटी के लिए लालायित भूखे किसानों की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण किया –

मेरी आँखों से कहीं नहीं जाते हैं ये भूखे किसान,
सिर पर शोकों के भार लिए रोगों से कृश सूखे किसान। [33]

इसी प्रकार स्त्रियों की दुर्दशा भी कवि की दृष्टि से ओझल नहीं रही। 'स्वीली-घाम' कविता जहाँ पहाड़ की दुरूहताओं के कारण आसन्न प्रसवा स्त्री के असमय मृत्यु

का क्रूर सत्य प्रस्तुत करती है, वहीं 'नारी' कविता में एक ऐसे पुरुष का चित्रण है, जो कुछ दिन पहले ही अपनी पत्नी को गंगा किनारे जला आया है, एक-दो दिन शोक का ढोंग करने के बाद रंग-बिरंगे वस्त्र पहनकर, वह शीशे पर तरह-तरह की पोज बनाता है और अंत में बालक बनकर दूसरा विवाह कर लेता है, अपनी पूर्व पत्नी को सदा के लिए विस्मृत कर देता है। कवि उस मृत स्त्री के स्वर में कहते हैं -

तुम मरते यदि नाथ और मैं जीवित रहती
तुमने जैसा किया, वही क्या मैं भी करती ?[34]

'बाँस का लट्ठ' कविता में कवि हिंदू-मुस्लिम दंगों का सजीव चित्रण करते हैं। दंगों में बाँस का लट्ठ एटम बम से भी ताकतवर हो गया था, जिसने कई निर्दोष हिंदुओं और मुसलमानों की जान ले ली थी। यह कविता उन राजनेताओं पर व्यंग्य है, जिनके कारण अखंड भारत दो खंडों में विभाजित हो गया था।

'मैकाले के खिलौने' कविता में कवि ने मैकाले की शिक्षा नीति का जमकर विरोध किया। देश को गुलाम बनाने वाले कृतदासों की अवहेलना करके कवि अपनी राष्ट्रीय-चेतना प्रकट करते हैं।

काव्य-कला की दृष्टि से कवि बर्त्वाल विशुद्ध छायावादी अधिक दीखते हैं। अविधा में लक्षणा और व्यंजना का सुंदर परिपाक उनके काव्य में सर्वत्र मिलता है। छायावाद का प्रिय अलंकार मानवीकरण के बिना तो उनकी कविताएँ पूर्ण नहीं होती। उदाहरण के लिए 'हेमंत प्रात' की इन पंक्तियों को देखिए -

द्वार खोल गृह के, किरणों से आँगन भर,
बैठा यह हेमंत प्रात, नीरव पृथ्वी पर!
नयन मूँद रवि की कोमल किरणों से तपता,
आने वाले प्रिय बसंत के स्वप्न देखता![35]

यहाँ हेमंत ऋतु को मानवीय भावों से संयुक्त बताकर मानवीकरण अलंकार मिलता है। इसके साथ ही आने वाले प्रिय वसंत का स्वप्न मात्र हेमंत का स्वप्न नहीं जान पड़ता, कवि का रोग से शिथिल शरीर भी सुखमय जीवन की प्रतीक्षा करता जान पड़ता है। कविता की अंतिम पंक्ति 'निठुर मृत्यु के प्रबल वेग की मर्मर ध्वनि' में यह व्यंजना स्पष्ट हो जाती है। मानवीकरण के अतिरिक्त उपमा भी इनका प्रिय अलंकार रहा है।

भाषिक स्तर पर इनके काव्य में शुद्ध, परिनिष्ठित, लालित्य एवम् गेयता युक्त खड़ीबोली हिंदी का प्रयोग मिलता है। इन्होंने स्वीली घाम, बाँज, बुराँश, राईमासी, काफल, जीतू, भोटिया कुत्ता जैसे अनेक आँचलिक शब्दों का प्रयोग किया है। छायावाद के अन्तर्जगत की कलात्मकता - अलंकार, प्रतीक, बिंब, गेयता, तुकबंदी, लयबद्धता इनके काव्य का प्राणतत्त्व है। मधुरता, लयबद्धता एवं गीतिधर्मिता का एक हृदयस्पर्शी उदाहरण प्रस्तुत है -

अब छाया में गुंजन होगा
वन में फूल खिलेंगे
दिशा-दिशा में सौरभ के
धूमिल मेघ उठेंगे।[36]

बाद में पंत और निराला की भाँति प्रगतिशील कविताओं में मुखरता एवं व्यंग्यपरकता के कारण कवि बर्त्वाल प्रगतिवाद के निकट पहुँच जाते हैं।

**निष्कर्ष :**

हम कह सकते हैं कि चंद्रकुँवर बर्त्वाल का काव्य हिंदी साहित्य में चन्द्र के समान दैदीव्यमान है। उनका काव्य प्रकृति के सानिध्य में समृद्ध होता है, प्रकृति उनकी ईष्ट है, उससे उनका जन्म-जन्मातर का संबंध है। उनका प्रकृति-चित्रण मात्र स्वरूप-चित्रण तक सीमित नहीं है। उसमें उनकी आत्मा ध्वनित होती है तथा पर्वतीय जन-जीवन की सौंधी मिट्टी की खुशबू महकती है। वैक्यतिक अनुभूतियाँ - मृत्युबोध, जिजीविषा, यौवनावस्था का प्रेम, विरह इनके काव्य को अधिक मार्मिक बनाती हैं। गरीबों, मजदूरों, श्रमिकों, दलितों, शोषित स्त्रियों ही नहीं निराश्रित जानवरों के प्रति भी उनकी सहानुभूति प्रकट होती है, यह प्रगतिशील चेतना का आधार है। भावपक्षीय एवं कलापक्षीय विशिष्टताओं के आधार पर चन्द्रकुँवर, प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी के समकक्ष हैं। इस आधार पर उन्हें छायावाद का पंचम स्तंभ या फिर छायावाद और प्रगतिवाद के संधिकाल का कवि कहा जा सकता है। यद्यपि चिंतनीय विषय है कि अल्पसमय में वृहद साहित्य-सृजन करने पर भी हिंदी साहित्य के महत्त्वपूर्ण इतिहास ग्रंथों एवं आलोचनाओं में एक शताब्दी बीतने पर भी चन्द्रकुँवर उपेक्षित हैं। साहित्य-इतिहास के पृष्ठ अब भी इस अदृश्य कवि के लिए प्रतीक्षारत हैं। ❑

**संदर्भ सूची :**


1. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, प्रकाशक–चन्द्रकुँवर बर्त्वाल शोध संस्थान उत्तराखण्ड बी. ज्योति विहार, देहरादून, उत्तराखण्ड, मुद्रक–समय साक्ष्य 15 फालतू लाइन, देहरादून, संस्करण–प्रथम, 2022, पृष्ठ संख्या – 466–467
2. वही, पृष्ठ – 454
3. असवाल हरेंद्र सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की कविताएँ, स्वराज प्रकाशन, अंसारी रोड़, दरियागंज नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2019, पृष्ठ – 22
4. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, पृष्ठ – 526
5. असवाल हरेंद्र सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की कविताएँ, पृष्ठ – 31
6. बर्त्वाल योगम्बर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का जीवन दर्शन, प्रकाशक –चन्द्रकुँवर बर्त्वाल शोध संस्थान उत्तराखण्ड बी. ज्योति विहार, देहरादून, उत्तराखण्ड, मुद्रक – समय साक्ष्य 15 फालतू लाइन, देहरादून, संस्करण – प्रथम, 2011, पृष्ठ – 16
7. वही, पृष्ठ – 38
8. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, पृष्ठ – 161
9. वही, पृष्ठ – 108
10. वही , पृष्ठ – 106
11. वही, पृष्ठ – 293
12. वही, पृष्ठ – 105
13. वही, पृष्ठ – 311
14. असवाल हरेंद्र सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की कविताएँ, पृष्ठ –38
15. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, पृष्ठ – 108
16. वही, पृष्ठ – 105
17. वही, पृष्ठ – 107
18. वही, पृष्ठ – 109
19. वही, पृष्ठ – 105
20. वही, पृष्ठ – 427
21. वही, पृष्ठ – 411
22. असवाल हरेंद्र सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की कविताएँ, पृष्ठ – 40
23. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, पृष्ठ – 473
24. वही, पृष्ठ – 474
25. वही
26. वही
27. वही, पृष्ठ – 251
28. अज्ञेय, साभार – काव्यकोश
29. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, पृष्ठ – 252
30. वही, पृष्ठ – 267
31. वही
32. वही, पृष्ठ – 269
33. वही, पृष्ठ – 283
34. असवाल हरेंद्र सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की कविताएँ, पृष्ठ – 34
35. बर्त्वाल योगंबर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का संपूर्ण काव्य साहित्य, पृष्ठ – 418
36. असवाल हरेंद्र सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की कविताएँ, पृष्ठ – 44

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

# नारी की परिस्थितियाँ, चुनौतियाँ और प्रगति पर एक परिप्रेक्ष्य

**नीलाक्षी पावे**

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
पान बाजार गुवाहाटी- 781001, असम
8724092152,7002391185
nilakshi.pawe007@gmail.com

**शोध सार :**

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति और दिशा को समझना अति आवश्यक विषय है। नारी समाज का वह वर्ग है, जिसके बिना समाज अधूरा है। नारी न हो तो घर नहीं, घर न हो तो समाज नहीं और समाज न हो तो राष्ट्र नहीं बनता। पर अपसोस यह पुरुष प्रधान समाज महिलाओं का सम्मान न कर उन पर अनगिनत हिंसा, शोषण और अत्याचार करते हैं। महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, उनकी प्रकृति, परिवेश और प्रगति की दिशा, इन सभी बातों पर चिंता चर्चा जरुरी है। यहाँ हिंसा के विभिन्न रूप देख सकते हैं, जैसे - बलात्कार, शोषण, योन-उत्पीड़न, दायनी-हत्या, बाल-विवाह, पुरुषों को तलाक अधिकार, तेजाब-फेकना, मार-पीट, गाली-गलौज आदि हैं। महिलाएं पहले डबी रहती थी, अशिक्षित थी, वास्तविकता से अंजान और अज्ञान थी। इसी चीढ़ का समाज ने बहुत ?ायदा उठाया। पुरुष प्रधान सोच और अशिक्षा इसके जिम्मेदार रहे हैं।

आज समय बदल गया है। पुराने समय की तुलना में वर्त्तमान समय में नारी काफी विकसित है। नारी आज शिक्षित हैं, वें जागरूक हैं, आत्मनिर्भर हैं। वें अपने हक के लिए आवाज उठाती हैं। नारी साहसी और आत्मविश्वासी बन गयी हैं। वें सामाजिक, पारिवारिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं मानसिक रूप से विकसित हुई हैं तथा वें प्रगति की दिशा में अग्रसर हैं। उनकी स्थिति में सकारात्मक सुधार आये है। इस बदलाव का कारण शिक्षा है। इस ज्ञान के माध्यम से नारी समाज को प्रगति की दिशा मिली है। नारी के विकास से ही समाज का विकास होता है।

**बीज शब्द :**

नारी-प्रकृति, नारी-शिक्षा, नारी-समाज, परिस्थितियाँ, चुनौतियाँ, विरोधी स्वर, प्रगति व परिवर्तन।

**प्रस्तावना :**

नारी हमारे संपूर्ण समाज की नीवं होती है। नारी के संयोग से ही समाज बनता है। एक घर तभी पूरा होता है, जब वहाँ नारी का वास होता है। उनको लक्ष्मी, दुर्गा, सरस्वती आदि के पर्याय रूप में स्वीकारा गया हैं। लेखिका सुषमा जैमन इस संदर्भ में लिखती हैं कि 'भारतीय नारी ने गार्गी और अपाला के रूप में अपनी विद्त्ता,

कैकयी और लक्ष्मीबाई के रूप में अपने शौर्य तथा सीता और सावित्री के रूप में अपने चारित्र्य के जो अमर हस्ताक्षर भारतीय इतिहास में किये हैं, उन्हें दिक्काल का कोई अन्तराल मिटा नहीं पाया है।' [1] पर कहीं-कहीं इसके विपरीत परिस्थितियाँ हैं। नारी को दायनी का रूप भी दिया गया है। प्रारंभिक समय में महिलाओं का सम्मान किया जाता था, फिर परिवेश बदल गये। पुरुष प्रधान समाज ने महिलाओं का हक छीनने का प्रयास किया। उन पर अत्याचार किया, उनका शोषण किया। पुरुष वर्ग ने नारी को अपने वासना का शिकार बनाया। उनकी शिक्षा, अधिकार, सम्मान सब कुछ उनसे छीन लिया गया था। मध्य वक्त में महिलाओं की हालत सबसे बुरी थी। वर्त्तमान समय में महिलाएं राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक सभी क्षेत्रो में उभरकर सामने आयी हैं। नारी के संदर्भ में दार्शनिक एवं लेखक जॉन स्टुअर्ट मिल कहते हैं- 'लेकिन पूरे परिदृश्य का सकारात्मक पक्ष यह है कि आज श्रमजीवी वर्ग और निम्न मध्यवर्ग की स्त्री पूँजी के जुवे तले निकृष्टतम कोटि के उजरती गुलाम के रूप में जुती हुई, भूमंडलीकरण के दौर में, स्त्री-मुक्ति-प्रश्न और श्रमिक-मुक्ति-प्रश्न के अन्तर्सम्बन्धों की नए यथार्थ के आलोक में देखती हुई अपनी भूमिका निर्धारित करने की दिशा में आगे बढ़ रही है।' [2] महिलाओं में वह गुण और शक्ति है, जिससे वह अपना घर तथा बाहरी काम दोनों को बहुत ही अच्छे से संभाल सकती हैं। यह संतुलित प्रतिभा महिलाओं की तुलना में पुरुषों में कम हैं।

**विश्लेषण :**

वैदिक समय में महिलाओं को समाज में काफी अधिकार प्राप्त थे। महिलाएं कुछ हद तक स्वच्छंद थी। प्रारंभिक वैदिक काल में महिलाओं को समाज में अपेक्षाकृत उच्च दर्जा प्राप्त था। उन्हें पुरुषों के बराबर माना जाता था और वें पारिवारिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। उपनिषदों में उल्लिखित गार्गी और मैत्रेयी जैसी महिलाएं अपनी बौद्धिक और आध्यात्मिक गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध थी। महिलाओं ने भी वैदिक अनुष्ठानों और बलिदानों में भाग लिया और कुछ ने वैदिक भजनों की रचना भी की। हालाँकि, जैसे-जैसे वैदिक युग आगे बढ़ा, महिलाओं की स्थिति में गिरावट आने लगी। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के उद्भव, पारिवारिक और सामाजिक पदानुक्रम पर जोर और ब्राह्मणवादी रीति-रिवाजों और प्रथाओं के बढ़ते प्रभाव ने महिलाओं को हाशिए पर धकेलने में योगदान दिया। महिलाओं की भूमिकाएँ तेजी से घरेलू कर्तव्यों तक ही सीमित हो गयी और सार्वजनिक जीवन एवं बौद्धिक गतिविधियों में उनकी भागीदारी प्रतिबंधित हो गयी। इस युग के दौरान महिलाओं के सामने आने वाली महत्वपूर्ण चुनौतियों में से एक बहुविवाह की प्रथा थी। वैदिक शास्त्रों ने बहुविवाह को मंजूरी दे दी और पुरुषों को कई पत्नियाँ रखने की अनुमति दी गयी। इस प्रथा के कारण महिलाओं का शोषण हुआ, क्योंकि उन्हें अक्सर वस्तुओं के रूप में माना जाता था और उनके साथ असमान व्यवहार किया जाता था। यहाँ पर लड़का जन्म हो इस बात की कामना रही है, पर लड़की के साथ बुरा बर्ताव हो यह भी नहीं कहा है। उत्तर-वैदिक समय में महिलाओं के अधिकारों में कमी आयी। यहाँ बाल-विवाह का प्रचलन आरम्भ हुआ। ज्ञान की कमी में वें पीछे रही और उनको पुरुषों पर निर्भर रहना पड़ा। इसी का फायदा पुरुषों ने उठाया। धर्मशास्त्र समय में महिलाओं को सीख दी गयी कि पति ही भगवान होता है, पति परमेश्वर है, पति चाहे जैसा भी हो उसकी सेवा करना नारी का एकमात्र कर्तव्य होता है। महिलाओं को बताया गया कि वें कभी स्वाधीन नहीं हैं। 'मनुस्मृति' में लिखा है कि, 'नारी कभी स्वतंत्र रहने योग्य नहीं हैं, बचपन में पिता के अधिकार में, युवावस्था में पति के वश में तथा वृद्धावस्था में पुत्र के नियंत्रण में रहे।' [3]

मध्य वक्त सल्तनत काल (1206-1526) और मुगल काल (1526-1857) के दौरान भारत में महिलाओं की स्थिति और चुनौतियों का सामना सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक कारकों की एक जटिल परस्पर क्रिया द्वारा किया गया था। सल्तनत काल के दौरान, महिलाओं की स्थिति काफी हद तक इस्लामी कानूनों और रीति-रिवाजों से प्रभावित थी। महिलाओं को पुरुषों से कमतर माना जाता था और उनसे समाज में अधीनस्थ भूमिका निभाने की अपेक्षा की जाती थी। वें बड़े पैमाने पर घरेलू क्षेत्र तक ही सीमित थी। उन्हें शिक्षा, संपत्ति और सार्वजनिक जीवन तक के पहुंच से वंचित रखा गया था। पर्दा या एकान्तवास

की प्रथा भी प्रचलित थी, जहाँ महिलाओं को सार्वजनिक स्थानों पर खुद को ढककर अलग-अलग कक्ष में रहना पड़ता था। इन प्रतिबंधों के बावजूद, इस अवधि के दौरान कुछ महिलाएँ राजनीति, साहित्य और कला में अपने लिए स्थान बनाने में सफल रहीं। उदाहरण के लिए, इल्तुतमिश की बेटी रजिया सुल्तान 1236 में दिल्ली पर शासन करने वाली पहली महिला बनीं। हालाँकि, उनका शासनकाल अल्पकालिक था और अंत: में उन्हें मार दिया गया।

मुगल काल में महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार देखा गया, विशेषकर अकबर के शासनकाल (1556-1605) के दौरान। अकबर की नीतियों ने महिलाओं की शिक्षा को प्रोत्साहित किया और उन्होंने लड़कियों के लिए एक स्कूल भी स्थापित किया। शाही और कुलीन परिवारों की महिलाएँ भी राजनीति और प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। उदाहरण के लिए, अकबर की पत्नी जोधाबाई एक कुशल राजनीतिज्ञ और सलाहकार थी। हालाँकि, इन प्रगतियों के बावजूद, महिलाओं का जीवन अभी भी सामाजिक और सांस्कृतिक मानदंडों द्वारा काफी हद तक प्रतिबंधित था। पर्दा प्रथा जारी रही और महिलाओं से अपेक्षा की गयी कि वें अपने पतियों और परिवारों के अधीन रहें। मुगल हरम या जनाना भी महिलाओं की कैद और अधीनता का प्रतीक था। मध्य वक्त में मुगल साम्राज्य के आने से मुसलमानों के नियम लागू होने लगे। पर्दा-प्रथा जैसे कठोर नियम बनाये गये। लड़कियों को शिक्षा से दूर रखा गया। पति के जीते जी पूरा जीवन उनकी सेवा करना नारी का धर्म माना गया तथा पति के मृत्यु के बाद भी उनके साथ सती हो जाना, नारी का कर्तव्य माना गया। नारी का सम्पूर्ण जीवन दूसरो की सेवा में ही चला जाता है। महिलाओं के बारे में लेखक जॉन स्टुअर्ट मिल लिखते हैं, 'महिलाओं के सामान्य जीवन का काम साधारण चीजों से ही संबंधित होता है और वह काम जब तक दुनिया चल रही है, तब तक खत्म नहीं हो सकता।' [4]

स्वाधीनता से पहले नारी की स्थिति कुछ अच्छी नहीं थी। ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन ने पितृसत्तात्मक मानदंडों को सुदृढ़ किया और महिलाओं की स्वायत्तता को प्रतिबंधित कर दिया। 1860 में पेश की गयी भारतीय दंड संहिता ने सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी को अपराध घोषित कर दिया और उनकी आवाजाही की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित कर दिया। औपनिवेशिक अधिकारियों ने पर्दा या एकांतवास की प्रथा को भी कायम रखा, जिसने महिलाओं को घरेलू क्षेत्र तक ही सीमित कर दिया। हालाँकि अंग्रेजों ने पश्चिमी शिक्षा भी शुरू की, जिसका महिलाओं के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। लड़कियों के लिए स्कूलों और कॉलेजों की स्थापना ने महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने में सक्षम बनाया। यह शिक्षा भले ही सीमित थी, पर पारंपरिक मानदंडों को चुनौती दी थी। पंडिता रमाबाई सरस्वती और बेगम रोकेया सखावत हुसैन जैसी महिलाएँ महिला शिक्षा और सामाजिक सुधार में अग्रणी बनीं। भारतीय बुद्धिजीवियों और सुधारकों के नेतृत्व में सामाजिक सुधार आंदोलन का उद्देश्य महिलाओं की स्थिति में सुधार करना और पितृसत्तात्मक मानदंडों को चुनौती देना था। पितृसत्ता के संदर्भ में लेखिका सुरंजिता रे लिखती हैं, 'पितृसत्ता का सीधा अर्थ होता है - एक पुरुष-प्रधान परिवार में पिता की प्रभुता। पारंपरिक सोच पितृसत्ता को जीव विज्ञान द्वारा निर्धारित तथ्य के तौर पर स्वीकार करती है। बच्चे पैदा कर पाना जो एक जीव वैज्ञानिक घटक है, महिलाओं की मातृत्व की जिम्मेदारियों की सामाजिक स्थिति को निर्धारित करती है। इन जिम्मेदारियों में स्वयं को परिवार को समर्पित कर बच्चों का पालन-पोषण करना, उन्हें पढ़ाना और बड़ा करना सम्मिलित है। एक सामाजिक कल्पना के तौर पर, पितृसत्ता जेंडर के रूढ़िवादी विचारों को बार-बार स्थापित कर पुरुषों को महिलाओं की लैंगिकता, उनके श्रम, उनकी उत्पादकता, उनकी प्रजनन क्षमता और उनकी आवाजाही पर नियंत्रण प्रदान करती है। यह नियंत्रण ऐतिहासिक तौर पर विक्षित हुआ है। इसे इसका संस्थानीकरण और वैधता कई विचारधाराओं, सामाजिक प्रथाओं, ढाँचों और संस्थानों जैसे कि विवाह, धर्म, वर्ग, जाति, प्रजाति, नस्ल, शिक्षा, मीडिया, कानून, राज्य और समाज से प्राप्त हुई है।' [5] ब्रह्म समाज, आर्य समाज और अन्य संगठनों ने महिलाओं की शिक्षा, संपत्ति के अधिकार और सामाजिक सुधार की वकालत की। 1891 में पारित सम्मति आयु अधिनियम ने लड़कियों के लिए विवाह की न्यूनतम आयु 10 से बढ़ाकर 12 वर्ष कर दी थी।

इन सुधारों के बावजूद, महिलाओं को महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ा। बाल विवाह, दहेज और सती प्रथा कायम रही और सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी सीमित थी। उच्च मातृ-मृत्यु दर और स्वास्थ्य देखभाल तक सीमित पहुंच के साथ महिलाओं का स्वास्थ्य भी एक प्रमुख चिंता का विषय था। महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और सुभाष चंद्र बोस जैसी हस्तियों के नेतृत्व में राष्ट्रवादी आंदोलन का भी महिलाओं के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। सरोजिनी नायडू, कमलादेवी चट्टोपाध्याय और हंसा मेहता जैसी महिलाओं ने महिलाओं के अधिकारों और सार्वजनिक जीवन में भागीदारी की वकालत करते हुए राष्ट्रवादी संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभायी। देश का अधिकांश क्षेत्र ग्राम्य जीवन से प्रभावित था। महिलाओं का शोषण होता रहा। उनको घर तक ही सीमित रखा गया। महिलाओं को बच्चे पैदा करने और घर वालों की सेवा करने के लिए रखा जाता था। उनको दूसरों के इच्छानुकूल कार्य करना पड़ता, पर उनके बारे में कोई नहीं सोचता। नारी यहीं समझती थी कि यह उनके पहले जन्म के कर्मो का फल है। महिलाओं को किसी भी संपत्ति पर अधिकार नहीं था। वें खुद दूसरों की सम्पत्ति थी। नारी सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक सभी तरफ से पुरुषों पर आश्रित थी।

देश स्वाधीन होने के बाद महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन देखने को मिला। उन्होंने गलत परंपरागत रीति-रिवाजों का विरोध कर अपनाने से मना किया। महिलाओं के शिक्षित होने के कारण ही यह बदलाव संभव हो पाया है। महिलाएं शिक्षित होकर समाज को चुनौती देने लगी। वें समाज के रूढ़िवादी बंधनों से आजाद हो रही थी। सामाजिक स्तर में उनका विकास हुआ। वें आत्मनिर्भर बनी। उनका व्यक्तिगत विकास हुआ। महिलाओं में शिक्षा का प्रचलन होने लगा। वे स्कूल के बाद कॉलेज, फिर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा ग्रहण करने लगी। शिक्षा के आने से ज्ञान बढ़ता गया, उनकी सोच विचार बदलते गये। बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, सती-प्रथा जैसे कांड समाज में होने बंद हो गये थे। लड़कियाँ हर क्षेत्र, हर विभाग में सामने खड़ी उतरी। उदाहरण के लिए हम भारत की पूर्व महिला प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी जी और राष्ट्रपति स्वर्गीय श्रीमती प्रतिभा पाटिल जी को ही देख सकते हैं। ऐसे सशक्त महिलाओं को देख कर यह स्पष्ट हो जाता है कि नारी सम्पूर्ण देश को चलाने में सक्षम है। लड़कियों ने तो अंतरिक्ष में भी अपना हाथ रख दिया है। उदाहरण के लिए स्वर्गीय कल्पना चावला, सुनीता विलियम्स को ही देख सकते है। खेल के क्षेत्र में भी महिलाओं ने अपना बड़ा नाम बनाया है। मैरी कॉम, मीराबाई चानू, सानिया मिर्जा आदि जैसे नाम विख्यात हैं। अब महिलाओं में परिवर्तन आ गया है। उन्होंने घर के साथ-साथ बाहर के जीवन को भी अपनाया और उसमे सफल भी रही। आज महिलाएं अपने ऊपर हिंसा होने पर उसका विरोध करती हैं। साहित्यकार जयशंकर प्रसाद की प्रख्यात नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' में एक वाक्य है, 'ध्रुवस्वामिनी' कुछ नहीं, मैं केवल यही कहना चाहती हूं कि पुरुषों ने स्त्रियों को अपने पशु-संपत्ति समझकर उन पर अत्याचार करने का जो अभ्यास बना लिया है, वह मेरे साथ नहीं चल सकता। यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते, अपने कुल की मर्यादा-नारी का गौरव-नहीं बचा सकते तो मुझे बेज भी नहीं सकते। हां, तुम लोगों को आपत्ति से बचाने के लिए मैं स्वयं यहां से चली जाऊंगी।'[6] अत: यहाँ हिंदी साहित्य में भी नारी की दशा का यथार्थ वर्णन देखने को मिलता है।

शिक्षा के आने से महिलाओं के स्थितियों में एक सकारात्मक सोच का आविष्कार हुआ है। नारी समस्त विश्व को संभालने के योग्य है। स्वाधीनता के बाद के समय में महिलाओं में जागरूकता आयी। पहले के वक्त में जब महिलाओं को पर्दे में रहना अनिवार्य था, अब उसकी आवश्यकता कम हो गयी थी। उनमें साहस और आत्मविश्वास आ गया था। महिलाओं के शिक्षित होने के कारण ही यह बदलाव संभव हो पाया है। वे समाज के रूढ़िवादी बंधनों से आजाद हो रही थी। उदाहरण के रूप में - कादंबिनी गांगुली ने 1883 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से कला स्नातक की डिग्री हासिल करके भारत की पहली महिला स्नातक के रूप में इतिहास रचा। सामाजिक विरोध होने के बावजूद, उन्होंने विश्वविद्यालय में चिकित्सा की पढ़ाई करके हर बाधाओं को तोड़ना जारी रखा। कादंबिनी गांगुली दक्षिण एशिया की पहली महिला चिकित्सकों में

से एक बनीं, जिन्होंने भारतीय महिलाओं की आगे की पीढ़ियों को उच्च शिक्षा और विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान बनाने के लिए प्रेरित किया। मुस्लिम महिलाओं की स्थिति में भी काफी परिवर्तन दिखायी देते हैं। पहले के समय में मुस्लिम औरतों को कोई आजादी नहीं थी। उनको हमेशा पर्दे में ही रहना पड़ता था। यह स्वतंत्रता के बाद कुछ हद तक कम हो गया, पर पूरी तरह से नहीं है, यह कहना मुश्किल है। यहाँ तलाक व्यवस्था महिलाओं के प्रति अन्याय है। इसी के साथ ही हम देखते है कि मुस्लिम समाज में पुरुषों को अनेक पत्नियाँ रखने का अधिकार प्राप्त था। महिलाओं का न अपने परिवार में अधिकार रहता, न ही पति के परिवार में कोई हक रहता। मुस्लिम महिलाओं के संदर्भ में लिखा गया है कि 'भारत में महिला अधिकारों के इतिहास में सबसे लोकप्रिय लेखनों में यह बात साझी जान पड़ती है कि 1890 और 1900 के दशक में स्त्रियों की शिक्षा और समाज सुधारों के मामलों में पुरुषों का अनुभव और परिप्रेक्ष्य हावी रहा था। सर्वसमावेशी (totalising) लगनेवाले इस विवरण के खिलाफ दो सामान्य बातें कही जा सकती हैं। एक, इस मसले पर पुरुषों के बीच भी मतभेद थे और दूसरा, महिलाएँ भी अपनी स्वायत्तता, अपनी एजेंसी और सुधार के प्रति अपनी राजनीतिक सूझबूझ को प्रदर्शित करते हुए सहभागी हुईं। सब मिलाकर हम कह सकते हैं कि मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों के आंदोलन को लेकर यह शुरुआती प्रेरणा थी।' [7]

मुस्लिम महिलाओं ने अपने अधिकारों और सामाजिक मुद्दों की लड़ाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी हैं। कुछ उल्लेखनीय उदाहरण हैं - कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में इस्मत चुगताई, एक प्रसिद्ध उर्दू लेखिका हैं, जो महिलाओं के अधिकारों और सामाजिक मुद्दों पर अपने साहसिक और विचारोत्तेजक लेखन के लिए प्रसिद्ध हैं। कुर्रतुलैन हैदर, एक प्रमुख उर्दू उपन्यासकार और लघु कथाकार हैं, जो मजबूत और सक्षम महिला पात्रों के चित्रण के लिए प्रशंसित हैं। वाजिदा तबस्सुम, एक निडर उर्दू भाषा की लेखिका है, जो अपने निर्भीक और कामुक लेखन के लिए जानी जाती हैं। शिक्षा और सामाजिक सुधार में संबंधित कुछ उदाहरण हैं- एक अग्रणी शिक्षक और समाज सुधारक रशीद जहां। वह महिलाओं की शिक्षा और अधिकारों को बढ़ावा देने के लिए समर्पित हैं। एक दुरदर्शी बंगाली लेखिका और समाज सुधारक हैं रोकेया सखावत हुसैन। उन्होंने महिलाओं की शिक्षा और अधिकारों की अथक वकालत की हैं। एक साहसी मुस्लिम महिला हैं शाह बानो। उन्होंने अपने अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी हैं और महिलाओं के भविष्य के लिए न्याय और समानता का मार्ग दिखाया हैं।

महिलाओं में पहले जो हालात थे, उसके अनेक कारण देख सकते हैं। अशिक्षा एक मूल वजह रही है। शिक्षा के अभाव में महिलाएं धर्म के वास्तविक सच को जान ही नहीं पायी थी। धर्म और ज्ञान के नाम पर उनको लोग यहीं ज्ञान देते थे कि पति और परिवार वालों की सेवा करना उनका एकमात्र धर्म है। वें महिलाओं को उपदेश देते थे कि उनका जन्म ही सेवा करने के लिए हुआ है। अशिक्षित महिलाएं इस बात को मान भी लेती थी। महिलाओं का अपना कुछ अस्तित्व ही नहीं था। वे दूसरों के हिसाब से चलने वाली वस्तु बनकर रहती थी। महिलाएँ पूरी तरीके से दूसरों पर निर्भर रहती थी। औरतों को डबाके रखना पुरुषों के लिए गौरव की बात थी। नारी जन्म लेती है दूसरों के लिए और मरती भी दूसरों के लिए। हिंदू समाज में 'कन्यादान' को बहुत महत्व दिया जाता था। इसका अर्थ यह निकाला है कि 'कन्या' एक वस्तु है, जिसको दान में दे दिया जाता है। प्रसिद्ध साहित्यकार जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखी गयी हिंदी नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' में एक वाक्य है, 'ध्रुवस्वामिनी : अकेले यहाँ भय लगता है क्या? बैठिए, सुनिए, मेरे पिता ने उपहारस्वरूप कन्या-दान किया था, किंतु गुप्त-सम्राट क्या अपनी पत्नी शत्रु को उपहार में देंगे? (घुटने के बल बैठकर) देखिए, मेरी ओर देखिए। मेरा स्त्रीत्व क्या इतने का भी अधिकारी नहीं कि अपने को स्वामी समझने वाला पुरुष उसके प्राणों का पण लगा सके।' [8] समाज नारी का अपने इच्छानुसार प्रयोग और उपयोग करता था। महिलाओं की हालत के जिम्मेदार संयुक्त परिवार की परंपरा भी रहा है। इस व्यवस्था ने महिलाओं को धार्मिक उपदेश दिये कि पति चाहे कैसा भी हो, कितना भी बुरा हो, उसे प्रभु का दर्जा देकर उसकी पूजा करनी चाहिए।

इस व्यवस्था ने महिलाओं पर शोषण किये, उन पर अत्याचार किये। बाल-विवाह महिलाओं के प्रति हिंसा होने के मूल कारणों में से एक है। कम आयु में ही लड़की की शादी करा दी जाती थी, जिसके कारण उनको शिक्षा नहीं मिल पाती थी। वे अपने हक, सम्मान और अधिकार से अंजान रही। जब बचपन में उनको किताबों का ज्ञान देना चाहिए था, उस वक्त उनको गृहस्थी संभालने के ज्ञान दिये जाने लगे। इसके कारण उनका व्यक्तिगत विकास नहीं हो पाया था। दहेज-प्रथा जैसी कुरीतियों ने नारी के सामाजिक स्तर को गिराने में योगदान दिया। उस समय लड़की को एक 'भार' के रूप में समझा गया। लड़की माता-पिता के लिए एक बोझ बनकर रह गयी। लड़की जन्मी तो दहेज देना पड़ेगा, इसी चिंता में सभी लड़का जन्म होने की कामना करते थे। पुत्री को जल्द-से-जल्द विदा करके ही उनको मुक्ति मिलती थी। न कोई उनकी शिक्षा के बारे में चिंतित होता और न ही कोई उनके विकास के बारे में सोचता था।

मुसलमानों के आक्रमण ने भी महिलाओं के स्तर को नीचे किया। उस वक्त शासकारियों ने अपने धर्म की लड़कियों की संख्या में कमी होने के कारण वे हर धर्म की लड़कियों से शादी करने लगे। उन्होंने विधवाओं तक को नहीं छोड़ा। हर तरफ से महिलाओं का शोषण किया। उस समय महिलाओं पर अनेक हिंसा होने लगे थे। कोई भी, कहीं भी और कभी भी उनको अपमानित करता था। सती-प्रथा का पालन भी लम्बे समय तक होता रहा। भारतीय समाज में एक और प्रमुख प्रथा रही जो दायनी-हत्या नाम से जानी गयी। यहाँ पर औरत को दायनी कराह देकर उसको मार दिया जाता है। उन पर अनगिनत अत्याचार किये जाते हैं। धार्मिक पाखंड, अंधविश्वास आदि के वश में लोग, औरत पर अत्याचार करते हैं। यह कुरीतियाँ अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रो में देखी गयी। लोग इतने अन्धविश्वासी होते हैं कि एक औरत का दर्द, उस पर हो रहे अत्याचार, हिंसा से पीड़ित चीख, उनको सुनाई तक नहीं देती हैं। यह प्रथा आज भी ग्रामीण क्षेत्रो में प्रचलन में है। महिलाओं को अपने परिवार वालें ही पारिवारिक अधिकारो से दूर रखते थे। ऐसी स्थिति में पति के परिवार से कुछ आशा न करना सामान्य सी बात थी। शिक्षा का अभाव ही मूल रूप से समस्थ महिलाओं के प्रति हिंसात्मक स्थिति का कारण हैं। नारी आज शिक्षित है, उनकी स्थितियों में बदलाव हैं। महिलाओं के खिलाफ हो रहे हिंसा का विरोध कर कई लोगों ने सुधार आंदोलन चलाये। 1828 में राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की थी। इसके दौरान उन्होंने सती-प्रथा का खंडन किया और महिलाओं में शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया था। इसके बाद 1875 में दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की थी। इसमे उन्होंने बाल-विवाह तथा पर्दा-प्रथा को समाप्त करने का उपदेश दिया था। साथ ही महिलाओं में शिक्षा के महत्व को भी सामने रखा था। ईश्वर चंद्र विद्यासागर ने विधवा-पुनर्विवाह पर जोर दिया और अनेक-पत्नी प्रथा जैसे कर्मकांडो के विरुद्ध आवाज उठाई थी। उन्होंने एक आदर्श उदाहरण देने के लिए अपने बेटे की शादी एक विधवा से कराई थी। ईश्वर चंद्र विद्यासागर के सक्रिय प्रयासों से बंगाल में महिला स्कूलों की स्थापना हुई थी। महात्मा गाँधी ने भी महिलाओं को आगे लाने का प्रयास किया। उन्होंने अपने राष्ट्र में चल रहे आन्दोलनों में महिलाओं को शामिल होने के लिए बुलाया। अनेक महिलाओं ने इस कार्य में भाग लिया। इसी के चलते उनको अपने अस्तित्व और अधिकार का ऐहसास हुआ। महिलाओं में एक नयापन आया। नवीन चिंता, नवीन सोच-शक्ति तथा समाज के नवीन रूप से परिचित हुई। घर की चार दीवारीं के अंदर उनको इन सब बातों का आभास होना असंभव था। यहाँ महिलाओं को एक प्रगति की दिशा मिल गयी थी।

भारत प्रदेश में महिलाओं पर हिंसा कोई नई बात नहीं है। इस सन्दर्भ में लेखक जॉन स्टुअर्ट मिल लिखते हैं कि 'स्त्रियों के उत्पीड़न और दासता का इतिहास उतना ही पुराना है जितना असमानता और उत्पीड़न पर आधारित सामाजिक संरचनाओं के उद्भव और विकास का इतिहास।' [9] ऐसी स्थिति युगो से समाज में रही है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) से पता चलता है कि 2018 और 2022 के बीच महिलाओं के खिलाफ अपराधों के दर में 12.9 प्रतिशथ की वृद्धि हुई है और 2022 में प्रति 100,000 महिलाओं की आबादी पर 66.4 अपराध दर्ज किये गये हैं। महिलाओं के बलात्कार के खबर तो लगभग रोज ही

सुनने को मिलता है। हर वक्त कहीं न कहीं, कोई न कोई लड़की किसी के शोषण का शिकार होती हैं। महिलाएं किसी भी क्षेत्र में सुरक्षित नहीं होती हैं। घर से लेकर दफ्तर तक उनका शोषण किया जाता है। उदाहरण के लिए हम दिल्ली में हुए 16 दिसंबर 2012 की घटना- 'निर्भया कांड' को ही देख सकते है। इस घटना ने सम्पूर्ण देश को हिलाकर रख दिया था। 23 वर्ष की एक लड़की के साथ सामूहिक बलात्कार कर उस पर अनेक शारीरिक अत्याचार किया गया था। अंत में उसने तड़प-तड़पकर अपना दम तोड़ दिया। उन बलात्कारियों के व्यवहार को देखके आवश्य ही ऐसा लगता है कि देश का भविष्य खतरे में है। उनकी सोच, उनके नारी के प्रति व्यवहार ऐसा क्यों हैं? - यह एक अत्यंत गंभीर विषय है। इसमें गंभीर चिंतन और अध्ययन की आवश्यकता है। पुरुषों की ऐसी क्रूरता को देखकर हम यह सोचने पर मजबूर हो जाते हैं कि क्या जानवरों और इन्सानों में कुछ फर्क भी होता है? कई पुरुषों की एक और मानसिक प्रवृति रही है कि कोई अगर उनको अपनाने से इंकार करे तो वे उस लड़की पर तेजाब फेंक देते हैं। इससे पुरुष यह व्यक्त करता हैं कि अगर वह उसकी नहीं हुई तो वह उसे किसी और की भी होने नहीं देगा। इस क्रिया में लड़की का संपूर्ण जीवन बरबाद हो जाता है। ऐसे पुरुष नारी पर हाथ उठाना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते है। पुरुष वर्ग बस नारी वर्ग को अपमानित करने के मौके की तलाश में रहते हैं। हालांकि सभी पुरुष एक जैसे हैं या नकारात्मक मानसिकता वाले होते हैं, यह कहना गलत होगा। कई अच्छे भद्र पुरुष भी होते हैं।

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा पर अनेक बिंदु सामने आते हैं। सबसे पहले यह पुरुष प्रधान समाज और उनकी सोच इसके दोषी हैं। यह सोच महिलाओं को दबाके रखने में ही अपना गौरव महसूस करता है। महिलाओं पर बढ़ते हिंसा के कारणों में एक मुख्य वजह है - हमारे देश की धीमी कानून व्यवस्था। इसमें हम उदाहरण के लिए 'निर्भया बर्बर कांड को ही ले सकते है। निर्भया को न्याय मिलने में ही 7 साल से ज्यादा समय लगा था। उन आरोपियों में एक नाबालिक था, इसी वजह से उसे कम सजा हुई थी। देश की कानून प्रक्रिया में लंबा वक्त लगने के कारण ऐसे भयानक कांड करने से लोग डरते नहीं हैं। ऐसी घटनाये बार-बार होती है। कभी-कभी पीड़ित को न्याय तक नहीं मिलता और जो न्याय की माँग करते हैं, उनको न्याय मिलते सालों बीत जाते है। आरोपी बेखोफ समाज में घूमता फिरता रहता है। ऐसी कानून-व्यवस्था में बदलाव और तुरंत विचार के विकल्प लाये जाने चाहिए।

महिलाएं सबसे पहले हिंसा का शिकार अपने घर में होती हैं। मोहन राकेश की प्रख्यात नाटक 'आधे-अधूरे' में एक वाक्य है, 'बड़ी लड़की : इतने साधारण ढंग से उड़ा देने की बात नहीं है, अंकल! मैं यहाँ थी तो मुझे कई बार लगता था कि मैं एक घर में नहीं, चिड़ियाघर की पिंजरे में रहती हूँ। आप शायद सोच भी नहीं सकते कि क्या-क्या होता रहा है यहाँ। डैडी का चीखते हुए ममा के कपड़े तार-तार कर देना, उनके मुहँ पर पट्टी बाँधकर उन्हें बंद कमरे में पीटना, खीचंते हुए गुसलखाने में कमोड पर ले जाकर (सिहरकर), मैं तो बयान भी नहीं कर सकती कि कितने-कितने भयानक दृश्य देखे हैं इस घर में मैंने।' [10] अत: नारी पर हुए शोषण का वर्णन साहित्य में स्पष्ट चित्रित हुआ है। नारी के साथ शोषण और अत्याचार घर पर ही होता रहा है। परिवार वाले, पति, रिश्तेदार आदि नारी पर जुल्म करते हैं। भारत देश के विभिन्न क्षेत्रो में महिलाओं की स्थिति अलग-अलग हैं। उत्तर-पूर्व और दक्षिण भारत में बाकी क्षेत्रो की तुलना में नारी की स्थिति काफी अच्छी है। कई-कई क्षेत्रो में भ्रूण-हत्या प्रचलित है। लड़की के जन्म होते ही उसे मार दिया जाता है। महिलाओं पर हिंसा होने का एक प्रमुख कारण है दहेज-प्रथा। दहेज के लेन-देन में कितने ही महिलाओं को मार दिया गया है। पति तथा परिवार वाले उनकी माँगें पूरी न होने पर लड़की को मारते-पिटते हैं, उन्हें जिन्दा जला देते हैं। उनको सारे अत्याचार सहकर रहना पड़ता है। ऐसी स्थिति में घर-समाज से सम्मान की आशा करना बहुत दूर की बात है।

भारतीय महिलाएँ सभी तरफ से हिंसा का शिकार रही है। चाहे वह सामाजिक हो, धार्मिक हो, पारिवारिक हो या फिर मानसिक, उनके साथ हिंसा हर जगह होता रहा है। अन्य समय की तुलना में वैदिक काल में नारी की स्थिति बेहतर थी। जैसे-जैसे समय बीतता गया, परिवर्तन

आता गया। आज की महिलाएँ शिक्षित हैं। अपनी चिंता स्वयं कर सकती है। अब वे पुरुषों को पहचानने लगी हैं। पति परमेश्वर की भावना से उसी पुरुष की पूजा करती है, जो सही मायने में पूजने लायक होता है। मुस्लिम और हिंदू धर्म के विवाद के कारण महिलाओं के ऊपर हिंसात्मक गति तेज हो गयी थी। बाल-विवाह होने लगे। हिंसा में बढ़ावा तब आया, जब मंदिरों में छोटी लड़कियों को धर्म के नाम पर पतिता बनाया जा रहा था। महिलाओं को यह सीख दी गयी कि पति की लंबी उम्र के लिए व्रत रखे, पर महिलाओं के लिए पुरुष समाज कुछ करे, इस पर कोई विषय ही नहीं बनता था। समय के साथ-साथ आज समाज में कई परिवर्तन आये हैं। महिलाओं में शिक्षा का प्रचलन हुआ है। महिलाओं को लिए शिक्षा ही एकमात्र जरिया है, जिससे इस पुरुष प्रधान समाज का सामना किया जा सकता है। नारी शिक्षित होकर अपने अधिकार हासिल कर सकती है। शिक्षा की सहायता से ही वे अपने नैतिक और सामाजिक स्तर को ऊंचा उठा सकती हैं।

**निष्कर्ष :**

यहाँ स्पष्ट है कि शिक्षा महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को रोकने में एक अहम् भूमिका निभाता है। नारी हमारी घर और समाज की बुनियाद है। उन्हीं से जगत बनता है। यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि नारी को अपनी शक्ति और सामर्थ्य की पहचान हो। महिलाओं पर अत्याचार तभी खत्म होंगे, जब वे खुद उसका विरोध करेंगी।

अत: निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि महिलाओं के प्रति इस कुदृष्टि में बदलाव लाना है तो जरूरी है कि नारी स्वयं सक्षम बने। लोग नारी के प्रति सकारात्मक सोच रखे तथा महिलाओं का सम्मान कर उनको शिक्षा प्राप्त करने दें और प्रगति की दिशा में जाने का मौका दें, क्योंकि उन्हीं से ही घर, समाज और राष्ट्र का निर्माण होता है। नारी वर्ग के विकास हेतु उन्हें समाज में अपने सम्मान, अधिकार और विकास के लिए आवाज उठाना आवश्यक है। ❑

**संदर्भ ग्रन्थ सूची :**


1. जैमन, डॉ. सुषमा. प्रेमचन्द की उपन्यासों में शोषित नारी. जयपुर : साहित्यसागर, 2009, पृष्ठ. प्रस्तावना- 1 .
2. मिल, जॉन स्टुअर्ट. स्त्रियों की पराधीनता. नई दिल्ली= राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 2024, पृष्ठ. 9 .
3. मनुस्मृति, पृष्ठ. 148 .
4. मिल, जॉन स्टुअर्ट. स्त्रियों की पराधीनता. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 2024, पृष्ठ. 95 .
5. आर्य, साधना और सिंह, लता. भारत में महिला आन्दोलन : विमर्श और चुनौतियाँ. राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., 2023, पृष्ठ. 27, 28 .
6. प्रसाद, जयशंकर. ध्रुवस्वामिनी. नोएडा : मयूर पपेरबेक्स, 2010, पृष्ठ. 17, 18 .
7. आर्य, साधना और सिंह, लता. भारत में महिला आन्दोलन : विमर्श और चुनौतियाँ. राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., 2023, पृष्ठ. 231
8. प्रसाद, जयशंकर. ध्रुवस्वामिनी. नोएडा : मयूर पेपरबेक्स, 2010, पृष्ठ. 19 .
9. मिल, जॉन स्टुअर्ट. स्त्रियों की पराधीनता. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 2024, पृष्ठ. 5 .
10. राकेश, मोहन. आधे-अधूरे. नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., 2011, पृष्ठ. 83, 84 .

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

# डॉ. अनामिका के काव्य में आधुनिकता

नीतू यादव

शोधार्थी (जे.आर.एफ.), हिंदी विभाग
बिड़ला परिसर
हे.न.ब.गढ़वाल
केंद्रीय विश्वविद्यालय
श्रीनगर (गढ़वाल), पिन-246174
6396735289
neetuyadavpbt@gmail.com

**शोध सार :**

समकालीन हिंदी साहित्य की प्रतिष्ठित कवयित्री डॉ. अनामिका का काव्य आधुनिकता से सराबोर है। उनके काव्य में युगों-युगों से चूल्हे-चौके की चौहद्दी में फँसी स्त्री वर्तमान में बाहर निकलकर अपने स्वामित्व की माँग कर रही है। वह अपने विवेक व बुद्धि से प्रश्नातुर शैली में तर्क-वितर्क करती है, जिसका विश्लेषण उनकी कविताओं 'खण्डिता', 'बीसवीं शती', 'दरवाजा', 'स्त्रियां', 'मौसियां', 'तुलसी का झोला' आदि में दृष्टिगोचर होता है। उनका काव्य केवल स्त्रियों तक ही सीमित नहीं है, अपितु भूमंडलीकरण के प्रभाव से समाज में जो परिवर्तन आया है, उसका भी विवेचन बड़ी शालीनता से प्रस्तुत करता है। कवयित्री अपनी रचनाओं में छोटे-छोटे बिंबों व प्रतीकों में दृश्य बुनती चलती हैं, जिससे पाठक के मन पर एक शब्द चित्र अंकित होते जाते हैं।

**बीज शब्द :**

आधुनिकता, प्रतिस्पर्द्धा, नवीनीकरण, जीवन मूल्य, स्वतंत्रता, समानता, वैश्विकरण, तार्किकता आदि।

**मूल आलेख :**

युग की समकालीन समस्याओं का विवेचन समसामयिकता है एवं उसमें परंपरागत मूल्यों पर प्रश्न चिह्न लगाना आधुनिकता है। आधुनिकता युग विशेष का वह भाव है, जिसके इर्द-गिर्द तत्कालीन समस्याएँ और समाधानों के वृत्त की परिधि घूमती रहती है तथा उसमें निरंतर नए मार्गों की खोज होती रहती है और जो जड़ हो गया वह पीछे छूटता जाता है, जिसे डॉ. नगेंद्र ने इस प्रकार परिभाषित किया है- *''आधुनिकता मध्ययुगीन जीवन-दर्शन से भिन्न एक नया जीवन-दर्शन और दृष्टिकोण है। यही कारण है कि प्रत्येक युग और प्रत्येक धारणा अपने आप से आधुनिक ही होती है।''*[1] जब तक उसमें समय-समय पर परिवर्तन होता रहता है, वह आधुनिक है, वहीं दूसरी ओर वह स्थिर हो जाती है तो परंपरा बन जाती है। आधुनिकता शब्द 'अधुना' से बना है, जिसका अर्थ आज या वर्तमान से है। इसकी व्युत्पत्ति अधुना शब्द में 'इक' प्रत्यय को जोड़ने से हुई है। अत: आधुनिकता का अभिप्राय स्थापित नियमों, परंपराओं एवं मान्यताओं से अलग हटकर मनुष्य की स्थिति एवं उसके प्रति नवीन दृष्टिकोण स्थापित करना है।

आधुनिकता बोध को समझने के लिए आधुनिक और बोध का अर्थ जानना अति आवश्यक है। मानक हिंदी शब्दकोश के अनुसार आधुनिकता शब्द का अर्थ है- *''थोड़े समय से प्रचलन में अथवा अस्तित्व में आया हुआ, जिस पर वर्तमान काल की धारणाओं की छाप पड़ी हुई है।''*[2] वहीं बोध शब्द का अर्थ है- ''ज्ञान, जानकारी, भ्रम या अज्ञान का अभाव।'' इस प्रकार आधुनिकता बोध का अभिप्राय है- वर्तमान का बोध, वर्तमान से अस्तित्व में आए ज्ञान और नवीन विचारों का तर्क के साथ पुष्टि करके अपने अंदर का भ्रम दूर करना।

आधुनिकता शब्द कालवाचक है। इसमें समय सापेक्षता का गुण निहित होता है। प्रत्येक काल की आधुनिकता अपनी पूर्ववर्ती रूढ़ियों को दूर करते हुए नवीनता का विकास करती है। यही कारण है कि आधुनिकता को एक निरंतर गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, जिसे रामधारी सिंह दिनकर ने इस प्रकार कहा है कि- *''आधुनिकता एक प्रक्रिया का नाम है, यह प्रक्रिया अंधविश्वास से बाहर निकालने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया नैतिकता से उदारता बरतने की प्रक्रिया है, यह प्रक्रिया बुद्धिवादी बनने की प्रक्रिया है, यह प्रक्रिया धर्म के सही रूप पर पहुँचने की प्रक्रिया है।''*[3]

आधुनिकता एक जीवन दृष्टि का नाम है, जो अपने समय के समाज का युगानुरूप दर्पण प्रस्तुत करती है और पुराने एवं स्थिर जीवन मूल्यों का परिशोधन करके नवीन मूल्यों की स्थापना करती है। आधुनिकता विवेकयुक्त एवं वैज्ञानिक दृष्टि से संबद्ध एक प्रश्नमूलक मानसिकता है, जिसमें प्रत्येक तथ्यों एवं मूल्यों को तर्क की कसौटी पर कसकर उसका परीक्षण करके अपने विवेक के आधार पर स्वीकृति देती है। आधुनिकता ने विज्ञान एवं तर्क से उसके पीछे छिपे रहस्यों का उद्घाटन किया और मानव का उसके प्रति भ्रम को दूर किया है। वहीं, आज आधुनिक युग में औद्योगिकीकरण का विकास हुआ, जिससे ग्रामों से असंख्य जनसंख्या नगरों की ओर उन्मुख हुई। परिणामस्वरूप आज संयुक्त परिवारों का विघटन होने लगा, जिससे मानव-मानव के प्रति प्रेम भाव निकृष्ट हो रहा है। अब मनुष्य भागदौड़ के जीवन में फँसकर एक यंत्र की भाँति अपने तक ही सीमित रह गया। अत: समाज में अब परंपरागत मूल्यों और नैतिक अवधारणाओं का ह्रास होने लगा। मनुष्य एक मशीन की भाँति आपा-धापी का जीवन व्यतीत कर रहा है, संभवत: उसके मन में आधुनिकता ने इसी प्रकार का बीजवपन किया है।

हिंदी साहित्य में अनेक कवियों ने मूल्यों, परंपराओं और आधुनिकता को अपनी काव्य यात्रा का उपजीव्य बनाया है। यह प्रश्न कालातीत और कालजयी भी है कि जब कवियों ने इसे अपने पथ का पाथेय बना डाला, कभी प्रकृति के साथ, कभी मानवीकरण का आश्रय लेकर तो कभी बिंबों और प्रतीकों के माध्यम से कविताओं में यह तत्व बोधगम्य रहा। इसी क्रम में अनामिका की कविताओं के संदर्भ मूल्यों के खूँटे से बंधकर नित नवीन उपमानों का आश्रय लेकर आधुनिकता के गलियारे में विचरण करते हैं। उनका प्रत्येक बिंब और प्रतीक इस बात की ओर संकेत करता है कि कवि की लेखनी इन्हीं तत्वों से समृद्ध होकर आधुनिकता बोध को सार्थक करती है। प्रसिद्ध आलोचक प्रियदर्शन के अनुसार- *''अनामिका के काव्य में परंपरा का बोध जितना तीक्ष्ण है, आधुनिकता-बोध भी उतना ही प्रखर। उनकी पूरी भाषिक चेतना जैसे स्मृति के रसायन में घुल कर बनती है और पीढ़ियों से नहीं सदियों से चली आ रही परंपरा का वहन करती है। उनकी पूरी कहन मे यह वहन इतना सहज संभाव्य है कि उसे अलग से पकड़ने-पहचानने की जरूरत नहीं पड़ती, वह उनकी निर्मिति में नाभिनालबद्ध दिखाई पड़ता है।''*[4] अत: इससे प्रतीत होता है कि उनका स्त्रीत्व भाव इतना आकृष्ट है कि उनके काव्य में परंपरा की पुनर्व्याख्या और पुनर्रचना स्वयं आभासित होती है। उनके काव्य में जो बिंब हमें अछूते और नए प्रतीत होते हैं, वे वर्तमान जीवन की एक परंपरागत विरासत का हिस्सा बने हुए हैं। उसी में रचे-बसे, उसी से निकले हैं और अनामिका को एक विलक्षण कवयित्री के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं।

आधुनिक समाज में स्त्रियों ने घर की देहरी लाँघकर देश-दुनिया में भी अपनी अलग पहचान बनाई है, लेकिन

फिर भी वे घरेलू जिम्मेदारियों से मुक्त नहीं हो पाई हैं। समाज में घर-परिवार की जिम्मेदारियाँ स्त्री की पहली जिम्मेदारी मानी जाती है। इसी मानसिकता से स्त्रियों ने पारिवारिक दायित्व को अपना कर्तव्य समझकर निभाया और दूसरे मोर्चे पर भी जिम्मेदारियाँ भी संभाली। वर्तमान समय में स्त्रियों की इस दोहरी भूमिका को बयाँ करते हुए कवयित्री डॉ. अनामिका कहती हैं कि -

*''समय : सुबह साढ़े सात, एफ.एम. टाइम*
*स्थान : सीढ़ी के नीचे आलने घेरकर बनाया गया पूजा-घर।*
*दृश्य : कुर्सी पर दफ्तर की साड़ी। देह पर एक भीगा कुरता, हाथ में दुर्गासप्तशती।*
*'या देवी सर्वभूतेषु'.....सविता, देखो बेटी, जल तो नहीं रही सब्जी?*
*'निद्रारूपेण संस्थिता'.....जागा पिंटू, उसे जगाओ, स्कूल-बस छूटेगी।*
*'नमस्तस्यै नमस्तस्यै'....फोन बज रहा है, उठाओ तो!*
*मेरा होगा तो कह देना-सी. एल. पर हूँ आज!*
*सिर दुख रहा है।*
*'ऊँ जयन्ती काली-महाकाली'-अखबारवाले भैया, रुक लो!*
*आती हूँ कर लूँ हिसाब, कल मिल गयी मुझे तनख्वाह।''*[5]

आधुनिक जीवन और आर्थिक परिस्थितियों की रस्साकशी की होड़ में औरतों की ही जिम्मेदारियाँ बढ़ी हैं। परिवार और उसके अपने सपनों ने उसकी इच्छाओं को विस्तार क्या दिया कि उनके लिए काम पर जाना अनिवार्य हो गया है, जिससे घर में उनकी हैसियत पहले से थोड़ी बढ़ गई है, लेकिन फिर भी परस्पर सहयोगी की भूमिका उसे नहीं मिली है। अगर हम तथ्यों के आधार पर देखें तो कुछ प्रतिशत महिलाओं को छोड़कर बाकी सभी महिलाओं से यही अपेक्षा की जाती है कि वह अपनी कमाई का पैसा अपने सास-ससुर और पति को दें, उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई भी खर्च न करें। यानी स्त्रियों से आज भी एक सहनशील बहू और कमाऊ औरत की भूमिका निभाने की अपेक्षा की जाती है। स्त्रियाँ घर में अकेले ही सब काम यंत्रवत होकर व नि:स्वार्थ भाव से करती रहती हैं, जिसका कोई मूल्य नहीं, जिसे कवयित्री डॉ. अनामिका जी ने इन शब्दों में व्यक्त किया है :-

*''सारा शहर चुप है,*
*धुल चुके हैं सारे चौकों के बर्तन।*
*बुझ चुकी है आखिरी चूल्हे की राख भी,*
*और वह*
*अपने ही वजूद की आंच के आगे*
*औचक हड़बड़ी में*
*खुद को ही सानती,*
*खुद को ही गुथती हुई बार-बार*
*खुश है कि रोटी बेलती है जैसे पृथ्वी।''*[6]

आधुनिक युग में स्वतंत्रता और समानता मनुष्य की चेतना के अभिन्न अंग हैं, स्त्रियों को इससे क्यों वंचित किया जाता है? इस प्रश्न को डॉ. अनामिका की कई कविताओं में दिखाया गया है, हालाँकि उनमें भी चेतना जाग्रत होना स्वाभाविक है। इसीलिए वह आज समाज से प्रश्न पूछ रही हैं, जो युगों-युगों से उनकी माताओं-दादियों-नानियों के जेहन में दबे हुए थे। वर्तमान में स्त्रियाँ अपने अधिकारों की माँग स्वयं कर रही हैं एवं अपने कर्तव्यों को निभाने के प्रति भी तत्पर हैं, जो उनके स्वामित्व को स्थापित करने में सहायक है, जिसे कवयित्री ने इन शब्दों में व्यक्त किया है :-

*''एक दिन हमने कहा*
*हम भी इंसान हैं-*
*हमें कायदे से पढ़ो एक-एक अक्षर*
*जैसे पढ़ा होगा बीए के बाद*
*नौकरी का पहला विज्ञापन।''*[7]

वर्तमान में बौद्धिकता और वैचारिकता के प्रभाव से मनुष्य ने अपनी परंपराओं, नैतिक आदर्शों और सामाजिक मूल्यों को खो दिया है, जिससे मानव को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। आधुनिकता की इस प्रतिस्पर्द्धा में हर व्यक्ति अपने तक ही सीमित होकर रह गया है। सह-संबंध सब नाममात्र के बनकर रह गए हैं। माँ, मौसी, बुआ, चाची जिनमें पहले अपनापन था, परंतु वर्तमान में अब ये औपचारिक संबंध बनकर रह गए हैं।

कवयित्री विघटित मानव मूल्यों के प्रति अपनी संवेदना स्थापित करते हुए कहती हैं :-

*''बीसवीं शती की कूड़ागाड़ी*
*लेती गई खेत से कोड़कर अपने*
*जीवन की कुछ जरूरी चीजें*
*जैसै मौसीपन, बुआपन,*
*चाचीपंथी और अम्मागिरी मग्न*
*सारे भुवन की।''*[8]

आधुनिकता का संबंध मनुष्य की चेतना के विकास से है। यह मानसिक परिघटना तर्क और विवेक पर आधारित है। अपनी इस तार्किक मानसिकता के कारण आधुनिक युग में स्त्रियां पति द्वारा परित्यक्त होने पर अपने आप को हीन न मानकर उन परिस्थितियों को चुनौती स्वरूप स्वीकार करती हैं। कवयित्री डॉ. अनामिका जी ने उन परित्यक्तता स्त्रियों के दुख को उजागर करते हुए अंत में उसे 'स्व' निर्णय की आभा से दीप्त किया है, जिसे इन पंक्तियों में व्यक्त करती हैं :-

*''मैं भी समेट रही हूँ खुद को*
*अपने झोले में ही !*
*अब निकलूँगी मैं भी*
*अपने सन्धान में अकेली !*
*आपका झोला हो आपको मुबारक।''*[9]

हमारे समाज में युगों-युगों से विवाह को पवित्र एवं अटूट बंधन माना जाता है, लेकिन वर्तमान में विवाह दो व्यक्तियों के बीच एक वैचारिक समझौता मात्र बनकर रह गया है, जिसे कवयित्री डॉ. अनामिका इन परिवर्तित विचारों को अपनी कविताओं में स्थान देती हैं-

*''पर इतना तो है बिल्कुल निश्चित-*
*अब किसी जन्म में मैं उसका*
*साथ नहीं चाहती।''*[10]

आधुनिकता की चकाचौंध से समाज में जो परिवर्तन हुए हैं, उसे कवयित्री ने बड़े सलीके से अपनी कविताओं में वर्णित किया है। इस संबंध में प्रियदर्शन ने लिखा है- *''अनामिका के कविता संसार में सांप्रदायिकता के उभार से लेकर बाजारवाद के प्रभाव तक की, उत्तर आधुनिकता और भूमंडलीकरण के विस्तार से लेकर रोजमर्रा की उन कहानियों तक की, जो अखबारों की मार्फत बनने वाले सूचनाओं के समंदर में बुलबुले की तरह उठती और फिर बिला जाती हैं- एक गहन चीरफाड़ अनवरत देखी जा सकती है।''*[11]

वर्तमान में युगों-युगों से संजोयी हुई संस्कृति का विघटन आधुनिकीकरण में हो रहा है। संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार का रूप ले रहे हैं, जिनमें परंपराओं का ह्रास करके नवीन मूल्यों को अपनाया जा रहा है- यांत्रिक युग में परंपराओं का वहन मात्र सामाजिक दिखावा भर ही रह गया है। कवयित्री अनामिका जी की कविता 'संयुक्त परिवार' इसी का उल्लेख करती है :-

*''पितृपक्ष के तर्पण!*
*नाश्ते से अण्डे हटाती है बड़ी बुआ-*
*दस दिन नहीं यह सब,*
*दस दिन तो पूर्वजों की स्मृति में*
*संयम बरतो।''*[12]

आधुनिक युग तकनीक का युग है, जिसमें मानव का पूरा जीवन कल-पुर्जों में ही सिमट कर रह गया है। यह साधन मनुष्य की पहली आवश्यकता हो गए हैं। तकनीक ने मनुष्य की दिनचर्या को किस रूप में प्रभावित किया है, इस बदलती मनोवृत्ति का सुंदर चित्रण अनामिका जी ने किया है : -

*''घूम रहे हैं डायल,*
*मिल रहे हैं नम्बर,*
*बज रही हैं घंटियाँ,*
*पंक्तिबद्ध खड़े हैं लोग*
*जैसे कि प्रार्थना मे बच्चे।''*[13]

हर युग अपने आप में आधुनिक है। मानवीय सभ्यता के प्रारंभिक चरण से लेकर वर्तमान चरण तक का कालखंड स्वयं आाधुनिक ही है। हर युग का अपना विश्वास, आस्था एवं तार्किकता और विचारधारा होती है। वर्तमान में हम देखें तो आदिम युग में जो रीति-रिवाज थे, वे अब परिवर्तित हो रहे हैं, उस समय की तुलना करें तो आज विज्ञान इतना आगे बढ़ गया है कि वर्ष प्रति वर्ष को पीछे छोड़ता जा रहा है। कवयित्री परिवर्तित युग का अवलोकन करते हुए कहती हैं कि -

*''याद है वसन्ता*
*बासठ के आस-पास जन्में हम*
*क्या कभी ये सोच सकते थे*
*एक रोज आएगा ऐसा भी*

*दीवाली पर चीन भेजेगा*
*रात भर टिमटिमाने वाले*
*सुन्दर गणेश-लक्ष्मी।''*[14]

आधुनिकता केवल बाहरी मुखौटा नहीं है, वरन उसकी जड़ें व्यक्ति के अन्त:स्थल में बसती हैं। आधुनिकता व्यक्ति की विचारधारा, तार्किकता, वैज्ञानिकता, साहित्यिक एवं सामाजिक धारणाएँ सभी युग बोध का यथार्थ बिंब प्रस्तुत करती है।

कवयित्री की रचनाओं में देखें तो उनमें परंपरा और आधुनिकता का संगम है तथा उनके भीतर औरतों की समूची दुनिया रंगस्नान करती हैं। वे स्वयं कहती हैं कि- *''मेरे भीतर जो औरतों की दुनिया बसती है, जहाँ से मुझे अनेक किरदार मिले।''*[15] यहीं से उनकी रचनाओं को प्राण भी मिले हैं, जो उनके समय में चल रहा वह समसामयिकता है और उसी में विचारों को आज कुछ परिवर्तन के साथ जीना आधुनिकता है। कवयित्री की प्रमुख विशेषता यह है कि वे सबसे अपनत्व से मिलती हैं, जो उनकी कविताओं में भी परिलक्षित होता है। लेखिका रामरती मलिक ने भी कहा है- *''अनामिका की कविता जीवन से बोलती-बतियाती, पता पूछती, हालचाल ज्ञात करती समझती-समझाती चलती है। उनकी कविता एक मौन क्रांति की सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें वह जीवन की विडंबनाओं और विसंगतियों को समझने समझाने के बहाने मानव-मुक्ति की नई भावभूमि तलाशती हैं।''*[16]

अत: कहा जा सकता है कि आधुनिकता व्यक्ति की मानसिक प्रवृत्ति को अपने परिवेश के अनुसार परिवर्तित कहते हुए उन्मुखता की ओर ले जाती है, जिससे व्यक्ति की सोच संकीर्ण न होकर विचारों, संकल्पनाओं में गतिशील व सक्रिय रहती है। इससे व्यक्ति समाज में स्वतंत्र रूप से खुला दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है और बौद्धिकता से तार्किकता के द्वारा उसका विश्लेषण करता है।

साहित्यकार युग सापेक्ष होता है। वह जिसमें जीता है तथा जो अनुभव करता है, उसी के स्वर अपनी रचनाओं में बुनता चला जाता है। कवयित्री डॉ. अनामिका भी अपनी कविताओं में युगों से सतायी हुई स्त्रियों को बुलंद आवाज देती हैं, हालाँकि वर्तमान में शिक्षा का प्रसार होने से स्त्रियाँ अपनी बौद्धिकता व तार्किकता से उभर रही हैं, किंतु यह प्रतिशत अभी बहुत कम है। यही दबा हुआ दुख और पीड़ा कवयित्री की कविताओं में प्रस्तुत होती है। साथ ही वैज्ञानिकता व भूमंडलीकरण से समाज में जो नया बदलाव आया है, उसे भी शब्दों में चित्रित किया है। निष्कर्षत: आधुनिक होते मानव की यात्रा का पूरा आरोह-अवरोह पूरी पारदर्शिता के साथ अनामिका की काव्य साधना के महत्वपूर्ण सरोकार हैं। ❑

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**


1. नई समीक्षा नये संदर्भ- डॉ. नगेन्द्र, पृ. सं. 61
2. मानक हिंदी शब्द सागर- रामचंद्र वर्मा, पृ. सं. 174
3. Hindi bhasha ka ithas, CEC, youtube, New Delhi
4. सभ्यताओं की अनसुनी आवाजें: प्रियदर्शन, संवेद पत्रिका, अंक फरवरी 2022, पृ. सं. 50
5. दूबधान-डॉ. अनामिका, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. सं. 48
6. बीजाक्षर-डॉ. अनामिक, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. सं. 27
7. खुरदुरी हथेलियाँ-डॉ. अनामिका, राधाकृष्ण प्रकाषन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण, 2019, पृ. सं. 13
8. कवि ने कहा-डॉ. अनामिक, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. सं. 14
9. दूबधान-डॉ. अनामिका, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. सं. 23
10. कविता में औरत-डॉ. अनामिका, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. सं. 71
11. सभ्यताओं की अनसुनी आवाजें: प्रियदर्शन, संवेद पत्रिका, अंक फरवरी 2022, पृ. सं. 50
12. अनुष्टुप-डॉ. अनामिका, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. सं. 25
13. अनुष्टुप-डॉ. अनामिका, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ0 सं. 103
14. टोकरी में दिगन्त: थेरी गाथा-डॉ. अनामिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण, 2021, पृ. सं. 79
15. अपना स्पेस रचती-गढ़ती स्त्रियों की दुनिया: जया जादवानी, संवेद पत्रिका, अंक फरवरी 2022, पृ. सं. 127
16. स्मृति और स्वप्नों की लहलहाती फसल: रामरती मलिक, संवेद पत्रिका, अंक फरवरी 2022 पृ. सं. 29

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

चिंतन

# वर्तमान संदर्भ में हिंदी भाषा की व्यापकता

सुश्री अन्नू इंदौरा

सहायक प्रोफेसर, (हिंदी) विभाग
राजकीय कन्या महाविद्यालय,
सेक्टर-14 गुरुग्राम-122001
हरियाणा
9971324947
nua892@gmail.com

**सारांश :**

हिंदी भाषा भारत देश की पहचान है। यह भाषा आज न केवल जन-जन की भाषा बन चुकी है, बल्कि वैश्विक स्तर पर इसने भारत की राष्ट्रीय पहचान को भी नई बुलंदियों तक पहुँचाया है। हिंदी आज न सिर्फ आम बोलचाल की भाषा है, बल्कि यह राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर भी सीखने-सिखाने का माध्यम बन चुकी है। दुनिया के विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का शिक्षण इस बात का प्रमाण है कि हिंदी भाषा वैश्विक स्तर पर निरंतर विस्तृत होती जा रही है। हिंदी भाषा के विषय में यह कहा जा सकता है कि आज हिंदी एक रोजगारोन्मुख भाषा बन चुकी है। आज भारतीय संस्कृति और विविधतापूर्ण भारतीय अस्मिता को जानने-समझने का सबसे सटीक माध्यम हिंदी भाषा ही है। प्रस्तुत शोध आलेख में हिंदी भाषा की ऐतिहासिक कड़ियों पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान संदर्भ में हिंदी भाषा की व्यापकता पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

**बीज शब्द :**

भाषा, अभिव्यक्ति, संवेदना, अनुवाद, समृद्धि, समावेशिता।

**मूल आलेख :**

अनुभव जब अपनी अभिव्यक्ति चाहते हैं, तब आवश्यकता होती है भाषा की। भाषा ज्ञान के किसी भी अनुशासन तक पहुँचने की कुँजी है इसलिए भाषा में पकड़ जितनी गहरी होगी, ज्ञान तक पहुँच उतनी आसन बनेगी। मानव शिशु भाषा प्रयोग की अंतर्जात क्षमता के साथ जन्म लेता है। भाषा बच्चे की कुछ लोगों के साथ पहचान स्थापित कराती है और अन्य से अलग भी करती है। इस प्रकार भाषा तादात्म्य निर्माण और मानवीय समाज की रचना का आधार है। मनुष्य बाह्य व आंतरिक यथार्थ से भाषा के माध्यम से ही जुड़ता है। जीवन में जो कुछ घटित होता है, उससे तादात्म्य स्थापित करने का माध्यम भाषा है। भाषा केवल सम्प्रेषण का माध्यम नहीं है, बल्कि समझने का माध्यम भी है। बच्चे का भाषाई विकास किसी भी समाज की सबसे बड़ी प्राथमिकता होती है। भाषा खुद की पहचान का एक मजबूत साधन है। ऐसे भी हिंदी भाषा के संदर्भ में भी कहा जा सकता है कि यह भारतीय जन की पहचान है।

किसी भी राष्ट्र की अस्मिता का प्रश्न मूल रूप से उस राष्ट्र की जनता की संपूर्ण जीवन-शैली का प्रतिबिंब माना जाता है और यह भी सत्य है कि यह संपूर्ण जीवन-शैली उस राष्ट्र की गौरवशाली 'साहित्य-परंपरा' की गाथाओं में ही निबद्ध रहती है। यह गौरवशाली साहित्य परम्परा अपने को अभिव्यक्त करने के लिए भाषा को ही अपना माध्यम बनाती है। (पृष्ठ-14)[1]

भारत की विविधता सदा से ही विश्व के लिए आश्चर्य और जिज्ञासा का विषय रही है। भारत की समृद्धि उसकी सांस्कृतिक, सजातीय और भाषायी विविधता से चिन्हित होती है। भारत जैसे बहुभाषी देश में जहाँ एक से अधिक भाषायी अस्मिताएँ हैं, वहाँ पहचान के विभिन्न कारकों में से भाषा को सबसे सशक्त माध्यम माना जाता है। भाषायी विविधता के भारतीय परिवेश में हिंदी भाषा का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि हिंदी हमारी अस्मिता की पहचान, सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति और हमारी सांस्कृतिक विरासत की धरोहर है (पृष्ठ-120)[2]। अखिल भारतीय स्तर पर संपर्क सूत्र के रूप में स्वीकृत हिंदी भाषा मात्र हिंदी प्रदेश की ही भाषा नहीं है, बल्कि संपूर्ण भारत की भाषा रही है। भौगोलिक दृष्टि से देश के 10 राज्यों में बोली जाने वाली भाषा हिंदी ही है। वास्तव में हिंदी की आंतरिक प्रकृति ही ऐसी है कि अनेक बोलियों से मिलकर बना हिंदी का फलक अपनी प्रकृति में समावेशी है। भोजपुरी, अवधी, ब्रज जैसी अनेकों बोलियाँ हिंदी से अलग नहीं हैं, बल्कि ये सब हिंदी जैसे विशाल वृक्ष की मजबूत डालें हैं, इनमें एक आपसी तारतम्य देखा जा सकता है। उन्नसवी शताब्दी में ग्रियर्सन ने लिखा था कि 'बंगाल से पंजाब तक एक ही भाषा प्रचलित है-हिंदी, अपनी तमाम बोलियों के साथ' (पृष्ठ-19)[3]।

प्राचीन समय में अनेक ऐसे शासक, यात्री और व्यापारी रहे, जिन्होंने अपने तत्कालीन उद्देश्यों और रुचि के कारण हिंदी भाषा को जाना, समझा, सीखा और प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से हिंदी का विस्तार किया। विमलेश कान्ति वर्मा के अनुसार, 'जब भी व्यक्ति या देश की छवि बनती है तो उस देश को तथा वहाँ के निवासियों को समझने के लिए देश की भाषा व संस्कृति में भी सभी की रुचि बढ़ती है? भारत यों तो चिरकाल से कला, विज्ञान तथा अनेक क्षेत्रों में संपन्न होने के कारण विदेशियों के लिए आकर्षण का विषय रहा है, किंतु इधर पिछले पाँच दशकों में भारत के प्रति विदेशियों की रुचि में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है' (पृष्ठ-9)[4]।

आजादी से पहले भारत से बाहर काम के लिए ले जाए गए लोगों (गिरमिटियों) को हिंदी के प्रसार में एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में देखा जा सकता है। आज भी मॉरीशस में 70 प्रतिशत लोग हिंदी मूल के हैं (पृष्ठ-237)[5]। वास्तव में विश्व में हिंदी भाषी जहाँ भी गए जैसे ब्रिटेन, अमेरिका, कनाडा, नीदरलैंड, दक्षिण अफ्रीका, टोबैको, ट्रिनीदाद, सूरीनाम, नेपाल, पाकिस्तान, बांग्लादेश, इंडोनेशिया, फिजी, गुयाना मलेशिया, भूटान, जावा, सुमात्रा, श्रीलंका, बर्मा आदि वे देश हैं, जहाँ से वैश्विक स्तर पर हिंदी के प्रसार में सहायता मिली है (पृष्ठ-20)[6]।

1981 की जनगणना के अनुसार भारत में हिंदी को मातृभाषा के रूप में प्रयोग करने वाले भारतीयों का प्रतिशत 42.88 है (पृष्ठ-9)[7]। हिंदी भाषा भारतीय राष्ट्र का आधार है। प्राचीन काल से विभिन्न भाषा भाषियों को एक सूत्र में बांधने का काम हिंदी भाषा द्वारा ही हुआ है और हिंदी ही वह एक मात्र भाषा है, जिसे माध्यम बनाकर हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने भारतवासियों को सुषुप्तावस्था से जगाकर और अपने संकीर्ण स्वार्थों से ऊपर उठाकर अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ एकजुट किया था। गाँधी जी ने कहा था कि 'हिंदी के सहारे ही देश की आजादी की लड़ाई लड़ी जा सकती है और हिंदी ही स्वराज की राजभाषा हो सकती है'(पृष्ठ-102)[8]। आज भी विभिन्न समाचार पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं, राजनेताओं के भाषणों की भाषा, व्यापर जगत की भाषा के विश्लेषण से यह कहा जा सकता है कि भारत देश में हिंदी भाषा का विस्तार सबसे अधिक है। हिंदी भाषा को विश्व में तीसरी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा माना जाता है। इसका मुख्य कारण है कि आज न केवल हिंदी भाषा में ज्ञान प्राप्ति के माध्यम बढ़ रहे हैं, बल्कि उस ज्ञान का प्रयोग कर सकने के लिए मंच भी मिल रहे हैं।

विश्व के विभिन्न देशों में हिंदी भाषा के शिक्षण और अध्ययन का कार्य आज पूरे उत्साह के साथ किया जा रहा है। डॉ. शोमर के अनुसार, 'अमेरिका में ही 113 विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में हिंदी अध्ययन की सुविधाएँ उपलब्ध हैं' (पृष्ठ-14)[9]। इस प्रकार यह स्पष्ट

है कि विश्वभर में हिंदी का पठन-पाठन, लेखन और शोधकार्य व्यापक स्तर पर हो रहे हैं। भारत के बाहर अन्य देशों में 176 से अधिक विश्वविद्यालयों तथा शिक्षण संस्थानों में हिंदी भाषा का अध्ययन एवं अध्यापन हो रहा है (पृष्ठ- 68)[10]। वर्तमान में विदेशों में प्रकाशित होने वाली आर्य संदेश, ज्योति जैसी पत्रिकाओं के प्रकाशन ने भी हिंदी का व्यापक प्रसार करने में भूमिका निभाई है। इसी के साथ प्रवासी भारतीयों के कारण भी विदेशों में हिंदी को व्यापक आधार मिला है, इसलिए हिंदी की अंतर्राष्ट्रीय भूमिका से अब इनकार नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी भाषा निरंतर पुष्पित और पल्लवित हो रही है।

आज भारत सहित विश्व के कई देशों में हिंदी भाषा की जड़ें गहरी हो चुकी हैं। हिंदी भाषा के सोशल मीडिया पर विभिन्न चैनल, वेब चैनल, यू ट्यूब चैनल, अखबार, लेखन के लिए विभिन्न प्रकार की टंकण फॉन्ट, ब्लॉग, ऑनलाइन हिंदी की हजारों पत्रिकाएँ इत्यादि अर्थात तकनीक में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है, जहाँ हिंदी भाषा का मजबूत हस्तक्षेप ना हो। वितरण और प्रसार की दृष्टि से तकनीक हिंदी की किताबों के फैलाव को बढ़ाया है। इस तरह हम देखते हैं कि हिंदी ने खुद को अपडेट किया है और तकनीक के साथ हिंदी ने स्वयं को समायोजित किया है। आज हम कंप्यूटर, लैपटॉप, आई-पैड, मोबाइल पर हिंदी भाषा का आसानी से प्रयोग कर सकते हैं। अब हिंदी में बहुत सारे ब्लोग्स, वेबसाइट्सइस, ई-मेल इत्यादि की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इंटरनेट पर अब हिंदी से जुड़ी हुई सामग्री की भरमार है। विश्व के किसी भी कोने में देवनागरी लिपि और हिंदी साहित्य को पहुँचाने में इंटरनेट का योगदान अकथनीय है (पृष्ठ-168)[11]। इस प्रकार आज हम देखते हैं कि तकनीक ने भी विश्व में हिंदी भाषा के प्रसार में योगदान दिया है। हिंदी धीरे-धीरे इंटरनेट की एक महत्वपूर्ण भाषा के रूप में प्रयोग में आने लगी है और इसके ऑनलाइन संस्करण भारत में ही नहीं विदेशों में रहने वाले भारतीयों में भी लोकप्रिय हो गए हैं (पृष्ठ-80)[12]। आज हिंदी भाषा को सीखने-सिखाने के हजारों यूट्यूब चैनल( गैर-हिंदी भाषियों द्वारा बनाए हुए) आ चुके हैं, जिनकी सबस्क्राइबर संख्या लाखों में है। इसके अतिरिक्त भारतीय सिनेमा और फिल्मों तथा दूरदर्शन के कारण हिंदी की लोकप्रियता में सर्वाधिक बढ़ोतरी हुई है। हिंदी फिल्मों के गीत जन-जन की जिह्वा पर मौजूद हैं। इन्हीं गीतों के कारण हिंदी न जानने वाले भी हिंदी फिल्मों को देखने में रुचि ले रहे हैं, जिससे हिंदी की लोकप्रियता बढ़ी है (पृष्ठ-6)[13]। वर्तमान सरकार ने भी सभी सार्वजनिक और सरकारी कार्यालयों में हिंदी के प्रचार-प्रसार में बहुत योगदान दिया है। यही नहीं, बल्कि वैश्विक मंचों पर भारतीय राजनेताओं द्वारा हिंदी के प्रयोग को भी विश्व स्तर पर हिंदी के विस्तार के एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में देखा जाना चाहिए। आज अनेक कारणों से विभिन्न भाषा-भाषी हिंदी भाषा को सीखने की ओर आकर्षित हो रहे हैं, जिसके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

- हिंदी भाषा के साहित्य के अध्ययन द्वारा विवेक शक्ति तथा अभिरुचि का विकास करना।
- हिंदी भाषा पर कार्यात्मक अधिकार प्राप्त कर अपनी व्यावसायिक क्षमता को बढ़ाना, जिसमें वह प्रतियोगी बनना चाहता है।
- व्यक्ति को अपने समीप और साथ ही दूर के लोगों की जीवन-शैली और संस्कृति को जानने के लिए प्रेरित करने वाली जिज्ञासा प्रवृत्ति।

वहीं दूसरी ओर, अज हिंदी संपर्क भाषा, माध्यम भाषा, मातृभाषा, हिंदी तकनीकी भाषा, राजभाषा, जनभाषा, कामकाजी हिंदी भाषा, प्रयोजनमूलक हिंदी भाषा , साहित्यिक हिंदी इत्यादि रूपों में अपनी सशक्त भूमिका निभा रही है, जो विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी भाषा की व्यापकता को स्वयं ही स्पष्ट कर देता है। वास्तव में हिंदी का स्वरूप बहुल है।

भारत न केवल विश्वगुरु है, बल्कि यह विश्व का आध्यामिक गुरु भी है। आज भारत के अनेकों धार्मिक स्थलों पर दुनिया के विभिन्न देशों के लाखों विदेशियों को देखा जा सकता है, जो भारत की पुण्य भूमि पर अपनी आध्यामिक उन्नति और शांति प्राप्ति के उद्देश्य से यहाँ शरण लिए हुए हैं। आध्यामिकता की अपनी सुधा को शांत करने के लिए इन विभिन्न विदेशी लोगों ने भी

हिंदी भाषा के वैश्विक विस्तार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आज धर्म, संगीत, साहित्य, ज्ञान, विज्ञान, तकनीक, अनुवाद, लेखन, प्रकाशन, प्रशासनिक पदों पर, सिनेमा, विज्ञापन, व्यापार, अर्थव्यवस्था, दर्शन, चिंतन, शिक्षण और शोध आदि ऐसा कोई क्षेत्र नहीं, जहाँ हिंदी भाषा का प्रयोग और प्रसार न हो रहा है।

आज हिंदी भाषा ज्ञान की वाहिका ह। नए आविष्कार और नए अनुसंधान के लिए मौलिक चिंतन और विवेचन की क्षमता हिंदी भाषा में बखूबी है। यही नहीं, बल्कि यदि भारतीय कक्षाओं में हिंदी भाषा की स्थिति पर दृष्टि डाली जाए तो यह तथ्य स्पष्ट है कि लाखों बच्चों द्वारा बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने का एक बड़ा कारण उन पर उपनिवेशी भाषा का थोपा जाना है, जिससे निजात हिंदी भाषा में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को आरंभ करके पाया जा सकता है, क्योंकि शिक्षा के क्षेत्र में अधिकतर बच्चे स्वयं को परिवेश की भाषा होने के कारण हिंदी भाषा में सहज अनुभव करते हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में भी इस बात पर जोर दिया गया है कि बच्चे की शिक्षा का माध्यम उसके परिवेश की भाषा होनी चाहिए ताकि बच्चा शिक्षा की प्रक्रिया से सहजता के साथ जुड़ सके।

**निष्कर्ष :**

हिंदी ही हमारी संवेदनाओं की वाहक है, स्वाभिमान है और राष्ट्रीय एकता की प्राण है। अपनी आंतरिक शक्ति, गुणवत्ता, सरलता एवं लोकप्रियता के कारण हिंदी का विस्तार आज विश्व पटल पर हो रहा है, किंतु आज संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को स्थापित करना हमारे समक्ष एक चुनौती है। अत: यह प्रयास होना चाहिए कि हिंदी भाषा संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषाओं में अपना स्थान ग्रहण कर सके और विश्व पटल पर अपना उचित और गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर सके। ❑

**संदर्भ ग्रंथ :**


1. अरोड़ा, पंकज, शर्मा, उषा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 रचनातमक सुधारों की ओर, शिप्रा पब्लिकेशन, 2022
2. डॉ. शर्मा, प्रणव, डॉ. गोस्वामी, प्रणीता, हिंदी का अस्मिता पर्व, मित्तल एंड संस, दिल्ली, 2015, पृष्ठ-120.
3. वैश्विकरण के परिप्रेक्ष्य में हिंदी, नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं पुस्तकालय, 2002, पृष्ठ-19.
4. शर्मा,आत्माराम, आधुनिक समय में हिंदी की चुनौतियाँ, दृष्टि ऑफसेट, 2015, पृष्ठ-9.
5. शर्मा,आत्माराम, आधुनिक समय में हिंदी की चुनौतियाँ, दृष्टि ऑफसेट, 2015, पृष्ठ-237.
6. डॉ. पांचाल, परमानन्द, हिंदी भाषा : प्रासंगिकता और व्यापकता, हिंदी बुक सेंटर, 2016, पृष्ठ-20.
7. शर्मा,आत्माराम, आधुनिक समय में हिंदी की चुनौतियाँ, दृष्टि ऑफसेट, 2015, पृष्ठ-9.
8. डॉ. शर्मा, प्रणव, डॉ. गोस्वामी, प्रणीता, हिंदी का अस्मिता पर्व, मित्तल एंड संस, दिल्ली, 2015, पृष्ठ-102.
9. भारतीय गणतन्त्र में हिंदी दशा और दिशा, नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं पुस्तकालय, 2002, पृष्ठ-14.
10. डॉ. शर्मा, प्रणव, डॉ. गोस्वामी, प्रणीता, हिंदी का अस्मिता पर्व, मित्तल एंड संस, दिल्ली, 2015, पृष्ठ-68.
11. डॉ. शर्मा, प्रणव, डॉ. गोस्वामी, प्रणीता, हिंदी का अस्मिता पर्व, मित्तल एंड संस, दिल्ली, 2015, पृष्ठ-168.
12. मिश्र, विद्यानिवास, हिंदी और हम, ग्रन्थ अकादमी, नयी दिल्ली, 2001, पृष्ठ-80.
13. डॉ. पांचाल, परमानन्द, हिंदी भाषा : प्रासंगिकता और व्यापकता, हिंदी बुक सेंटर, 2016, पृष्ठ-6.

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

# उदय प्रकाश की कहानियों में स्त्री संघर्ष

शिल्पा दत्त

शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय
दोईमुख, इटानगर (अरुणाचल प्रदेश)
6000875404
silpadutta2018@gmail.com

**भूमिका :**

साहित्य मानवीय अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है। साहित्य और समाज का नाभि-नाल संबंध है। मनुष्य अपनी विभिन्न गतिविधियों और प्रकृति के साथ अपने संबंधों और अपनी कल्पना को साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। साहित्य की सबसे बड़ी प्रासंगिकता समाज से जुड़ने में है। समाज की मानसिकता में परिवर्तन हेतु आवश्यक है कि उसके विचारों में भी परिवर्तन हो और इस कार्य में साहित्य सहायक सिद्ध हो सकता है। समकालीन साहित्यकारों ने जनसामान्य के दर्द को देखा एवं स्वयं भोगा भी है। ऐसे में उदय प्रकाश का कथा-साहित्य समकालीन संदर्भों में प्रामाणिक सिद्ध होता है। उदय प्रकाश की कहानियाँ अपने समय की विभीषिकाओं से निरंतर संघर्ष करते हुए आगे बढ़ती हैं, इसलिए उनमें समाज का वह हर व्यक्ति सम्मिलित हो जाता है, जो किसी न किसी स्तर पर प्रताड़ित है।

**मूल विषय :**

पुरुष और स्त्री दोनों ही समाज के अभिन्न अंग हैं, परंतु सदियों से हम देखते आए हैं कि पुरुषों के समान औरतों को उनका अधिकार नहीं मिला है और न ही महत्व। केवल चारदीवारी के अंदर ही कैद रहकर पारिवारिक एवं सामाजिक दायित्व को निभाना उनकी नियति बन गई है। खासकर गाँव की तरफ ध्यान दें तो पारिवारिक जकड़नों में फँसकर स्त्री खुद की ओर ध्यान ही नहीं देती है। ऊपर से उन पर शारीरिक अत्याचार होते हैं वो अलग। अत: स्त्री का आत्मसंघर्ष एवं अपने हक की लड़ाई प्रत्येक युग में दृष्टिगोचर रहा है।

उदय प्रकाश एक ऐसे रचनाकार हैं, जिन्होंने स्त्री जीवन को परत-दर-परत अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। उनकी रचनाओं में स्त्री का दयनीय रूप भी है और संघर्ष करते हुए मुक्ति की चाह भी है। पढ़ी-लिखी स्वतंत्र विचार रखने वाली औरतें भी हैं और उपेक्षित जीवन जीने वाली स्त्रियाँ भी हैं। उदय प्रकाश की 'मोहनदास' कहानी में स्त्री को प्रेरणादायिनी के रूप में दिखाया गया है। मोहनदास एक पढ़ा-लिखा बेरोजगार इंसान है। ईमानदारी से नौकरी पाने की प्रयास में संघर्ष करता फिर रहा है। मोहनदास की शादी चौदह-पंद्रह साल की उम्र में ही कटकोना गाँव के बिरजू की सुंदर बेटी कस्तूरीबाई के साथ हो गई। ससुराल की जिम्मेदारियों के साथ उसने मोहनदास की पढ़ाई सुचारू रूप से चले, इसके लिए आस-पास

छोटी-मोटी मजूरी करके पैसे कमाना भी शुरू कर दिया, क्योंकि पूरे घर की आस मोहनदास पर थी कि उसे नौकरी मिल जाए। उच्च शैक्षणिक अर्हता होने के बावजूद जब मोहनदास को नौकरी नहीं मिल पा रही थी, तब कस्तूरी मोहनदास का हिम्मत बढ़ाती है - *''कोई बात नहीं, सरकारी नौकरी नहीं मिलेगी तो प्राइवेट में देख लेंगे। नहीं तो कोई धंधा कर लेंगे। आजकल पढ़े-लिखे बेरोजगारों के लिए सरकार की कई योजनाएँ हैं। कुक्कुट पालन कर लेंगे। अंडे के धंधे में खूब फायदा है। मोमबत्ती, अगरबत्ती या आटा-दलिया बनाने का कारखाना डाल लेंगे। सरकार बैंकों से लोन दिलाती है।''*[1] जब नौकरी नहीं मिल रही थी तो मोहनदास खेती करने लगा और उसमें भी कस्तूरी ने पूरा साथ दिया। वह और कुछ नहीं, मोहनदास की परछाई थी। कस्तूरी मोहनदास के लिए प्रेरणादायिनी थी, परंतु खुद का जीवन उपेक्षितपूर्ण था। उसने सास-ससुर, पति की देखभाल में ही अपना जीवन न्योछावर कर दिया। यहाँ तक कि जिस दिन वह देवदास को जन्म देने वाली थी, उस दिन उसकी हालत मरना-जीना जैसी हो गई थी और उस रात मोहनदास अपनी ही चिंता में मग्न होकर पूरी रात घर नहीं आया। दूसरी तरफ मोहनदास की माँ पुतलीबाई है, जिसकी आँख किसी मुफ्त नेत्र शिविर में मोतियाबिंद का ऑपरेशन कराने के बाद अंधी हो चुकी थी। अंधी होने के बावजूद घर के कामों में हाथ बटाती थी। घर में इतना पैसा नहीं था कि उसकी इलाज करवा सके। इस तरह दोनों ही औरतें हालात से समझौता करके चल रही थीं।

नारी का जीवन उपेक्षापूर्ण ही रहा है। इसका उदाहरण हमें 'तिरिछ' कहानी संग्रह की 'छप्पन तोले की करधन' कहानी की दादी में देखने को मिलती है। एक भरा-पूरा परिवार होने के बावजूद उनकी तरफ ध्यान देने के लिए कोई नहीं है। बस वक्त-वक्त पर वह जिंदा है कि नहीं उसे देखा जाता है। सबको लग रहा था कि दादी के पास छप्पन तोले का कोई करधन है और उसी के लालच में उसे यातना दे देकर जिंदा रखा जा रहा था- *''उस बार जब पिताजी ने कहा था कि करधन की बात गढ़ंत है तो पच्चीस दिनों तक अम्माँ रोती रही, पच्चीस दिनों तक चाची ने दादी के खाने में धूल और मिट्टी डाली, पिताजी उसी रात कलकत्ते लौट गए थे और फिर पच्चीस दिनों तक घर में कोयले से भी ज्यादा काला और गाढ़ा अँधेरा भर गया था।''*[2]

उदय प्रकाश की 'तिरिछ' कहानी संग्रह में संकलित 'हिन्दुस्तानी इवान दानिसोविच की जिन्दगी का एक दिन' कहानी की स्त्री पात्र 'विमला' की जीवन भी उपेक्षापूर्ण ही है। विमला का पति रामनिवास एक निम्न मध्यवर्गीय पात्र है। वह एक प्राइवेट प्रेस में प्रूफरीडर था। अपने परिवार का पेट पाल सके इसलिए विमला भी एक प्राइवेट टाटपट्टी स्कूल में आया का काम करती थी। ऊपर से उनके तीन लड़के, जिनमें से मंजला गूँगा, सबसे छोटा लड़का हमेशा बीमार रहता था, उसको क्रोनिक डिसेंट्री था। एक लड़की थी, जिसे दो साल हो गए, परंतु न उसके दाँत निकले और न वह घुटनों के बल लेट पाती थी। बच्चों की देख-रेख, साथ में घर का सारा काम करके वह काम पर जाती थी। इस चक्कर में वह अपने पर ध्यान देना ही भूल गई - *''औरत के शरीर में अब कुछ नहीं बचा था। चेहरे पर नाक निकल आयी थी और गालों की नुकीली हड्डियों ने चेहरे को त्रिभुज बना डाला था। अगर उसके शरीर को पकड़कर हिलाया जाता तो उसमें से जरुर खड़-खड़ की बूढ़ी आवाज निकलती। इवान ने, जब औरत कभी हँसती, इस लड़खड़ाहट को सुना था। औरत की आँखें पहले कुछ बड़ी थीं, लेकिन अब वे सिर्फ देखने के काम आतीं। औरत हमेशा सूखी लकड़ी की तरह चिटकती रहती और उसके जलने से धुएँ और तिनतियों से कमरा भरा रहता। उसकी छाती में अब कुछ नहीं था। दूध उतरता नहीं था। छोटी लड़की अपना भारी-भरकम सिर मुश्किल से उठाकर वहाँ कुछ खोजती फिर थककर और चिढ़कर जोर-जोर से रोने लगती।''*[3] इसके अलावा 'दत्तात्रेय के दु:ख' संग्रह की कहानी 'दिल्ली की दीवार' की नारी पात्र बबिया ने तो अपने पति की दूसरी औरत के साथ रखे हुए संबंध से समझौता कर लिया। बबिया की पति रामनिवास अपनी पत्नी के होते हुए भी सुषमा नाम की एक नाबालिग लड़की से बाह्य संबंध रखता है। घर में पत्नी को छोड़ किसी नाबालिग पर पैसे उड़ाना, उसके साथ यौन संबंध रखकर एक साथ दो औरतों की जिंदगी के साथ खिलवाड़ करता है।

बबिया यह सब जानकर भी चुप रह जाती है, क्योंकि बच्चे को लेकर वह जाएगी कहाँ और पालेगी कैसे। समाज में कई बार मजबूरी में औरतों को बहुत कुछ सहन करना पड़ता है। कभी बच्चों के लिए, कभी परिवार के लिए, कभी सम्मान की खातिर, क्योंकि भारतीय समाज व्यवस्था में इन सबका बोझ औरत के कंधों पर दे दिया है।

दूसरी तरफ 'मैंगोसिल' जैसी कहानी के माध्यम से उदय प्रकाश स्त्री शोषण के भयानक चित्र प्रस्तुत करते हैं। कहानी की नायिका 'शोभा' का पति रमाकांत कोई काम-धंधा नहीं करता था। वह दिन-भर दलाली के चक्कर में घूमता-फिरता और पुलिस के लिए फर्जी गवाही देने का काम करता था। उन्ही दिनों एक दरोगा की नजर शोभा पर पड़ी और वह रमाकांत के घर में आकर ही खाने-पीने लगा। पति के साथ पत्नी सुरक्षित महसूस करती है, लेकिन यहाँ विडंबना यह थी कि पति खुद अपनी पत्नी को दरोगा के सामने परोस देता है। तीन महीने तक वह स्त्री दरोगा के हवस का शिकार बनती रही। रमाकांत खुद दरोगा की जी-हुजूरी में लगा रहता और अपनी पत्नी शोभा को डाँट-डपटकर दरोगा की सेवा में लगाता। दरोगा शोभा के साथ आए दिन अमानवीय अत्याचार करता रहा - *''जिस दिन पार्टी होती और दरोगा के साथ उनके दोस्त भी आ जाते, वह रात शोभा के लिए अमानवीय यंत्रणा और पीड़ा की रात होती। नशे के बाद उन लोगों के भीतर बैठा जानवर जाग जाता और उस कमरे में उस जानवर के उत्पात और उसकी बनैली-वहशी हिंसा की शिकार बनती शोभा। वे लोग नशे में गाना गाते, शराब पीते, मछली के पकौड़ों की तारीफ करते, हँसते और शोभा को नोचते- खसोटते।''*[4] रमाकांत इन सबमें उनका उत्साह बढ़ाता था। एक बार ऐसी ही एक पार्टी में दरोगा के साथ एक पचपन-साठ साल का विल्डर आया था। वह रात शोभा की जिंदगी में नरक यातना लेकर आया। विल्डर ने उसके रेक्टम में बियर की बोतल घुसेड़ दी। दोनों ने मिलकर शोभा के साथ अप्राकृतिक कार्य किया, जिससे शोभा लहूलुहान होकर बेहोश हो गई। पूरी रात उसका शोषण होता रहा। ये दृश्य मोहल्ले के कुछ लोग देखते रहे। उनके लिए यह एक रोमांचक दृश्य बन गया था, जो रोज रात उन्हें मुफ्त में देखने को मिलता रहा।

इस घटना के कुछ दिनों बाद विल्डर फिर आया और उसने शोभा को 'सारिणी नारी कल्याण समिति' का अध्यक्ष बना दिया और कहा कि अब वह उसे घुमाने-फिराने ले जाया करेगा। विल्डर के साथ उसका नौकर चंद्रकांत भी शोभा के घर आता, परंतु वह गाड़ी में ही रहता। शोभा उसे वहीं पर खाना दे जाती। इस तरह से दोनों की जान-पहचान हुई। एक बार विल्डर शोभा को लेकर जलगाँव गया हुआ था। इस बार शोभा सोचकर गई थी कि या तो वह चंद्रकांत के साथ भाग जाएगी या दरोगा, विल्डर और रमाकांत के खाने में जहर मिला देगी। फिर शोभा कपड़े बदलने का बहाना करके एक झोले में अपना सारा सामान लेकर चंद्रकांत के साथ भाग गई। शोभा कैसे भी हो बस इस दलदल से भागना चाहती थी। इसीलिए मौका मिलते ही एक दिन वह चंद्रकांत से अपनी जांघे, पीठ, छाती, गला दिखाते हुए अपनी हालत बयान कर चुकी थी कि *''बाकि तो मैं अभी इधर नहीं दिखा सकती। कोई आ जाएगा। लेकिन जान लो, मैं मर जाऊँगी किसी रोज। ये लोग किधर को भी मेरी बॉडी फेंक देंगे। तुम मेरे को कैसे भी बचा लो। किधर को भी लेकर चलो। मैं तुम्हारे कपड़े धो दिया करूँगी। झाड़ू-पोछा कर दूँगी। रोज खाना बनाऊँगी और भांडे-बर्तन माँजूँगी। मेरा बनाया मटन तुम्हे पसंद है ना? मैं इससे भी अच्छा बनाऊँगी। ऐसा मसाला डालूँगी कि तुम्हारा पूरा घर महकेगा। तुम अगर अपने रूम के बाहर, ड्योढ़ी के पास भी मुझे सुलाओगे तो सो जाऊँगी। ओढ़ने-बिछाने के लिए भी कुछ मत देना। मैं ऐसे ही रह लूँगी। तुम्हारी कमाई जब नहीं होगी तो मैं तुम्हारे लिए कमाऊँगी।''*[5] शोभा ने यह तक कह डाला कि अगर वह चाहे तो विल्डर और दरोगा उसके साथ जो करता है वह भी करेगा तो वह कुछ नहीं बोलेगी। बस उसे इस नरक से बाहर निकलना था। शोभा का दर्द देखकर ही चंद्रकांत उसे जलगाँव से भगाकर ले गया था। शोभा का हिम्मत कर भाग जाना और एक नए सिरे से जिंदगी बिताना नारी मुक्ति की चाह को प्रकट करती है।

सदियों से शोषित, दमित स्त्री की स्थिति में ठीक ढंग से सुधार नहीं हो पाया है। खेतों में काम करने वाली, मजदूर, निम्न जाति कि असहाय स्त्रियों को जमींदार,

सेठ-साहूकार आदि अपने हवस का शिकार बनाते हैं। उदय प्रकाश की 'हीरालाल का भूत' इसका सुंदर उदाहरण है। यह कहानी पुरुष प्रधान समाज की देन है। इसमें स्त्री को सिर्फ उपभोग की वस्तु माना गया है। कहानी में हीरालाल की पत्नी फुलिया का गरीबी की वजह से शोषण होता है। आर्थिक स्थिति खराब होने की वजह से पति-पत्नी दोनों ठाकुर की हवेली में काम करते थे। इसी का लाभ ठाकुर ने उठाया। उदय प्रकाश लिखते हैं, *''हीरालाल शाम को ही ठाकुर साहब के घर का सौदा सामान लेने बाजार चला गया था। दोपहर के बर्तन झूठे पड़े थे, इसलिए उसे माँजने और बाकी काम निपटाने फुलिया वहाँ आई हुई थी। शाम सात बजे होंगे कि ठाकुर साहब ने फुलिया को बुलाया और उसे कागज बही खाता देकर कहा कि इसे वह पटवारी को दे आए। शायद ठाकुर और पटवारी में पहले ही बातचीत हो चुकी थी। फुलिया कमरे में पहुँची तो पटवारी ने उसे पकड़ लिया, साँकल भीतर से चढ़ा ली, रेडियों की आवाज खूब ऊँची कर दी और इस तरह हीरालाल की संपत्ति का आखिरी कोना, उसकी औरत की आबरू भी जाती रही। आधे घंटे बाद ठाकुर हरपाल सिंह उस कमरे में आ गए और फुलिया पटवारी के पलंग पर सिसकती रही। बाद में फुलिया को दोनों ने पाँच-पाँच रुपए दिए।''*[6] हीरालाल को यह बात मालूम होने पर भी उसने सिर्फ यह कहा कि कोई बात नहीं। दस रुपए की चादर खरीद लेंगे, क्योंकि दोनों को पता था अगले दिन मजूरी करने उन्हें ठाकुर की हवेली में जाना पड़ेगा। ऐसे में समाज के ऐसे लोगों के खिलाफ स्त्री में विरोध करने की हिम्मत नहीं होती, क्योंकि गरीब की मदद कौन करेगा?

उदय प्रकाश ने एक तरफ अपनी कहानियों में स्त्री शोषण, उनकी उपेक्षापूर्ण जीवन, योन शोषण जैसी समस्या को उकेरा है तो दूसरी तरफ स्त्री शिक्षा, स्वतंत्र विचार रखने वाली स्त्री पात्रों को भी दिखाया है। 'राम सजीवन की प्रेमकथा' की अनीता चांदीवाला है, जो हॉस्टल में रहकर पढ़ाई कर रही है और वह विविध मामलों में अपना स्वतंत्र विचार रखती है। या 'पीली छतरी वाली लड़की' की अंजली आदि पात्रों द्वारा उन्होंने स्त्री शिक्षा के लिए प्रोत्साहन दिया है। उदय प्रकाश ने गाँव के स्त्री पात्रों को पढ़ा-लिखा नहीं दिखाया है। उन्होंने स्त्रियों में शिक्षा के महत्व को दर्शाया है, क्योंकि अगर हीरालाल की पत्नी शिक्षित होती, अगर रामनिवास की पत्नी बबिया शिक्षित होती तो अपने साथ हुए अन्याय और शोषण के खिलाफ लड़ पाती। उन्होंने जीवन में शिक्षा के प्रयोजन को समझाया है।

**उपसंहार :**

उदय प्रकाश की कहानियाँ समसामयिक समाज को व्याख्यायित करने वाली कहानियाँ हैं। उनकी कहानियाँ वर्तमान समाज की विडंबनाओं को ठीक से समझने का अवसर प्रदान करती हैं। उदय प्रकाश एक संवेदनशील मन के अधिकारी व्यक्ति हैं। इसीलिए उन्होंने पाठक वर्ग को बड़ी ही बेबाकी से जहाँ समाज की वास्तविक स्वरूप से रूबरू कराया और वहीं उसका एक साकारात्मक समाधान भी दिखाया। उदय प्रकाश अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की हर छोटी-बड़ी समस्या को पाठकों के सामने लाए हैं। समाज का एक बड़ा हिस्सा महिलाओं का है। परंतु, स्त्री चाहे जितनी शिक्षित हो या आगे बढ़े, पर उनके ऊपर हो रहे अत्याचार न पहले कम था और न आज। उदय प्रकाश ने अपनी कई कहानियों में स्त्री- शोषण, स्त्री- उत्पीड़न के चित्र खींचे हैं और साथ ही स्वतंत्र विचार रखने वाली, शिक्षित और कर्मठ स्त्री पात्रों के चित्रण द्वारा कैसे एक स्त्री अपने लिए आवाज उठा सकती है या अपनी अस्तित्व को बचाए रख सकती है उस बात को भी समझाया है। ❑


**संदर्भ ग्रंथ सूची :**

1. उदय प्रकाश, मोहनदास, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 17.
2. उदय प्रकाश, तिरिछ, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 64
3. उदय प्रकाश, तिरिछ, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 76.
4. उदय प्रकाश, मैंगोसिल, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 78.
5. उदय प्रकाश, मैंगोसिल, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 84.
6. उदय प्रकाश, तिरिछ, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-138.

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

# भूमंडलीकरण और 21वीं सदी के हिंदी उपन्यास

## (स्त्री लेखन के विशेष संदर्भ में)

नेहा साव

शोधार्थी (पीएच.डी.), हिंदी विभाग
काजी नजरुल विश्वविद्यालय
आसनसोल (पश्चिम बंगाल)
08646843757
nehashaw468@gmail.com

**शोध सार :**

भूमंडलीकरण की पृष्ठभूमि गहन एवं विस्तृत रही है। यह एक वैश्विक व्यवस्था है, जिसके मूल में अर्थ, राजनीति और संस्कृति है। भूमंडलीकरण ने जीवन जगत के हर क्षेत्र, हर पहलू को गहराई से प्रभावित किया है। इस व्यवस्था ने संपूर्ण विश्व की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परंपरा में उथल-पुथल मचाया है। भूमंडलीकरण के कारण नैतिक मूल्य, मानवीय संवेदना तथा सामाजिक विश्वास के स्थान पर बाजारवादी मूल्य, भोगवादी संस्कृति और वर्चस्ववाद का प्रभाव बढ़ा है। इसके संचालन के पीछे नव उदारवादी शक्तियाँ कारगर हैं एवं इसका प्रत्यक्ष प्रभाव 21वीं सदी के साहित्य और संस्कृति पर भी पड़ा। इन्हीं विचारधाराओं और मूल्यों पर विशेष बल देते हुए भूमंडलीय प्रवृत्ति से युक्त 21वीं सदी की स्त्री लेखिकाओं ने अपने लेखन में दीर्घकालिक उपेक्षित वर्ग के प्रताड़ित होने के कारणों व निराकरण का साक्ष्य प्रस्तुत किया है।

**बीज शब्द :**

भूमंडलीकरण, उदारीकरण, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, स्त्री सशक्तिकरण, स्त्री लेखन, उपभोक्तावादी संस्कृति।

**मूल आलेख :**

भारत में वैश्विकरण की प्रक्रिया सन 1980 के दशक में उदारीकरण की प्रक्रिया के साथ शुरू हुई, किंतु इसमें तीव्रता सन 1991 में आर्थिक सुधार की प्रक्रियाओं को अपनाने के साथ आई। भारत द्वारा 'विश्व व्यापार संगठन' की सदस्यता स्वीकार करने के उपरांत भारतीय अर्थव्यवस्था का वैश्विकरण सुनिश्चित हो गया। इसके साथ ही विदेशी पूँजी, विदेशी प्रौद्योगिकी के आयात में पर्याप्त तेजी आई तथा इसके साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रवेश आरंभ हो गया। इन कंपनियों के भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रवेश के साथ ही भोगवादी प्रवृत्ति का चलन प्रारंभ हुआ। खुले बाजार की नीति, मुद्रा के द्रुत प्रवाह, इंटरनेट साधन-उपकरण तथा उपभोग करो और फेंको (यूच एंड थ्रो) की जीवन पद्धति ने मानवीय मूल्य, पारिवारिक समन्वय और भारतीय संस्कृति के क्षरण की चुनौतीपूर्ण स्थिति पैदा की। इस संदर्भ में कमल नयन काबरा की उक्ति है—

*''वास्तव में भूमंडलीकरण से मंशा सारी दुनिया को एक मंडी में तब्दील कर देना है; एक ऐसी दुनिया जो मंडी मात्र ही नहीं है, अपितु उसका संचालन भी मंडी की आतंरिक ताकतों द्वारा सामाजिक, वैश्किक जीवन के हर अन्य पक्ष को गौण और मंडी का पिछलग्गू बनाकर किया जाता है।''*[1] अत: हम कह सकते हैं कि 20वीं सदी के सातवें दशक से लेकर 21वीं सदी के द्वितीय दशक तक भूमंडलीकरण की अनवरत जारी व्यवस्था ने भारतीय संस्कृति, समाज, परिवेश और नैतिक जीवन-शैली में व्यापक परिवर्तन किया है।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण से हर देश व राष्ट्र की विचारधारा भिन्न है। जैसा कि पाश्चात्य संस्कृति में भोग अधिक महत्वपूर्ण है, जबकि भारतीय संस्कृति भौतिकता के स्थान पर आध्यात्मिकता को अधिक प्रश्रय देती है। इतना ही नहीं, पूँजी एवं बाजार के जटिल अंतरसंबंधों में मानव इस कदर उलझ गया है कि प्रतिरोध तथा विकल्प की अनवरत तलाश का कोई अंतिम छोर दिखाई नहीं देता है। इन पारिवारिक-सामाजिक विसंगतियों, अंतर्विरोधों, उपभोतावादी प्रवृत्तियों को स्त्री लेखिकाओं ने अपनी लेखनी में खुली अभिव्यक्ति दी है। इस संदर्भ में सुस्मित सौरभ का कथन है—*''इस सदी की महिलाओं ने अपने लेखन में जीवन और समाज के सभी रंगों को अपनी तूलिका रूपी लेखनी से बड़ी भावात्मकता और कलात्मकता से उकेरा है। इनमें कहीं वृद्ध समस्या है तो कहीं नारी मुक्ति की छटपटाहट, कहीं किसी बड़े परिवार की समस्या है तो कहीं आधुनिक जीवन का खोखलापन।''* [2] इस कथन के आलोक में यह कहा जा सकता है कि स्त्री लेखिकाओं ने जीवन से जुड़े जाने-अनजाने मुद्दों एवं पहलुओं को विकेंद्रण से केंद्र में लाने की पुरजोर कोशिश की है।

हिंदी साहित्य-जगत में लगभग पिछले दो दशकों से भूमंडलीकरण पर चर्चा हो रही है, जिसमें स्त्री-लेखन ने नए ढंग से रोशनी डालने का प्रयास किया है। हिंदी कथा-साहित्य में नई स्त्री-चेतना का उदय वैश्विकरण से प्रभावित है। 21वीं सदी में नव जीवनाचारों को आधुनिक समाज में स्थान दिया गया। स्त्री लेखिकाओं ने भूमंडलीकरण और उससे उत्पन्न भोगवादी संस्कृति के सकारात्मक और नकारात्मक पक्षों को बखूबी अपने कलम से जीवंतता प्रदान की है। वैश्विक और भारतीय परिदृश्य में स्त्रीवाद के उत्थान के साथ ही स्त्री के तेजस्वी कलम ने अपने 'स्व' को पूरी निजता के साथ पद्य एवं गद्य साहित्य में ऊर्जस्वी ढंग से अभिव्यक्ति दी है। इस परिप्रेक्ष्य में पुष्पपाल सिंह की उक्ति उल्लेखनीय है—*''स्त्री की पक्षधरता में, महिला सशक्तिकरण की दिशा में यह स्वागत योग्य प्रवृत्ति है कि स्त्री-प्रश्नों पर इतनी सजगता से सोचा गया।... स्त्री-विमर्श संबंधी ग्रंथों, विशेषत: महिला साहित्यकारों की पुस्तकों को देखकर यह सहज ही स्पष्ट होता है कि 21वीं शती की कथाकार एक पूरी वैचारिक पृष्ठभूमि और तैयारी के साथ उपन्यास-लेखन में प्रवृत्त हुई हैं।''* [3] इस दृष्टि से वर्तमान स्त्री कथाकारों में अलका सरावगी से लेकर ममता कालिया, कमल कुमार, मैत्रेयी पुष्पा, लता शर्मा, रजनी गुप्त, प्रभा खेतान, मृदुला गर्ग, अनामिका, मधु कांकरिया और आशा प्रभात आदि की रचनाएँ विशेष रूप से दृष्टव्य हैं।

अलका सरावगी ने 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास का ताना-बाना समसामयिक कॉरपोरेट जगत की कथावस्तु को आधार बनाकर बुना है। यह महानगरीय जीवन की मानसिकता और धोखाधड़ी को प्रस्तुत करता है। उपन्यास में कॉरपोरेट जगत की चकाचौंध के बीच देश की एक तिहाई जनता को 'कुत्ते' की तरह जिंदगी बिताते हुए दिखाया है, जो देश की सबसे बड़ी विडंबना है। इन कॉरपोरेट नुमाइंदों का मानना है कि अंतत: इस विकास का लाभ उस जनता को ही पहुँचेगा। मार्केटिंग के उच्च पद पर आसीन एग्जीक्यूटिव को लेखिका ने प्रमुख चरित्रों के रूप में प्रस्तुत कर उपन्यास के विषय-वस्तु को उपभोक्तावादी व्यवस्था से जोड़ने का प्रयास किया है। के.वी., गुरुचरण उर्फ गुरु और भट्ट ऐसे ही चरित्र हैं, जो भूमंडलीकरण के इस समय में ग्लोबल सपने बेचते हैं। इस संदर्भ में भट्ट का कथन है—*''बिजनेसमैन के पास बड़े से और बड़े होते जाने का ग्लोबल सपना है, दलाल का दूसरों की मेहनत में हिस्सा पाते रहने का सपना है, नेता का स्विस बैंक में अकाउंट खोलने का सपना है,*

*अफसर का घूस की रकम सपरिवार शॉपिंग मॉल में खर्च करने का सपना है। तुम अखबार पढ़ते हो या नहीं? गाँवों के पास सपना है शहर बनने का। शहरों के पास महानगर बनने का। महानगरों के पास मेगापोलिस बनने का।''*[4] दरअसल, ये सपने मध्यवर्गीय समाज पर हावी हो रहे हैं और देश की निम्न मध्यमवर्गीय जनता का जीवन इन सपनों को प्राप्त करने की ख्वाहिशों में समाप्त हो रहा है। 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास कॉरपोरेट जगत के चरित्रों को अत्यंत सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत करता है। साथ ही दांपत्य-प्रेम और विवाह संस्था के सत्य को भी उजागर करता है, जिसमें मूल जद्दोजहद स्त्री के सपनों और अभिलाषाओं को विराम लगाना है लेकिन इसका विरोध कर लेखिका ने स्वच्छंद प्रेम की पैरवी करते हुए परंपरागत वैवाहिक संस्था के लिजलिजेपन की खिल्ली उड़ाई है। उनके अनुसार परिवार रूपी संस्था औरत को उसके अधिकार से वंचित करने के लिए गढ़े गए हैं। इस प्रकार यह उपन्यास एक तरफ पाठक के सामने 21वीं सदी के स्त्रियों के नवीन कथ्य को सामने लाता है, वहीं दूसरी तरफ बाजारवाद के चपेट में फँसे व्यक्ति के वस्तुकरण को भी स्पष्ट करता है।

हिंदी उपन्यासों में 'दौड़' ममता कालिया की ऐसी कृति है, जो अपने छोटे कलेवर में हमारे समकक्ष कुछ मजबूत सवालों और समस्याओं को उपस्थित करता है। भूमंडलीकरण, उदारीकरण और निजीकरण ने 21वीं सदी में युवाओं के सामने सपनों की एक अलग व नितांत नई दुनिया का द्वार खोल दिया है, जिसके परिणामस्वरूप नवीन रोजगार और नौकरियाँ उपलब्ध हुई हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने रोजगार के नए अवसर प्रदान करने के साथ-साथ बाजार तंत्र और उपभोक्तावादी संस्कृति को जीवन-शैली का हिस्सा बना दिया है। युवाओं ने इस दौर में नए तंत्र पर सवार होकर सफलता तो खूब अर्जित की है पर मानवीय संबंध और आपसी रिश्ते इनसे कही छूटकर बहुत दूर चले गए हैं। पवन, सघन, राकेश, रेखा, स्टेला और अभिषेक वैश्विकरण के दौर में बहुराष्ट्रीय कंपनियों से जुड़े पात्र हैं, जो सफलता की होड़ में पारिवारिक संबंधों और माता-पिता की अनदेखी करते हैं। इस संबंध में पवन का कथन है —*''पापा मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, करियर है। अब कलकत्ते को ही लीजिए। कहने को महानगर है, पर मार्केटिंग की दृष्टि से एकदम लद्धड़। कलकते में प्रोड्यूसर्स का मार्केट है, कंज्यूमर्स का नहीं। मैं ऐसे शहर में रहना चाहता हूँ जहाँ कल्चर हो न हो, कंज्यूमर कल्चर जरूर हो। मुझे संस्कृति नहीं उपभोक्ता संस्कृति चाहिए, तभी मैं कामयाब रहूँगा।''*[5] यह भोगवादी मानसिकता ऐसी संस्कृति तैयार कर रही है, जो भारतीय संस्कृति के समक्ष एक चुनौती खड़ी कर रही है। आज की युवा पीढ़ी के लिए सही-गलत, नैतिक-अनैतिक, उचित-अनुचित के मानदंड इस उपभोक्तावादी संस्कृति एवं ग्लैमर की दुनिया में मूल्यहीन नजर आ रहे हैं।

इसी फेहरिस्त में कमल कुमार रचित 'पासवर्ड' भूमंडलीकरण के दौर की एक अलग तस्वीर उजागर करती है। वैश्विकरण के दौर में सूचना-क्रांति का संवाहक कंप्यूटर है। कंप्यूटर ने आज भूमंडल का भूगोल-खगोल बदल कर रख दिया है। माउस द्वारा परिचालित इस दुनिया का चित्रण हिंदी उपन्यास में तरह-तरह से हुआ है। क्षणों में पूँजी का एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानांतरण, मिनटों में करोड़ों-करोड़ों की खरीद-बिक्री के आदेश पूरे पृथ्वी मंडल में कहीं भी लिए-दिए जा सकते हैं। लेखिका ने उपन्यास में ई-मेल संदेशों की कथा युक्ति द्वारा अधिकांश जगहों पर चल रही नारी जनित समस्याओं का सशक्त चित्रण किया है। अमेरिका से लेकर बैंकॉक और सिंगापुर तक धड़ल्ले से चलने वाले देह व्यापार पर लेखिका ने कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। इस बढ़ती भौतिकतावादी जीवन-शैली में देह-व्यापार एक जटिल तंत्र बनता जा रहा है, जिसमें प्रौद्योगिकी के विकास ने तीव्रता पैदा की है। भूमंडलीय जगत में उन्मुक्त बाजार की नीति ने स्त्री देह और सौंदर्य को अधिक बिकाऊ बनाया है।

वर्तमान स्त्री के कटु यथार्थ की मार्मिक साहित्यिक प्रतिक्रिया के रूप में लता शर्मा के उपन्यास 'सही नाप के जूते' को देखा जा सकता है। भूमंडलीकरण के दौर में हर वस्तु बिकाऊ है, जहाँ स्त्री भी एक कमोडिटी बन गई है। आज का बाजार पूर्णत: मुक्त है, जहाँ किसी वस्तु को बेचने हेतु लोग किसी भी स्तर तक गिरने को तैयार हैं।

उपभोक्तावादी संस्कृति ने एक तरफ मनुष्य की महत्वाकांक्षाओं को बढ़ा दिया है, वहीं सौंदर्य और सफलता के सबसे ऊँचे पायदान पर पहुँचने की होड़ में स्त्री इस मुक्त बाजार में खुद को बेचने के लिए भी मजबूर हो रही है। उपन्यास के फ्लैप पर उद्धृत ये पंक्तियाँ महत्वपूर्ण हैं— *''बाजार देखते-देखते, बाजार हो जाने की यह गाथा सिर्फ मनोरंजन भर नहीं है। लता शर्मा का स्त्री-विमर्शकार यहाँ कथाकार में बखूबी प्रवेश करता है। बताता है कि अस्सी प्रतिशत लाभांश पाने की महत्वाकांक्षा का अर्थ क्या है यदि विवेक को ताक पर रख दिया जाए।...रोशनी की रंगीन चमक में चहकते चेहरे की दास्तान भर नहीं है यह, यहाँ अकेली उदासी में टूटती साँसों की गमजदा आवाज भी सुनी जा सकती है।''*[6] अत: स्त्री सौंदर्य तथा शोषण के बिसात पर रचित यह उपन्यास उर्मी नामक एक लड़की की है, जिसे उसकी माँ अपनी उच्च महत्वाकांक्षा की मोहांधता में उर्वशी बना डालती है। इस उपन्यास में लेखिका ने सौंदर्य व्यापार, ब्यूटी कल्चर एवं स्त्री देह से महत्वाकांक्षा पूर्ति जैसी चिंताओं को सामने रखने का उपक्रम किया है। दरअसल, वैश्विकरण के दौर में स्त्री मुक्ति के सवाल पर 'अर्लि सक्सेस' का प्रलोभन बाजार में फैले वर्चुअल और आभासी जीवन का छद्म उजागर करती है।

21वीं सदी के साहित्यकारों में मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास 'फरिश्ते निकले' उनकी सृजनात्मकता के प्रौढ़तम रूप से साक्षात्कार कराती है। उपन्यास का फलक स्त्री की देह और मन रूपी देहरी को लाँघते हुए समाज के उन तमाम संस्कारों तक विस्तृत है, जहाँ स्त्री-शोषण के साथ-साथ समाज की गलीज व्यवस्था में जीने को बाध्य डाकू, खानाबदोश जनजाति और किसानों के शोषण की बदलती मुहिम तक अपनी आशियाँ फैलाती है। इसके कलेवर में स्त्री संघर्ष के साथ-साथ वर्तमान समय में पूँजीवादी व्यवस्था में बिचौलियों और दलालों का आर्थिक रूप से तंग लोगों को लूटने का नया स्कीम देखने को मिलता है। आज शहर में इन बिचौलियों और दलालों का उफान आया है, जो रामरतन जैसे न जाने कितने ही बेबस लोगों का लाभ उठाने से बाज नहीं आते। उनके लिए इंसान-इंसानियत-ईमानदारी और सहानुभूति से बढ़कर है- मुनाफा। आज शहरी सभ्यता के अंतर्गत मॉल, होटल और रेस्तराँ की लाइन लगी है, जो ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए भारतीय संस्कृति और परंपरा को नुमाइश का बड़ा हथियार बना रहे हैं। शहरी औद्योगीकरण एवं उसकी आबोहवा का प्रभाव शहरी जीवन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि गाँव में भी यह विष के समान तीव्र गति से फैलने लगा है, जिसके कारण खेती के अटूट हथियार हल-फावड़े की जगह ट्रैक्टरों ने ले लिया। मृणाल पांडे ने 'स्त्री और सदी का अवसान' नामक आलेख में अपने विचारों को इस प्रकार प्रस्तुत किया है— *''ज्यों-ज्यों उद्योग जगत में पढ़े-लिखे हुनरमंदों का कब्जा और कंप्यूटरीकृत ज्ञान का संरक्षण बढ़ा है... इस बात के भी ठोस प्रमाण है कि कृषि तकनीकी प्रधान होती गई है, बुनकरी तथा निर्माणकार्यों में भी पारंपरिक किस्म के हस्तलाघव की जरूरतें घटी हैं और मशीनों का महत्व बढ़ा है।''* [7] यह उपन्यास भूमंडलीकरण के दौर में उन समस्याओं को आलोकित करता है, जिससे भारत की अधिकांश आबादी, किसान, मजदूर और स्त्रियाँ ताल्लुक रखती हैं।

21वीं सदी के प्रमुख स्त्री उपन्यासकारों में आशा प्रभात एक महत्वपूर्ण एवं बहुमुखी प्रतिभा संपन्न रचनाकारों में से एक हैं। वर्तमान परिदृश्य में यदि आशा जी के लेखन जगत को खंगाला जाए तो स्पष्ट होता है कि उनके पास सामाजिक विसंगतियों को तोड़ने तथा यथार्थ को गहराई से आकार देने की क्षमता है। अभिव्यक्ति के इस महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में आशा प्रभात द्वारा रचित आत्मकथात्मक उपन्यास 'मैं जनक नंदिनी' को देखा जा सकता है। यह उपन्यास जनक नंदिनी सीता को आधुनिक स्त्रियों के लिए नए आदर्श के साथ प्रस्तुत करता है, जो केवल कर्तव्य, त्याग और समर्पण का संदेश न देकर अपने चरित्र पर लांछन लगाने वाले पति राम के परित्याग का माद्दा रखती है। पौराणिक युग से लेकर 21वीं सदी तक सीता का चरित्र भारतीय स्त्रियों के लिए अनुकरणीय रहा है, किंतु लेखिका ने वर्तमान दौर में अनुकरण के नजरिए में अंतर लाने का प्रयत्न किया है। आशा प्रभात के शब्दों में— *''क्या सीता के पास अपने प्रति किये जा रहे अविचार के प्रति प्रतिरोध के स्वर का अभाव था? अपने*

*जीवन-जनित अभीष्ट अपने कर्मों में निहित कर जीती सीता क्या मात्र पाषाण प्रतिमा थीं?...क्या हर स्थिति-परिस्थिति को उन्होंने सहज स्वीकार लिया था, शिरोधार्य कर लिया था बिना प्रतिवाद किये? ऐसे अनेक प्रश्न सदियों से प्रबुद्ध जन मानस में उद्वेलित हैं।''*[8] सीता के जीवन-चरित्र के स्याह पड़े इस पक्ष पर लेखिका रोशनी बिखेरते हुए स्वावलंबी और आत्मसम्मान पूर्ण जीवन जीने के लिए उनके चरित्र को अनुकरणीय बनाती हैं, जो 21वीं सदी के इस वैश्विक युग में अतिआवश्यक है। बहरहाल, इस उपन्यास की कथावस्तु परंपरागत होते हुए भी वैचारिक धरातल पर आधुनिकता से लैस है। अत: आशा प्रभात की कृति 'पौराणिक स्त्रियों के समाज' को नहीं, अपितु 'आधुनिक समाज में पौराणिक स्त्रियों' की अलौकिक प्रस्तुति है। इस तरह उपन्यासकार ने 21वीं सदी में मिथकीय पात्र सीता के चरित्र को नए दृष्टिकोण से देखने का आग्रह किया है।

**निष्कर्ष :**

उपरोक्त आलोचना के आधार पर कहा जा सकता है कि बाजारवाद ने नई पीढ़ी को नई परवरिश दी है। पूँजीवाद की ओर अग्रसर होते हुए तीसरी दुनिया के देशों में स्त्री की जो पहचान उभरती है, वह पश्चिमी नकल भर नहीं है। निश्चित ही अंतर्राष्ट्रीय बाजार में स्त्रियों की भागीदारिता बढ़ी है। आधुनिक युग में हिस्सेदारी कर रही स्त्री को एक सीमा तक अपना आलोचनात्मक रवैया बनाने में सफलता मिली है। इस ड्रोन-युग और हाई-टेक की संस्कृति में जी रही नई पीढ़ी की आँखें आसमान पर टिकी हैं। हैरी पॉटर और साइंस एनसाइक्लोपीडिया पढ़कर नई पीढ़ी बुद्धिजीवी हो रही है। उपभोक्तावादी समाज और भौतिकवादी प्रवृत्ति ने साहित्य जगत में लेखन की परंपरा, वैचारिकता पर तर्क, विज्ञान, उपभोग और पूँजी की छाप को उजागर किया है। यह भूमंडलीकरण का प्रभाव है कि आधुनिक नस्लें किसी 'टैलेंट सर्च परीक्षा' की तैयारी में तल्लीन, पिकनिक-पार्टी में मशगूल, पिज्जा-बर्गर और कोकोकोला का लुफ्त उठाते हुए एक यंत्र चालित जीवन जी रहे हैं, जहाँ धीरे-धीरे हम एक रोबोटिक पीढ़ी को बढ़ावा दे रहे हैं। इस संक्रमणकालीन युग में 21वीं सदी के स्त्री साहित्यकारों ने आधुनिक जीवन-शैली की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए स्त्री मुक्ति के बहुआयामी पक्षों एवं प्रश्नों को गहराई से अपने लेखन में तरजीह दी है। ❑


**संदर्भ सूची :**

1. काबरा, कमल नयन, भूमंडलीकरण विचार, नीतियाँ और विकल्प, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2005, पृ. 18.
2. https://www.apnimaati.com/2016/11/blog-post_54.html?m=1
3. सिंह, पुष्पपाल, 21वीं शती का हिंदी उपन्यास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृ. 162-163.
4. सरावगी, अलका, एक ब्रेक के बाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2010, पृ. 214.
5. कालिया, ममता, दौड़, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2000, पृ. 66.
6. https://pustak.org/index.php/books/bookdetails/7938/Sahi-Nap-Ke-Jute
7. पांडे, मृणाल, 'स्त्री और सदी का अवसान', अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य, राजेंद्र यादव, अर्चना वर्मा (सं.), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2001, पृ. 279.
8. प्रभात, आशा, मैं जनक नंदिनी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2017, पृ. 9.

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

# मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में नारी चेतना

## ('साकेत' महाकाव्य के विशेष संदर्भ में)

चारुलता देवी

अंशकालीन प्रवक्ता, हिंदी विभाग,
रहा महाविद्यालय, नगाँव (असम)
7638889509
nehashaw468@gmail.com

**शोध सार :**

साधारणत: व्यक्ति के विचारों की वाहक दशा चेतना कहलाती है। मानव मस्तिष्क उस चेतना का मूल स्थान है। इस चेतना के अन्तर्गत वे सभी बातें आती हैं, जिसके द्वारा मनुष्य सोचता, समझता और कार्य करता है। इसी चेतना की प्रेरणा से ही मनुष्य अपने तथा समाज के लिए कुछ करने की ओर प्रवृत्त होता है। इस प्रकार चेतना का अर्थ हुआ अधिकारों एवं कर्तव्यों की पूर्ण समझ रखना। सदियों से भारतीय नारी इस चेतना रूपी समझदारी को ईमानदारी से निभाती आ रही है। भारतीय संस्कृति में नारी का स्थान सदैव सर्वोच्च माना गया है। प्राचीन भारतीय आचार्यों ने 'मातृ देवो भव:, पितृ देवो भव:, आचार्य देवो भव: कहकर यही समझाया कि माता का स्थान गुरु और पिता से पहले है। हिंदू धर्म की मान्यताओं के अनुसार स्त्री को अर्धांगिनी के रूप में स्वीकार किया गया है, परंतु पुरुष की जन्मदात्री और शक्ति होने के कारण स्त्री का स्थान पुरुष से श्रेष्ठ माना गया है। सिर्फ पुरुष के जीवन के संदर्भ में ही नहीं बल्कि पूरे समाज के लिए नारी का अवदान अतुलनीय है, क्योंकि नारी सृष्टि का मूलाधार है। घर-परिवार से लेकर समाज एवं राष्ट्रनिर्माण तक नारी का प्रेरणात्मक रूप एवं सक्षम स्थिति (चेतना) निर्विवाद रूप से अहम भूमिका अदा करती है। पौराणिक युग से लेकर आज तक नारी की यही चेतना कभी राजरानी सीता, कभी सती जयमती, कभी राजमाता जीजाबाई और कभी त्यागमयी उर्मिला आदि अनेक रूपों में रंगती हुई पुरुषों को कदम-कदम पर प्रोत्साहित करता आ रही है। उसी के परिणामस्वरूप असम के महान संत श्रीमंत शंकरदेव को यह कहना पड़ा कि -

'जानकीर हेतु, बांधिलाहा सेतु
दहिला लंका नगरी,
रावणर माथा, कातिलाहा नाथ
आनिला सीता उद्धारि।' [1]

आज स्त्री अपनी क्षमता एवं चेतना के कारण कोमलांगी होने के बावजूद भी पुरुषों के क्षेत्रों में भी सामाजिक मानदण्डों के अनुरूप अपनी प्रतिभा की जीवंत परिचय दे रही है।

**बीज शब्द :**

चेतना, नारी, आदर्श, त्याग, वीरांगना।

**अध्ययन का उद्देश्य :**

1. गुप्त जी के साकेत महाकाव्य में निहित नारी चेतना को समाज के समक्ष लाकर नारी की अस्मिता, उसका त्याग, तपस्या, कर्तव्यनिष्ठा आदि अनेकानेक पक्षों को उजागर करते हुए मानवतावाद के विकास हेतु उसका अध्ययन करना मेरे इस शोध-पत्र का विशेष उद्देश्य रहा है।

2. नारी को पुरुष की मूल उद्बोधिका शक्ति के रुप में दिखाना भी मेरा उद्देश्य है।

3. यह दिखाना भी मेरे इस शोध-पत्र का उद्देश्य है कि सामूहिकता के कल्याण तथा व्यापक राष्ट्रीयता की रक्षा हेतु वैयक्तिक स्वार्थ की संकीर्णताओं से बाहर निकलना अति आवश्यक है।

4. स्त्री-पुरुष दोनों में शारीरिक रूप से भले ही अंतर हो, परंतु वैचारिकता के तौर पर स्त्री को पुरुषों से कम सक्षम नहीं समझनी चाहिए, यह दिखाना भी मेरे इस शोध-पत्र का अन्य एक उद्देश्य है।

5. साकेत का मुख्य नारी चरित्र उर्मिला, कैकेयी और सीता के पावन आदर्शमय चरित्रों के नारी चेतना के विविध पहलुओं को दिखाना मेरे इस शोध-पत्र का विशेष उद्देश्य है।

**शोध-पद्धति :**

प्रस्तुत शोध अध्यन में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है।

**मूल आलेख :**

**साकेत के प्रमुख स्त्री-पात्रों में नारी चेतना :**

गुप्त जी के साकेत महाकाव्य का प्रत्येक नारी पात्र अपने आप में महत्वपूर्ण व्यक्तित्व के अधिकारिनी है। तत्कालीन युगीन चेतना से प्रवाहित होती हुई गुप्त जी की नारी पात्र आधुनिक चेतना तक स्वयं को सशक्त रूप में मुखरित करनेवाली है। उनके साकेत महाकाव्य की नारी पात्रों की चेतना को निम्नांकित प्रमुख पात्रों के माध्यम से दर्शाया जा सकता है।

**उर्मिला :**

साकेत की प्रकृत गरिमा उर्मिला के चरित्र से झलकती है। इसके प्रथम सर्ग में ही गुप्त जी ने उर्मिला को धरती पर स्वर्ग के सुमन के समान माना है। कवि के अनुसार कोई अलौकिक शक्ति पृथ्वी पर शील और आदर्श स्थापित करने के लिए उर्मिला के रूप में अवतरित हुई है। गुप्त जी के शब्दों में -

'स्वर्ग का यह सुमन धरती पर खिला,
नाम है इसका उचित ही 'उर्मिला'।
शील-सौरभ की तरंग आ रही,
दिव्य-भाव भावाब्धि में है ला रही।' [2]

युगानुकूल नारी जागरण का संदेश ही गुप्त जी के काव्य का मूलाधार है। उर्मिला के माध्यम से उन्होंने नारी में साहस, त्याग, सेवा भावना, स्वार्थ-निरपेक्षता, उदारता, परोपकार आदि के साथ पुरुष के प्रति समर्पण भावापन्न मूल्यों की प्रतिष्ठा की है। उर्मिला अपने पति लक्ष्मण को परोपकारी जीवन की प्रेरणा प्रदान करती हुई कहती है -

'करना न सोच मेरा इससे,
व्रत में कुछ विध्न पड़े जिससे।
आने का दिन है दूर सही,
पर है मुझको अवलम्ब राही।' [3]

राम वन गमन के समय उर्मिला अपने पति लक्ष्मण को संकट के समय राम का साथ देने की प्रेरणा प्रदान करती हुई कहती है -

'हे नाथ, साथ दो भ्राता का,
बल रहे मुझे उस त्राता का।' [4]

वर्तमान समय एवं समाज में परिवार के बीच सास-बहू के संबंधों में कड़वाहट दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। परन्तु साकेत की उर्मिला विरहजनित अवस्था में भी वंश-मर्यादा तथा सास-ससुर के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का पूर्ण ख्याल रखती है। अपने वियोगकालीन स्थिति के केंद्रस्वरूपा कैकेयी के प्रति भी उसके मन में द्वेष की भावना लेशमात्र भी नहीं है। राजा दशरथ की मृत्यु पर सबसे ज्यादा दुख प्रकट करती हुई

उर्मिला कैकेयी से ही पूछती है
'माँ, कहाँ गये वे पूज्य पिता?
करके पुकार यो शोक-सिता।' [5]

भारतीय आर्य नारी किसी भी विषम परिस्थितियों से लोहा लेने की क्षमता रखने वाली होती है। उर्मिला भी इसका अपवाद नहीं। गुप्त जी के शब्दों में –

'पथ देख रही तरंगिनी,
त्रिपथा-सी वह संग-रंगिनी।' [6]

सिर्फ यही नहीं बल्कि साकेतवासी जब लंका पर चढ़ाई करने के लिए तैयार होते है तो उर्मिला वीरांगना वेश में शतुघ्न के समीप खड़ी हो जाती है। लक्ष्मण के प्रति उर्मिला का प्रेम आधुनिक युग के स्त्री-पुरुष की तरह शारीरिक न होकर आत्मिक, पवित्र और शाश्वत है। अपने पति लक्ष्मण के दुखों के दिन में उसका साथ न दे पाने के कारण वह खुद को अभागिनी मानते हुए पश्चाताप करती है। वनवास की अवधि के बाद जब लक्ष्मण अयोद्धा आते है, तब तक उर्मिला का यौवन समाप्ति की ओर है। फिर भी उर्मिला अपने पति एवं परिवार के साथ दासी बनकर रहने में ही आत्मगौरव मानती है। वह सखी से कहती है –

'अब तो केवल रहूँ सहा स्वामी की दासी,
मैं शासन को नहीं, आज सेवा की प्यासी।' [7]

उर्मिला के रूप में एक भारतीय संस्कारी नारी के लिए यह कम गौरव की बात नहीं कि वह दास्य-भाव में भी पत्नी-धर्म का निर्वाह करना चाहती/जानती है। इस प्रकार उर्मिला ने अपनी चेतना से भारतीय आदर्शमय नारी की एक उदान्त स्वरूप मुखरित किया है।

**कैकेयी :**

कवियों और जनसाधारण के द्वारा सबसे अवहेलित नारी पात्र कैकेयी को गुप्त जी ने राजमहिषी, प्रिया, स्वामिनी माता, विमाता आदि अनेक पक्षों में अभिनव दिशा प्रदान की है। गुप्त जी के अनुसार कैकेयी उदार वात्सल्य की प्रतिमूर्ति थी, क्योंकि मंथरा के आविर्भाव से पहले कैकेयी के मन में राम और भरत के प्रति कोई भेद नहीं थे। वे मंथरा से कहती है –

'नहीं क्या मेरा, बेटा राम ?
कहा रानी ने पाकर खेद'
भला दोनों में है क्या भेद ?' [8]

पुत्र चाहे जैसा भी क्यों न हो, परंतु संसार में माता का, पुत्र के प्रति हमेशा स्वार्थपूर्ण भावना रहता है। महाभारत की गांधारी इसका जीता-जागता सबूत है। पांडवों के उत्थान और कौरवों के पतन पर गांधारी ने स्वार्थ-प्रेरित होकर श्रीकृष्ण को अभिशाप दे दिया था–

'प्रभु हो
पर मारे जाओगे पशुओं की तरह।' [9]

परंतु इसमें उल्लेख्य बात यह है कि गांधारी ने इसके लिए कभी पश्चाताप नहीं किया। लेकिन कैकेयी इसका अपवाद है। क्योंकि उसके मन में राजनीतिक स्वार्थ का आग्रह उतना प्रबल नहीं है, जितना भरत के हित सुखद भविष्य का। माता के रूप में तो वह भरत से अधिक राम के प्रति समर्पित थे। साधारणत: नारी की एक विशेषता यह है कि वह चाहे जितना भी अमर्यादातीत कार्य क्यों न करे, अंत में वह उसके कारण आत्मग्लानि एवं शोभ के साथ पश्चाताप भी करती है। कैकेयी भी इससे अलगाव नहीं। वह राम को वन से लौटा लाने की योजना में सक्रिय भाग लेती है। उस समय उसे ऐसा लगता है मानो कैकेयी का प्रायचित्त भरत के कठोर वाणी से तीव्रतर होता हुआ चित्रकूट में जाकर पूर्ण हो जाता है। डॉ. नगेंद्र के शब्दों में –

'भरत की विमुखता अंत में उसके मोहांधकार को दूर कर देती है और चित्रकूट में
हम उसकी ग्लानि को शत-सहस्त्र धाराओं में बहते हुए पाते है।' [10]

कैकेयी चित्रकूट-सभा में राम से आग्रह करती हुई कहती है –

'यह सच है तो फिर लौट चलो घर भैया,
अपराधिन मैं हूँ तात, तुम्हारी मैया।' [11]

गुप्त जी ने कैकेयी की वीरांगना रूप का भी बड़ा तेजस्वी वर्णन किया है। राम-रावण युद्ध का

समाचार सुनकर कैकेयी अधीर हो उठती है और राम की सहायता हेतु वह भरत के साथ स्वयं जाना चाहती है –

'भरत जायेगा प्रथम और यह मैं जाँऊंगी,
ऐसा अवसर भला दूसरा कब पाँऊंगी ?' [12]

इस प्रकार कवि गुप्त जी ने परंपरागत लोक दृष्टि की लीक से हटकर कैकेयी को एक सहृदया माता, सहज-

सरज नारी, वात्सल्यमयी तथा एक वीर क्षत्राणी आदि रूपों में हमारे समक्ष उपस्थित किया है।

**सीता :**

आधुनिक युग नारी जागरण एवं नारी चेतना का युग है। ऐसी स्वातंत्र एवं स्वावलंबीता की झलक साकेत की सीता में मिलती है। सौंदर्यमयी एवं कोमलांगी होने के बावजूद भी वह स्वावलंबी जीवन के संबंध में अपना विचार इस प्रकार व्यक्त करती है –

'औरों के हाथों यहाँ नहीं पहती हूँ,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।' [13]

राजनंदिनी सीता वन-पर्वत में भील बालाओं को उद्देश्य करके उसे कर्मवाद का संदेश देते हुए कहती है –

'औ भोली कोल-किरात-भिल्ल-बालाओं,
मुझकों कुछ करने योग्य काम बतलाओ।' [14]

सिर्फ यही नहीं, बल्कि सीता जन-सामान्य की उपकारक चेतना शक्ति का प्रतीक भी है। वनवास के अवसर पर उसने भील-कन्याओं को उर्धनग्न स्थिति में देखकर वह स्वयं सूत कातने तथा वस्त्र बुनने की उनकी मददगार बनती है। वनवास की अवधि की कष्टमय स्थिति में भी सीता अपना क्षत्राणी धर्म को कभी नहीं भूलती। राम के द्वारा मृग-मारिछ का पीछा करने तथा राम की कातर स्वर सुनने पर अपने पति की रक्षार्थ वह सिंहनी बन जाती है और लक्ष्मण के समक्ष दहाड़ते हुए कहती है –

'क्या क्षत्रिया नहीं मैं बोलो,
पर तुम कैसे क्षत्रिय हो?' [15]

जब रावण सीता को अपने शारीरिक बल द्वारा लंका की रानी बनाने की बात प्रकट करता है, तब सीता अपनी असहाय अवस्था में भी रावण को अपने सतीत्व एवं अद्‌भूत साहस के बल से प्रभावित करती है। सीता उन्हें फटकारते हुए कहती है –

'मैं वह सीता हूँ, सुन रावन,
जिसका खुला स्वयंवर था।
वर लाया क्यों मुझें न पामर,
यदि यथार्थ ही तू नर था?' [16]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि गुप्त जी की सीता सतीत्व और आर्य नारी की मर्यादा को व्यापक चेतना प्रदान करनेवाली है। साथ में वह गांधीवादी विचारों के पोषक एवं आदर्श नारी की प्रतीक है। उपलब्धियाँ – मेरे इस लेख से मुझें निम्नलिखित उपलब्धियाँ प्राप्त हुई हैं –

1. इससे नारी में नवीन संजीवनी शक्ति संचार हो सकती है।

2. इसके द्वारा नारी चेतना अपनी समग्रता के साथ भारतीयता तथा नैतिकता के प्रति समर्पित

होती हुई समाज में मानवीय मूल्यों की रक्षक बनने की संभावनाएँ बनी रहती है।

3. यह नि:संदेह कहा जा सकता है कि गुप्त जी के साकेत के नारी पात्र (उर्मिला, कैकेयी, सीता आदि) समकालीन संदर्भों के जीवंत दस्तावेज हैं।

4. नारी कमजोर और शक्तिहीन नहीं है बल्कि नारी पूरी शक्ति के साथ जीवन संघर्ष करने को तत्पर है।

5. इसमें विविध रूपों में नारी के व्यक्तित्व, नये आदर्श एवं मूल्यों का उद्घोष हुआ है।

6. जिस प्रकार आत्मा अमर है, ठीक उसी प्रकार आत्मिक-प्रेम (लक्ष्मण-उर्मिला) भी अमर, पवित्र और शाश्वत है।

**निष्कर्ष :**

गुप्त जी नारी चेतना तथा नारी उत्थान की अनिवार्यता से प्रभावित एवं प्रेरित कवि थे। उनका युग नारी जागरण का युग था। गुप्त जी पर अपने युग की विचारधारा का प्रभाव पड़ा और उन्होंने अपने काव्यों में नारी की महत्ता प्रदान की। उनके काव्यों में चित्रित नारी-चेतना सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक आदि विविध आयामों को समेटकर प्रवाहित हुई है।

गुप्त जी के साकेत की नारियाँ पुरुष की अद्धांगिनी ही नहीं, बल्कि सहयोगिनी भी हैं। वे त्यागमयी है, सेवा भाव से ओतप्रोत हैं और कर्तव्यपरायणा है। उनके व्यक्तित्व में साहस, शौर्य, शील, संयम आदि का सामंजस्य देखने को मिलता है। उर्मिला भू-पर स्वर्ग भाव बरसाने वाली नारी है। परोपकार और सहृदयता से उनका हदय कानन भरा हुआ है। वे अपने कर्तव्य के साथ स्वयं में ही नहीं, बल्कि लक्ष्मण के माध्यम से आत्म चेतना का संदेश देती

हुई आधुनिककालीन समाज में भातृत्वबोध की भावना को बलवती करती है। कैकेयी के चरित्र को गुप्त जी ने बड़े ही सहृदयता के साथ अंकित किया है। कैकेयी का अपनी गलतियों के लिए पश्चाताप आधुनिक समाज की हर माता के लिए एक चुनौती एवं चेतना बनकर रह गई है। सीता भी आदर्श पत्नी के रूप में चित्रित हुई है। चित्रकूट में अपने हाथों काम करके सीता राजभवन का-सा आनंद प्राप्त करने के साथ-साथ आधुनिक युग को कर्मवाद का संदेश देनेवाली एक सशक्त नारी का प्रतीक बन गई है।

इस प्रकार साकेत महाकाव्य की नारी परंपरागत होकर भी हमेशा मानव जीवन की मुख्य प्रेरक शक्ति रही है। अंत में हम यह कह सकते हैं कि गुप्त जी ने आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी द्वारा लिखित 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' शीर्षक लेख से प्रेरित होकर न केवल साकेत की ही रचना की है, अपितु अपने काव्यों के विविध नारी पात्रों के माध्यम से साहित्य-क्षेत्र में उपेक्षित नारी-पात्रों को प्रतिष्ठित किया और उनकी चेतनाओं के विविध पहलुओं को हमारे समक्ष खोलकर रख दिया है। ❑

**सन्दर्भ सूची:**


1. शंकरदेव, श्रीमंत, श्यमंत हरण, पद संख्या-34, पृष्ठ संख्या-10, श्रीमंत भट्टाचार्य, भट्टाचार्य एजेंसी, प्रकाशक: चिरांग चापरी, डिब्रुगढ़।
2. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, प्रथम सर्ग, पृष्ठ संख्या- 7, प्रकाशक: साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी), 2019
3. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, षष्ठ सर्ग, षृष्ठ संख्या- 83, वही
4. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, षष्ठ सर्ग, षृष्ठ संख्या- 83, वही
5. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, षष्ठ सर्ग, षृष्ठ संख्या- 92, वही
6. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, दशम सर्ग, षृष्ठ संख्या- 214, वही
7. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, द्वादश सर्ग, षृष्ठ संख्या- 286, वही
8. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, द्वितीय सर्ग, षृष्ठ संख्या-16, वही
9. वर्मण, अमूल्य चन्द्र, पाठक, भूषण चन्द्र, हिंदी साहित्य संकलन (संपादित), पृष्ठ संखा- 124, गांधारी का अभिशाप, धर्मबीर भारती; असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32
10. डॉ नगेन्द्र, साकेत: एक अध्यन, पृष्ठ संख्या-25, प्रकाशक: मयूर पेपरबैक्य, ए-95, सेक्टर-5, नोएडा-201301, दूसरा संस्करण-2008
11. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, अष्टम सर्ग, षृष्ठ संख्या-132, प्रकाशक : साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी), 2019
12. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, द्वादश सर्ग, षृष्ठ संख्या-263, वही
13. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, अष्टम सर्ग, षृष्ठ संख्या-117, वही
14. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, अष्टम सर्ग, षृष्ठ संख्या-120, वही
15. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, एकादश सर्ग, षृष्ठ संख्या-39, वही
16. गुप्त, मैथिलीशरण, साकेत, एकादश सर्ग, षृष्ठ संख्या-247, वही

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विरासत

# मराठा स्वतंत्रता आंदोलन के प्रेरक के रूप में छत्रपति संभाजी : एक ऐतिहासिक अध्ययन

सूर्य प्रकाश

अध्यक्ष, इतिहास विभाग
मिहिर भोज पी. जी. कॉलेज,
दादरी- ग्रेटर नोएडा, गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश
8171853145
surya9587@gmail.com

**शोध सार :**

छत्रपति संभाजी महाराज ने अपने जीवन काल में मुगल शासक औरंगजेब का प्रतिरोध करने का भरसक प्रयास किया लेकिन जंजीरा के सीदियों, गोवा व चौल के पुर्तगालियों एवं आंतरिक षडयंत्रों से उत्पन्न समस्याओं के कारण वह औरंगजेब जैसी विकट चुनौती से निपट ना सके हालांकि उनके द्वारा बुरहानपुर, रामसेज, वाई के युद्धों में मुगलों के विरुद्ध सफलता दर्ज की गई लेकिन जल्द ही उन्हें संगमेश्वर से मुगलों द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया। मुगलों के अधीन उनके यातनापूर्ण बंदी जीवन व उनकी मृत्यु ने मराठों को मुगलों के विरुद्ध संगठित रूप प्रदान किया जिस कारण राजाराम, ताराबाई के काल में मराठों ने न केवल अपने क्षेत्र उनसे हस्तगत किये बल्कि संपूर्ण भारत में सर्वोच्च सत्ता के रूप में स्वयं को स्थापित भी किया। प्रस्तुत शोधालेख में छत्रपति संभाजी द्वारा किए गए मुगल प्रतिरोध तथा उनकी यातनापूर्ण मृत्यु के कारण उत्पन्न मराठा आक्रोश के चलते मुगलों के विरुद्ध मराठा स्वतंत्रता संग्राम (1689 ई.–1707 ई.) की सफलता का प्रामाणिक रूप से वर्णन किया जाएगा।

**बीज शब्द :**

मराठा, मुगल, स्वतंत्रता, दुर्ग, विद्रोह, आक्रमण, अधिकार, शहादत।

**मुख्य अंश :**

1680 ई. में छत्रपति शिवाजी की मृत्यु के समय उनके बड़े पुत्र संभाजी पन्हाला के किले में कैद थे जिस कारण शिवाजी की दूसरी पत्नी सोयराबाई ने अपने 10 वर्षीय पुत्र राजाराम का 21 अप्रैल 1680 ई. को राज्याभिषेक कर दिया। संभाजी ने अपने पिता की मृत्यु की खबर सुनकर पन्हाला के किले के किलेदार को मार दिया [1] और प्रधान सेनापति व अपने सौतेले मामा हमीर राव मोहिते को अपनी ओर मिलाकर [2] अपना पहला राज्याभिषेक 20 जुलाई 1680 ई. को पन्हाला के किले में कराया [3] और बाद में अपनी सौतेली माँ सोयराबाई व भाई राजाराम को नजरबंद कर अपना दूसरा राज्याभिषेक 16 जनवरी 1681 ई. को रायगढ़ के किले में कराया। उन्होंने नीलोपंत को अपना पेशवा नियुक्त किया [4] और उत्तर भारत के कन्नौज (वर्तमान उन्नाव, उत्तर प्रदेश) के ब्राह्मण कवि कलश को अपना सलाहकार नियुक्त किया। [5] उन्होंने उसे पेशवा से भी अधिक वरीयता प्रदान की। [6] संभाजी उसे छंदोगामात्य अर्थात कवियों का शिखर कहकर बुलाते थे। जबकि मराठा दरबारी उसे कलुश या कलुषा कहकर मजाक उड़ाते थे। [7]

गद्दी पर बैठते ही संभाजी ने स्वराज की स्थापना के लिए मुगलों को हिंदुस्तान से खदेड़ने का प्रण लिया। संभाजी ने सर्वप्रथम जनवरी 1681ई. में बुरहानपुर पर आक्रमण कर मुगलों के खजाने को लूटा।[8, 9] इसी वर्ष शहजादा अकबर अपने पिता औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह कर मराठों का सहयोग पाने के लिए दक्कन आ गया।[10],[11] संभाजी को जैसे ही इसकी सूचना मिली उन्होंने नेताजी पालकर को भेज कर नौगथना के पास पाली गाँव में छप्परदार शिविर लगवाया।[12] 1682 ई. में शहजादा अकबर और मराठों के विरुद्ध औरंगजेब 3 लाख सैनिकों के साथ दक्कन में आ गया। उसने मराठों से मिलने जा रहे अकबर का मार्ग अवरुद्ध करने के लिए शिहाबुद्दीन खान को नासिक के पास मराठों के किलों को जीतने भेजा। शिहाबुद्दीन ने नासिक से सात मील दूर उत्तर में रामसेज का घेरा डाला लेकिन मराठा सेना के आ जाने के कारण उसे यह घेरा उठाना पड़ा।[13] संभाजी जहाँ एक ओर आंतरिक षड्यंत्रों, जंजीरा के सीदियों व पुर्तगालियों के विद्रोह को दबाने में व्यस्त थे तो वहीं दूसरी ओर वह औरंगजेब के विरुद्ध शहजादा अकबर का सहयोग लेने के मामले में असमंजस की स्थिति में थे। अत: ऐसी परिस्थितियों का फायदा उठाकर औरंगजेब ने 1686 ई. में बीजापुर और 1687 ई. में गोलकुंडा जीत लिया और और इसी वर्ष शहजादा अकबर निराश होकर हमेशा-हमेशा के लिए ईरान चला गया।

अत: अब औरंगजेब ने अपना पूरा ध्यान संभाजी पर केंद्रित किया। 1687 ई. में औरंगज़ेब द्वारा भेजी गई बीजापुरी सेना और मराठों के बीच वाई के युद्ध में भिड़ंत हुई जिसमें मराठों ने मुगलों के विरुद्ध विजय पताका फहराई लेकिन संभाजी के प्रधान सेनापति हमीर राव मोहिते शहीद हो गए।[14] उल्लेखनीय है कि गणों जी शिर्के और संभाजी आपस में एक दूसरे के साले और बहनोई थे। वतनदारी के मुद्दे पर इन दोनों में आपसी मतभेद भी था अत: गणों जी शिर्के और कान्हो जी शिर्के ने संभाजी के प्रिय कवि कलश को संगमेश्वर से खेलना के दुर्ग में शरण लेने को मजबूर कर दिया।[15] संभाजी ने खेलना पहुँचकर उन्हें हरा दिया। इसके बाद संभाजी रायगढ़ जाने से पूर्व कुछ समय के लिए कवि कलश के साथ संगमेश्वर रुके। जहाँ वह आनंद मनाने में व्यस्त हो गए।[16] प्रसिद्ध इतिहासकार आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव[17] व जे. एल. मेहता[18] के अनुसार इस जगह का पता शिर्के बंधुओ ने कोल्हापुर के मुगल सेनापति मुकर्रब खान उर्फ शेख निजाम हैदराबादी को दे दिया जबकि निकालो मनुची[19], ईश्वर दास नागर[20] विश्वासघात करने का आरोप कवि कलश पर ही लगाते हैं। वहीं साकी मुस्तैद खान[21], जदुनाथ सरकार[22] आदि इतिहासकार सूचना पहुँचाने का श्रेय मुगल जासूसों को देते हैं।

बहरहाल, मुकर्रब खान ने तीव्र गति से मात्र तीन दिन में[23] कोल्हापुर से 90 मील दूर संगमेश्वर पहुंचकर 11 फरवरी 1689 ई. को आक्रमण कर दिया।[24] संभाजी और उनके साथी वीरतापूर्वक लड़े, लेकिन अंत में उन्हें जंजीरों से जकड़ कर जोकरों वाले कपड़े पहनाकर, घंटियाँ बाँधकर, मजाक उड़ाते हुए पेडगाँव के निकट बहादुरगढ़ के किले में लाया गया।[25, 26, 27, 28] अकलुज में ठहरे हुए औरंगजेब ने प्रसन्न होकर अकलुज का नाम अपने वजीर असद खान के नाम पर असद नगर रख दिया तथा कर मुक्त जमीन (सयूरघल) गुलबर्गा के संत गेसूदराज की दरगाह के लिए दान की। वहाँ से बहादुरगढ़ आकर औरंगजेब ने जमीन पर बैठकर अल्लाह का शुक्रिया अदा किया।[29] ऐसा माना जाता है कि इसी समय कवि कलश ने औरंगजेब का मजाक उड़ाते हुए इन पंक्तियों को पढ़ा –

'यावन रावण की सभा, संभू बंध्यो बजरंग।
लहु लसत सिंदुर सम, खूब खेल्यो रनरंग।।
ज्यो रवि छबी लखत ही, खद्योत होत बदरंग।
त्यो तुव तेज निहार के, तख्त तज्यो अवरंग।।'

जिसका अर्थ है कि जिस प्रकार से रावण की सभा में हनुमान जी को बाँधा गया था उसी प्रकार शंभू आपको भी औरंगजेब के दरबार में बाँधा गया है। रणभूमि में लड़ते हुए आपके शरीर से बहने वाला लहू हनुमान जी के शरीर के सिंदूर के जैसा लग रहा है। जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश के आते ही जुगनू की रोशनी फीकी पड़ जाती है, उसी प्रकार आपके तेज को देखकर औरंगजेब ने अपना तख्त त्याग दिया है। इस पर औरंगजेब क्रोधित होकर महल के अंदर चला गया और उसने अपने दूत रुहुल्ला खान के माध्यम से निम्न तीन शर्तें संभाजी के सामने रखवाई[30, 31] जिससे कि उन्हें जीवित छोड़ा जा सके –

पहली शर्त- मुगलों का खजाना वापिस लौटा दिया जाए,

दूसरी शर्त-मराठों द्वारा सारे किले मुगलों को दे दिए जाएं और

तीसरी शर्त-विद्रोही मुगलों के नाम बता दिया जाए।

संभाजी ने यह सब करने से साथ इनकार कर दिया। उन्होंने औरंगजेब के इस्लाम कबूलने के प्रस्ताव को भी ठुकरा दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने औरंगजेब को चिढ़ाते हुए अपनी मित्रता के बदले में उसकी बेटी से विवाह करने का प्रस्ताव तक रख दिया। इस तथ्य का उल्लेख आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव [32], जदुनाथ सरकार [33] , एल.पी. शर्मा [34], वी. डी. महाजन [35] आदि इतिहासकार अपने-अपने ग्रंथों में भी करते हैं यह सुनकर औरंगजेब आग बबूला हो गया। उसने 15 दिनों तक लगातार संभाजी और कवि कलश को भयंकर यातनाएं दी। उनके नाखून खींचे गए, उनकी जीभ काट दी गई, उन्हें अंधा कर दिया गया और फिर उन दोनों को बहादुरगढ़ से कोरेगाँव ले जाया गया। कोरेगांव में 11 मार्च 1689 ई. [36, 37, 38] को उनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके कुत्तों के सामने डाल दिया गया। [39, 40, 41, 42, 43, 44] उनके सिर में भूसा भरकर सारे दक्कन में घुमाया गया। ऐसा माना जाता है कि कुछ समय बाद उनके सिर व अन्य हिस्सों को पास के ही स्थान वधू बद्रक से प्राप्त किया गया और भीमा नदी के किनारे स्थित तुलापुर (महाराष्ट्र) में उन दोनों का अंतिम संस्कार किया गया। उन दोनों की समाधि आज भी तुलापुर में है। संभाजी को मौत की सजा देना औरंगजेब की बड़ी राजनीतिक भूल थी। [45] औरंगजेब संभाजी के माध्यम से दक्कन पर नियंत्रण रख सकता था लेकिन उसने वह मौका गवा दिया। संभाजी अपने जीते जी लोगों के लिए कुछ अधिक न कर सके थे, लेकिन उनकी मृत्यु ने उन्हें शहीद बना दिया। [46] उनकी शहादत से प्रेरित मराठों ने उनके आदर्शों पर चलकर मुगलों के विरुद्ध एक स्वतंत्रता संग्राम का शंखनाद किया, जो 1689 ई. से शुरू होकर 1707 ई. तक चला।

संभाजी की शहादत के बाद उनकी पत्नी येसूबाई ने छत्रपति शिवाजी और सोयराबाई के पुत्र राजाराम को 19 फरवरी 1689 ई. को मराठा छत्रपति घोषित किया, लेकिन जैसे ही उन्होंने मुगल सेनापति जुलिकार खान उर्फ एतिकाद खान के नेतृत्व में रायगढ़ की ओर मुगल फौज के कूच करने की खबर मिली। उन्होंने समझदारी दिखाते हुए राजाराम को एक संन्यासी के वेश में रायगढ़ से खेलना के दुर्ग की ओर भेज दिया। [47] जुलिकार खान रायगढ़ के किले पर घेरा डाले बैठा रहा और उसे सफलता हाथ न लगी, लेकिन विश्वासघाती सूर्यजी पिसाल ने वाई नामक क्षेत्र की वतनदारी के लालच में आकर 13 नवंबर 1689 ई. को किले का दरवाजा खोल दिया। [48] येसूबाई प्रह्लाद नीरा जी और शंकर जी मल्हार के सहयोग से मुगल फौज से वीरतापूर्वक लड़ी, लेकिन अंत में मुगलों ने रायगढ़ पर अधिकार कर उन्हें एवं उनके पुत्र शाहूजी को बंदी बना लिया। इसके बाद मुगल फौज ने राजाराम की तलाश में खेलना के दुर्ग पर भी आक्रमण कर दिया। यहाँ मुगलों को असफलता का सामना करना पड़ा, क्योंकि राजाराम मुगल फौज को चकमा देकर योगी के वेश में जिंजी के किले की ओर जा चुके थे। वहाँ उन्हें रिश्ते के भाई तंजौर के शाहजी की मदद से संघर्ष को जारी रखा [49] और इस तरह संभाजी की शहादत ने मराठों में मुगलों से स्वतंत्रता के जो बीज बो दिए थे, उससे उत्पन्न मराठा प्रतिरोध पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक फैल चुका था।

यद्यपि जुल्फिकार खान जिंजी के किले पर 8 वर्षों तक घेरा डाले बैठा रहा, लेकिन उसे कोई सफलता नहीं मिली। इसी बीच राजाराम ने मुगलों के विरुद्ध मराठा आक्रोश को भाँपते हुए अपने सभी मराठा सरदारों को यह छूट दे दी कि वे मुगलों के जिस क्षेत्र को जीतेंगे वे उन्हीं के ही अधीन रहेंगे। [50] अत: उनके काल में प्रह्लाद नीरा जी, रामचंद्र नीलकंठ, परशुराम त्र्यंबक, शंकर जी नारायण, संताजी घोरपडे, धन्ना जी जाधव, बहरजी जैसे पराक्रमी मराठा सरदारों ने औरंगजेब की नाक में दम कर दिया। [51] मुगलों की बड़ी दुर्दशा कर दी गई। मराठों के किलों पर घेरा डालने वाले मुगल शिविरों को ही कई बार लूट लिया गया। [52, 53] जुलिकार खान और मुगल दरबार के बीच के सारे संपर्क काट दिए गए। खेलना, पन्हला जैसे महत्वपूर्ण दुर्ग जीते गए। इस्माइल खान, शरजा खान, अली मर्दान खान, रूहुल्ला खान जैसे शक्तिशाली मुगल सेनापतियों को मराठों द्वारा फिरौती लेकर ही छोड़ा गया। [54] मुगलों को अब एक संभाजी के स्थान पर संभाजी जैसे अनेक मराठा सरदारों से भिड़ना पड़ रहा था। ऐसे में स्थानीय मराठा नागरिकों का भी सहयोग इन सरदारों को प्राप्त हो रहा था। हालांकि जुल्फिकार खान को 8 वर्ष तक जिंजी का घेरा डालने के बाद सफलता तो मिल चुकी थी, लेकिन राजाराम उसे फिर से चकमा देकर 1698 ई. में खेलना और फिर 1699 ई. में सतारा चले गए और मुगल फौज को इसकी भनक तक न लगी। खानदेश, बरार, बगलाना जैसे मुगल क्षेत्रों से मराठों द्वारा चौथ एवं

सरदेशमुखी वसूली जाने लगी।[55] अत: अब औरंगजेब को स्वयं मोर्चा संभालना पड़ा। इसी बीच 17 मार्च 1700 ई. को बीमारी से मराठा छत्रपति राजाराम की मृत्यु हो गई। इसके बाद ही औरंगजेब सतारा जीत सका। वहीं दूसरी ओर राजाराम की विधवा ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी द्वितीय को छत्रपति घोषित कर स्वयं उसकी संरक्षिका बन गई और उन्होंने भी औरंगजेब के विरुद्ध विजय अभियान जारी रखा। अब औरंगजेब को आक्रमण के स्थान पर बचाव की नीति अपनानी पड़ी। [56] उसने 1703 ई. में मराठों से सुलह करने के लिए शाहूजी को रिहा करने की योजना भी बनाई, लेकिन मराठों पर विश्वास के अभाव में उसे यह योजना त्यागनी पड़ी। [57] अत: अब ताराबाई ने मुगल साम्राज्य पर प्रहार करते हुए 1704 ई. में सतारा को जीत लिया, साथ ही बसंतगढ़, सिंहगढ़, रायगढ़ आदि के किले भी जीते। मुगलों के समृद्ध नगर बुरहानपुर, सूरत, भड़ोंच आदि को बुरी तरह लूटा गया। [58] इन्हीं विपत्तियों का सामना करते-करते औरंगजेब की दक्कन के औरंगाबाद में 3 मार्च 1707 ई. को मृत्यु हो गई। प्रसिद्ध इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार के अनुसार 'जिस तरह 'फ्रांस का राजा नेपोलियन प्रथम कहता था कि स्पेन के नासूर ने मुझे बर्बाद कर दिया, ठीक उसी तरह दक्कन के नासूर ने औरंगजेब को बर्बाद कर दिया।' [59] औरंगजेब के बाद अगले मुड़ल शासक बहादुर शाह प्रथम ने मराठा संग्राम की धधकती लपटो से अपने तख्त को सुरक्षित रखने तथा मराठा छत्रपति की गद्दी के लिए शाहूजी और ताराबाई के बीच संघर्ष को जन्म देने के लिए शाहूजी को रिहा कर दिया। बहादुर शाह प्रथम ने शाहूजी को छत्रपति स्वीकार कर दक्कन से उनके द्वारा चौथ वसूलने के अधिकार पर भी मोहर लगा दी।

**उपसंहार :**

स्पष्ट है कि संभाजी की शहादत के कारण येसुबाई, राजाराम ओर ताराबाई के काल में जन्मे मराठा आक्रोश के चलते जहाँ एक ओर मराठों ने अपने किलों को मुगलों से पुन: जीता। वहीं दूसरी ओर मुगल बादशाह को छत्रपति को मान्यता एवं उसके अधिकार देने के लिए मजबूर होना पड़ा। छत्रपति संभाजी की मृत्यु के बाद मुगलों के विरुद्ध राष्ट्रीय प्रतिरोध के युद्ध की शुरुआत हुई। [60] छत्रपति संभाजी अपने जीवित रहते जो कार्य न कर सके थे वह उनकी मृत्यु ने पूरा किया। उनकी मृत्यु के बाद मराठे मुगलों के विरुद्ध पुन: संगठित हुए। [61] उनके बंदी जीवन और मृत्यु ने मराठा जाति को एकता के सूत्र में पिरोकर उसमें वह शक्ति व साहस भर दिया कि वे मुगल सम्राट को हराने के लिए कटिबद्ध हो गए [62, 63] और अंतत: मुगल सम्राट बहादुर शाह प्रथम द्वारा शाहूजी को मान्यता देने के साथ ही मराठा स्वतंत्रता संग्राम लगभग 20 वर्ष बाद सफलतापूर्वक समाप्त हो गया। ❑


**संदर्भ ग्रंथ सूची :**

1. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 658
2. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 206
3. जे.एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया (1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 48
4. आर. सी. मजूमदार, एच.सी. रायचौधरी, कालीकिंकर दत्ता, एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 516
5. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 658
6. जे. एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया (1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 49
7. डॉ. लईक अहमद, मुगल कालीन भारत, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2019, पृष्ठ संख्या 282
8. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 198
9. डॉ. लईक अहमद, मुगल कालीन भारत, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2019, पृष्ठ संख्या 281
10. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 207
11. इम्तिया ? अहमद, मध्यकालीन भारत (8वीं से 18वीं शताब्दी), नेशनल पब्लिकेशन, पटना, 2016, पृष्ठ संख्या 529
12. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 659
13. वही
14. जे.एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया(1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 49
15. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 340
16. वही
17. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 660
18. जे.एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया (1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 50
19. निकोलो मनुची, स्टोरिया दो मोगोर, अंग्रेजी अनुवादक- विलियम इर्विन, जॉन मरे अल्बमार्ले स्ट्रीट, लंदन, 1907, पृष्ठ संख्या 310

20. ईश्वर दास नागर, फतुहाते अलमगीरी अंग्रेजी अनुवादक-तसनीम अहमद, जागोवाल प्रिंटिंग प्रेस, नई दिल्ली, 1978, पृष्ठ संख्या 253
21. साकी मुस्तैद खान, मासिर ए अलमगीरी, अंग्रेजी अनुवादक- सर जदुनाथ सरकार, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल, कलकत्ता, 1947 पृष्ठ संख्या 193
22. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 340
23. वही, पृष्ठ संख्या 341
24. आर.सी. मजूमदार, एच. सी. रायचौधरी, कालीकिंकर दत्ता, एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 516
25. निकोलो मनुची, स्टोरिया दो मोगोर, अंग्रेजी अनुवादक- विलियम इर्विन, जॉन मरे अल्बमार्ले स्ट्रीट, लंदन, 1907, पृष्ठ संख्या 311
26. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 660
27. साकी मुस्तैद खान, मासिर ए अलमगीरी, अंग्रेजी अनुवादक- सर जदुनाथ सरकार, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल, कलकत्ता, 1947 पृष्ठ संख्या 194
28. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री ऑफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 342
29. साकी मुस्तैद खान, मासिर ए अलमगीरी, अंग्रेजी अनुवादक- सर जदुनाथ सरकार, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल, कलकत्ता, 1947 पृष्ठ संख्या 195 -196
30. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 661
31. जे.एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया (1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 50
32. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 661
33. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 343
34. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 207
35. विद्याधर महाजन, मध्यकालीन भारत, एस चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 253
36. साकी मुस्तैद खान, मासिर ए अलमगीरी, अंग्रेजी अनुवादक- सर जदुनाथ सरकार, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल, कलकत्ता, 1947 पृष्ठ संख्या 196
37. आर.सी. मजूमदार, एच. सी. रायचौधरी, कालीकिंकर दत्ता, एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 516
38. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 344
39. जे.एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया (1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 50
40. डॉ. लईक अहमद, मुगल कालीन भारत, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2019, पृष्ठ संख्या 282
41. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 207
42. विद्याधर महाजन, मध्यकालीन भारत, एस चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 253
43. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 661
44. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 344
45. सतीश चंद्र, मध्यकालीन भारत, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या 349
46. जे.एल. मेहता, एडवांस्ड स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया (1707-1813), न्यू डॉन प्रेस, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 50
47. साकी मुस्तैद खान, मासिर ए अलमगीरी, अंग्रेजी अनुवादक- सर जदुनाथ सरकार, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल, कलकत्ता, 1947, पृष्ठ संख्या 197
48. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 662
49. सतीश चंद्र, मध्यकालीन भारत, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या 349
50. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 208
51. विद्याधर महाजन, मध्यकालीन भारत, एस चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 254
52. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 662
53. आर.सी. मजूमदार, एच.सी. रायचौधरी, कालीकिंकर दत्ता, एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 517
54. सतीश चंद्र, मध्यकालीन भारत, जवाहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या 352
55. विद्याधर महाजन, मध्यकालीन भारत, एस चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 254
56. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 663
57. इम्तियाज अहमद, मध्यकालीन भारत (8वीं से 18वीं शताब्दी), नेशनल पब्लिकेशन, पटना, 2016, पृष्ठ संख्या 530
58. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 208
59. सर जदुनाथ सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगज़ेब, वॉल्यूम 4, लाइफ़ स्पैन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ संख्या 347
60. आर.सी. मजूमदार, एच.सी. रायचौधरी, कालीकिंकर दत्ता, एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 516
61. विद्याधर महाजन, मध्यकालीन भारत, एस चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 253
62. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, भारत का इतिहास (1000 से 1707 ई. तक), शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा, पृष्ठ संख्या 661
63. एल.पी. शर्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2011, पृष्ठ संख्या 207

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

मंथन

# राजेश जोशी की कविताओं में अभिव्यक्त यथार्थ

**मनीषा कुमारी**
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग,
जम्मू-केंद्रीय विश्वविद्यालय, सांबा
जम्मू-कश्मीर-181143
8082745262
mk2161078@gmail.com

**डॉ. अरविद कुमार यादव**
शोध निर्देशक, हिंदी एवं अन्य
भारतीय भाषा विभाग,
जम्मू-केंद्रीय विश्वविद्यालय, सांबा
जम्मू-कश्मीर-181143
9425157244
kumar.arvind15@gmail.com

समकालीन हिंदी कविता के महत्वपूर्ण कवि राजेश जोशी अपने समय, समाज एवं परिधि में रचे-गढ़े हैं। उसी परिधि एवं भावभूमि में उपजा उनका काव्य साहित्य है, जो युगबोध, तद्जनित परिस्थितियों एवं जीवन यथार्थ से लबरेज है। उनके काव्य साहित्य के विषय में नरेश सक्सेना कहते हैं कि 'राजेश जोशी भाषा को लिरिकल बनाते हुए उस संगीत तक ले जाते हैं, जहाँ से अर्थों की उड़ान शुरू होती है। वह थियेटर की सभी तकनीकें, प्रश्नाधारित संवाद, लय और गीतात्मकता का सीधा इस्तेमाल करते हैं। किंतु कविता की मूल प्रतिज्ञा, सूक्ष्मता और संवेदनीयता से नहीं डिगते। राजेश की कविता की ताकत रेटारिक का अर्थ ही बदल देती है। वह देखते-देखते भाषा को वस्तु और वस्तु को उसकी अंतर्वस्तु में बदल देती है। भोपाल राजेश की कविताओं में एक ऑर्गेनिक संरचना की तरह गुँथा है। वह उनकी बोली, बानी, मिजाज, मौसम सभी कुछ में व्याप्त है। शायद इसी को लक्ष्य कर ऋतुराज ने लिखा था, वह अपने अनुभव को सिरजते वक्त शोक गीत की लयात्मकता नहीं छोड़ते। लय उनकी कविताओं में सहज भाव से आती है, जैसे कोई कुशल सरोदवादक आलाप में भोपाल राग का विस्तार कर रहा है! राजेश की राजनीतिक चेतना किताबी नहीं है। उनके मंतव्य स्पष्ट हैं। निष्कर्षों को लेकर दुविधा नहीं है। राजेश की राजनीतिक सम्मान की कविताएँ रेटारिक या स्थूल होने की जगह बारीकी और नफासत का नमूना पेश करती है। मार्क्सवाद के संस्पर्श से जिन कवियों ने अपनी समझ और संवेदना को गहरा किया है, राजेश जोशी को उनमें अलग से चिह्नित किया जा सकता है। समय, स्थान और गतियों के अछूते संदर्भों से भरी है राजेश की कविता। यहाँ काल का बोध गहरा और आत्मीय है। अपने मनुष्य होने के अहसास और उसे बचाए रखने की जद्दोजहद हैं राजेश की कविताएँ।'[1] उनका काव्य साहित्य समाज की वास्तविक तस्वीर, संबंधों में बढ़ती दूरी, एकाकीपन, संवेदनाओं का क्षरण, बदलते मानवीय संबंध, मानवीय मूल्यों में गिरावट, अपसंस्कृति, एकल परिवार की अवधारणा, मानव जीवन का संघष, खोखली अर्थव्यवस्था, खोखली न्याय व्यवस्था, जर्मराती शासन व्यवस्था, भ्रष्टाचार का पर्दाफाश, निजीकरण एवं शिक्षा का बाजारीकरण, सांप्रदायिकता, विकास में रुकावट, सत्ता का दोहरा चरित्र एवं न्याय प्रणाली पर वर्चस्व,

राजनीतिक अस्थिरता, स्त्री जीवन की दारुण-कहानी, स्थानीयता, आधुनिकता एवं बदलते जीवन शैली के तमाम प्रश्नों को हमारे बीच परोसता है।

मनुष्य अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं और अनुभवों के बीच अक्सर कुछ अदृश्य दूरी को महसूस करता है। जब हम दो पंक्तियों को देखते हैं तो इन दोनों के बीच एक अंतराल, एक खाली स्थान होता है। यह असंख्य भावनाओं और विचारों से भरा होता है, जिसे हम शब्दो में नहीं कर सकते हैं। इस अंतराल में वह सब कुछ समाहित होता है, जो बाहर नहीं आ पाता, किंतु हमारे आंतरिक मन में चलता रहता है। दो पंक्तियों के बीच का खाली स्थान केवल एक शारीरिक अंतराल नहीं है, बल्कि यह विचारों, संवेदनाओं एवं भावनाओं का प्रतीक है, जिस प्रकार शब्दों के बीच का मौन कभी-कभी बहुत गहन अभिव्यक्ति देता है, वैसे ही दो पंक्तियों के बीच की चुप्पी भी अत्यधिक अर्थपूर्ण होती है। राजेश जोशी का काव्य इन दो पंक्तियों के बीच के अर्थपूर्ण अंतराल को उजागर करता है, जहाँ से जीवन की वास्तविकता एवं अस्तित्व की सच्चाइयाँ बाहर आती हैं। इस तरह की कविताएँ हमें हमारे विचारों और अनुभवों के बीच मौजूद उस शून्यता को समझने की प्रेरणा देती है। 'दो पंक्तियों के बीच' कविता हमें यह एहसास दिलाती है कि व्यक्ति जो शब्दों में बोलता है, वही महत्वपूर्ण एवं सत्य नहीं होता है। यह अंतराल हमारी छिपी हुई भावनाओं, आंतरिक द्वंद्व एवं उन प्रश्नों का प्रतीक है, जिनका उत्तर हम कभी भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं। 'दो पंक्तियों के बीच' कविता में एक गहरी, सार्थक एवं वास्तविक अभिव्यक्ति है, जो यह दर्शाती है कि जीवन में कुछ बातें, कुछ भावनाएँ शब्दों से परे होती हैं। यह कविता हमें उस अंतराल की महत्ता को समझाती है, जो हमारे भीतर छुपा रहता है, और यह भी कि वह स्थान जहाँ शब्द समाप्त होते हैं, वहाँ से विचारों और संवेदनाओं की सच्ची शुरुआत होती है। जोशी 'दो पंक्तियों के बीच' कविता में लिखते हैं-

'कविता की दो पंक्तियों के बीच मैं वह जगह हूँ
जो सूनी सूनी सी दिखती है हमेशा
सबसे छिपाकर रखी कवि की एक अज्ञात दुनिया तक
यहाँ आने से पहले अपने जूते बाहर उतार कर आना
कि तुम्हारे पैरों की कोई आवाज न हो
एक जरा सी बाहरी आवाज नष्ट कर देगी
मेरे पूरे जादुई तिलिस्म की!' [2]

जोशी की कविता जीवन अनुभूति की कविता है, जिसमें टूटते एवं बदलते मानवीय संबंध, कम होती संवेदना, बढ़ रहे निजीपन, अमानवीयता, अनैतिकता, व्यक्ति की स्वार्थपरता, जीवन की कठोरता, नीरसता, एकाकीपन एवं संवेदना से जुड़े तमाम प्रश्न एवं मुद्दे हमारे सामने प्रस्तुत करती है। आज तकनीक के बढ़ते प्रभाव से व्यक्ति की जीवन शैली में भी बदलाव हुआ है। आधुनिकता की दौड़ ने व्यक्ति के लिए मानसिक दबाव उत्पन्न कर दिया है। इस प्रतिस्पर्धा के चलन ने व्यक्ति को स्वयं तक केंद्रित कर दिया है। परिणामत: व्यक्तिगत एवं पारिवारिक संबंधों में दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं। यह दूरियाँ केवल शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक एवं भावनात्मक स्तर पर भी दिन-प्रतिदिन बढ़ रही हैं, जो संबंधों की आत्मीयता को प्रभावित कर कमजोर बना रही है। व्यक्ति अपने करियर, शिक्षा एवं व्यक्तिगत लक्ष्यों में इस तरह उलझ गया है कि उसके पास दूसरे के लिए समय ही नहीं है। परिवार के सदस्य एक-दूसरे से जुड़े रहने के बजाय अलग-अलग व्यस्तताओं में खो गए हैं। उसी व्यस्तता ने उनके बीच आपसी संवाद, समझ एवं आत्मीयता की कमी को जन्म दिया है, जिसके फलस्वरूप रिश्तों में भावनात्मक खालीपन और अजनबियत का आभास बढ़ता जा रहा है। सोशल मीडिया और डिजिटल दुनिया का प्रभाव भी संबंधों में दूरियों को बढ़ा रहा है। जहाँ एक ओर ये प्लेटफॉर्म लोगों को जोड़ने का दावा करता है, वहीं वास्तविक जीवन में ये एकजुटता को खत्म करता जा रहा है। लोग अपनी समस्याओं को व्हाट्सअप स्टेटस एवं सोशल मीडिया पर व्यक्त करने में अधिक विश्वास करने लगे हैं, जबकि व्यक्तिगत बातचीत और संवाद में कमी आती जा रही है। रिश्तों में सतहीपन एवं गहरे भावनात्मक संबंधों के अभाव को राजेश जोशी 'संयुक्त परिवार' कविता के माध्यम से रेखांकित करते हैं-

'कम हो रहा है मिलना जुलना

कम हो रही है जान पहचान
सुख दुख में भी पहले की तरह इकट्ठे नहीं होते लोग
तार से आ जाती है बधाई और शोक संदेश
अब सिर्फ एलबम में रहते हैं
परिवार के सारे लोग एकसाथ
टूटने की इस प्रक्रिया में क्या क्या टूटा है
कोई नहीं सोचता' [3]

जोशी का काव्य प्रेम एवं संवेदना की जटिलताओं को गहराई से व्यक्त करता है, जिसमें वर्तमान की तुलना में अतीत की सादगी, आत्मीयता, प्रेम, आदर-सम्मान एवं भाईचारा की भावनाओं को चित्रित किया गया है। उनके काव्य में एक नॉस्टेल्जिया (यादें) है, जो समय के साथ बदलती दुनिया की विसंगतियों को रेखांकित करता है। उनकी कविताओं में पुरानी यादों से तादात्म्य, गुजरे हुए क्षणों की बारीकियां एवं विशिष्टता है, जो प्रेम, संवेदना एवं आत्मीयता की वास्तविकता को दर्शाता है। व्यक्ति समाज एवं संस्कृति से संवेदना, शिष्टाचार एवं अपनत्व का भाव जो कभी हमारी पहचान हुआ करते थे, खत्म होते जा रहे हैं। 'संयुक्त परिवार' कविता की बानगी प्रस्तुत है-

'इस तरह कभी कोई नहीं लौटा होगा
बचपन के उस पैतृक घर से
लड़ते झगड़ते भी साथ-साथ रहते थे सारे भाई बहन
पल दो पल को बिठा ही लिया जाता था हर आने वाले को
पूछ लिया जाता था गुड़ और पानी को
खबर मिल जाती थी बाहर गए आदमी की
ताला देखकर शायद ही कभी कोई लौटा होगा घर से' [4]

राजेश जोशी का काव्य समकालीन परिवेश के यथार्थ का काव्य है, जिसमें शिक्षा-व्यवस्था, रोजगार-प्रक्रिया, कर्मचारियों का तबादला आदि में पनप रहे भ्रष्टाचार का नग्न चित्रण किया गया है। उनका काव्य सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करते हुए भ्रष्टाचार की खिलाफत करता है। इनका काव्य भ्रष्टाचार की चपेट में शिक्षा जगत एवं इससे उत्पन्न कठिनाइयों से जूझते हुए शिक्षक के जीवन का दस्तावेज है। जोशी के काव्य में तबादले का मुद्दा केवल नौकरी की बदलती स्थिति तक सीमित नहीं है, बल्कि इससे जुड़े मानवीय पहलुओं को भी उजागर किया गया है। तबादला एक व्यक्ति की पहचान, उसकी स्थिरता एवं उसके पारिवारिक जीवन पर गहरा प्रभाव डालता है। तबादला केवल शैक्षिक एवं प्रशासनिक बदलाव नहीं करता है, बल्कि यह प्रक्रिया शिक्षक के मानसिक संतुलन एवं उसके कामकाजी उत्साह को भी प्रभावित करता है। 'घर की याद' कविता में भ्रष्टाचार से उत्पन्न असंतोष एवं निराशा से ग्रसित शिक्षक का अंकन किया गया है। वह तबादले की अर्जियों लेकर शिक्षा विभाग के चक्कर काटता है। अर्जी मंजूर न होने पर शिक्षक हताशा एवं निराशा भरा जीवन व्यतीत करने लगता है, जो उसके कार्य क्षेत्र को भी प्रभावित करता है। जोशी का काव्य इस मुद्दे को एक समग्र सामाजिक संदर्भ में प्रस्तुत करता है, जहाँ प्रशासनिक निर्णयों का भप्राव व्यक्ति के निजी जीवन एवं कामकाजी मनोवृत्तियों पर पड़ता है। 'घर की याद' कविता की बानगी प्रस्तुत है-

'ढाबे की टूटी बेंच पर बैठ कर
चाय में डुबा डुबा कर बन खाते हुए मुश्किल से दबाता हूँ
मन में हूक सी उठती घर की याद
प्राइमरी स्कूल का एक मास्टर फटेहाल...
बडबडाता है
यहाँ जंगल में फेंक दया है मुझे
घर से ढाई सौ मील दूर
दस बरस में लगाई हैं मैंने सैंकड़ों अर्जियाँ
लगाए हैं पचासों चक्कर शिक्षा विभाग के
राज्य परिवहन की बसों को दे चुका हूँ अपनी सारी पगार
न जाने कितने ढाबों का पी चुका हूँ पानी
खा चुका हूँ नमक
कोई नहीं सुनता
कोई नहीं सुनता' [5]

राजेश जोगी का काव्य शिक्षा एवं न्याय व्यवस्था में पनप रहे भ्रष्टाचार को सहजता में उभारता है, जिसमें भ्रष्ट-व्यवस्था, बढ़ती बेरोजगारी, उज्ज्वल भविष्य एवं अपने सपनों के साथ टकराते हुए युवाओं का अंकन है। इस भ्रष्ट व्यवस्था से पीड़त शिक्षित युवा अपनी नौकरी की इच्छा को पूर्ण नहीं कर पा रहा है। उसकी शिक्षा एवं नौकरी पाने के लिए की गई मेहनत की आज कोई

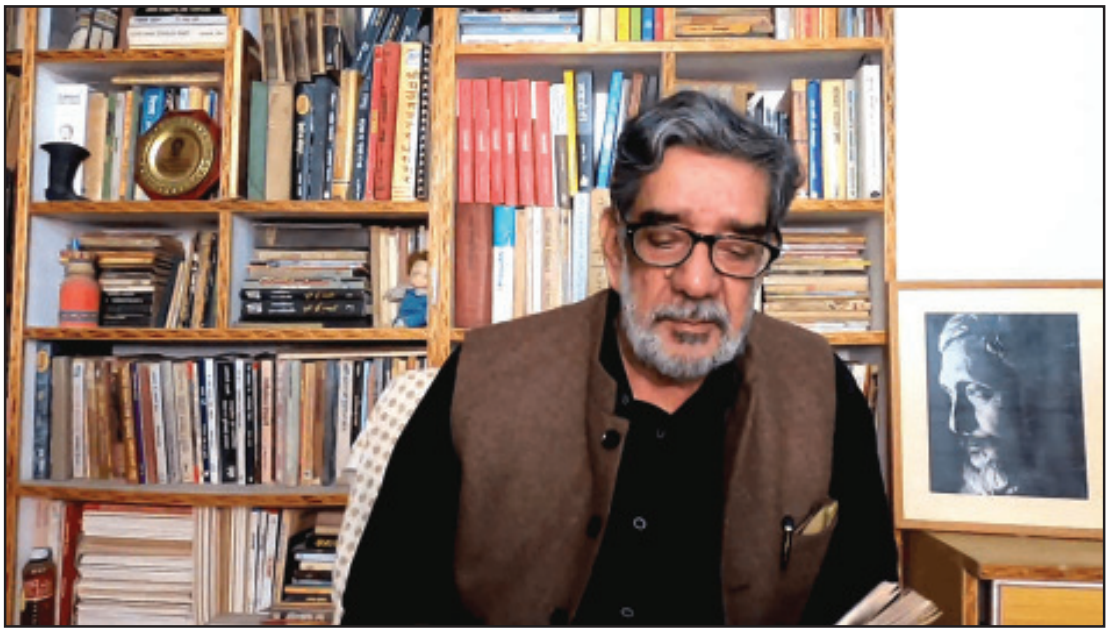

कीमत नहीं रह गई है। आज की इस शिक्षा पद्धति का यही दुर्भाग्य है। जोशी द्वारा रचित रुको बच्चों, क्यों रोई वो इतने बरस बाद, न्याय आदि कविताओं में खोखली एवं भ्रष्ट न्याय व्यवस्था को चित्रित किया गया है। 'रुको बच्चों' कविता की मूल संवेदना भ्रष्ट न्याय व्यवस्था से संबंधित है। वर्तमान की घृणित न्याय व्यवस्था, न्यायाधीश का दोहरा चरित्र एवं दिखावटीपन का अंकन किया गया है। गाड़ियों की तेज रफ्तार में घूमता हुआ यह सफेदपोश वाला व्यक्ति न्याय व्यवस्था का न्यायाधीश नहीं है, वह केवल दिखावा मात्र है, जिसका प्रमाण उसके ऑफिस में कई सालों से धूल खाती पड़ी हुई फाइलें बता रही हैं। 'रुको बच्चों' कविता आज भी न्याय की उम्मीद में इंतजार कर रही उन फाइलों का दस्तावेज है-

'रुको बच्चों!
उस न्यायाधीश की कार को
निकल जाने दो
कौन पूछ सकता है उससे कि
तुम जो चलते हो इतनी
तेज कार में
कितने मुकद्दमें लम्बित हैं
तुम्हारी अदालत में
कितने साल से...' [6]

राजेश जोशी का काव्य खोखली न्याय व्यवस्था का जीवंत प्रमाण है, जो भ्रष्टाचार, अत्याचार, न्याय व्यवस्था पर सत्ता का वर्चस्व एवं दुरुपयोग के प्रति चिंता व्यक्त करता है। समाज में हिंसा एवं दुर्व्यवहार दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, जिसका शिकार आम आदमी ही होता है। रिश्वतखोरी के चलते किसी भी घटना एवं दुर्घटना में भोले-भाले लोगों को फँसा दिया जाता है। पुलिस एवं न्याय व्यवस्था सुरक्षा के नाम पर समाज में होने वाली दुर्घटनाओं एवं हिंसा को बढ़ावा दे रही है। सत्ता एवं राजनेताओं के इशारों पर चलने वाली व्यवस्थाओं में सामान्यजन का कोई महत्व नहीं रह गया है। पुलिस का घटनास्थल पर देर से पहुँचना उसके आलसीपन को दर्शाता है। पुलिस व्यवस्था के इस खोखलेपन को जोशी ने कविता में सहजता के साथ चित्रण किया है-

'यह और बात है कि
जहाँ घटना घटती है
वहाँ पहुँचता है
वो सबसे बाद में' [7]

राजेश जोशी का काव्य सांप्रदायिकता से अनुस्यूत है, जो मनुष्य के मन-मस्तिष्क में जाति, धर्म व वर्ण के

नाम पर हो रही घृणा, नफरत, लड़ाई, झगड़े, एवं बर्बरता को व्यक्त करता है। इनकी कविताओं में धर्म एवं संप्रदाय के नाम पर होने वाले समाज का बँटवारा एवं अशांति, दंगे-फसाद, लूट, कत्लेआम एवं आगजनी की खिलाफत है, जो उनके सांप्रदायिकता विरोधी स्वर को मुखरित करता है। इनकी कविताएँ प्रत्येक समाज में राजनैतिक स्वार्थ, अशिक्षा एवं व्यक्तिगत लाभ प्राप्ति के लिए मौजूद किए जा रहे सांप्रदायिकता जैसे विघटनकारी तत्वों के प्रति चिंता व्यक्त करती हैं। सांप्रदायिक संघटनों एवं सत्ता द्वारा चुनाव के दौरान अपने स्वार्थ के लिए लोगों में नफरत फैलाई जाती है, जिसकी आड़ में सत्ताधारी फायदा लेते हैं। धर्म एवं संप्रदाय के नाम पर फैलाया गया जहर इतना जहरीला है कि बिच्छु को भी मात दे सकता है। इस जहर को समाज के बड़े पैमाने पर जहर की तरह बिल्कुल नहीं दिया जाता है। जनता को उसके धर्म के नाम पर भड़काया जाता है, जो सांप्रदायिकता के निंदनीय रूप को मुखरित करता है। 'जहर के बारे में कुछ बेतरतीब पंक्तियाँ' कविता में सांप्रदायिकता, वैमनस्य का धीमा जहर समाज से धीरे-धीरे खत्म कर रहे मानवता को रेखांकित किया गया है-

'हिंसा की उत्तेजना
साँप और बिच्छु को मात कर सकती है हजार बार...
जहर को जहर की तरह बिल्कुल नहीं दिया जाता
जब दिया जाता है उसे
किसी समाज को
बड़े पैमाने पर' [8]

राजेश जोशी की कविताएँ सांप्रदायिकता की बढ़ रही रफ्तार एवं ताकत के प्रति गहरी चिंता व्यक्त करती हैं। अब उसके पास तकनीक एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया है, जो प्रायोजित दंगे को क्षण भर में देश के बड़े हिस्से को प्रभावित कर सकता है और बहुत कम समय एवं मेहनत में समूचे देश में भी फैलाया जा सकता है। पहले इसके पास कोई तकनीक नहीं थी, जिसे आज की नई बर्बरता पीछे छोड़ आई है। इनकी कविताएँ पहले से ज्यादा भयानक इस नई बर्बरता को लेकर चिंता व्यक्त करती हैं। एक अपील लिखने तक दंगे की आग पूरे शहर में फैल चुकी होती है, इसकी रफ्तार को जब तक मैं एक अपील लिखता हूँ कविता के माध्यम से देखा जा सकता है-

'जब तक मैं एक अपील लिखता हूँ
आग लग चुकी होती है सारे शहर में
हिज्जे ठीक करता हूँ जब तक अपील के
कर्फ्यू का ऐलान करती घूमने लगती है गाड़ी
अपील छपने जाती है जब तक प्रेस में
दुकानें जल चुकी होती हैं
मारे जा चुके होते हैं लोग' [9]

राजेश जोशी का काव्य स्त्री के जीवन की चुनौतियों को उजागर करता है, जिसमें स्त्री के जीवन संघर्ष, उनकी स्थिति एवं सामाजिक अपेक्षाएँ केंद्रित हैं। उनकी कविताओं में नारी केवल एक गृहिणी के रूप में नहीं, बल्कि घर और ऑफिस संभालने वाली आधा समाज का प्रतिनिधित्व करने वाली स्त्री है। वह एक पेशेवर महिला है, जो घर और ऑफिस दोनों की जिम्मेदारी निभाती है। जोशी की 'उसकी गृहस्थी' कविता में यह प्रतीत होता है कि वे उन महिलाओं की दिनचर्या का अद्‌भुत चित्रण करते हैं, जो जीवन संतुलन बनाने का निरंतर प्रयास कर रही है। ऑफिस में अपने कार्यों को सफलतापूर्वक पूरा करने के बाद घर-गृहस्थी की जिम्मेदारियाँ एवं कामकाज उसका इंतजार कर रही होती हैं। अर्थात उनसे घर के काम करने की परिवार एवं समाज द्वारा अपेक्षा की जाती है, जो उनके लिए मानसिक और शारीरिक थकावट का कारण बनता है, जिसे वे कभी खुले तौर पर व्यक्त नहीं कर पाती हैं। जब हम किसी के दर्द को नहीं समझते तो रिश्तों में दरारें आना स्वाभाविक हो जाता है। यह अकेलेपन, मानसिक तनाव और सामाजिक विच्छिन्नता को बढ़ावा देता है। जोशी की कविताएँ स्त्री जीवन पर प्रकाश डालती हैं कि कैसे महिलाएँ दोनों स्थानों पर अपने दायित्वों को निभाते हुए अपनी इच्छाओं और सपनों को कहीं पीछे छोड़ देती हैं। घर में बच्चों की देखभाल, परिवार के अन्य सदस्यों की जरूरतों का ध्यान रखना, साथ ही ऑफिस में अपना पेशेवर भूमिका निभाना- यह सब मिलकर एक मानसिक दबाव उत्पन्न करते हैं। जोशी की कविताओं में नारी का चित्रण केवल एक पीड़िता के रूप में ही नहीं मिलता है, बल्कि वे नारी को एक शक्तिशाली और सहनशील व्यक्ति

के रूप में भी चित्रित करते हैं, जो विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करते हुए भी समाज में अपनी पहचान बनाती है। उनकी कविता में नारी का यह स्वरूप प्रशंसायोग्य है, जो हर परिस्थिति में खुद को साबित करने की कोशिश करती है। उनका लेखन न केवल नारी के आंतरिक संघर्ष को समझने की दशा में एक कदम आगे बढ़ाता है, बल्कि यह समाज को यह विचार करने पर भी मजबूर करता है कि हम महिला की कठिनाइयों को कितनी गंभीरता से लेते हैं। जोशी द्वारा रचित 'उसकी गृहस्थी' कविता में घर और ऑफिस की जिम्मेदारी को निभाती हुई स्त्री का बखूबी चित्रण मिलता है–

'थकी हारी लौटी है वो आफिस से अभी
टिफिन बाक्स को रसोई में रखती है
मुँह पर पानी के छीटे मारती है
बाहर निकल आई लट को वापस खोंसती है बाल में
आँखों को हौले से दबाती है हथेलियों से
साड़ी का पल्लू कमर में खोंसती हुई वो आती है
मुझे हटाते हुए कहती है– 'हटो, तुह नहीं मिलेगी कोई चीज
जैसे कहती हो यह मेरी सृष्टि है
तुम नहीं जान पाओगे कभी
कि किन बादलों में रखी हैं बारिशें, किनमें रखा है कपास' [10]

**निष्कर्ष :**

राजेश जोशी की कविताओं में उनके काव्यात्मक दृष्टिकोण का अद्वितीय विवरण मिलता है। उनका काव्य न केवल उनकी व्यक्तिगत काव्य यात्रा का प्रतिबिंब है, बल्कि यह समाज के विभिन्न पहलुओं पर गहरी एवं सटीक सोच का भी प्रतिनिधित्व करता है। जोशी की कविताएँ पाठकों को जीवन के महत्व, उसकी जटिलताओं एवं सौंदर्य के बारे में पुन: सोचने के लिए प्रेरित करती हैं। जोशी की कविताओं में वर्तमान समय के तमाम प्रश्नों एवं मुद्दों को रेखांकित किया गया है, जिसमें एकल परिवार की अवधारणा, बदलते मानवीय संबंध, संवेदनाओं का क्षरण, अकेलेपन आदि का चित्रण मिलता है। उनके काव्य में वर्तमान दौर की वास्तविकता को बिना किसी आवरण के प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। जोशी का काव्य समाज एवं राजनीति के विभिन्न पहलुओं में उत्पन्न भ्रष्टाचार के यथार्थ रूप को उजागर करता है। उनका काव्य समसामयिक जीवन से जुड़े मुद्दों को रेखांकित करते हुए पेशेवर महिला की दोहरी भूमिका का अंकन करता है। ❑

**संदर्भ :**


1. जोशी, राजेश : दो पंक्तियों के बीच, राजकमल प्रकाशन, कवर पेज
2. वही, पृ. 9–10
3. वही, पृ. 55
4. वही, पृ. 54
5. वही, पृ. 62
6. वही, पृ. 23
7. वही, पृ. 74
8. वही, पृ. 26
9. वही, पृ. 95
10. वही, पृ. 21–22

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

# मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं की आत्मकथाओं में नारी चेतना

**कसीरा जहाँ**

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
(सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
राधा गोविंद बरुवा महाविद्यालय
फटाशील आमबाड़ी, गुवाहाटी-25)
9707197734
rubijahan81@gmail.com

**डॉ. नूरजहाँ रहमतुल्लाह**

शोध निर्देशक
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी
9435161974
rupadinory@gmail.com

**शोध-सार :**

मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं भारतीय साहित्य की मूर्धन्य महिला कथाकारों में से हैं। मन्नू भंडारी ने कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा की रचना कर जहाँ हिंदी साहित्य भंडार को समृद्ध किया है, वहीं निरूपमा बरगोहाईं ने कहानी उपन्यास, जीवनी, आत्मकथा तथा अनूदित साहित्य द्वारा असमीया साहित्य के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। दोनों लेखिकाओं ने अपनी-अपनी आत्मकथाओं में अपने जीवन की कथा को शब्दबद्ध किया है। जिसमें नारी जीवन के विविध रूप, संघर्ष आदि प्रमुख है। प्रस्तुत शोध पत्र में दोनों लेखिकाओं की आत्मकथा में व्यंजित नारी चेतना पर प्रकाश डाला जाएगा।

**बीज शब्द :**

आत्मकथा, नारी, जीवन संघर्ष, चेतना आदि।

**प्रस्तावना :**

20वीं शताब्दी के अंतिम दशक की बहुचर्चित लेखिका मन्नू भंडारी और निरूपमा बरगोहाईं समसामयिक कथाकार है। दोनों लेखिकाओं का जन्म एक साल के अंतराल में हुआ था। मन्नू भंडारी का जन्म 3 अप्रैल, सन 1931 में भानपुरा के मध्य प्रदेश में हुआ था, वहीं निरूपमा बरगोहाईं का जन्म 17 मार्च, सन 1932 को गुवाहाटी नामक स्थान में हुआ। दोनों लेखिकाओं में साहित्य के प्रति रुचि बचपन से ही थी। जीवन में अनेकों संघर्ष का सामना किया, अनेक उतार-चढ़ाव के पड़ावों को पार किया, लेकिन साहित्य सेवा निरंतर चलता रहा। मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं ने अपनी आत्मकथा में जीवन के अनेक अनकही बातों पर प्रकाश डाला है। मन्नू भंडारी की आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' सन 2007 ई. में प्रकाशित हुई तथा निरुपमा बरगोहाईं की आत्मकथा 'बिश्वास आरू संशयर माजेदि' का प्रकाशन सन 1993 ई. में हुई था। दोनों ही लेखिकाओं ने अपने आत्मकथाओं में नारी जीवन की समस्याओं, उसके संघर्ष तथा उसकी चेतना को वाणी दी है।

**अध्ययन में व्यवहृत पद्धति :**

प्रस्तुत शोध पत्र में विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। अवतरण एवं ग्रंथ-सूची आधुनिक भाषा संस्था (Modern Language Association) के अनुसार रखे गए हैं।

**विश्लेषण एवं निर्वचन :**

चेत शब्द में ना प्रत्यय जुड़ने पर चेतना शब्द बनता है, जिसका अर्थ है - बुद्धि या मनोवृति। भाषा शब्दकोश में चेतना शब्द का अर्थ सावधान होना या चौकस होना है। चेतना मानव को जीवित रखने की एक मानसिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा वह अपने अस्मिता को बनाए रखता है। स्वतंत्रता जीवन की पहली शर्त है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जब स्त्री शिक्षा तथा स्त्री समअधिकार को लेकर कई आवाजें उठीं। स्त्री को भी पुरुषों की भाँति शिक्षा के अधिकार की माँग की गई। स्त्री भी मनुष्य है, उसे भी समाज में समान अधिकार मिलना चाहिए, उन्हें भी समाज में पुरुषों के समान स्थान मिलना चाहिए, उनमें भी क्षमता है, इन विचारों के कारण नारी में मुक्त होने की भावना उत्पन्न होती है और यहीं भावना 'नारी चेतना' के जागृति का कारण बनती है। नारी चेतना अर्थात नारी का अपने अस्तित्व व अपनी सत्ता के लिए सचेत होना। यहीं भावना स्त्री चेतना है।

हिंदी साहित्य में नारी चेतना का इतिहास लम्बा और जटिल है। 20वीं सदी तत्कालीन पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षिक और साहित्यिक परिस्थितियों में काफी परिवर्तन हुआ। हिंदी साहित्य में नारी चेतना एक मुख्य विषय बनकर उभरा। जीवन के सभी क्षेत्रों में प्राप्त अनुभव स्त्री द्वारा लिखे गए साहित्य के विविध विधाओं में उभरकर आए है। महिला साहित्यकारों ने अपने वैचारिक चिन्तन से प्रेरित होकर अपने समकालीन परिस्थितियों को अपने लेखन में अभिव्यक्त किया है। स्त्री आत्मकथाएँ भी नारी चेतना का द्योतक है। 20वीं शताब्दी के पश्चात कई महिला साहित्यकारों ने अपनी आत्मकथा लिखी, जिसमें उन्होंने अपने जीवन संघर्ष के विविध पहलुओं को चित्रित किया है, जिसके मूल में उनकी चेतना है।

मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं के आत्मकथाओं में नारी चेतना के कई पहलुओं का चित्रण मिलता है। 'एक कहानी यह भी' और 'बिश्वास आरू संशयर माजेदि' में स्वयं के साथ साथ अन्य नारियों का चित्रण किया है। इन आत्मकथाओं में स्त्री संघर्ष का चित्रण के साथ नारी चेतना भी दिखाई देती है। 'एक कहानी यह भी' तथा 'बिश्वास आरू संशयर माजेदि' की मुख्य नारी पात्र स्वयं लेखिका है। मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं ने अपनी आत्मकथा में जीवन के अनुभवों, विशेषकर एक स्त्री के रूप में उनके चेतना को दर्शाया है। मन्नू भंडारी की आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' और निरूपमा बरगोहाईं की आत्मकथा 'बिश्वास आरू संशयर माजेदि' में नारी चेतना के निम्नलिखित पहलू दिखाई देते है-

**1.सामाजिक रूढ़ियों और पूर्वाग्रहों के विरुद्ध चेतना :**

दोनों आलोच्य आत्मकथाओं में नारी को सामाजिक रूढ़ियों और पूर्वाग्रहों से संघर्ष करते हुये देखा जाता है। भारतीय समाज व्यवस्था में परंपरा के नाम पर स्त्री के लिए अनेक नियम बनाये गये है। समाज में बाल-विवाह, पर्दा प्रथा, जाति प्रथा आदि सामाजिक कुप्रथाएँ उस समय मौजूद थी। लड़कियों को कम बोलना, घर की दहलीज के भीतर रहना मर्यादित माना जाता था। मन्नू भंडारी मारवाडी परिवार से थी। मारवाड़ी समाज में लड़कियों के लिए कई कड़े नियम थे। वहाँ लड़कियों के लिए नीची नजर और बंद जबान का ठप्पा लगा था। ऐसी पाबंधियों के बीच रहने के बावजूद भी हर विपरीत परिस्थिति का विरोध किया है। एकबार उनके घर कई साध्वियों का पढ़ाव हुआ था। उन साध्वियों के साथ लेखिका ने धार्मिक आडम्बरों पर काफी बहस किया। एक लड़की का इसतरह बहस करना दु:साहस का काम था। लेखिका अपने कॉलेज के दिनों में हड़तालें करवाती, भाषण देती तथा लड़कों के साथ विभिन्न कार्यवाहियों में भाग लेती है। उनकी इन गतिविधियों का विरोध कई लोगों ने किया। पिता के कुछ दकियानूसी मित्रों ने आकर लेखिका की काफी बुराई भी की। उस समय लड़कों का भाषण, हड़ताल आदि गतिविधियों में हिस्सा लेना एक आम बात थी, परन्तु लड़की के यह आबरू या इज्जत का प्रश्न बना दिया जाता। मन्नू भंडारी के पिता आधुनिक होते हुए भी कहीं न कहीं परम्परावादी सोच से नहीं उभर पाये थे। अत: लखिका का इन गतिविधियों में हिस्सा लेना उन्हें बर्दाश्त नहीं हो रहा था। जिसके कारण लेखिका और उनके पिता में वैचारिक टक्कर होने लगा। इसका उल्लेख करते हुए लेखिका कहती है-

'हाथ उठा-उठाकर नारे लगती, हड़तालें करवाती,

लड़कों के साथ शहर की सड़कें नापती लड़की को अपनी सारी आधुनिकता के बावजूद बर्दाश्त करना उनके लिए मुश्किल हो रहा था तो किसी की दी हुई आजादी के दायरे में चलना मेरे लिए।'' भंडारी, 2008, 23)

निरूपमा बरगोहाईं ने अपनी आत्मकथा 'बिश्वास आरू संशयर माजेदि' में अपने समय की सामाजिक रूढ़ियों के उल्लेख किया है। उन रूढ़िवादी परम्पराओं जो एक मनुष्य की प्रगतिशीलता में बाधक है, उनके विरुद्ध नारी चेतना को भी अभिव्यक्त किया है। उस समय असमिया समाज में भी लड़कियों को लड़कों की भाँति कहीं भी आने-जाने की स्वतन्त्रता नहीं थी। लेखिका के माता-पिता इस प्रकार के रूढ़िवादी विचारधारा से मुक्त थे, अत: लेखिका को अकेले घूमने-फिरने की पूरी आजादी थी। जिसका उल्लेख करती हुई लेखिका कहती है-

''आमार दिनत गाभरू छोवालीर बंधु थकार प्रश्न नूठिछिल, किंतु आमार घरत मोर स्वाधीनता आछिल मोर भाई-ककाईर दरे, मई स्वाधीन भावे अकले घूरी फूरिछिलो,'' (बरगोहाईं, 1995, 19)

(अर्थात हमारे समय जवान लड़कियों के मित्र होने का सवाल ही पैदा नहीं होता था, लेकिन मेरे घर में मेरी स्वाधीनता मेरे भाई-भैया की तरह ही थी, मैं स्वाधीन होकर अकेले ही घूमती-फिरती थी।)

इस प्रकार दोनों ही लेखिका ने सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करते हुए अपने व्यक्तिगत स्वाधीनता के प्रति सचेनता को दर्शाया है। स्त्री-पुरुष दोनों ही सामाजिक इकाई है, लेकिन दोनों के बीच पारिवारिक या सामाजिक व्यवहार में अन्तर देखा जाता है। दोनों ही लेखिकाओं के समकालीन समय में स्त्रियों को काफी पाबंधियों से गुजरना पड़ा था। घर से बाहर आने-जाने की पाबंदी केवल स्त्रियों को ही है, जबकि पुरुषों को इस क्षेत्र में काफी स्वाधीनता मिली है। इन्हीं पाबंधियों के कारण स्त्रियाँ शिक्षा व्यवस्था से कोसों दूर थी। भारतीय परिवार में लड़की के विवाह का निर्णय, वर का चयन घर के पुरुष या घर के मुखिया व्यक्ति द्वारा ही लिया जाता था। एसी स्थिति में मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं ने अपने विवाह का निर्णय स्वयं लेना उनके नारी चेतना को दर्शाता है। उनके अनुसार स्त्री भी समाज की स्वतंत्र सत्ता है, उन्हें भी अपने जीवन का निर्णय स्वयं लेने का अधिकार है। मन्नू भंडारी के पिता ने तो उनसे रिश्ता ही तोड़ दिया। उन्होंने अंत तक विरोध किया। जबकि निरूपमा बरगोहाईं के माता-पिता ने उनके निर्णय को स्वीकारा था।

लेखिका मन्नू भंडारी ने पत्नी के सुख और संतोष की दावेदारी करनेवाले ऐसे लोग को देखा है, जो अपनी पत्नियों पर प्रहार करते है। वह कहती है, कि कुछ पत्नियाँ शरीर पर प्रहार झेलती है, तो कुछ भावनाओं पर। यहाँ तक की लेखिका के लेखक पति राजेंद्र के विचार भी पुरुषवादी थे। उनके अनुसार पत्नी को नर्स की भाँति होना चाहिए।

**2. शिक्षा, स्वावलम्बनता तथा स्वतंत्रता के प्रति चेतना :**

मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं ने शिक्षा तथा स्वावलंबन के महत्व पर बल देती है। नारी सशक्तिकरण के लिए शिक्षा तथा स्वावलम्बन को महत्वपूर्ण मानती है। शिक्षा और स्वावलंबन के कारण दोनों लेखिकाओं ने समाज में एक नई पहचान स्थापित की है। अशिक्षित तथा परनिर्भरशीलता नारी जीवन को दुखदायी तथा कष्टकर बना देता है। परनिर्भरशीलता के कारण स्त्री को निर्णय लेने के अधिकार से कोसों दूर रहना पड़ता है। आर्थिक रूप से परतंत्र होने पर हर स्थिति में दूसरे के निर्णय को स्वीकार करना उनकी नियति बन जाती है। मन्नू भंडारी ने अपनी अपनी आत्मकथा में अपनी माता का वर्णन किया है, जो अशिक्षित तथा परनिर्भरशील थी, जिसके कारण पति के हर निर्णय को स्वीकार करना पड़ता। दोनों लेखिकाओं ने स्त्री शिक्षा पर बल दिया है। हालांकि इस क्षेत्र में वे स्वयं भाग्यशाली थी, क्योंकि उन्हें अपने माता-पिता से शिक्षा के लिए पूर्ण समर्थन मिला था। परिवार से मिले समर्थन के कारण दोनों लेखिकाओं के मन में शिक्षा तथा स्वावलंबनता के प्रति चेतना को आसान बना दिया।

**3.स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में समानता के प्रति चेतना :**

भारतीय समाज जेंडर आधारित अवधारणा से संचालित होता है। यह अवधारणा बच्चों में तो विभेद पैदा करता ही है, साथ पति-पत्नी, भाई-बहन आदि

के संबंधों को भी प्रभावित करते है। लैंगिक विभेद जन्म से ही शुरू हो जाता है। 'दुधों नहाओं पूतों फलों' जैसी आशीर्वाद में भी लैंगिक अंतर स्पष्ट दिखाई पड़ता है। लिंगवाद का असर लड़कियों के शिक्षा व्यवस्था पर भी पड़ता है, जिसका उल्लेख मन्नू भंडारी ने अपनी आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' में किया है। लेखिका ने अपने समय के सामाजिक अव्यवस्था पर अपनी आत्मकथा में प्रकाश डाला है। मन्नू भंडारी के पिता ने शिक्षा के क्षेत्र में लड़के तथा लड़की में कोई भेद नहीं किया, लेकिन लड़कियों को बाहर आने-जाने में रोक थी। साल में एकाध बार ही भाइयों के संग घूमने का मौका मिलता था। लेखिका निरूपमा बरगोहाईं के माता-पिता ने अपने बेटे-बेटियों में कोई शिक्षा या आने जाने को लेकर कोई विभेद नहीं किया। दोनों ही लेखिकाओं के समकालीन परिवेश में लिंगवाद देखा जाता है। गृहस्थ जीवन में पति-पत्नी दोनों की सहभागिता के बावजूद भी उनके संबंधों में सम्बन्धों में समानता वाला भाव नहीं था। भारतीय संस्कृति में ऐसे कई परम्पराएँ है, जहाँ पति को परमेश्वर का दर्जा देकर उन्हें पुजा जाता है। गाँव या देहात के सामान्य-साधारण लोगों की बात अगर छोड़ भी दी जाए तो स्वयं को आधुनिक कहलाने वाले स्त्री-पुरुष को समान मनाने वाले लोग भी उन व्रत-उपवास के समय परमेश्वर बनकर अपने पैर आगे बड़ा देते हैं। दोनों लेखिकाओं ने पति-पत्नी के इस रूप का विरोध करते हुए सहभागी तथा सहपाथेय माना है। निरूपमा बरगोहाईं का मानना है, कि पुरुषप्रधान समाज में अपने सुविधार्थ पुरुषों ने रीति-नियमों का निर्माण किया है। विवाह के समय वर और वधू की आयु में अन्तर होता है। वर आयु में वधू से बड़ा होता है। विवाह में उम्र का यह अंतर भी पुरुषों ने अपने सुविधा के लिए ही बनाया है। अपनी आत्मकथा में इसका उल्लेख करती हुई कहती है-

''आमार पुरुषप्रधान समाजत दरातकै कइनार वयस कम होवार कारण हेनों पुरुषर सुविधार अर्थे करा विधि-व्यवस्था फलश्रुति। कारण स्वामीये वृद्ध वयसलैके तथा मरणर समयलैके स्त्रीर सेवा-सुश्रुषा पुवार आशा थाके।''

(बरगोहाईं, 1995, 182)

अर्थात् हमारे पुरुषप्रधान समाज में वर से वधू की उम्र कम होने का कारण यह है, पुरुष के सुविधा के लिए किया गया व्यवस्था। कारण स्वामी के वृद्धवस्था या मृत्यु तक स्त्री की सेवा-सत्कार पाने की आश।

लेखिका मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं ने यह स्वीकारा है, कि शारीरिक शक्ति को छोड़कर स्त्री-पुरुष दोनों ही समान सामर्थशाली है।

**4. आत्म-जागरूकता के प्रति चेतना :**

मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं की आत्मकथा में नारी के आत्म जागरूकता का दर्शन मिलता है। मन्नू भंडारी ने अपनी आत्मकथा में दो पीढ़ी के नारी का उल्लेख किया है। उन्होंने माँ के रूप में पुरानी पीढ़ी तथा अपने रूप में आधुनिक पीढ़ी की नारी को चित्रित किया है। लेखिका के अनुसार पुरानी पीढ़ी की स्त्री और नई पीढ़ी के स्त्री की सोच में काफी परिवर्तन आ चुका है। लेखिका के अनुसार उनसे पहली वाली पीढ़ी की स्त्रियों में अस्मिता बोध की भावना का अभाव था। वह तो मात्र अपने रिश्तों से ही पहचानी जाती थी। इस रिश्तों से हटकर उनका अपना भी कोई पहचान है, इसका बोध उन्हें नहीं था, लेकिन शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता तथा जागरूकता के कारण उसे अपने स्वतंत्र तथा जीवंत इकाई का बोध हो गया है। अपनी आत्मकथा में इसका उल्लेख करती हुई लेखिका लिखती है-

'हमसे पहले पीढ़ी की स्त्री का न तो कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व होता था.....न ही कोई स्वतंत्र पहचान, वह तो मात्र रिश्तों से ही पहचानी जाती थी। इन रिश्तों से परे भी उसका कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व है... उसका अपना कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व है...उसका अपना कोई नाम (अस्मिता) भी है, इस बात का उसे बोध तक नहीं था....न उसे, न उसके परिवार के लोगों को बल्कि कहूँ कि समाज को। लेकिन समय के साथ-साथ शिक्षा, जागरूकता, आर्थिक स्वतन्त्रता और बाहरी दुनिया से बढ़ते रिश्तों ने उसके भीतर इस बोध को जगाया कि रिश्तों से परे भी उसकी अपनी एक स्वतंत्र सत्ता है ...अपनी अस्मिता है कि वह भी समाज कि एक स्वतंत्र जीवन्त इकाई है।''

(भंडारी, 2008, 118)

दूसरी ओर निरूपमा बरगोहाईं के आत्मकथा 'बिश्वास

आरू संशयर माजेदी' में नारी में आत्मबोध की भावना परिलक्षित होती है। स्वयं लेखिका में बचपन से ही आत्मबोध की चेतना दिखाई देती है।

''जीवनटोत अइन छोवालीर दरे सहज-सरल गतानूगतिक पथत चलि जावलै दिया मोर पक्षे एइबाबेइ कठिन आछिल जे मोर अति मजबूत स्वाधीन मन एटा-मोर जीवनत सकलो सिद्धान्त बहुत कम बयसरे परा मई अकलेइ लै आहिछिलो।''

(बरगोहाईं, 1995, 45)

अर्थात् जीवन में दूसरी लड़कियों की तरह सहज-सरल गतानुगतिक रास्ते पर चलना मेरे लिए एकदम कठिन था, क्योंकि मुझमें एक अत्यन्त मजबूत स्वाधीन मन था-अपने जीवन की सारे फैसले बहुत कम आयु से खुद ही लेती थी।

इससे यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक परिवर्तन के साथ नारी में आत्मबोध की भावना आती है। आत्मजागरूकता के कारण वह अपने स्वतंत्र सत्ता से परिचित हुई, जिसके कारण अस्मिता के लिए संघर्ष का सिलसिला शुरू हुआ।

**निष्कर्ष :**

उपरोक्त विवेचन से यह कहा जा सकता है कि आलोच्य दोनों आत्मकथाओं में व्यक्त मन्नू भंडारी तथा निरूपमा बरगोहाईं के विचारों से नारी चेतना के विविध पक्ष उभरकर आते हैं। दोनों लेखिकाओं ने नारी चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। दोनों लेखिकाओं ने अपनी स्वतन्त्रता और अधिकारों के लिए संघर्ष किया है। अपने अस्तित्व की खोज का समाज में एक अलग पहचान बनायी है। एक कहानी यह भी तथा बिश्वास आरू संशयर माजेदि' में नारी अस्मिता, उसके आत्म-पहचान तथा उसकी स्वतन्त्रता को दर्शाया गया है। ❑

**संदर्भ ग्रंथों की सूची**


1. भंडारी, मन्नू एक कहानी यह भी, 2019, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली-110051
2. बरगोहाईं, निरूपमा. बिश्वास आरू संशयर मजेदि. प्रथम संस्करण. 2018, श्री अजय कुमार दत्ता, स्टूडेंट्स स्टोर, गुवाहाटी-781001
3. भंडारी, मन्नू एक कहानी यह भी, 2019, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली-110051
4. बरगोहाईं, निरूपमा. बिश्वास आरू संशयर मजेदि. प्रथम संस्करण. 2018, श्री अजय कुमार दत्ता, स्टूडेंट्स स्टोर, गुवाहाटी-781001
5. भंडारी, मन्नू एक कहानी यह भी, 2019, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली-110051
6. बरगोहाईं, निरूपमा. बिश्वास आरू संशयर मजेदि. प्रथम संस्करण. 2018, श्री अजय कुमार दत्ता, स्टूडेंट्स स्टोर, गुवाहाटी-781001

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# প্রবীণা শইকীয়াৰ উপন্যাসৰ বিষয়বস্তুৰ সংবেদনশীলতা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

ড° মৌচুমী বৰদলৈ হাজৰিকা

অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
কৰ্মশ্ৰী হিতেশ্বৰ শইকীয়া মহাবিদ্যালয়
ছয়মাইল, গুৱাহাটী-৭৮১০২২
৯৮৫৪০২০০২৬
৮৬৩৮৬৮২৯০৬
mowmi18@gmail.com

**আৰম্ভণি ঃ** স্বাধীনতাৰ পৰৱৰ্তী কালত স্ত্রীশিক্ষা ব্যৱস্থাৰ আমূল পৰিৱৰ্তনে নাৰী সমাজক যথেষ্ট উৎসাহিত কৰি তুলিলে। সাহিত্য, সমাজ সেৱা, বিজ্ঞান আদি বিভিন্ন দিশত নাৰীসকলে পূৰ্বতকৈ দুগুণ মনোবলেৰে অগ্রগামী হৈ উঠে। সাহিত্যৰচনাৰ ক্ষেত্রত এই সময়ত বিশেষভাৱে অৱদান আগবঢ়োৱা বহুতো নাৰী লেখিকাৰ ভিতৰত প্রবীণা শইকীয়ৰ (১৯৩৪-১৯৯৮) নাম ল'ব পাৰি। মণিদীপ আৰু ৰামধেনু কাকতত কবি হিচাপে আত্মপ্রকাশ কৰা এইগৰাকী লেখিকাৰ পঞ্চাশৰ অধিক কবিতা পোৱা যায়। গল্প সংকলন কেইখন হৈছে ঃ অবিনাশী স্বপ্ন, চিত্র তুৰগ, প্রিয়তম। এগৰাকী সফল অনুবাদিকা স্বৰূপে তেওঁৰ অনুবাদমূলক ৰচনা কেইখন — লুইছ কেৰেলৰ অজান দেশত এলিচ, দাপোণ দেশত এলিচ আৰু স্মার্ক চিকাৰ, ষ্টিভেন্সনৰ অমূল্য ৰত্নৰ দ্বীপ, আন্না ছুৱেলৰ ক'লামণি, জন ৰাস্কিনৰ আন টু দিছ্ লাষ্ট, চার্ল্ছ লেম্ব আৰু মেৰী লেম্বৰ টে'ল্ছ ফ্রম শ্বেইক্সপীয়েৰৰ কেবাটাও ৰচনা। হিন্দীৰ পৰা অনুবাদ চিক্কৰীৰ ৰাজেন্দ্র, আৰ. জি. ভাণ্ডাৰকাৰ। বঙলাৰ পৰা অনুবাদ এক্কড়ীৰ স্বপ্ন।

প্রবীণা শইকীয়াই (১৯৩৯-১৯৯৯ চন) 'ৰামধেনু'ৰ পাতত কবি হিচাপে আত্মপ্রকাশ কৰাৰ পাছত আন আন ৰচনাতো হাত দিয়ে। ঔপন্যাসিক হিচাপে পৰিচয় পোৱা শইকীয়াই 'উত্তৰায়ণ' (১৯৬৭), 'সিংহদুৱাৰ' (১৯৮২) আৰু 'শুকুলা ঘোঁৰা' নামৰ তিনিখন উপন্যাস ৰচনা কৰিছে। শইকীয়াই তেওঁৰ উপন্যাস তিনিখনৰ মাধ্যমেৰে সমাজত নাৰী আৰু পুৰুষৰ পাৰস্পৰিক সু-সম্পর্কৰ ফলত সৃষ্টি হোৱা সামাজিক মূল্যবোধ অতি সুন্দৰভাৱে প্রতিপন্ন কৰিবলৈ বিচাৰিছে।

**সমল ঃ** প্রবীণা শইকীয়াৰ উপন্যাসৰ বিষয়বস্তুৰ সংবেদনশীলতা ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন শীর্ষক গৱেষণা মূলক প্রবন্ধটো প্রস্তুত কৰোতে প্রধানকৈ বিষয় সম্পর্কে থকা বিভিন্ন গ্রন্থ আলোচনী প্রাসংগিক পুথিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

**উদ্দেশ্য ঃ** কবিতা, উপন্যাস, গল্প, অনুবাদ আদি বিভিন্ন সাহিত্যৰ দিশত অৱদান আগবঢ়োৱা এইগৰাকী নীৰৱ সাহিত্যিকৰ বিষয়ে উত্তৰপুৰুষক জনোৱা।

**পদ্ধতি ঃ** গৱেষণামূলক প্রবন্ধটো প্রস্তুত কৰোতে বিশ্লেষণাত্মক, বর্ণনাত্মক তথা গৱেষমামূলক, আটাইকেইটা পদ্দতিৰে সহায় লোৱা হৈছে।

**মূল উপন্যাসকেইখনৰ আলোচনা ঃ**

**উত্তৰায়ণ উপন্যাস —**

'উত্তৰায়ণ' উপন্যাসখন ১৯৬৭ চনত প্ৰথম প্ৰকাশ হৈ ওলায়। উপন্যাসৰ নায়িকা মালবিকা। ককায়েক জয়ন্ত আৰু আইতাকৰ সৈতে অতি মৰমত ডাঙৰ হোৱা ছোৱালী। শ্বিলঙৰ এখন মিছনেৰী স্কুলত পঢ়ি থাকোঁতেই তাইৰ বিয়া হয়। বিবাহিত মালবিকাই কিন্তু স্বামীক পাই সুখী নহয়। কাৰণ তাই বিচৰা মতে স্বামী অজয় এজন ভাবপ্ৰৱণ, সৌন্দৰ্য-বিলাসী মনৰ ব্যক্তি নাছিল। মালবিকা হতাশ হৈ পৰিল। লাহে লাহে মালবিকা অজয়ৰ সন্তানৰ মাতৃ হ'বলৈ আগবাঢ়িল। দুৰ্ভাগ্যক্ৰমে সেই সময়তে অজয়ৰ মৃত্যু হোৱাত তাই ককায়েক জয়ন্ত আৰু আইতাকৰ কাষলৈ ঘূৰি যায়। ককায়েক থকা সেই সৰু ঠাইডোখৰতে স্ত্ৰীৰোগ বিশেষজ্ঞ ডাক্তৰ ত্ৰিদিবানন্দ চৌধুৰী আৰু নিৰঞ্জন দুৱৰা নামৰ ঔষধ কোম্পানীৰ ৰিপ্ৰেজেণ্টেটিভ এজনৰ সহযোগত মালৱিকাৰ এটি সুন্দৰ কন্যা সন্তানৰ জন্ম হয়।

ডাক্তৰ ত্ৰিদিবানন্দ চৌধুৰী মালবিকাহঁত থকা চহৰখনলৈ নতুনকৈ আহিছিল। জীৱনত সন্মুখীন হোৱা শোকাৱহ অভিজ্ঞতাৰ বাবে তেওঁ গুৱাহাটীৰ পৰা কিছুদিনৰ বাবে আঁতৰি গৈ এখন সৰু চহৰত আছিলগৈ। চৌধুৰীৰ জীৱনৰ একমাত্ৰ নাৰী আছিল তেওঁৰ পত্নী ললিতা। ললিতাই অশেষ স্নেহেৰে ৰুক্ষ, কৰ্কশ, নিৰ্মম স্বভাৱৰ চৌধুৰীৰ জীৱন সুন্দৰ, মধুৰ আৰু পৰিপাটি কৰি তুলিছিল। সাত বছৰ অপেক্ষাৰ অন্তত ললিতা সন্তান সম্ভৱা হয়। কিন্তু সন্তান জন্মৰ সময়তে তেওঁৰ মৃত্যু হয় আৰু লগতে সন্তানটিৰো। ফলত চৌধুৰীৰ জীৱন অৱসাদে ভৰি পৰে।

ইতিমধ্যে মালবিকাৰ আইতাকৰ মৃত্যু হয় আৰু ককায়েকে কণমানি বীথিৰ সৈতে মালবিকাক লৈ গুৱাহাটীলৈ গুচি আহে। জয়ন্তৰ যোগেদি মালবিকাৰ ৰিপ্ৰেজেণ্টেটিভ নিৰঞ্জনৰ লগত পৰিচয় হয়। লাহে লাহে মালবিকাই নিৰঞ্জনৰ মাজত নিজে বিচৰা অনিন্দ্যসুন্দৰ, শান্ত, কোমল স্বভাৱৰ ব্যক্তিত্ব বিচাৰি পায়। নিৰঞ্জনো তাইৰ প্ৰতি সমানে অনুৰক্ত হৈ পৰে। কিন্তু কন্যা বীথিৰ বাবে এই ভালপোৱা বন্ধনমুক্ত হৈ থাকে।

ইফালে মাজে মাজে মালবিকাৰ সন্তান বীথিক চিকিৎসা কৰি আৰু সান্নিধ্য লাভ কৰি পিতৃত্বৰ পৰা বঞ্চিত চৌধুৰীৰ বীথিৰ প্ৰতি পিতৃস্নেহ উথলি উঠে। সেই সময়তে জয়ন্তই স্কলাৰশ্বিপ পাই বিদেশত পঢ়িবলৈ যাব লগা হয়। অকমানি বীথিৰ প্ৰতি থকা অশেষ মৰম দেখি জয়ন্তই ভনীয়েকক বুজাই-বঢ়াই ডাঃ চৌধুৰীৰ লগত বিয়া পাতি দিয়ে। কন্যাৰ প্ৰতি মৰম আৰু পত্নীৰ প্ৰতি কৰ্তব্যবোধ থকা সত্ত্বেও কিন্তু মালবিকাই চৌধুৰীৰ লগত থাকি সন্তুষ্ট নহ'ল। মালবিকাই চৌধুৰীৰ দ্বিতীয় পত্নীৰূপে নিজকে প্ৰতাৰিতা, বঞ্চিতাহে অনুভৱ কৰে। তাই মানসিকভাৱে তেওঁৰ পৰা সম্পূৰ্ণ আঁতৰি আহি বেনাৰসত এম এ পঢ়ি থকা নিৰঞ্জনৰ প্ৰেমৰ স্মৃতিত আকুল হৈ পৰে।

ইতিমধ্যে নিৰঞ্জন বেনাৰসৰ পৰা উভতি আহে। এদিন মালবিকাৰ সৈতে ফুৰিবলৈ গৈ দুয়োজনেই দুয়োৰে প্ৰতি থকা প্ৰেম, আৱেগ, ভালপোৱাৰ বহিৰ্প্ৰকাশ কৰিছে। দুয়োজনে অনুভৱ কৰিছে যে মালবিকাৰ সন্তানে দুয়োজনৰ মাজত ব্যৱধানৰ সৃষ্টি কৰে যদিও তেওঁলোকৰ প্ৰেম কিন্তু সাৰ্থক প্ৰেম।

সেই ৰাতিয়েই প্ৰেমিক নিৰঞ্জনৰ লগত কিছু পলমকৈ ঘৰলৈ ঘূৰি অহাৰ পিছত স্বামী চৌধুৰীৰ লগত মালবিকাৰ তীব্ৰ বাক-বিতণ্ডা চলে আৰু তাইৰ কঠোৰ ব্যৱহাৰত ধীৰ, স্থিৰ স্বভাৱৰ চৌধুৰী মানসিকভাৱে যথেষ্ট আঘাতপ্ৰাপ্ত হৈ হৃদৰোগত আক্ৰান্ত হয়। তেনে অৱস্থাত মালবিকা নিজৰ কৰ্মৰ প্ৰতি যথেষ্ট অনুতপ্ত হয়। বাস্তৱিকতাৰ প্ৰতি বিমুখ মালবিকাই স্বামীৰ জীৱন ৰক্ষাৰ বাবে ভগৱানৰ ওচৰত বন্তি জ্বলাই কাতৰ প্ৰাৰ্থনা কৰে।

**সিংহদুৱাৰ উপন্যাস —**

১৯৮২ চনত প্ৰকাশিত 'সিংহদুৱাৰ' প্ৰবীণা শইকীয়াৰ দ্বিতীয় উপন্যাস। উপন্যাসখনৰ মূল চৰিত্ৰ বিভূতি। বিভূতি এজন সুদৰ্শন পুৰুষ, সাহিত্যিক, সাংবাদিক আৰু গুৱাহাটীৰ এখন কলেজৰ প্ৰবক্তা। সৰু কালছোৱা বিভূতিয়ে গাঁৱৰ বোকা-পানী গচকি ডাঙৰ হোৱা বাবে বৰ্তমানেও গাঁৱৰ মোহ এৰিব পৰা নাই। বিভূতিৰ পত্নী কল্পনা, সংস্কৃত সাহিত্যৰ ছাত্ৰী। সুন্দৰ, সুপুৰুষ স্বামীক পাই কল্পনা গৰ্বিত। গাঁও আৰু চহৰৰ স্থিতি ৰাখিব নোৱাৰা বিভূতিয়ে বিয়াৰ দুবছৰ পিছতো হীনমন্যতাত ভুগি পত্নীক নিনিয়াকৈ উজনিৰ গাঁৱৰ ঘৰলৈ গৈছে। সাহিত্যিক বিভূতিয়ে বিভিন্ন কামত ঘূৰি যোৰহাটত থকা বন্ধু কবি মহেন্দ্ৰ চৌধুৰীৰ ঘৰত সোমায়। পত্নী কল্পনাৰ কথা মতে, বিভূতিয়ে কল্পনাৰ বান্ধৱী মণিকাৰ খবৰ লৈ যাবলৈ সিহঁতৰ ঘৰলৈও যায়। কিন্তু আৱেদনময়ী মণিকাৰ

ওচৰত নিজৰ সকলোখিনি সঁপি দি বিভূতিয়ে কিছু অপৰাধী অনুভৱ কৰে আৰু শিৱসাগৰৰ নিজ গাঁৱলৈ যায়।

ইয়াৰ পাছতে বিভূতিৰ জীৱনলৈ অহা আন এগৰাকী নাৰী হৈছে সম্পৰ্কীয় ককায়েক পোনা আৰু গাঁৱৰে বায়েক মামণিৰ জীয়েক জয়া। তাই গুৱাহাটীলৈ পঢ়িবলৈ আহি বিভূতিৰ প্ৰতি অনুৰক্ত হয়। কেৱল ব্যক্তিগত সুখ আৰু আমোদত ব্যস্ত থকা আৰেগসৰ্বস্ব হৃদয়ৰ নায়ক বিভূতি জয়াৰ অকৃত্ৰিম, নিভাঁজ ৰূপত মোহ যায়।

মণিকাৰ মাকৰ মৃত্যুৰ বাতৰি পাই বিভূতি আকৌ যোৰহাটত মণিকাৰ ঘৰলৈ যায় আৰু এক নিবিড় মুহূৰ্তত গম পায় যে মণিকা কেন্সাৰ ৰোগত আক্ৰান্ত। বিভূতিৰ বন্ধু আৰু মণিকাৰ পাণিপ্ৰাৰ্থী মহেন্দ্ৰই মণিকাক চিকিৎসা কৰায় আৰু মৃত্যুৰ সময়ত মণিকাই মহেন্দ্ৰৰ নিঃস্বাৰ্থ প্ৰেম উপলব্ধি কৰি শেষ নিঃশ্বাস ত্যাগ কৰে।

ইফালে বিভূতিয়ে জয়াৰ আকৰ্ষণৰ পৰা মুক্ত হয় আৰু নিজে তাইৰ পিতৃৰ ভূমিকা লৈ বন্ধু মহেন্দ্ৰৰ হাতত জয়াক সমৰ্পণ কৰে। অৱশেষত পত্নী কল্পনাৰ ওচৰতহে বিভূতিয়ে যেন এক নতুন জীৱন বিচাৰি পাইছে। উপন্যাসখনৰ শেষ অংশত পত্নী কল্পনাৰ একাগ্ৰ প্ৰেম আৰু আধ্যাত্মিকতাই বিভূতিক অভিভূত কৰি তুলিছে।

'সিংহদুৱাৰ'ৰ বিভূতি চৰিত্ৰটো আধুনিক জটিল চৰিত্ৰ। গাঁও আৰু চহৰৰ সংমিশ্ৰণত গঢ়ি উঠা বহুতো উপ-কাহিনীয়ে উপন্যাসখনৰ কলেবৰ বৃদ্ধি কৰিছে। স্বাধীনতা লাভৰ পিছৰ গাঁও আৰু চহৰবোৰৰ মাজত বাঢ়ি অহা ব্যৱধানৰ সূক্ষ্ম আৰু সুন্দৰ বিশ্লেষণ লেখকে এই উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে প্ৰকাশ পাইছে।

**শুকুলা ঘোঁৰা উপন্যাস** —

প্ৰবীণা শইকীয়াৰ তৃতীয় উপন্যাস 'শুকুলা ঘোঁৰা'। এই উপন্যাসখনৰ মূল ভিত্তি হৈছে চৰিত্ৰৰ মানসিক জগত। মানসিক জগতৰ যন্ত্ৰণা, বিৱৰ্তন আৰু পূৰ্ণতা প্ৰাপ্তিয়েই উপন্যাসখনৰ মূল বৰ্ণনীয় বিষয়। উপন্যাসখনৰ মূল চৰিত্ৰ হেমধৰ। হেমধৰ গাঁৱৰ বিদ্যালয়খনৰ গণিত আৰু বিজ্ঞানৰ শিক্ষক। অথচ শিক্ষক হিচাপে হেমধৰৰ নিজৰ ওপৰতে বিশ্বাস নাই। তাৰ গণিতৰ ভেটি পকা নহয়— *বিজ্ঞান তাৰ বাবে অবৈজ্ঞানিক। গাঁৱৰ প্ৰকৃত বিশ্বাস আৰু ধাৰণাবোৰহে যেন প্ৰকৃত বিজ্ঞান।* [১]

হেমধৰ ঘৰৰ পোহনীয়া কুকুৰটোৰ মৃত্যু হোৱাত তাৰ মানসিক অৱস্থাৰ বৰ্ণনা লেখিকাই এনে ধৰণে দিছে— *গাঁতটো খান্দিবলৈ হেমধৰৰ সৰহপৰ নালাগিল। কুকুৰটো কোলাত কৈ দাঙি আনি আলফুলকৈ গাঁতৰ ভিতৰত থ'লে, তাৰ গোটেই গাতেই হাত ফুৰাই মৰম কৰি ক'লে, 'ৰাতি ঘৰত যম সোমাইছিল। কোনোবা এটাক নিউ বুলি আহিছিল। তই নিজক আগবঢ়াই দি আমাৰ এটাক ৰক্ষা কৰিলি। ইয়াৰ পৰাই তই এতিয়া ঘৰ ৰখি থাকিবি?* [২]

যুগ যুগ ধৰি হেমধৰহঁত বাস কৰি থকা সমাজখনে অবৈজ্ঞানিক ধ্যান-ধাৰণাসমূহ চৰ্চা কৰি আছে। সেয়েহে এটাদশকৰ শিক্ষাগ্ৰহণে এনেধৰণৰ চিন্তা ধাৰণাৰ পৰা সিহঁতক মুক্ত কৰিব পৰা নাই। নিজৰ বিজ্ঞান আৰু গণিতৰ ভেটি পকা নহ'লেও বিদ্যালয়ত হেমধৰে গণিত আৰু বিজ্ঞান পঢ়ুৱায়। গণিত আৰু বিজ্ঞান শিক্ষাৰ নামত দুটামান জীণ নোযোৱা যান্ত্ৰিক কথাবে হেমধৰহঁতৰ শিক্ষকজনে শ্ৰেণীৰ সময়খিনি পাৰ কৰিছিল। হেমধৰেও একে কামকে কৰিছে। কিন্তু উপন্যাসখনৰ বিভিন্ন অংশত হেমধৰৰ মনৰ জগতৰ পৰিৱৰ্তন দেখা গৈছে। নিজে কৰা এনে অন্যায় কামৰ বাবে তাৰ অন্তৰ্জগতত অনুতাপৰ জুই জ্বলিছে আৰু লগে লগে নিজৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীহঁতক প্ৰকৃত শিক্ষা দিবলৈ হেমধৰে সংকল্প লৈছে।

মানুহ হিচাপেও হেমধৰৰ নিজৰ ওপৰত আস্থাৰ ভাব নাই। হেমধৰৰ পত্নী সাৱিত্ৰী ৰূপৱতী, তাইৰ ৰূপৰ বিষয়ে গাঁৱত আলোচনা হয়। হেমধৰৰ আত্মবিশ্বাসহীনতা আৰু অক্ষমতাবোধে সাৱিত্ৰীৰ সৌন্দৰ্যৰ ওচৰত ঘৃণাৰ ৰূপ লৈছে। আত্মবিশ্বাসৰ ফলত হেমধৰৰ মনত দুঃচিন্তাই প্ৰৱেশ কৰিছে। উপন্যাসখনৰ প্ৰথম অংশতে খিৰিকীৰে প্ৰৱেশ কৰা কুণ্ডলীৰ জৰিয়তে প্ৰতীকাত্মকভাৱে লেখিকাই বৰ্ণনা কৰিছে— *খিৰিকীখনৰ জাপ খাই থকা ফালটো হঠাৎ খোল খাই গ'ল। এছাটি ধোঁৱা নে ছায়া খিৰিকীখনেদি ভিতৰ সোমাই আহি সাৱিত্ৰীক একেবাৰে ঢাকি ধৰিলে। তাৰ ছিটিকনি সোণকণৰ ওপৰতো পৰিল। হেমধৰ ঘপহ্‌কৈ বিছনাত বহিল। ল'ৰাটো টান মাৰি কোলালৈ তুলি ল'লে। ছাঁটো ঘনীভূত হৈ এডাল কুণ্ডলীৰ দৰে হ'ল আৰু সাৱিত্ৰীক মেৰাই ধৰিলে।* [৩]

হেমধৰৰ মনৰ জগতৰ এই ধৰণৰ ভ্ৰমে পাছলৈ হিংসাত্মক পথেৰে আত্মপ্ৰকাশ কৰিলে। হেমধৰে সাৱিত্ৰীক বিনা দোষত গাৰ জোৰেৰে চৰ এপাত বহুৱাই দি বাহ্য জ্ঞানহীন অৱস্থাপ্ৰাপ্ত কৰায়। হেমধৰৰ মাকেও সাৱিত্ৰীৰ চুলিকোছাত ধৰি ঘোটালিবলৈ ধৰে। সাৱিত্ৰীৰ হিতাহিত জ্ঞান লোপ

পায়। তাইৰ মুখেৰে ফেন ওলাবলৈ ধৰে। দৈনন্দিন সৰু-বৰ আন আন কিছুমান কথাৰ মাজেৰেও হেমধৰে সাৱিত্রীৰ জীৱন যন্ত্রণাময় কৰি তোলে। এবাৰ হেমধৰৰ ছাত্র মাধৱৰ আগতে সাৱিত্রীক চকু পোন্দোৱাই ধৰি অপদস্থ কৰিলে। হেমধৰৰ ওচৰত সাৱিত্রীৰ মান-সন্মানৰ কোনো মূল্যই নোহোৱা হৈ গ'ল।

সাৱিত্রীয়ে নিজৰ অস্তিত্বহীনতাৰ কথা ভালকৈয়ে উপলব্ধি কৰিলে। এনেদৰে জীয়াই থকাটো তাইৰ কাৰণে অসহনীয় হৈ পৰিল। সৰুকালত সকলোৱে তাইৰ ৰূপৰ প্রশংসা কৰিছিল। অলপ প্রশংসা, অলপ আনন্দ আৰু ভালপোৱাই তাইৰ মনটো সুখী কৰি তুলিছিল। কিন্তু যি ৰূপৰ নিমিত্তে তাই সকলোৰে পৰা প্রশংসা লাভ কৰিছিল, সেই একে ৰূপেই এতিয়া তাইৰ দুখৰ কাৰণ হৈ পৰিল। যি তিলটোৱে তাইৰ ৰূপত সুৱগা চৰাইছিল, সেই তিলটেৰ বাবেই তাই কুলক্ষণীয়া নাৰীৰ ৰূপত পৰিগণিত হ'ল। সাৱিত্রীয়ে ক্ষোভতে গালৰ তিলটো খুৰখনেৰে বখলিয়াই পেলালে। তাইৰ যন্ত্রণাকাতৰ কেকনি শুনি হেমধৰ দৌৰি আহিল। তাইৰ তেজ দেখি হেমধৰে মৃত্যু-যন্ত্রণা প্রত্যক্ষ কৰিলে। তেতিয়হে হেমধৰে মৃত্যুৰ কদর্যতা আৰু তাৰ তুলনাত জীৱনৰ সুন্দৰতাক উপলব্ধি কৰিব পাৰিলে। ইয়াৰ লগে লগে হেমধৰে নিজৰ জীৱনত সাৱিত্রীৰ মূল্যও হৃদয়ংগম কৰিব পাৰিলে।

পুনৰ এবাৰ সাৱিত্রীয়ে গাত জুই লগাই দিবলৈ চেষ্টা কৰিলে। এইবাৰো হেমধৰে সাৱিত্রীক কথমপি ৰক্ষা কৰিলে। অৱশেষত আন এদিন মাজৰাতি আপোনঘাতী হোৱাৰ পৰা হেমধৰে সাৱিত্রীক শেষবাৰৰ কাৰণে ৰক্ষা কৰিলে। জীৱনৰ প্রতি হেৰোৱা মোহ, জীয়াই থকাৰ ইচ্ছা সাৱিত্রীয়ে পুনৰ ঘূৰাই পালে। হেমধৰেও আত্মবিশ্বাস ঘূৰাই পালে। জীৱনৰ সপক্ষে আৰু মৃত্যুৰ বিপক্ষে যুঁজ কৰি যাবলৈ হেমধৰ দৃঢ়প্রতিজ্ঞ হ'ল। হেমধৰ বিজয়ী হ'ল। মুকলি তৰাৰে ভৰা আকাশৰ তলত প্রাণৰ সমস্ত ভালপোৱাৰে হেমধৰে সাৱিত্রীক বুকুত সাৱটি ল'লে।

উপন্যাসখনত সমান্তৰালকৈ যশোদা বুঢ়ীৰ চৰিত্রটোও বিকশিত হৈছে। সমাজৰ সংকীর্ণমনা, ভণ্ড, বৰমুৰীয়াসকলৰ একছত্রী কর্তৃত্বৰ বাহ্যিক ফোপোলা ৰূপটো এই উদাৰমনা, নিঃস্বার্থ যশোদা বুঢ়ীয়ে উদঙাই দিছে। চৰিত্রৰ দোষ আছে বুলি গাঁৱৰ জীয়ৰী ফেঁচুক ক্ষমতাশীল কেইগৰাকীমানে বিচাৰ বহুৱাই গাঁৱৰ সমাজৰ পৰা বাজ কৰি দিলে। অথচ ফেঁচুৰ ঘৰতে ৰাতিৰ অন্ধকাৰত আটাইখনৰে বাহৰ। সেই বৰমুৰীয়াসকলৰ চাৰিত্রিক ভণ্ডামি বিয়াৰ ৰভাতলীত যশোদা বুঢ়ীয়ে সমজুৱাৰ আগত উদঙাই দিছে এনেদৰে— *তহঁতৰ দুটা নাক আছে। এটা চুটি আৰু এটা দীঘল। সভালৈ আহিলে চুটিটোৰ ওপৰত দীঘলটো খুৱাই লৰ। মেধি, নাম লগোৱা তহঁতৰ কথা মই নাজানো নে? কৃষ্ণ গোসাঁইৰ দৰে তহঁতৰ কেইজনীহঁত গোপিনী আছে।* [৪]

সত্য হ'লেও অপ্রিয় কথা কোৱাৰ অপৰাধত যশোদা বুঢ়ীক লগে লগে ৰভাতলীৰ পৰা বাহিৰলৈ উলিয়াই লৈ যোৱা হ'ল। পিছদিনাখন ৰাতিপুৱা পুখুৰীৰ পানীৰ মাজত কৰুণভাৱে যশোদা বুঢ়ীৰ মৃতদেহটো পোৱা গ'ল। এই মৃত্যুক আত্মহত্যা বুলি অভিহিত কৰি আপোনঘাতী মানুহৰ বাবে নির্দিষ্ট কঠোৰ শাস্ত্রসন্মত বিধি মানিবলৈ প্রতিশোধপৰায়ণ গাঁৱৰ বৰমূৰীয়াসকল দৃঢ়প্রতিজ্ঞ হ'ল। কিন্তু হেমধৰ, মাধৱকে ধৰি গৰখীয়া চুকৰ উঠি অহা ডেকাচমে তাৰ তীব্র প্রতিবাদ জনালে। তেওঁলোকে বুঢ়ীৰ নশ্বৰ দেহ সসন্মানে সৎকাৰ কৰিলে। বয়সস্থসকলৰ কথা নৰজিল। যশোদা বুঢ়ীয়ে স্বীকৃতি পালে। অসত্যৰ ওচৰত সত্যৰ জয় হ'ল। আৱৰণেৰে সজাই ৰখা ভণ্ডামিৰ মুখা মুকলি হ'ল।

উপন্যাসখনত চিহ্নিত উল্লেখনীয় দিশটো হ'ল হেমধৰৰ লগতে সমাজখনৰ মানসিক উত্তৰণ। যশোদা বুঢ়ীৰ সৎকাৰে অন্যায় আৰু ভণ্ড বৰমূৰীয়াসকলৰ একনায়কত্বৰ আধিপত্যক অন্ত পেলাইছে।

প্রবীণা শইকীয়াৰ 'উত্তৰায়ণ', 'সিংহদুৱাৰ' আৰু 'শুকুলা ঘোঁৰা'— এই তিনিওখন উপন্যাসৰ প্রথম দুখন উপন্যাসত প্রতিষ্ঠিত বিষয়বস্তু হৈছে,— পৰিয়ালৰ কল্যাণ তথা সমাজৰ কল্যাণ। তৃতীয়খন উপন্যাস অন্ধবিশ্বাস আৰু অশিক্ষিত সমাজৰ ধ্যান-ধাৰণাৰ ওপৰত ৰচিত। প্রবীণা শইকীয়াৰ প্রথম দুখন উপন্যাসত ৰোমাণ্টিক কাহিনীৰ বিস্তাৰিত ৰূপ দেখা যায়। হেম বৰাৰ মতে—

*'উত্তৰায়ণ' লেখিকাৰ প্রথম পদক্ষেপ হোৱাৰ বাবে ভাবাবেগৰ প্রাধান্য আৰু কল্পনাৰ প্রাচুর্য অত্যধিক।* [৫]

**প্রাপ্তফল ঃ**

ঔপন্যাসিক প্রবীণা শইকীয়াৰ ***'উত্তৰায়ণ', 'সিংহদুৱাৰ' আৰু 'শুকুলা ঘোঁৰা'*** নামৰ উপন্যাস তিনিখনৰ তিনিওখন উপন্যাসতেই লেখিকা সূক্ষ্মানুভূতি, শিল্প চেতনা তথা পৰিৱর্তনকামী মনৰ পৰিচয় পোৱা গৈছে। মহিলা ঔপন্যাসিকৰ ৰচনা হ'লেও শইকীয়াৰ উপন্যাসকেইখনত

পুৰুষ-স্ত্রী সমন্বিতে উভয় চৰিত্রই সম গুৰুত্ব আৰু সমমর্যাদা পাইছে। 'শুকুলা ঘোঁৰা' উপন্যাসৰ নাৰী চৰিত্রটো পৰম্পৰাৰ অধীন হৈহে পাৰিবাৰিক অত্যাচাৰৰ সন্মুখীন হৈছে। কিন্তু বিপৰীত চৰিত্রৰ আত্মোপলব্ধিয়ে এই অৱস্থাৰ পৰা নাৰী চৰিত্রটিক উদ্ধাৰ কৰিছে। আনহাতে, 'উত্তৰায়ণ' আৰু 'সিংহদুৱাৰ' উপন্যাস দুখনৰ মুখ্য নাৰী আৰু পুৰুষ চৰিত্র দুটা সাম্প্রতিক কালৰ অস্থিৰ মানসিকতাৰ প্রতীক স্বৰূপে অংকিত হৈছে। 'উত্তৰায়ণ'ৰ মালবিকা আৰু 'সিংহদুৱাৰ'ৰ বিভূতি চৰিত্র দুটা মুক্ত চৰিত্র। দুয়োটা চৰিত্রৰ গতি-প্রকৃতি সহজবোধ্য নহয়। সেয়েহে লেখকৰ এই চৰিত্র দুটা সম্পূর্ণৰূপে একোটা মৌলিক চৰিত্র বুলি ক'ব পাৰি।

প্রবীণা শইকীয়াৰ 'উত্তৰায়ণ' আৰু 'সিংহদুৱাৰ' উপন্যাসৰ মুখ্য চৰিত্রকেইটাৰ চিত্রণ কিছু জটিল। কিন্তু ইয়াৰ বিপৰীতে 'শুকুলা ঘোঁৰা' উপন্যাসখনৰ চৰিত্রৰ সহজ-সৰল অথচ অন্ধবিশ্বাসেৰে পোত গৈ থকা সমাজৰ চৰিত্র কিছুমানৰ মানসিক উত্তৰণৰ চিত্র লেখিকাই এক ভিন্ন ভংগীৰে অংকন কৰিছে।

**সামৰণি ঃ**

সামগ্রিকভাৱে চালে দেখা যায় যে ঔপন্যাসিকে প্রধানকৈ নাৰী-পুৰুষৰ সম্পর্ক আৰু মানসিক জগতৰ ক্রিয়া-প্রতিক্রিয়াৰ ওপৰত যথেষ্ট গুৰুত্ব দিছে। উপন্যাসকেইখনৰ চৰিত্রৰ মনত বহুতো ঘটনা-পৰিঘটনাই দ্বন্দ্বৰ সৃষ্টি কৰিছে আৰু পৰিশেষত এনে দ্বন্দ্ব-সংঘাতে চৰিত্রৰ মনলৈ এক অভাৱনীয় পৰিৱর্তন আনিছে। প্রচলিত বিশ্বাসৰ ভেটিত প্রবীণা শইকীয়াৰ প্রতিখন উপন্যাসৰে চৰিত্রবোৰে থিৰ হৈ থাকিব বিচাৰে, কিন্তু সময়ত সেই ভেটি অবাস্তৱ বুলি অনুভৱ কৰে। ফলত চৰিত্রবোৰে সঠিক সত্যৰ অন্বেষণ কৰে আৰু যোগাত্মক পৰিণতিৰে উপন্যাসখন শেষ হয়।

শইকীয়াৰ উপন্যাসৰ নাৰী-পুৰুষ উভয় চৰিত্রৰে বিস্তৃতি মৌলিক, সমাজমুখী আৰু আদর্শবাদী। উপন্যাসকেইখনৰ কাহিনীত প্রতিটো চৰিত্রৰে গুৰুত্ব অপৰিহার্য। 'শুকুলা ঘোঁৰা' উপন্যাসখনত লেখিকাই এখন অশিক্ষিত, অন্ধবিশ্বাসী, হোজা গাঁৱৰ সমাজক পটভূমি হিচাপে লৈছে। সেয়েহে গাঁওখনৰ বৰমূৰীয়াৰ পৰা শিক্ষকলৈ, চোৰটোৰ পৰা নামলগোৱা মেধিলৈকে উপন্যাসখনত প্রতিটো চৰিত্রৰে গুৰুত্ব অপৰিসীম। চৰিত্রৰ মানসিক উন্নতিয়ে সমাজৰ উন্নতিৰ আধাৰ, এই কথাষাৰিয়ে প্রতিপন্ন কৰিবলৈ লেখিকাই সৰু-বৰ প্রায় প্রতিটো চৰিত্রৰ বাহ্যিক তথা আভ্যন্তৰীণ দুয়োটা দিশ পোহৰ কৰি তুলিছে। প্রহ্লাদ কুমাৰ বৰুৱাৰ মতে চৰিত্র সফল হোৱাৰ *বৈশিষ্ট্যটো হ'ল সামাজিক পটভূমিৰ সৈতে চৰিত্রৰ সম্পর্ক স্থাপন।* [৬] লেখকে উপন্যাস তিনিখনৰ কোনোখনত চৰিত্র চিত্রনৰ বাবে প্লট প্রস্তুত কৰিছে অথবা কোনোখনত বিশেষ উদ্দেশ্যমূলকভাৱে চৰিত্র সৃষ্টি কৰিছে। কিন্তু যি উদ্দেশ্যৰে নহওক উপন্যাসকেইখনৰ চৰিত্রাংকনত লেখিকাৰ অধ্যৱসায় আৰু পৰিকল্পনাৰ স্বাক্ষৰতা বিদ্যমান। ❑

**পাদটীকা ঃ**

১. শইকীয়া, প্রবীণা ঃ *ৰচনা সম্ভাৰ,* দ্বিতীয় খণ্ড, 'শুকুলা ঘোঁৰা', পৃ. *৪৩০*
২. উল্লিখিত, *পৃ. ৪২৪*
৩. শইকীয়া, প্রবীণা ঃ পূর্বোল্লিখিত, 'শুকুলা ঘোঁৰা', পৃ. *৪২২*
৪. শইকীয়া, প্রবীণা ঃ পূর্বোল্লিখিত, পৃ. *৪৮৬*
৫. ৰৱা, হেম ঃ *অসমীয়া সাহিত্যলৈ মহিলা লেখিকাৰ দান,* পৃ. *১৭৫*
৬. বৰুৱা, প্রহ্লাদ কুমাৰ ঃ অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন, পৃ. ৩৮-৩৯

**সহায়ক গ্রন্থ ঃ**


কটকী, প্রফুল্ল ঃ *সাহিত্য আৰু সংজ্ঞা,* গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী ঃ বিশ্ববিদ্যালয় প্রকাশন বিভাগ, ১৯৯৮
ঠাকুৰ, নগেন, সম্পাদক ঃ *এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস,* পানবজাৰ, জ্যোতি প্রকাশন, ২০০০
দাস, অমল চন্দ্র (সম্পাদিত) ঃ *ভাষা-সাহিত্য-সম্ভাৰ,* পানবজাৰ, গুৱাহাটী, বনলতা, ২০০৫
দেৱী, জাহ্নবী ঃ *উপন্যাস বিশ্লেষণ,* গুৱাহাটী, চন্দ্র প্রকাশ, ডিচেম্বৰ, ২০১১
ৰৱা, হেম ঃ *অসমীয়া সাহিত্যলৈ মহিলা লেখকৰ দান,* ১৯৯৪, নবেম্বৰ
বৰুৱা, প্রহ্লাদ কুমাৰ ঃ *উপন্যাস,* দ্বিতীয় প্রকাশ, ডিব্রুগড়, বনলতা, ১৯৯০
অসমীয়া চুটি গল্পৰ অধ্যয়ন
শর্মা, গোবিন্দ প্রসাদ ঃ *উপন্যাস আৰু অসমীয়া উপন্যাস,* তৃতীয় সংস্কৰণ, গুৱাহাটী, ষ্টুডেন্টছ ষ্টোৰছ, ২০১২
শইকীয়া, প্রবীণা ঃ *ৰচনা সম্ভাৰ,* দ্বিতীয় খণ্ড, বাণী মন্দিৰ, হেদায়েৎপুৰ, মার্চ ২০০৩

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# হোমেন বৰগোহাঞিৰ ‘মৎস্যগন্ধা’ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত বৰ্ণ বৈষম্য আৰু সামাজিক অৱদমনৰ ছবি ঃ এক আলোচনা

**মিথুন দাস**
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয় ডিফু চৌহদ
৯১০১৮৮৮১৫০
mithundasmajuli@gmail.com

**ড° প্ৰভাত ভূঞা**
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয় ডিফু চৌহদ
৭০০২৩০৮৭৮৮
prabhatnlp@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

‘মৎস্যগন্ধা’ সমাজৰ এটি বাস্তৱ সমস্যাৰ ভেঁটিত ৰচিত উপন্যাস। এখন সাধাৰণ গাঁৱলীয়া সমাজৰ পটভূমিত উপন্যাসখন ৰচনা কৰিলেও তাৰ মাজেৰে মূল বিষয়বস্তু হিচাপে জাতিভেদ প্ৰথাই প্ৰাধান্য লাভ কৰিছে। উপন্যাসখনত সমাজত উচ্চ শ্ৰেণীৰ লোকসকলে কৈৱৰ্ত্তসকলক অস্পৃশ্য হিচাপে গণ্য কৰি অহা এখন সমাজৰ ছবি অংকিত হৈছে য’ত কৈৱৰ্ত্তসকল বহু সময়ত সামাজিক ভাৱে অৱহেলিত হৈ আহিছে। কৈৱৰ্ত্তসকলক উচ্চ বৰ্ণৰ লোকসকলে তেওঁলোকক স্পৰ্শ কৰাটো দূৰৰে কথা তেওঁলোকৰ গাঁৱৰ মাজেৰে পাৰ হৈ যাবলৈও অস্বস্তি অনুভৱ কৰে। ৰক্ষণশীল সামাজিক ব্যৱস্থাই তেওঁলোকক বাৰে বাৰে সামাজিক ভাৱে লাঞ্ছিত কৰি আহিছে। ‘মৎস্যগন্ধা’ উপন্যাসখনত মেনকা চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তে উচ্চ বৰ্ণৰ লোকসকলৰ দ্বাৰা কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ৰ নাৰী হোৱাৰ বাবে কেনেদৰে নিস্পেষণৰ বলী হৈছিল তাৰেই বহিঃ প্ৰকাশ ঘটিছে। সৰুকালতেই সন্মুখীন হোৱা সামাজিক অৱদমনৰ ফলস্বৰূপে গোটেই জীৱনৰ কাৰণে তাইৰ মনত উচ্চ জাতিৰ লোকসকলৰ বিৰুদ্ধে প্ৰতিশোধৰ বতাহ বলি ৰ’ল। উপন্যাসখনৰ শেষৰ ফালে উচ্চ সম্প্ৰদায়ৰ মণিৰামক যেতিয়া কমলাৰ লগত বিয়া পতাৰ উদ্দেশ্যে নিজৰ জাতলৈ তুলি লৈছে তেতিয়া যেন তাইৰ মনত জ্বলি থকা প্ৰতিশোধে পূৰ্ণতা লাভ কৰিছে।

**সূচক শব্দ ঃ**

মৎস্যগন্ধা, মেনকা, জাতিভেদ প্ৰথা, সামাজিক অৱদমন আদি।

**অৱতৰণিকা ঃ**

**বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ**

মানুহ সামাজিক প্ৰাণী। সামাজিক প্ৰাণী হিচাপে সকলোৰে সমাজত বাস কৰাৰ অধিকাৰ আছে। কিন্তু যেতিয়া ভিন্ন কাৰণবশতঃ মানুহৰ মাজত ভাবাদৰ্শৰ মতানৈক্য ঘটে তেতিয়াই সমাজখনত বিশৃংখলতাই দেখা দিবলৈ আৰম্ভ কৰে। তাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত একেখন গাঁৱতে, একেখন সমাজতে বাস কৰা অৰ্থাৎ ভিন ভিন সম্প্ৰদায়ৰ মানুহৰ মাজত বিৰোধৰ সূত্ৰপাত ঘটে আৰু উচ্চ-নীচ ভেদাভেদ গঢ়ি তুলি এক সামাজিক বৈষম্যৰ সৃষ্টি কৰে। ইয়াৰ পৰিণতিস্বৰূপে কোনোৱে নানা লঘু লাঞ্ছনাৰ সন্মুখীন হ’ব

লগা হয়। 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসৰ মাজেৰেও তেনে কিছুমান দিশকে দেখুৱাব বিচৰা হৈছে। যেতিয়া একেখন সমাজতে বসবাস কৰা লোকসকলৰ মাজত উচ্চ-নীচ ব্যৱধানৰ ভাব জাগি উঠে তেতিয়াই সমাজখনৰ মানুহৰ মনত সদভাৱ নাইকিয়া হৈ পৰে। যাৰ ফলত নিজকে উচ্চ প্ৰস্থিতিসম্পন্ন বুলি ভবাসকলে আনসকলক কটু মন্তব্য কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে।

অসম হৈছে বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ সমন্বয়স্থলী। চুকাফাই ৰাজনৈতিক ভাৱে আৰু শংকৰদেৱে সাংস্কৃতিক আৰু ধৰ্মীয় একতাৰ দোলেৰে বৰ অসমৰ সমন্বয়ৰ ভেঁটি গঢ়ি তুলিছিল। তাৰ মাজতো মানুহে কেতিয়াবা মানৱীয় চিন্তা চেতনা পাহৰি বা মানুহে নিজৰ অস্তিত্বৰ কথা পাহৰি কিছুমান সামাজিক কু-সংস্কাৰৰ বশৱৰ্তী হৈ পৰে। এনে কু-সংস্কাৰেই হৈছে বৰ্ণবৈষম্য। এই বৰ্ণবৈষম্যৰ ভেঁটিতেই জাতি ব্যৱস্থাই গঢ় লৈ উঠিছে। জাতি ব্যৱস্থা হৈছে এনে এক সামাজিক বৈষম্য যিয়ে জাত-পাত বা বৃত্তিৰ দোহাই দি মানুহক ভাগ ভাগ কৰি আহিছে। জাতি ব্যৱস্থাৰ পৰিণতি স্বৰূপে এক শ্ৰেণীৰ লোক সামাজিক অৱদমনৰ বলী হৈ আহিছে। যাৰ ফলত যুগে যুগে উচ্চ সম্প্ৰদায়ৰ লোকৰ ওচৰত নিম্ন জাতিৰ লোকসকল হেয় প্ৰতিপন্ন হৈ আহিছে। কৈৱৰ্ত্তসকলো ভাৰতবৰ্ষৰ প্ৰাচীন জাতি ব্যৱস্থাৰ প্ৰভাৱৰ পৰা মুক্ত হ'ব পৰা নাই। নিম্ন বৃত্তিত নিয়োজিত হৈ থকাৰ বাবে হিন্দু সমাজৰ তথাকথিত উচ্চ জাতিৰ লোকসকলে কৈৱৰ্ত্ত লোকসকলক নীচ জাতি হিচাপে গণ্য কৰি আহিছে।

হোমেন বৰগোহাঞিৰ 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসৰ মাজেৰে জাতিভেদ প্ৰথাৰ ফলস্বৰূপে সৃষ্টি হোৱা বৰ্ণ বৈষম্য আৰু সামাজিক অৱদমনৰ ছবিখন কিদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে সেই সম্পৰ্কে আলোচনা আগবঢ়োৱাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

**অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু পদ্ধতি ঃ**

জাতি ব্যৱস্থা হৈছে ভাৰতীয় হিন্দু সমাজ সংৰচনাৰ সৈতে জড়িত এক সামাজিক প্ৰথা। এই জাতি প্ৰথা জন্মৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। সেই হিচাপে ব্ৰাহ্মণৰ ঘৰত জন্ম লাভ কৰা লোকে জাতিগত হিচাপে উচ্চ প্ৰস্থিতি আনহাতে শূদ্ৰৰ ঘৰত জন্ম লাভ কৰা লোকে জাতিগত হিচাপে নিম্ন প্ৰস্থিতি লাভ কৰে। যদিও জাতি ব্যৱস্থাত সময়ে সময়ে কিছু পৰিৱৰ্তন আহিছে তথাপি সামাজিক মৰ্যাদা লাঘৱ হোৱাৰ ভয়তে সেই পৰিৱৰ্তন সমূহ কেতিয়াবা মানি লবলৈ নিবিচাৰে। সমাজতাত্ত্বিক সকলেও জাতি ব্যৱস্থাত জন্মতকৈ গুণ আৰু কৰ্মৰ ওপৰতহে প্ৰাধান্য দিয়া দেখা গৈছে। জাতি ব্যৱস্থাৰ ফলস্বৰূপে সমাজত উচ্চ-নীচ বিভাজনৰ সৃষ্টি হৈছে। যাৰ পৰিণতিস্বৰূপে সমাজত বিভিন্ন কাৰণবশতঃ কিছুমান বিভেদৰ সৃষ্টি হৈছে। সামাজিক স্থানৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়েই এক শ্ৰেণীৰ লোকে অন্য এক শ্ৰেণীক শোষণ-নিস্পেষণ, সামাজিক অৱদমন কৰি আহিছে। একেখন গাঁৱতে বা একেখন সমাজতে বাসকৰা লোকসকলৰ মাজত যেতিয়া বিভিন্ন নীতি -নিয়মৰ আদৰ্শগত সংঘাতৰ সৃষ্টি হয় তাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত আটাইতকৈ বেছি দুৰ্ভোগ ভুগিবলগীয়া হয় নিম্ন জাতিৰ লোকসকলে। 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসখনত সামাজিক অৱদমনৰ ফলস্বৰূপে সমাজত যি দুৰ্ভোগ ভুগিবলগীয়া হয় তেনে কিছুমান দিশকে ঔপন্যাসিকে চিত্ৰিত কৰিছে। আমাৰ এই আলোচনাত 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসত প্ৰকাশ পোৱা বৰ্ণ বৈষম্য আৰু সামাজিক অৱদমন সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। তদুপৰি সেই সামাজিক অৱদমনৰ ফলস্বৰূপে সমাজত ব্যক্তিয়ে কেনেধৰণৰ পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হ'ব লগা হয় সেই সম্পৰ্কেও আলোচনা কৰা অধ্যয়নৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য।

নিৰ্বাচিত বিষয়টি আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

**বিষয়ৰ আলোচনা ঃ**

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ এটি সুপৰিচিত নাম হৈছে হোমেন বৰগোহাঞিঃ। বিভিন্ন কাকত আলোচনীৰ সম্পাদনাৰ লগত জড়িত থকাৰ সময়তে তেখেতে অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনলৈও বিভিন্ন অৱদান আগবঢ়াইছিল। কবিতা, গল্প, উপন্যাস আৰু বিভিন্ন প্ৰবন্ধ অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনলৈ তেখেতে অৱদান আগবঢ়াই গৈছে। 'সুবালা', 'তান্ত্ৰিক', 'কুশীলব', 'হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়', 'পিতাপুত্ৰ', 'তিমিৰ তীৰ্থ', 'অস্তৰাগ', 'সাউদৰ পুতেকে নাও মেলি যায়', 'মৎস্যগন্ধা', 'নিঃসঙ্গতা', 'বিষন্নতা' আৰু 'এদিনৰ ডায়েৰি' তেখেতৰ উল্লেখযোগ্য উপন্যাস। তেওঁৰ উপন্যাসবোৰৰ মাজেৰে কল্পনা আৰু বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ সংমিশ্ৰণ ঘটাই সমাজ জীৱনৰ সমস্যা গভীৰভাৱে অনুধাৱন কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে।

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ ধাৰা সমূহলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে, ভিন্ন সময়ত ভিন্ন বিষয়বস্তুৰে অসমীয়া উপন্যাসত ঠাই পাইছে। বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ সমাজ জীৱনৰ বিভিন্ন দিশ উপন্যাসৰ মাজেৰে চিত্ৰিত কৰি

ঔপন্যাসিক সকলে কিছুমান উপন্যাস ৰচনা কৰি থৈ গৈছে। এই ক্ষেত্ৰত ৰজনীকান্ত বৰদলৈয়ে ঊনবিংশ শতিকাতে মিচিং সমাজখনৰ বিভিন্ন দিশ ৰূপায়নৰ জৰিয়তে 'মিৰি জীয়ৰী' উপন্যাসখন ৰচনা কৰি জনজাতীয় উপন্যাসৰ বাট মুকলি কৰে। ইয়াৰ পাছতো কাৰ্বি, নগা, ডিমাচা, বড়ো, অৰুণাচলৰ আদি জনগোষ্ঠীয় সমাজবোৰৰ বিভিন্ন দিশ ঔপন্যাসিক সকলে উপন্যাসৰ মাজেৰে প্ৰতিফলন ঘটাইছে। অসমৰ কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ৰ সমাজখনক আধাৰ হিচাপে গ্ৰহণ কৰিও কেইবাখনো উপন্যাস ৰচিত হৈছে। তাৰ ভিতৰত এখন প্ৰধান উপন্যাস হৈছে হোমেন বৰগোহাঞিৰ 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসখন।

'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসৰ প্ৰধান বিষয়বস্তু হৈছে জাতিভেদ প্ৰথা। জাতিভেদ প্ৰথাৰ ফলত সাধাৰণ মানুহ খিনিয়ে কিদৰে মানসিক যন্ত্ৰণা ভুগিবলগীয়া হয় সেই কথা উপন্যাসখনৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে। ভাৰতবৰ্ষত জাতিভেদ প্ৰথাই প্ৰাচীন কালৰে পৰা মানুহৰ মাজত ব্যাপক ৰূপত সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰি আহিছে। জাত-পাতৰ নামত মানুহৰ মাজত উচ্চ-নীচ বিভাজন হৈ আহিছে। যাৰ ফলত একেখন সমাজতে বসবাস কৰি থকা লোকসকলৰ মাজত উচ্চ-নীচ বিভাজনৰ বাবে কেতিয়াবা কেনেবাকৈ স্পৰ্শ হ'লেও অপৰাধ হিচাপে গণ্য কৰা হৈছিল। 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসৰ প্ৰধান নায়িকা মেনকাই জাতিভেদ প্ৰথাৰ কাৰণে যি সামাজিক লাঞ্ছনা ভুগিবলগীয়া হৈছিল; তাৰ ফলস্বৰূপে তাই কিদৰে উচ্চ জাতিৰ লোকসকলৰ বিৰুদ্ধে প্ৰতিবাদ সাব্যস্ত কৰিছে সেই কথা উপন্যাসখনত প্ৰকাশ পাইছে। মেনকা কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ৰ এগৰাকী ছোৱালী। তথাকথিত সমাজখনত কৈৱৰ্ত্তসকলক নীচ জাতি হিচাপে গণ্য কৰি অহা হৈছে। তদুপৰি কৈৱৰ্ত্তসকলক উচ্চ জাতিৰ লোকসকলে হেয় প্ৰতিপন্ন কৰিবলৈ 'ডোম' (অসাংবিধানিক শব্দ) শব্দৰে তীৰ্যক বাক্যবাণ প্ৰহাৰ কৰি অহাও দেখা গৈছে। 'ডোম' শব্দটো প্ৰয়োগ কৰি একপ্ৰকাৰে কৈৱৰ্ত্তসকলক মানসিক নিৰ্যাতন চলাই অহা হৈছে। 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসতো সামাজিক অৱদমনৰ ফলস্বৰূপে কিদৰে কৈৱৰ্ত্ত সকলে সমাজত লঘু-লাঞ্ছনাৰ সন্মুখীন হৈছে সেই কথা উপন্যাসখনৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে। জাতি ব্যৱস্থাৰ ফলস্বৰূপে এচাম লোকে কিদৰে সামাজিক অৱদমনৰ সন্মুখীন হ'ব লগা হয় সেই কথা 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পাইছে।

'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসৰ আৰম্ভণিতে সামাজিক অৱদমনৰ ছবি এখন আমি দেখিবলৈ পাওঁ। দক্ষিণ পাৰৰ পৰা আলহী খাবলৈ অহা মানুহ দুজনৰ কথোপকথন মন কৰিলে দেখা যায় কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ৰ প্ৰতি থকা তেওঁলোকৰ মনোভাৱ। তেওঁলোক দুজনৰ কথাৰ মাজেৰে কৈৱৰ্ত্ত সমাজখনক লৈ থকা যি ভাবধাৰা প্ৰকাশ পাইছে সেইয়া সঁচাকৈ আচৰিত ধৰণৰ। এজন বাটৰুৱাই আনজন বাটৰুৱাক তেওঁলোকৰ গন্তব্য স্থানৰ বিষয়ে সোধাত তেওঁৰ উত্তৰৰ মাজতেই কৈৱৰ্ত্ত সমাজখনক লৈ কৰা এক ইতিকিং সূচক মন্তব্য প্ৰকাশ পাইছে এনেদৰে -

"ডোম গাঁওখন পালোহি বুজিছে। ডোম গাঁৱৰ পৰা আমি যাব লগা লাহন গাঁৱলৈ আৰু মাত্ৰ এমাইলৰ বাট।

ইয়াৰ পাছতে আনজন বাটৰুৱাই সুধিছে - কিন্তু এই ঘিটমিটীয়া আন্ধাৰত আপুনি এইখন ডোম গাঁও বুলি কেনেকৈ চিনি পালে? ইয়াৰ উত্তৰত আনজনে কৈছে- গোন্ধতেই ডোম গাঁও বুলি চিনিব পাৰি। পোৱা মাছৰ গোন্ধেৰে বতাহ কেনেকৈ গধুৰ হৈ আছে আপুনি দেখা নাই।" (বৰগোহাঞি, IX)

কৈৱৰ্ত্ত মানুহখিনিক লৈ থকা তেওঁলোকৰ যি কু-সংস্কাৰ সেয়া বাটৰুৱা দুজনৰ কথোপকথনৰ পৰা প্ৰকাশ পাইছে। বাটৰুৱা দুজনৰ কথোপকথন শেষ নৌহওঁতেই তেওঁলোকৰ মুখত 'ডোম' শব্দটো শুনাৰ লগে-লগে মেনকাই উন্মাদিনী ৰূপ ধৰি বাটৰুৱা দুজনক অবাইচ মাতেৰে গালি-শপনি পাৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে এনেদৰে -

"ঐ খেকাৰ খোৱা, ঐ মুখত পোক লগা, ঐ মাইকীৰ মেখেলা তলীয়া, কাক ডোম ডোম বুলিছ? ফটা মেখেলাৰে কোবাই নাক-মুখ একাকাৰ কৰি দিম, বুটীমাৰক চিনি পোৱা নাই? হেৰ' সোণেশ্বৰ, হেৰ' কলিমন, ঘৈণীয়েৰহঁতৰ মেখেলাৰ তলত সোমাই ফোঁচফোঁচাই টোপনি মাৰি থাকোঁতেই কোন কুকুৰৰ জাতে তহঁতক ঘৰতে ডোম ডোম বুলি চিঞৰি ফুৰিছে, শুনা নাই? মতা ল'ৰা হৰ যদি যাচোন যা, উঠি গৈ সেই খেকাৰ খোৱা নেওচা-যোৱা কেইটাক মোৰ ওচৰলৈ ধৰি আন, সিহঁতৰ মুখত ভালকৈ মেখেলাৰ কোব কেইটামান মাৰোঁ....।" (বৰগোহাঞি, IX)

মেনকাই সৰুকালতেই জাতিভেদ প্ৰথাৰ দ্বাৰা পৰিৱিষ্ট সামাজিক অৱদমনৰ বলী হৈ আহিছে। তেতিয়া তাইৰ বয়স আছিল পাঁচ-ছবছৰ। এদিনাখন মেনকাই মাক মেমেৰিৰ সৈতে ভবিষ্যতে মাছ দিয়াৰ বন্দবস্তত ম'হঘুলি গাঁৱৰ মানুহ

এঘৰলৈ ধান খুজিবৰ কাৰণে গৈছিল। কিন্তু তাত উপস্থিত হৈ যি ঘটনাৰ সন্মুখীন হৈছিল তাৰ মাজেৰেই সামাজিক অৱদমনৰ ছবি এখন সুন্দৰ ভাৱে প্ৰকাশ পাইছে। মেনকা আৰু মাকে ধান আনিবলৈ যাওঁতে মানুহ গৰাকীয়ে চোতালত ধান মেলি আছিল। মেনকা গৈ গিৰিহঁতনীৰ কাষত ঠিয় হ'লগৈ। মাক মেমেৰিয়ে মেনকাক সাৱধান কৰাৰ আগতেই গিৰিহঁতনীয়ে মেনকাক তেওঁৰ কাষত দেখি খঙত ৰণ-চণ্ডী মূৰ্তি ধৰি মেনকাৰ গালত কাণতলীয়া চৰ এটা শোধাই খণ্ডেৰে ক'বলৈ ধৰিলে -

"ইস ইস ইস, খালে খালে, এপাচিকৈ উখুৰা ধান নষ্ট কৰিলে। ঐ মেমেৰি ডাঙ্কাচি, তোৰ জীয়েৰ সৰু ছোৱালী, তাই বাৰু নাজানেই ; তই বুঢ়ী মানুহজনী হৈ তাইক বাধা দিব নোৱাৰিলি ? ধৰি ৰাখিব নোৱাৰিলি ?এতিয়া চাচোন, এপাচিকৈ শ'লপোনা ধান পেলাই দিব লগা হ'ল।"

(বৰগোহাঞি, ১৪)

মেনকাই সেই ঘটনাৰ সন্মুখীন হোৱাৰ পাছতেই মাক মেমেৰিয়ে গিৰিহঁতনীক উদ্দেশ্য কৰি কোৱা কথাষাৰ তাৎপর্যপূর্ণ -

"আই, অগিয়ানী অকণমানি ছোৱালীজনীয়ে যেনিবা নাজানি ধানখিনিৰ ওচৰত থিয় দিলেই ; সেই বুলিনো আপুনি তাইক এনে কাণতলীয়া চৰ শোধাব লাগেনে ? আমি নীহ-কুলীয়া মানুহ যদিও তথাপিও মানুহহে , কুকুৰ মেকুৰী নহয় নহয়। জা-নো আই, আপোনাসকলৰ শাস্ত্ৰত সঁচাকৈয়ে এইবোৰ কথা লিখা আছে , নে নাই সেই কথা একমাত্ৰ নেদেখা জনেহে জানে।" (বৰগোহাঞি, ১৪)

মেমেৰিৰ কথাৰ মাজেৰে পুৰুষাণুক্ৰমে কৈৱৰ্ত্তসকলে যি সামাজিক অৱদমনৰ বলী হৈ আহিছে তাৰ আভাষ পোৱা গৈছে। কৈৱৰ্ত্তসকলক তথাকথিত উচ্চ শ্ৰেণীৰ লোকসকলে নীহকুলীয়া হিচাপে গণ্য কৰি আহিছে যাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত তেওঁলোকক স্পৰ্শ কৰাটোও এক সামাজিক ব্যাধি হিচাপে গণ্য কৰা হয়। মেমেৰিৰ কথাৰ প্ৰত্যুৎত্তৰত গিৰিহঁতনীয়ে সিহঁতক নানা তিৰস্কাৰ কৰিবলৈ ধৰে। কাৰণ সিহঁত কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ৰ লোক। যি কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ক উচ্চ জাতিৰ লোকসকলে নানা সময়ত হেয় প্ৰতিপন্ন কৰিবলৈ 'ডোম' শব্দ ব্যৱহাৰ কৰি ইতিকিং কৰি আহিছে। গিৰিহঁতনীয়েও মেমেৰিৰ কথা শুনাৰ পাছতেই গালি পাৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে এনেদৰে-

"কি কলি ? কি কলি ডোমৰ জাত ? তোৰ ইমানটো সাহ ? ডোমৰ জীয়েকে গাৰ ছাঁ পেলাই এপাচিকৈ ধান নষ্ট কৰিলেও মই একো নেমাতি মনে মনে থাকিব লাগে ?"

(বৰগোহাঞি, ১৫)

সেইদিনা সন্মুখীন হোৱা ঘটনাটোৰ পাছত মেমেৰিয়ে মেনকাক বুজাইছে যে সিহঁতে যুগে যুগে কিদৰে সামাজিক অৱদমনৰ সন্মুখীন হৈ আহিছে। সেই উদ্দেশ্যে মেনকাক মেমেৰিয়ে কৈছে -

"আমি ডোম বুজিছ। পূৰ্বজন্মৰ কিবা পাপৰ শাস্তি স্বৰূপে ঈশ্বৰে আমাক নীহকুলীয়া ডোম কৰি সৃষ্টি কৰিছে। হেঁদুৰ চোতালত উখুৰা ধান মেলি থলে তাত যদি ডোমৰ গাৰ ছাঁ পৰে, তেন্তে ধানখিনি চুৰা হয়।" (বৰগোহাঞি, ১৬)

সেই ঘটনাৰ পাছৰে পৰা মেনকাই যেতিয়াই কাৰোবাৰ মুখত 'ডোম' শব্দটো শুনে তেতিয়াই ৰণচণ্ডী মূৰ্তি ধৰি গালি-শপনিৰে তিৰস্কাৰ কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে। সৰু কালতেই তাইৰ মনত থিতাপি লোৱা সামাজিক অৱদমনৰ ছবিখন সজীৱ হৈ ৰ'ল। পৰৱৰ্তী সময়ত উচ্চ সম্প্ৰদায়ৰ লোকসকলৰ ওপৰত প্ৰতিশোধ লোৱাৰ কথা তাই মনে মনে ভাবিবলৈ ধৰিলে।

'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসখনৰ সপ্তম অধ্যায়ত আমি দেখিবলৈ পাওঁ সামাজিক অৱদমনৰ আন এখন ছবি। দিগম্বৰ গাঁওখনৰ ভিতৰতে কিছু অৱস্থাসম্পন্ন লোক। তেওঁৰ সপোন আছিল ল'ৰা দুটাক পঢ়াই শুনাই শিক্ষিত কৰি তোলা। যাতে সিহঁত দুটাই পঢ়ি শুনি পাঠশালাৰ পণ্ডিত আৰু মণ্ডল হ'বৰ যোগ্যতা লাভ কৰে। সেই উদ্দেশ্যে ম'হঘুলিৰ মজলীয়া স্কুলত দুয়োটাকে নাম লগাই দিছিল। যিসময়ত কৈৱৰ্ত্ত গাঁওখনত কোনো এজন লোকেও 'ক' টোকে চিনি নাপাইছিল তেনে সময়তে দিগম্বৰে পুতেক দুটাক স্কুলত নাম লগাই দিয়াত ভূধৰ শর্মাহঁতৰ দৰে হেড পণ্ডিতৰ চকু কপালত উঠিছিল। কাৰণ তেওঁলোকে অন্য উচ্চ জাতিৰ লগতে সমানে কৈৱৰ্ত্ত ল'ৰা দুটিকো একেলগে শিক্ষা প্ৰদান কৰিব লাগিব। ভূধৰ শর্মাই কৈৱৰ্ত্তসকলৰ দৰে নিম্ন জাতিৰ লোকক কেতিয়াও কোনো প্ৰকাৰে মাছ কিনা বা মৰকীয়া হালৰ বন্দবস্তৰ বাদে কথা পতাৰ অৱকাশ ৰখা নাই। তদুপৰি কেতিয়াবা বাটত ভূধৰ শর্মাহঁতৰ সৈতে ভেটা-ভেটি হ'লে কৈৱৰ্ত্ত মানুহখিনিয়ে তেওঁলোকক সমীহ কৰি বা সন্মান দেখুৱাই একাষৰীয়া হৈ তেওঁলোকক বাট এৰি দিছিল। কিয়নো

যদিহে কেনেবাকৈ দিগম্বৰহঁতৰ দৰে মানুহৰ সামান্য স্পর্শও লাগে ভূধৰ শর্মাহঁতে ম'হঘুলি নৈত এশটামান জোবোৱা মাৰি গা ধুই শুদ্ধ হৈছিল। তেনে লোকৰ সন্তান যেতিয়া স্কুলত নামভর্তি কৰিছেহি ভূধৰ শর্মাই মনৰ মাজতে গৰজি উঠিছে। তেওঁৰ মনৰ মাজত চলা ভাব প্রকাশ পাইছে এনেদৰে-

"কটা ডোমৰ পো, যাৰ গাত হাত লাগিলেও গা ধুব লাগে, তাৰ পুতেক এতিয়া বামুণ, গোসাঁইৰ ল'ৰাৰ লগত একে শাৰীতে গা ঘহাই বহি স্কুলত পঢ়িব, মাছ মাৰিবলৈ এৰি এতিয়া সিহঁত চকীত বহি ঠেং জোঁকৰা বাবু হ'ব।"

(বৰগোহাঞি, ৩৮)

যদিও সিহঁতৰ স্কুলীয়া জীৱন আৰম্ভ হৈছিল, সেয়া বেছি দীঘলীয়া নহ'ল। স্কুলত শ্রেণীৰ ল'ৰাবোৰৰ পৰা প্রায়েই ইতিকিংৰ সন্মুখীন হ'ব লগা হ'ল। স্কুলত যেতিয়া সমনীয়াৰ দ্বাৰা নিম্নজাতিৰ হোৱাৰ বাবে লাঞ্ছিত হ'ব লগা হ'ল সিহঁতৰ আৰু স্কুললৈ যাবলৈ মন নোযোৱাৰ দৰে হ'ল। তেনে সময়তে এদিন 'ডোম' শব্দৰে ইতিকিং কৰাত পূর্ণৰে সৈতে কেইবাজনো ল'ৰাৰ কাজিয়া হোৱাত পূর্ণই 'ক' শ্রেণীৰ শিক্ষা সাং নকৰাকৈয়ে শিক্ষা জীৱনৰ সমাপ্তি ঘটায়। জয়হৰিয়ে পৰম ধৈর্য্যৰে দ্বিতীয় শ্রেণী লৈকে পঢ়ি সিও শিক্ষা সামৰিব লগা হয়। জয়হৰিৰ সিদ্ধান্তত দেউতাক দিগম্বৰেও কোনো আপত্তি নকৰিলে। যিখিনি জ্ঞান জয়হৰিয়ে লাভ কৰিলে তাৰ দ্বাৰা সি খাজনাৰ ৰচিদখনৰ লগতে মাটিৰ একচনীয়া পট্টাখনো পঢ়িব পৰা হ'ল। জয়হৰিয়ে স্কুলত যিখিনি শিকিছিল তাৰেই কমলাকো অলপ হ'লেও শিক্ষা দিবৰ বাবে দেউতাকে তাক খাটনি ধৰে। এনেদৰেই কমলায়ো ঘৰতেই স্কুলীয়া শিক্ষা আৰম্ভ কৰি ক-খ কেইটাৰ সৈতে চিনাকি হৈ উঠিল।

উপন্যাসখনৰ শেষৰ ফালে যেতিয়া মেনকাই কমলাৰ মুখেৰে মণিৰামৰ লগত হোৱা প্রেমৰ সম্পর্কৰ কথা জানিব পাৰিছে তেতিয়া মেনকাই সৰুতেই সন্মুখীন হোৱা ঘটনাটোৰ প্রতিশোধ পূৰণৰ নিমিত্তে অহোপুৰুষার্থ কৰিছে। কমলা আৰু মণিৰামৰ প্রেমৰ ফলস্বৰূপে কমলা অন্তঃসত্ত্বা হয়। কিন্তু জাত্যাভিমানৰ বাবে মণিৰামে কমলাক বিয়া কৰাবলৈ অমান্তি হয়। গতিকে কমলাই বৌয়েক মেনকাৰ পৰা গর্ভপাতৰ সমিধান বিচাৰিছে। তেতিয়া মেনকাই কমলাৰ পৰা গোটেই কাহিনীৰ বুজ লৈ গর্ভপাত নকৰি গর্ভৰক্ষাৰ সিদ্ধান্ত লৈছে। অতদিনে তাইৰ অন্তৰত জ্বলি থকা প্রতিশোধ পূৰণৰ এটি সুবিধা তাই লাভ কৰিছে। মণিৰামহঁত যিহেতু আহোম সম্প্রদায়ৰ আৰু কমলা কৈৰর্ত্ত সম্প্রদায়ৰ গতিকে সিহঁতৰ জাতিগত পার্থক্য থকাটো বাঞ্ছণীয়। সেই হিচাপে সিহঁতৰ মাজত যে বিবাহ কার্য সম্পন্ন হ'লে সমাজত বেমেজালিৰ সৃষ্টি হ'ব সেই কথা দুয়োটাই উপলব্ধি কৰিব পাৰিছে। এই ক্ষেত্রত কমলাৰ মনত উদয় হোৱা ভাবধাৰাৰ পৰাই সেই কথা স্পষ্ট হয়। কমলাই ভাবিছে এনেদৰে -

"এইবোৰ মানুহেই তো আমাক নীচ জাতি বুলি সদায় ঘিণাই আহিছে; এতিয়া সঁচাকৈয়ে যদি সি মোক বিয়া কৰে, তেন্তে সমাজত ভালকৈয়ে এখন হুৱা-দুৱা লাগিব। চাবলৈ বেছ মজা হ'ব। ইমানদিনে আমাক কৰি অহা অপমানৰ ভালকৈয়ে পোটক তোলা হ'ব।" (বৰগোহাঞি, ৬৭)

শেষত মণিৰামে নানা বাক বিতণ্ডা কৰিও মেনকাৰ লগত যুঁজিব নোৱাৰাত আৰু গাত লগা কলঙ্কৰ ভয়ত মণিৰামে কমলাক বিয়া পাতি ঘৰ জোঁৱাই হোৱাৰ সিদ্ধান্ত লৈছে। তেনে পৰিস্থিতিত মণিৰামহঁতৰ ঘৰত যি পৰিৱেশ দেখুৱাইছে তাৰ মাজেৰেও বর্ণবৈষম্য আৰু সামাজিক অৱদমনৰ ছবিখন প্রকাশ পাইছে। মণিৰামে কমলাক বিয়া কৰোৱাৰ বাবে জাত যোৱা বুলি ভাবি মণিৰামহঁতৰ ঘৰত কাঁহী-বাটি, চৰু-হাড়ি ধুই পৰিশুদ্ধি হৈছে। কাৰণ মণিৰাম আৰু কমলাৰ মাজত হোৱা বিয়াখন অসবর্ণ বিবাহ। গতিকে মৰা শ শ্মশানলৈ নিয়াৰ লগে-লগে যিদৰে চৰু-হাড়ি বাহিৰলৈ উলিয়ায় ঠিক সেইদৰে মণিৰামহঁতৰ ঘৰতো সি মৰিলে বুলি ভাবিয়েই তেনে কর্ম কৰিছে। উপন্যাসখনত সেই ঘটনা সম্পর্কত বাটৰুৱা জনৰ মুখৰ পৰা ওলোৱা বক্তব্যৰ মাজেৰে সেই কথা প্রকাশ পাইছে -

"আচল কথাষাৰ ক'বলৈ আৰু কি আছে হেৰি আপোনালোকে নিজ কাণেৰে শুনিছেই দেখোন। এই ঘৰৰ মণিৰাম বোলা ল'ৰাটোৱে আজি জাতি-কুল, আই-বোপাই সকলোকে পৰিত্যাগ কৰি ডোম গাঁৱৰ দিগম্বৰৰ ঘৰ জোঁৱাই চাপিলেগৈ। মাক বাপেকে সেই কাৰণে আজিয়েই চৰু-হাড়ি ধুই তাৰ মৰা সকাম কৰি পেলাইছে। ঠিকেই কৰিছে যি ল'ৰাই অজাতিৰ লগত সংস্রৱ কৰিছে ইহকালত মাক-বাপেকৰ ঘৰত ভৰি দিয়াৰ অধিকাৰ হেৰুৱাইছে। তাকতো মৰা বুলিয়ে ধৰিব পাৰি।" (বৰগোহাঞি, ৮৫)

ওপৰৰ আলোচনাৰ পৰা এটা কথা ক'ব পাৰি যে, 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসখনৰ মাজেৰে জাতিভেদৰ ফলস্বৰূপে

গঢ় লৈ উঠা যি বৰ্ণবৈষম্য আৰু সামাজিক অৱদমনৰ ছবি সেয়া স্পষ্ট ৰূপত প্ৰকাশ পাইছে। কৈৱৰ্ত্ত সম্প্ৰদায়ক প্ৰাচীন কালৰে পৰা অস্পৃশ্য হিচাপে গণ্য কৰি আহিছে। যাৰ ফলস্বৰূপে তেওঁলোক ভিতৰি ভিতৰি দগ্ধ হৈ উঠে। জাত-পাতৰ বাচ-বিচাৰৰ দৰে সামাজিক ব্যাধিয়ে সমাজত পেলোৱা কু-প্ৰভাৱৰ পৰিণতি স্বৰূপে সমাজৰ নীহকুলীয়া মানুহখিনিয়ে বিভিন্ন সময়ত জীয়াতু ভুগিবলগীয়া হৈছে। উপন্যাসখনতো তেনে কিছুমান দিশৰে প্ৰতিফলন ঘটিছে। যিয়ে মেনকাহঁতৰ দৰে মানুহক যুগে-যুগে সামাজিক অৱদমনৰ বলী সজাই আহিছে। কেৱল জাত-পাতৰ ভেদাভেদৰ আলম লৈয়ে এক শ্ৰেণীৰ লোকে একে তেজ মঙহৰ অন্য এক শ্ৰেণীক নানা কটু সমালোচনা কৰি মানসিক হাৰাশাস্তি প্ৰদান কৰি আহিছে।

**উপসংহাৰ ঃ**

হোমেন বৰগোহাঞিৰ 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসখনত জাতিভেদ প্ৰথাৰ ফলত সৃষ্টি হোৱা ঘৃণা আৰু প্ৰতিশোধৰ মুক্ত প্ৰকাশ ঘটিছে। জাতিভেদৰ দোহাই দি এক শ্ৰেণীৰ লোকে সমাজত উচ্চ স্থান অধিকাৰ কৰাৰ বিপৰীতে আন এক শ্ৰেণীয়ে নিম্ন জাতিৰ হোৱাৰ বাবে সামাজিক অৱদমনৰ সন্মুখীন হৈ আহিছে। পুৰুষানুক্ৰমে তেওঁলোকে ভোগ কৰি অহা সামাজিক অৱদমনৰ ফলস্বৰূপে সময়ে সময়ে উচ্চ জাতিৰ লোকসকলৰ বিৰুদ্ধে বিদ্ৰোহ ঘোষণা কৰি আহিছে। 'মৎস্যগন্ধা' উপন্যাসত মেনকা চৰিত্ৰৰ জৰিয়তে তথাকথিত হিন্দুসমাজৰ উচ্চ বৰ্ণৰ লোকসকলৰ বিৰুদ্ধে প্ৰকাশ পোৱা ক্ষোভ সুন্দৰভাৱে প্ৰতিফলিত হৈছে। ❑

**প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ**

বৰগোহাঞি,হোমেন। *মৎস্যগন্ধা*। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেণ্টচ' ষ্ট'ৰচ, ২০১৭। পৃ.IX
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. IX
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ১৪
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ১৪
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ১৫
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ১৬
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ৩৮
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ৬৭
উল্লিখিত গ্ৰন্থ পৃ. ৮৬

**সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ**


দাস, দুলাল চন্দ্ৰ। সম্পা.। *হোমেন বৰগোহাঞি সাহিত্য আৰু সাধনা*। গুৱাহাটী ঃ সম্প্ৰীতি, ২০২২। মুদ্ৰিত।
বৰগোহাঞি,হোমেন। *মৎস্যগন্ধা*। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ২০২১। মুদ্ৰিত।
বৰা,জয়ন্ত কুমাৰ। *সুবালাৰ পৰা মৎস্যগন্ধালৈ হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাস ঃ বিচাৰ আৰু বিশ্লেষণ*। ধেমাজি ঃ কিৰণ প্ৰকাশন, ২০০৭। মুদ্ৰিত।
বৰা, জয়ন্ত কুমাৰ। *হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসৰ শিল্প বৈভৱ*। গুৱাহাটী ঃ অসম পাবলিচিং কোম্পানী, ২০১৫। মুদ্ৰিত।
বৰুৱা, নবীন। সম্পা.। *মানিক সন্ধানী হোমেন বৰগোহাঞি*। গুৱাহাটী ঃ পূৰ্বাঞ্চল প্ৰকাশ, ২০১৭। মুদ্ৰিত।
শৰ্মা, গোৱিন্দ প্ৰসাদ। *অসমীয়া উপন্যাসৰ অধ্যয়ন*। গুৱাহাটী ঃ প্ৰজ্ঞা মিডিয়াহাইপ, ২০২৩। মুদ্ৰিত।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ "এজন বুঢ়া মানুহ" উপন্যাসত সমাজ পৰিৱৰ্তন

ড° জুমি বৰ্মন
মুকালমুৰা, নলবাৰী-৭৮১১২৬ (অসম)
৮০৯৯২৮৭৭২৪
barmanjumi76@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

সমাজ আৰু সাহিত্য এটা আনটোৰ পৰিপূৰক। সমাজ পৰিচালনা কৰাত সাহিত্যৰ ভূমিকা অপৰিসীম। সাহিত্য ৰচিত হয় সমাজক কেন্দ্ৰ কৰি আৰু শিল্পী-সাহিত্যিকে সমাজৰপৰা বিষয়বস্তু আহৰণ কৰি শিল্প সৃষ্টি কৰে। সমাজজীৱনৰ বিভিন্ন দিশ সাহিত্যৰ মাজত উদ্ভাসিত হৈ উঠে। সময় গতিশীল। গতিশীল সময়ৰ পৰিৱৰ্তনশীলতাৰ ধৰ্ম মানি সাহিত্যৰ গতি বিধি, বিষয়বস্তু, ৰেহ-ৰূপ আদিৰো পৰিৱৰ্তন ঘটে।

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যই অধিক বিস্তৃতি লাভ কৰে যুদ্ধোত্তৰ যুগত। যুদ্ধই আনি দিয়া অস্বাভাৱিক পৰিস্থিতি, অস্থিৰ বাতাবৰণ, পশ্চিমীয়া ধ্যান-ধাৰণা, কলা-কৌশল, বিজ্ঞান-প্ৰযুক্তি বিদ্যাৰ প্ৰসাৰ, আদিয়ে মানুহৰ জীৱন ধাৰণ প্ৰণালীৰ লগতে মন আৰু মানসিকতাৰো পৰিৱৰ্তনো ঘটায়। তাৰ প্ৰতিফলন সাহিত্যতো বাৰুকৈয়ে পৰে। এই সময়ছোৱাত সমাজৰ দ্ৰুত পৰিৱৰ্তন ঘটিল। পৰম্পৰাগত ধ্যান-ধাৰণাৰ বিপৰীতে মানুহে সকলো কথা যুক্তিৰে চালি-জাৰি চাবলৈ ধৰিলে। আৱেগতকৈ বিবেকক অধিক গুৰুত্ব দিয়াৰ ফলত মানুহৰ মাজত লাহে লাহে মানসিক দূৰত্ব বৃদ্ধি পাবলৈ ধৰিলে। আত্মীয়-স্বজন, পৰিয়াল-পৰিজন, বন্ধু-বান্ধৱী আদিৰ মাজতো আত্মীয়তা লাহে লাহে কমি আহিবলৈ ধৰিলে। অৰ্থনৈতিক বৈষম্য, নগৰকেন্দ্ৰিক যান্ত্ৰিক সভ্যতাই স্বাভাৱিক জীৱন যাত্ৰাৰ পৰিৱৰ্তন ঘটালে। ফলস্বৰূপে সমাজত বিভিন্ন সমাস্যাই গা কৰি উঠিলে। এই সময়ছোৱাত ৰচিত উপন্যাসসমূহৰ মাজতো এনেবোৰ সমস্যাই ঠাই পাবলৈ ধৰিলে।

যুদ্ধোত্তৰ যুগৰ এগৰাকী উল্লেখযোগ্য ঔপন্যাসিক হ'ল নিৰুপমা বৰগোহাঞি। নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসত সমসাময়িক সমাজৰ বিভিন্ন দিশ প্ৰতিভাত হৈ উঠে। পৰম্পৰাগত জীৱন যাত্ৰাৰ প্ৰতি স্বাভাৱিক অনীহা, গ্ৰাম্য জীৱনৰ অৱক্ষয়, বিলাসী জীৱনৰ প্ৰতি মোহ, পৰম্পৰাগত জীৱনৰ সৈতে আধুনিক জীৱনৰ দ্বন্দ, নগৰকেন্দ্ৰিক যান্ত্ৰিক সভ্যতাৰ বিকাশ, অৰ্থনৈতিক সমস্যা, নাৰী মুক্তিৰ চেতনা আৰু নাৰী-পুৰুষৰ সমতাৰ অন্তহীন দ্বন্দ, জৈৱিক সমস্যা আদি বিভিন্ন দিশৰ উন্মুক্ত প্ৰকাশ ঘটা দেখিবলৈ পোৱা যায়। প্ৰকৃতাৰ্থত সমাজ বাস্তৱতাৰ ভেঁটিতে নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসসমূহ সৃষ্টি হৈছে। *সেই নদী নিৰবধি* (১৯৬৩), *দিনৰ পিছত দিন* (১৯৬৬), *এজন বুঢ়া মানুহ* (১৯৬৬), *অন্তঃস্ৰোতা* (১৯৭২), *কেকটাচৰ ফুল* (১৯৭৩), *ইপাৰৰ ঘৰ সিপাৰৰ ঘৰ* (১৯৭৯), *অন্য জীৱন* (১৯৮৭), *অভিযাত্ৰী* (১৯৯৩), আদি উপন্যাসসমূহ অসমীয়া সমাজজীৱনৰ ভেঁটিত উপস্থাপিত। সমসাময়িক

সমাজৰ সুন্দৰ প্ৰতিফলনে বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসসমূহ আকৰ্ষণীয় কৰি তুলিছে। অভিজ্ঞতাৰ কলাত্মক উপস্থাপন আৰু সমস্যা উত্থাপনৰ নিপুণতাৰ বাবে তেওঁৰ উপন্যাসসমূহ অসমীয়া সমাজৰ জীৱন্ত দলিল স্বৰূপ হৈ পৰিছে।

**বীজ শব্দ ঃ**

পৰম্পৰাগত সমাজ, আধুনিক সমাজ, জীৱন-ধাৰণ প্ৰণালী, নিসঙ্গতা, মনোজগত, অৰ্থনৈতিক দিশ, সাংস্কৃতিক দিশ, শৈক্ষিক দিশ, মূল্যবোধ।

**০.০ অৱতৰণিকা ঃ**

নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ এখন সুখপাঠ্য উপন্যাস হ'ল *এজন বুঢ়া মানুহ*। উপন্যাসখন মূলতঃ এগৰাকী বৃদ্ধৰ মনস্তাত্বিক জটিলতাৰ আধাৰত নিৰ্মিত। ৭০ বছৰীয়া বুঢ়া মানুহ এজনৰ নিসংগতাৰ বেদনাই উপন্যাসখনৰ মূল উপজীব্য। বৃদ্ধ বিজয় ভৰালী, পুত্ৰ সঞ্জয় আৰু বোৱাৰী কমলাৰ জীৱনৰ দৈনন্দিন ঘটনা-পৰিঘটনা আৰু পৰলোকগামী পত্নী ইলাৰ স্মৃতি ৰোমন্থনে উপন্যাসখনৰ কাহিনীভাগ আগবঢ়াই লৈ গৈছে। তাৰ মাজতে অসমীয়া বাস্তৱ সমাজৰ কেইবাটাও দিশে ভুমুকি মাৰিছে। পৰিৱৰ্তনকামী অসমীয়া সমাজৰ তথাকথিত বিভিন্ন সমস্যা উপন্যাসখনত মূৰ্ত হৈ উঠিছে। যুদ্ধই আনি দিয়া পশ্চিমীয়া সভ্যতাৰ বতাহে অসমীয়া বাহ্যিক আৰু আভ্যন্তৰীণ দিশৰ কেনেধৰণৰ পৰিৱৰ্তন সাধন কৰিলে তাৰ চিত্ৰ ঔপন্যাসিকে খুব সুন্দৰভাৱে অংকন কৰিছে। উপন্যাসখনত বিজয় ভৰালীৰ বাস্তৱ জীৱনৰ বিভিন্ন অভিজ্ঞতা আৰু ইলা আৰু কমলাৰ চাৰিত্ৰিক দিশৰ তুলনাৰ যোগেদি প্ৰাচীন আৰু আধুনিক সমাজৰ ব্যৱধান সুন্দৰভাৱে ফুটাই তুলিছে।

**০.১ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ**

নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ *এজন বুঢ়া মানুহ* এখন সাৰ্থক সামাজিক উপন্যাস। উপন্যাসখন বৃদ্ধ মনস্তত্ত্ব, নাৰী চৰিত্ৰ, ভাষিক দিশ আদি বিভিন্ন দিশৰপৰা অধ্যয়ন কৰাৰ যথেষ্ট থল আছে। সেয়ে হ'লেও আমাৰ অধ্যয়নত কেৱল উপন্যাসখনত সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ দিশসমূহ কেনেধৰণে প্ৰতিভাত হৈ উঠিছে তাৰ ওপৰতহে আলোকপাত কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

**০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ**

পৰিৱৰ্তনশীলতা সমাজৰ ধৰ্ম। সময়ৰ অগ্ৰগতি, পৰিৱৰ্তনশীলতা, সমৃদ্ধি-মন্দাৱস্থা সকলো সাহিত্যৰ মাজত ধৰা দিয়ে। বহু ক্ষেত্ৰত সামাজিক পৰিৱৰ্তন জৰুৰী হৈ পৰে। কোনো কোনো ক্ষেত্ৰত পৰিৱৰ্তনে সমাজত নেতিবাচক প্ৰভাৱো পেলায়। যুদ্ধোত্তৰ যুগত অসমীয়া সমাজত কেনেধৰণৰ পৰিৱৰ্তনে দেখা দিছিল আৰু সেই পৰিৱৰ্তনে সমাজত কেনেধৰণৰ প্ৰভাৱ পেলাইছিল তাক প্ৰতিপাদন কৰাই এই অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য।

**০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতিঃ**

এই অধ্যয়নত মূলত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে।

**১.০ পৰম্পৰাগত সমাজৰ সৈতে আধুনিক সমাজৰ সংঘাত ঃ**

*এজন বুঢ়া* মানুহ মূলত এখন সামাজিক উপন্যাস। উপন্যাসখনত সমান্তৰালভাৱে দুখন সমাজৰ চিত্ৰ প্ৰতিফলিত হৈছে। এখন পৰম্পৰাগত প্ৰাচীন সমাজ আৰু আনখন আধুনিক সমাজ। ঔপন্যাসিকে বৃদ্ধ বিজয় ভৰালীৰ মানসিক জগতত ক্ৰিয়া কৰা ভিন্ন চিন্তা আৰু তেওঁৰ পত্নী ইলাৰ স্মৃতি ৰোমন্থনৰ মাজত পৰম্পৰাগত সমাজখন আৰু আধুনিক জীৱনৰ প্ৰতিভূ কমলাৰ চিন্তা আৰু কৰ্মকাণ্ডই আধুনিক সমাজখন তুলি ধৰিছে। পৰম্পৰাগত সমাজৰ প্ৰতিভূ বিজয় ভৰালীয়ে আধুনিকা নাৰী কমলাৰ কিছু কৰ্মকাণ্ড মনৰপৰা গ্ৰহণ কৰিব পৰা নাই। ঠিক সেইখিনি সময়তে তেওঁৰ মনৰ মাজত ইলাৰ স্মৃতিয়ে দোলা দি যায়। ইলা আৰু কমলাৰ মাজত তেওঁ মনৰ মাজত যি তুলনা কৰে সেই তুলনাই পৰম্পৰাগত আৰু আধুনিক সমাজখনৰ মাজত সংঘাত ঘটাইছে। দৰাচলতে উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিতে সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ বীজ অংকুৰিত হৈছে। বিজয় ভৰালী নিজেই পৰিৱৰ্তনৰ অংশীদাৰ। সমাজৰ বিপক্ষে গৈ বিজয় ভৰালীয়ে অজাতিৰ ছোৱালী বিয়া কৰাই প্ৰকৃততে সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ অন্য এক ছবি পোহৰলৈ আনিছে। যাৰ বাবে নিজৰ ঘৰখনতে বিজয় ভৰালী এলাগী হৈ পৰিছে। জন্মদাত্ৰী মাতৃও তেওঁক অস্পৃশ্যৰ দৰেহে ভাত খাবলৈ দিছে। এয়া দৰাচলতে পুৰণি আৰু নতুনৰ মাজত সংঘাত।

উপন্যাসখনত যি দুগৰাকী নাৰীৰ ছবি চিত্ৰিত হৈছে সেই দুগৰাকী দুটা যুগৰ নাৰী। দুয়োগৰাকী নাৰীৰ স্বভাৱৰ যিদৰে মিল নাই সেইদৰে চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্যৰো মিল নাই। এক কথাত ক'বলৈ গ'লে এটা আনটোতকৈ সকলো ক্ষেত্ৰতে পৃথক। দুয়োগৰাকী নাৰী চৰিত্ৰই দুটা যুগক তুলি ধৰিছে। এগৰাকী অল্পশিক্ষিতা, মৰমীয়াল, আত্মত্যাগী,

সহানুভূতিশীল আৰু দৰদী। আনগৰাকী উচ্চ শিক্ষিতা, আত্মকেন্দ্রিক, বস্তুবাদী, স্বাভিমানী।

উপন্যাসখনত ইলাক যিটো যুগৰ নাৰী হিচাপে অংকন কৰা হৈছে সেই যুগত বস্তুতকৈ মানুহৰ মৰম-চেনেহে অধিক প্ৰাধান্য লাভ কৰিছিল। সাধাৰণ লাম-লাকটু কেইপদমানেৰেও ইলা সুখী হৈছিল। আধুনিক সভ্যতাই ঢুকি নোপোৱা ইলাই ভোগবিলাসী আৰামী জীৱনতকৈ সাধাৰণভাৱে জীয়াই থাকিব বিচাৰিছিল। বিয়াৰ পাছত আন দহগৰাকী নাৰীৰ দৰে ইলাৰ জীৱনো চাবিবেৰৰ মাজতে আবদ্ধ আছিল। ঘৰখনৰ ইটো-সিটো কাম কৰা, সংসাৰ চম্ভালোতে সময় অতিবাহিত হৈছিল। ইলা আছিল প্ৰকৃতাৰ্থত সেউজ মনৰ গৰাকী। বিজয় ভৰালীৰ সৰু কোৱাৰ্টাৰটোৰ চৌহদটো নানা তৰহৰ ফুল, গছ-গছনিৰে ভৰাই পেলাইছিল। ঘৰৰ পাছফালে থকা ঠাইখিনি চাফ-চিকুণ কৰি তাত শাক-পাচলি ৰুৱাৰ দিহা কৰিছিল। ইলাৰ এনেবোৰ কথাই বিজয় ভৰালীক আচৰিত কৰাই নহয় নিজৰ অকপটে কৰ্মস্পৃহাও বৃদ্ধি কৰিছিল। কমলা আছিল তাৰ সম্পূৰ্ণ বিপৰীত। কমলাৰ বিলাসী জীৱনৰ মোহে ঘৰখনত অশান্তিকৰ পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰিছিল।

**১.১ জীৱন-ধাৰণ প্ৰণালীৰ পৰিৱৰ্তন ঃ**

ঔপন্যাসিকে দুটা ভিন্ন যুগৰ দুটা নাৰী চৰিত্ৰৰ জৰিয়তে সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ বিভিন্ন দিশ ফুটাই তুলিছে। সময়ৰ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে মানুহৰ জীৱন ধাৰণ প্ৰণালীৰ পৰিৱৰ্তনো লক্ষণীয় হৈ উঠে। আধুনিক নগৰকেন্দ্রিক সভ্যতাই ঘৰ-দুৱাৰ, আচ-বাৰ আদিবো ভালেখিনি পৰিৱৰ্তন আনিছিল। ঔপন্যাসিকে নিঁখুতভাৱে তাৰ চিত্ৰ অংকন কৰিছে। কমলাই যুগৰ লগত মিলাই চলিবলৈ গৈ জীৱনৰ বাহ্যিক দিশটোৰ ওপৰত অধিক গুৰুত্ব দিছিল। লগৰবোৰৰ লগত 'ষ্টেটাছ মেইনটেইন' কৰিবলৈ বিচাৰিছিল। ইয়াৰ বাবে অৰ্থনৈতিক ভাৰসাম্য ৰক্ষা কৰাটো অতি জৰুৰী হৈ পৰিছিল। উপন্যাসখনত ঘৰ-দুৱাৰ, সাজ-সজ্জা, পিন্ধন-উৰণ, চাল-চলন, খাদ্যাভ্যাস আদি সকলো ক্ষেত্ৰতে আধুনিক ৰুচিৰ পৰিচয় ফুটি উঠিছে।

বিজয় ভৰালী পু�ৰণি দিনৰ মানুহ। সেয়ে তেওঁ নতুন যুগৰ লগত নিজক খাপ খুৱাব পৰা নাই। তেওঁ পুৰণি দিনৰ পুৰণি মনৰ মানুহ অথচ জীয়াই থাকিব লগা হৈছে নতুন যুগত। পুৰণি আৰু বৰ্তমান সময়ৰ মাজত পিন্ধন-উৰণ, জীৱন-ধাৰণ সকলো ক্ষেত্ৰতে বিৰাট ব্যৱধান আহি পৰিছিল। তাৰ চিত্ৰ ঔপন্যাসিকে সুন্দৰভাৱে ফুটাই তুলিছে— "তেওঁলোকৰ দিনতে ঘৰবোৰ যেনেকুৱা আছিল পৰ্দাবোৰো আছিল তথৈবচ। বহুতৰ ঘৰততো তিৰোতাবোৰে চাদৰবোৰো অলপ ফটাৰ পিছত চিলাই কৰি পৰ্দাৰূপে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল; ইলায়ো তাকে কৰিছিল এবাৰ, ৰঙীণ চাবোন এটুকুৰা কিনি আনি পুৰণি চাদৰ কেইখনমানত নীলা ৰং লগাই পৰ্দা আঁৰি ঘৰ সজাইছিল ইলাই।" (বৰগোহাঞি. ১২১)

সময়ৰ অগ্ৰগতিৰ লগে লগে কেৱল বহির্জগতৰে নহয় অন্তর্জগতৰো ভালেখিনি ব্যৱধান আহি পৰে। এনে পৰিস্থিতিত বিজয় ভৰালীৰ মনৰ অৱস্থা দিনক দিনে জটিলতৰ হৈ পৰিছে। চৌপাশৰ পৰিৱেশৰ লগত তেওঁ তিষ্ঠি থাকিব নোৱাৰাৰ উপক্ৰম ঘটিছে। ইলাক উদ্দেশ্যি কোৱা এটা মাত্ৰ বাক্যই তেওঁৰ মনৰ অসহায় অৱস্থাৰ চিত্ৰ মর্মস্পর্শীভাৱে তুলি ধৰিছে -

"তোমাৰ ওচৰলৈ মোক মাতি নিনিয়া কিয় ইলা, মোৰতো পৃথিৱীত আৰু কোনো কাম বাকী নাই, মইতো এতিয়া সংসাৰৰ ভাৰহে মাত্ৰ।" ( বৰগোহাঞি. ৯২ )

**১.২ ঘৰ-দুৱাৰ নির্মাণ ঃ**

প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ উন্নতিয়ে দৈনন্দিন প্ৰয়োজনীয় সামগ্ৰী সহজলভ্য কৰি তোলাৰ লগতে মানুহৰ শাৰীৰিক শ্ৰম লাঘৱ কৰে। কমলাই যিটো ঘৰ সজাইছিল সেই ঘৰটো সম্পূৰ্ণ আধুনিক পদ্ধতিৰ আছিল। ঘৰৰ ভিতৰৰ আচবাব, সা-সুবিধা আৰু অন্যান্য কাৰ্যই আধুনিকতাৰ পৰিচয় বহন কৰিছিল। আধুনিক মানুহে গৃহ-সজ্জা সুৰুচিপূৰ্ণ হোৱাৰ লগতে স্বাস্থ্যকৰ ৰূপত গঢ় দিয়াতো গুৰুত্ব দিছিল। ইয়াৰ লগে লগে প্ৰাচীন সমাজৰ গৃহ-সজ্জাৰ ৰুচিহীনতাৰ পৰিচয়ো ঔপন্যাসিকে দাঙি ধৰিছে---"সঁচাকৈয়ে আচৰিত আছিল আগৰ মানুহবোৰ, কোনো ৰকমে ঘৰবোৰ সাজি থাকিব লাগে থাকিছিল। কিন্তু সেই ঘৰবোৰো যে সুন্দৰ কৰি সুৰুচিপূৰ্ণ আৰু স্বাস্থ্যকৰ কৰি সাজিব লাগে তাৰ কোনো ধাৰণাই নাছিল, কেয়াবো নকৰিছিল। গৰু-ম'হৰ দৰে খাই-বই জীৱনটো কটাই দিব পাৰিলেই হ'ল।" (বৰগোহাঞি. ১০৪)

কমলাই নতুন ঘৰটো সম্পূৰ্ণ আধুনিক পদ্ধতিত সজাইছিল। উপন্যাসখনত পুৰণিকলীয়া মানুহখিনিৰ প্ৰকৃতিক কৰা আপডালৰপৰা আধুনিক মনৰ মানুহৰ প্ৰকৃতি ধ্বংসলৈ যি পৰিৱৰ্তন তাৰো প্ৰতিফলন ঘটিছে।

প্রগতিশীল সময়ৰ পাকচক্রত মানুহে কেনেকৈ প্রকৃতি ধ্বংসৰ আখৰা কৰিছে তাৰো স্পষ্ট ছবি লেখকৰ সূত্রেই দৃষ্টিত ভাস্বৰ হৈ উঠিছে---"মানুহ সভ্য শিক্ষিত হৈছে, মানুহ প্রগতিৰ জখলাত ঢাপে ঢাপে উঠি গৈছে, আৰু সেই প্রগতিৰ এটা প্রতীক যেন এই ধুনীয়া ন ন ডিজাইনৰ ঘৰবোৰ। অৰণ্য-য'ত হয়তো এতিয়াও মিহলি হৈ আছে আদিম বৰ্বৰতাৰ গোন্ধ, তাক মানুহৰ প্রগতিকামী মনে বিনা দ্বিধাই নিষ্ঠুৰভাৱে এফালৰপৰা ধ্বংস কৰি আনিছে।" (বৰগোহাঞি. ১০১)

**১.৩ যাতায়ত ব্যৱস্থাৰ পৰিৱৰ্তন ঃ**

আধুনিক সভ্যতাৰ এটা উল্লেখনীয় দিশ হ'ল বিজ্ঞান-প্রযুক্তিৰ প্রসাৰ। বিজ্ঞান আৰু প্রযুক্তি বিদ্যাৰ প্রসাৰে মানুহৰ জীৱন-ধাৰণ প্রণালীৰ ভালেখিনি পৰিৱৰ্তন আনিলে। ৰাতিপুৱা শুই উঠাৰপৰা ৰাতি শুৱালৈকে মানুহ বিজ্ঞানৰ ওপৰত নির্ভৰশীল হৈ পৰিল। বিজ্ঞানৰ অগ্রগতি আৰু প্রসাৰে যোগাযোগ আৰু যাতায়ত ব্যৱস্থাৰ সুচলতা আনিলে। ইয়াৰ ফলত সময় ৰাহি হোৱাৰ লগতে ভ্রমণৰো সুবিধা কৰি দিলে। উপন্যাসখনত গুৱাহাটী চহৰত যাতায়ত ব্যৱস্থাৰ সুচলতা সম্পর্কেও সুন্দৰ বর্ণনা দাঙি ধৰিছে।

**১.৪ সাজ-পোছাকৰ পৰিৱৰ্তন ঃ**

আধুনিক সভ্যতাই ঘৰ-দুৱাৰ, চাল-চলন, ধৰণ-কৰণ, খাদ্যাভ্যাস আদিৰে কেৱল পৰিৱৰ্তন অনা নাছিল, পিন্ধন-উৰণ আদিৰ ক্ষেত্রতো ভিন্ন ৰুচিৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিছিল। পুৰণি সমাজৰ বাসিন্দাসকলে পৰিধান কৰা আৱৰণ লাহে লাহে নোহোৱা হৈ পোছাক-পৰিচ্ছদৰ সলনি পশ্চিমীয়া সাজপাৰৰ প্রতি মানুহ অধিক আকর্ষিত হৈছিল। উপন্যাসখনত পশ্চিমীয়া সভ্যতাই আনি দিয়া সাজপাৰৰ ছবিও তুলি ধৰিছে। ঔপন্যাসিকে বিজয় ভৰালীৰ দৃষ্টিৰে কমলাই পৰিধান কৰা পোছাকৰ মাজতো পশ্চিমীয়া মোহ ফুটাই তুলিছে---"ইমান ৰুচি বিগর্হিত পোছাক পিন্ধিছে কমলাই! পাতল কাপোৰ এখন গাত এনেকৈ টানি টানি মেৰাই পিন্ধিছে যে কান্ধৰ আধাৰপৰা তাইৰ দীর্ঘ শুভ্র বাহু অনাবৃত হৈ সূর্য্যৰ ৰঙা পোহৰত জিলিকি উঠিছে।" (বৰগোহাঞি. ১০২)

**১.৫ অর্থনৈতিক সচেতনতা ঃ**

দেশৰ অর্থনৈতিক অৱস্থাই সমাজৰ নানা দিশৰ ব্যাপক পৰিৱৰ্তন আনে। জীৱন ধাৰণ পদ্ধতি, ব্যৱসায় বাণিজ্য আদিৰ ওপৰত গভীৰভাৱে প্রভাৱ পেলায়। ইমান দিনে বিজয় ভৰালী আৰু তেওঁৰ উত্তৰাধিকাৰী সঞ্জয়ে ভাবিবও নোৱাৰা কাম এটা কমলাই সম্পূর্ণ কৰি পেলালে। কমলা উচ্চ শিক্ষিতা বুদ্ধিমতী নাৰী। গুৱাহাটীৰ নিচিনা চহৰত ঘৰ ভাড়া দিও যে মানুহে আর্থিক সকাহ পাব পাৰে সেই কথা কমলাৰ জ্ঞাত। সেয়ে কমলাই নিজে সম্পূর্ণ পৰিকল্পনাৰে সেই কাম সমাধা কৰিছিল। গুৱাহাটী চহৰত মাটি কিনা, ঘৰ বন্ধা, ঘৰ ভাড়া দিয়া আদি কামে অর্থনৈতিক সচেতনতাৰ দিশ প্রকট কৰি তুলিছে।

**১.৬ শৈক্ষিক দিশৰ পৰিৱৰ্তন ঃ**

সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ এক উল্লেখযোগ্য দিশ হ'ল শিক্ষাৰ প্রসাৰ। প্রকৃতপক্ষে শিক্ষা হ'ল সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ প্রধান অস্ত্র। আধুনিক শিক্ষাই জ্ঞান অর্জন নাইবা জীৱন গঢ়াতকৈ জীৱিকাৰ ওপৰতহে অধিক গুৰুত্ব প্রদান কৰা দেখা যায়। শিক্ষাই প্রকৃত অর্থত মানুহক মানুহ হিচাপে গঢ়ি তোলাত সহায় কৰে। পুৰণি সমাজত নাৰী শিক্ষাই বিস্তাৰ লাভ কৰিব পৰা নাছিল। তাৰ পৰিৱর্তে আধুনিক সমাজত নাৰী শিক্ষাই যথেষ্ট প্রসাৰ লাভ কৰে। পুৰুষৰ সমানে নাৰী শিক্ষা গ্রহণতে ক্ষান্ত থকা নাই সমানে সমানে সেই শিক্ষাৰ উপযুক্ত ব্যৱহাৰো কৰিছে। ইলা আৰু কমলাৰ চৰিত্রৰ মাজেৰে ঔপন্যাসিকে দুখন সমাজৰ নাৰী শিক্ষাৰ মাজত থকা পার্থক্যৰ কথাই দাঙি ধৰিছে। পুৰণি দিনত নাৰী শিক্ষাই বর্তমানৰ দৰে ইমান প্রাধান্য লাভ কৰা নাছিল। ইলাই আনুষ্ঠানিক উচ্চ শিক্ষাৰে শিক্ষিত নাছিল, কিন্তু কমলা আছিল এম.এ পাছ। তদুপৰি কমলাৰ ধাৰণা যে আনক বিলাব নোৱাৰা জ্ঞান মূল্যহীন, তেনে শিক্ষাও অসার্থক। সেয়ে কমলাই গিৰিয়েকৰ কথা আওকাণ কৰিও স্কুল এখনত শিক্ষকতা কৰিছিল। নতুন যুগৰ নাৰী কমলাই ঘৰ-সংসাৰ, সন্তান জন্ম দিয়া আৰু প্রতিপালন কৰাতেই নিজক আবদ্ধ কৰি ৰাখিব বিচৰা নাছিল। নিজৰ পছন্দ-অপছন্দ, ইচ্ছা-অনিচ্ছাৰ ওপৰত নির্ভৰ কৰিয়েই সকলো কাম কৰিছিল। কমলা চৰিত্রৰ ব্যক্তিকেন্দ্রিক চিন্তা আৰু কর্মকাণ্ডই এনেবোৰ কথা সুন্দৰকৈ তুলি ধৰিছে। কমলা যিটো যুগত ডাঙৰ-দীঘল হৈছিল সেই যুগটোত ভালেখিনি পৰিৱৰ্তন হৈছিল। নাৰীসকল পুৰুষৰ সমানে শিক্ষা-দীক্ষা লাভ কৰিছিল। কেৱল সিমানেই নহয় পুৰুষৰ সমানে সমানে কাম কৰা আৰু সম অধিকাৰৰ প্রতিও নাৰীসকল সজাগ হৈ উঠিল।

**১.৭ সাংস্কৃতিক পৰিৱৰ্তন ঃ**

সংস্কৃতি মানৱ সমাজৰ অপৰিহাৰ্য অংগ। সংস্কৃতিৰ হাতত ধৰিয়ে সমাজে গতি লাভ কৰে। সেয়েহে বহু সময়ত সংস্কৃতিৰ পৰিৱৰ্তনে সমাজ পৰিৱৰ্তন অনিবাৰ্য কৰি তোলে। আধুনিকতাই স্পৰ্শ নকৰা মানুহখিনি সৰু-ডাঙৰ প্ৰায়বোৰ কামৰ আৰম্ভণিতে ঈশ্বৰৰ আশীষ বিচৰাটো মন কৰিবলগীয়া দিশ। উৎসৱ-অনুষ্ঠানবোৰো প্ৰায়ভাগেই আছিল ভক্তিমূলক। কিন্তু দিন যোৱাৰ লগে লগে মানুহৰ মনবোৰো পৰিৱৰ্তন হ'ল। আধ্যাত্মিকতাৰ সলনি উচ্চাঙ্গ সু�ৰৰ গান-বাজনাৰ প্ৰতিহে মানুহ অধিক আকৰ্ষিত হ'ল। সঞ্জয় আধুনিক যুগৰ বাসিন্দা হ'লেও সম্পূৰ্ণৰূপে নিজক আধুনিক ৰূপত সজাই তুলিব পৰা নাছিল। দুগৰাকী প্ৰাচীন যুগৰ মানুহৰ ছত্ৰছায়াত ডাঙৰ-দীঘল হোৱা সঞ্জয় দৰাচলতে প্ৰাচীন আৰু আধুনিক যুগৰ মাজৰ সংযোগ সেঁতু। উপন্যাসখনত পু�ৰণি মানুহৰ উদাৰতা আৰু নিভাঁজ মৰমৰ ছবি এখনো ফুটি উঠিছে। আধুনিক সভ্যতাই কমলাৰ মন এনেভাৱে সংকীৰ্ণ কৰি তুলিছিল যে গৃহ প্ৰৱেশৰ দিনা চাৰিজন মানুহক খুৱাই মাঙ্গলিক কাৰ্যভাগ কৰিবলৈও অনীহা প্ৰকাশ কৰিছিল। আধুনিক সভ্যতাই মানুহৰ মন মানসিকতা কেনেধৰণে সলনি কৰিছে তাৰ এক স্পষ্ট চিত্ৰ ঔপন্যাসিকে সঞ্জয়ৰ মুখেৰে ব্যক্ত কৰাইছে----"কিন্তু কমলা, যুগ বেলেগ হ'লেও মানুহৰ মন একেই থাকে, আনক মৰম কৰা মানুহে সদায় সকলো অভাৱ অনাটনৰ মাজতো আনক মৰম বিলায়ে থাকে। মোৰ মায়ে আজিৰ যুগতো গৃহ-প্ৰৱেশ উৎসৱ ঠিকেই কৰিলেহেঁতেন, তাৰ বাবে লাগে তেওঁ বাথৰুমত 'বাথ-টাব' নেৰাখি সেই টকাকেইটাকে ৰাহি কৰি মানুহক খুৱালেহেঁতেন।" (বৰগোহাঞি . ১১৪)

**১.৮ মূল্যবোধৰ পৰিৱৰ্তন ঃ**

সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে সামাজিক মূল্যবোধৰ পৰিৱৰ্তন ঘটে। পৰিৱৰ্তনশীল সমাজ আৰু পৰিৱেশৰ লগত সামঞ্জস্য ৰাখি মানুহৰ মনত নতুন নতুন মূল্যবোধ জাগি উঠে। আধুনিক সভ্যতাই নাৰীৰ মানসিক অৱস্থাৰ কেনেধৰণৰ প্ৰভাৱ পেলাইছিল তাৰ এক সুন্দৰ চিত্ৰ ঔপন্যাসিকে দাঙি ধৰিছে। আধুনিক বস্তুবাদী সভ্যতাত মানুহৰ মৰম চেনেহতকৈ নিৰ্জীৱ বস্তু তথা অৰ্থৰ প্ৰতিহে মোহ অধিক হৈ পৰে। কমলা তাৰেই সাক্ষ্য প্ৰমাণ। কমলাই শহুৰেকে চোফাত বহি অলপ জিৰণি লোৱা কথাটোলৈও আপত্তি দৰ্শাইছিল। নিজৰ সন্তানটোকো বিনাদ্বিধাই আয়াৰ হাতত গতাই দিনটোলৈ নিশ্চিন্ত মনে ওলাই গৈছিল। সঞ্জয়েও মাকৰ যি নিভাঁজ মৰম, আদৰ-আপদাল সেয়া কমলাৰ মাজত বিচাৰি মনোকষ্ট পাইছিল। আলহী-অতিথি আপ্যায়ন কৰিব পৰা মন এটাও কমলাৰ নাছিল। মুঠতে সকলো ক্ষেত্ৰতে কমলাই কেৱল অৰ্থৰ হিচাপহে কৰিছিল। কমলাৰ বক্তব্যৰ মাজত বস্তুবাদী মনৰ পৰিচয় ফুটি উঠিছে— "তুমি যে ইমান বেছিকৈ খৰচ-পাতিৰ কথা নেভাবা, সাংসাৰিক মানুহ এজনৰ বাবে বৰ আচৰিত কথা। আমাৰ ঘৰত যি মানুহ দুনুহেই নাহক, যিমানে সঘনে নাহক, তুমি সকলোকে ইটো-সিটো বিবিধ বস্তুৰে জুতি লগাই চাহ খুৱাবলৈ বিচৰা, আলহী-অতিথি আহিলে তুমি একেবাৰে বিগলিত হৈ পৰা, সিহঁতক কি খুৱাওঁ, কি ধুৱাওঁ, কি উপহাৰ দিওঁ ভাবি তত্ নোপোৱা হোৱা। কিন্তু আজিকালিৰ দিনত ইমান বেহিচাপী হবলৈ গ'লে চলে নে?" (বৰগোহাঞি পৃ.২৪-২৫)

ইলাৰ অকৃটিম ভালপোৱা, প্ৰাণচঞ্চল হাঁহি, আত্মত্যাগ, অলপতে সন্তুষ্ট হোৱা স্বভাৱতে বিজয়ৰ মন ভৰাই ৰাখিছিল। চৌপাশে শান্তিময় সুৰভিয়ে বিৰাজ কৰিছিল। কমলাৰ বস্তুবাদী ভোগসৰ্বস্ব আচৰণ আৰু মানসিকতাই বিজয়ৰ অন্তৰতো অশান্তিকৰ পৰিৱেশ এটাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। পৰম্পৰাগত সমাজৰ প্ৰতিভূ বিজয় ভৰালীয়ে আধুনিক যুগত বাস কৰিলেও আধুনিক যুগৰ প্ৰমূল্য বুজিব পৰা নাছিল আৰু প্ৰাচীন যুগৰ সৌৰভ তাত বিচাৰি পোৱা নাছিল। ঔপন্যাসিকে পৰম্পৰাগত প্ৰাচীন সমাজৰ সনাতন মূল্যবোধক আধুনিক বস্তুবাদী সভ্যতাই কেনেদৰে গ্ৰাস কৰি পেলাইছে তাৰ এক স্পষ্ট ছবি অংকন কৰিছে। ইলা চৰিত্ৰত প্ৰাচীন সনাতন মূল্যবোধক ধৰি ৰখাৰ প্ৰয়াস আৰু কমলাৰ যোগেদি সেই মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় হ'বলৈ ধৰা ছবি এখন অংকন কৰিছে।

উপন্যাসখনত পুৰণি মূল্যবোধৰ লগত নতুনৰ সংঘাত ঘটিছে। পুৰণিক আঁতৰাই নতুনে নিজস্ব ঠাই বিচাৰি লৈছে। সময়ৰ লগে লগে মানুহৰ ৰুচি-অভিৰুচিবোৰো পৰিৱৰ্তন ঘটে। ঔপন্যাসিকে অতি সচেতনভাৱে সেই কথাবোৰ সুন্দৰ প্ৰতিফলন ঘটাইছে। কমলাই শাহুৰেকে কৰা হাঁহৰ ফটোখন দেউতাকৰ কোঠালিত আঁৰি থৈ তাৰ ঠাইত নিজ হাঁতৰ এমব্ৰইডাৰীৰ ছবি এখন আঁৰি থৈছে। "আগেয়ে আছিল পানীত চৰা দুটা চৰাই, এতিয়া ৰ'ল গছৰ ডালত বহি থকা দুটা চৰাই।" ( বৰগোহাঞি. ১৭)

**১.৯ মনোজগতৰ পৰিৱৰ্তন ঃ**

সময়ৰ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে মানুহৰ মন মানসিকতাৰ কেনেধৰণৰ পৰিৱৰ্তন ঘটে তাৰ এক সুন্দৰ আভাস ঔপন্যাসিকে দাঙি ধৰিছে। সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ আঁৰত মানুহৰ মনস্তত্ত্ব গভীৰভাৱে জড়িত হৈ থাকে। সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ মূলতেই হ'ল মানুহৰ মানসিক চিন্তা-ভাবনা, ইচ্ছা-আকাঙ্খা আদিৰ পৰিৱৰ্তন। মানুহৰ ৰুচিবোধৰ পৰিৱৰ্তনে সামাজিক পৰিৱৰ্তন অনিবাৰ্য কৰি তোলে। অনুকৰণপ্ৰিয়তাই মানুহৰ মনোজাগতিক দিশৰ পৰিৱৰ্তন ঘটায়। সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ ইও এক উল্লেখযোগ্য দিশ। আত্মকেন্দ্ৰিকতাই দ্বন্ধ, বৈষম্য আদিৰ সৃষ্টি কৰে।

বিজয় ভৰালী সুখ-শান্তিৰে জীৱন জীয়াব খোজা এজন সহজ-সৰল মানুহ। ভোগ বিলাসী জীৱনৰ মাদকতা, উচ্চাকাংক্ষাৰ স্বপ্নত তেওঁ বিভোৰ হোৱা নাই। পত্নী ইলাও তেনে সহজ আৰু সুখী জীৱনে বিচাৰিছিল। নতুনৰ গতি খেদা কমলা কিন্তু তাৰ সম্পূৰ্ণ বিপৰীত মেৰুত অৱস্থান কৰিছিল। কমলাৰ বাবে বিলাসিতা আৰু বাহ্যিকতাই সুখ আৰু শান্তিৰ মূল আধাৰ। ইলা উচ্চ শিক্ষিতা আৰু আধুনিকা নহ'লেও আজীৱন মৰমেৰে মেৰিয়াই ৰাখিব পৰাকৈ এখন সঁচা অন্তৰ আছিল। সেই মৰম মৃত্যুৰ পিছতো পতি আৰু পুত্ৰই বুকুত কঢ়িয়াই লৈ ফুৰিছিল। বস্তুবাদী সভ্যতাই কমলাৰ জীৱন মেৰিয়াই ৰাখিছিল। সেয়ে কমলাৰ জীৱন আবেগ-অনুভূতিয়ে পৰিচালিত কৰা নাছিল। পুৰণি যুগৰ মানুহ আবেগেৰে পৰিচালিত হোৱাৰ বিপৰীতে আধুনিক যুগৰ মানুহ যুক্তিৰে পৰিচালিত। তেওঁলোকৰ বাবে বস্তুতকৈ মৰমৰ মূল্যও কম। ঔপন্যাসিকে সমাজ পৰিৱৰ্তনৰ এই দিশটোও ফুটাই তুলিছে। ইলাৰ সঞ্চিত ধনেৰে কিনা মাটি ডোখৰ বছৰ বছৰ ধৰি পৰি থকা সত্ত্বেও বিজয় ভৰালী আৰু সঞ্জয়ে ঘৰ এটা সজাৰ কথা ভবিব পৰা নাছিল। সেই মাটি ডোখৰৰ লগত ইলাৰ বহু স্মৃতি, মৰম, সপোন, আবেগ, ভালপোৱা জড়িত হৈ আছিল। যাৰ বাবে বিজয়ে সেই মাটি ডোখৰ তেনেভাৱেই থকাটো বিচাৰিছিল। কমলাৰ লগত সেই মাটিডোখৰৰ কোনো আবেগ, ঘনিষ্ঠ সম্পৰ্ক নাইবা স্মৃতি জড়িত হৈ থকা নাছিল। কমলাৰ মতে সেই অতি মূল্যৱান মাটিডোখৰ বছৰ বছৰ ধৰি পেলাই থোৱা, নাইবা ঘৰ এটা বনাব নোৱাৰাটো তেওঁৰ স্বামী আৰু শহুৰেকৰ অকৰ্মণ্যতা নাইবা অদূৰদৰ্শিতাৰ বাহিৰে আন একো নহয়। কমলাই কেৱল ঘৰ এটা বনোৱাৰ পৰিকল্পনাতে ক্ষান্ত থকা নাছিল। নক্সা আঁকাৰপৰা ঘৰ সম্পূৰ্ণ হৈ উঠালৈকে সকলো কাম সম্পূৰ্ণ পৰিকল্পনাৰ মাজেৰে নিয়াৰিকৈ সমাধা কৰিছিল।

**১.১০ নিসংগতাৰ বেদনা ঃ**

আধুনিক যুগৰ এটা অন্যতম বৈশিষ্ট্য হ'ল নিসংগতা বা একাকীত্ব। নিসংগতাৰ বেদনা মানৱ জীৱনৰ এক ভয়াৱহ সমস্যা। মানুহ সংগীপ্ৰিয় জীৱ। সংগীয়ে মানুহক আনন্দ দিয়াৰ বিপৰীতে নিসংগতাই মানুহক মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৱনতি ঘটাত সহায় কৰে। আধুনিক সভ্যতাৰ কৰ্মব্যস্ত জীৱনে মানুহক নিসংগ কৰি তুলিছে। বিজয় ভৰালী পুত্ৰ-বোৱাৰীৰ লগত একেটা ঘৰতে বাস কৰা সত্ত্বেও নিসংগতাৰ বেদনাই তেওঁক পিষ্ট কৰিছে। এই নিসংগতাৰ বাবেই লাহে লাহে তেওঁ জীৱনৰ প্ৰতি মোহ হেৰুৱাই পেলাইছে। সংসাৰে আনি দিয়া মানসিক যন্ত্ৰণা, একাকীত্বই তেওঁক অসহায় কৰি তুলিছে। তেওঁ নিজকে সংসাৰৰ বোজা যেন অনুভৱ কৰিছে।পুত্ৰ-বোৱাৰীৰ কৰ্মব্যস্ত জীৱনে বিজয় ভৰালীক নিসংগতা অনুভৱ কৰাত আৰু অধিক প্ৰেৰণা যোগাইছে। যান্ত্ৰিকতাৰ কোলাহল, কৰ্মব্যস্ত পুত্ৰ-বোৱাৰী আৰু নিজৰ ব্যস্ততাহীন জীৱনে আৰু অধিক নিসংগ কৰি তুলিছে। ব্যস্ত চহৰৰ কোলাহল, গাড়ী-মটৰ, মানুহৰ আহ-যাহ, বিকট শব্দ, বিশৃঙ্খল পৰিৱেশে বিজয়ৰ মনত যি কোলাহলৰ সৃষ্টি কৰিছিল সেয়া আছিল নিসংগতাৰ কোলাহল।

**২.০ সামৰণি ঃ**

নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ আছিল এগৰাকী সমাজ সচেতন লেখক। *এজন বুঢ়া মানুহ* উপন্যাসৰ বিষয়বস্তু অসমীয়া সমাজৰ তেনেই চিনাকী। পৰিৱৰ্তনৰ বতাহে অসমীয়া সমাজৰ উপন্যাসখনৰ পৃষ্ঠাই পৃষ্ঠাই ঔপন্যাসিকৰ সমাজ সচেতনতা আৰু সমাজৰ প্ৰতি দায়বদ্ধতা প্ৰকট হৈ উঠিছে। লেখকৰ সূঐে দৃষ্টিত আধুনিক বস্তুবাদী সভ্যতা ভাস্বৰ হৈ উঠিছে। ঘৰে ঘৰে ৰেডিঅ' চিনেমা হ'লৰ প্ৰাচুৰ্য, কালচাৰেল ক্লাব, চহৰত অনুষ্ঠিত সংগীত সন্ধিয়া, কংক্ৰিটৰ ঘৰ, ঘৰ বন্ধা বা অন্যান্য কামৰ বাবে জধে মধে গছ-বন ধ্বংস কৰা, নাৰী শিক্ষাৰ প্ৰসাৰ, অর্থ উপাৰ্জনৰ ক্ষেত্ৰত নাৰীৰ ভূমিকা, যোগাযোগৰ সুচলতা, আদিৰ প্ৰাসঙ্গিকতাই আধুনিক যুগৰ পৰিৱৰ্তন স্পষ্ট ৰূপত ধৰা দিছে। গৃহ-নিৰ্মাণৰপৰা আদি কৰি ভিতৰৰ আচবাব, সা-সুবিধালৈকে আধুনিক কাৰিকৰী কৌশল আৰু প্ৰযুক্তি বিদ্যাই আনি দিয়া আৰামী জীৱনৰ চিত্ৰ ফুটাই তুলিছে। এইবোৰে আধুনিক মানুহৰ যুক্তি বুদ্ধি

আৰু চিন্তাধাৰাৰ পৰিৱৰ্তনৰ কথাই বুজাইছে। ঘৰৰ কৰিডৰ, বেডৰুমৰ লগত সংযুক্ত গা ধোৱা ঘৰ আৰু চেনিটাৰি, পাকঘৰত চিমনি লগোৱা, পকী নলাৰ ব্যৱস্থা, বাৰাণ্ডা আদিত মোজেইক, খিৰিকী দৰজাত লগোৱা আইভৰি ৰঙৰ পেইণ্ট আদিয়ে আধুনিক সমাজ ব্যৱস্থাৰ ৰুচিৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিছে। উপন্যাসখনত লেখকৰ সমাজসচেতনতাৰ পৰিচয় ফুটি উঠিছে। কেৱল যাতায়তৰ ক্ষেত্ৰতে নহয় দৈনন্দিন জীৱনৰ অন্যান্য কাম-কাজৰ ক্ষেত্ৰতো যে বিৰাট পৰিৱৰ্তন আনিলে সেই কথাৰো সুন্দৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। আগৰ দিনত দূৰ-দূৰণিৰপৰা পানী কঢ়িয়াই অনা দিনৰপৰা পাকঘৰ, বাচন ধোৱা ঠাই, গা ধোৱা ঘৰ আদি সকলোতে কলৰ ব্যৱস্থা হোৱাৰ যি আমূল পৰিৱৰ্তন তাৰ বৰ্ণনা দিছে। ই আধুনিক সমাজ আৰু প্ৰাচীন সমাজৰ নিজস্ব ৰূপ তুলি ধৰিছে। ❑

**প্ৰসঙ্গসূত্ৰ ঃ**

বৰগোহাঞি, নিৰুপমা । এজন বুঢ়া মানুহ, পৃ.১২১
উল্লিখিত. ৯২
উল্লিখিত.১০৪
উল্লিখিত. ১০১
উল্লিখিত.পৃ.২৪-২৫
উল্লিখিত. ১৭
উল্লিখিত.১১৪
উল্লিখিত.১০২

**গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ**


গোহাঁই, ৰাণী (সম্পা)। *অগ্ৰগামিনী নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ জীৱন আৰু সাহিত্য*। জ্যোতিপ্ৰকাশন, ১৯৯৮।
ঠাকুৰ, নগেন (সম্পা)। *এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস*। জ্যোতিপ্ৰকাশন, ২০০০।
দেৱী, মীৰা। *অসমীয়া উপন্যাসত নাৰীবাদ*। লোকায়ত প্ৰকাশন,১৯৯৬।
বৰগোহাঞি, নিৰুপমা। *এজন বুঢ়া মানুহ*। নৱেন্দ্ৰ নাথ দাস, ১৯৬৬।
বৰগোহাঞি হোমেন (সম্পা)। *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী* (ষষ্ঠ খণ্ড)। আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা, ১৯৯৩।
ভৱালী, শৈলেন। *উপন্যাসঃ বিচাৰ বিশ্লেষণ*। চন্দ্ৰপ্ৰকাশ, ১৯৯৩।
শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। *অসমীয়া উপন্যাসৰ গতিধাৰা*। বাণী প্ৰকাশ, ১৯৭৬।
----------। *অসমীয়া উপন্যাসৰ ভূমিকা*। সৌমাৰ প্ৰকাশ, ১৯৯২।
----------। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*। গুৱাহাটীঃ প্ৰতিমা দেৱী,২০০৪। মুদ্ৰিত।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শন আৰু ঈশ্বৰতত্ত্ব

ড° মৰমী চৌধুৰী

সহকাৰী অধ্যাপিকা, দৰ্শন বিভাগ
কৰ্মশ্ৰী হিতেশ্বৰ শইকীয়া
মহাবিদ্যালয়
৯৮৫৯০৭৪৭৩৪
maramichoudhury1970@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

শংকৰদেৱৰ নৱ-বৈষ্ণৱবাদক গুৰুজনাৰ ধৰ্মীয় দৰ্শন বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি। বৈষ্ণৱবাদ বা বৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ সৃষ্টি হৈছে পৰমেশ্বৰ বিষ্ণুক কেন্দ্ৰ কৰি এক ঈশ্বৰবাদৰ ভিত্তিত। ভাৰতীয় ধৰ্মত বিষ্ণুৰ স্থান প্ৰাচীন। তাৰ প্ৰমাণ আমি ঋগবেদত প্ৰথম বিষ্ণুৰ স্থান উল্লেখ আছিল বুলি দিব পাৰো। তাৰোপৰি, বেদৰ অন্যান্য সংহিতা গ্ৰন্থ তথা ছান্দোগ্যোপনিষদ, তৈত্তিৰীয়, আৰণ্যক আদি নানা উপনিষদত বিষ্ণুক পৰম দেৱতাৰূপে বৰ্ণনা পোৱা যায়। শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শন অৰ্থাৎ নৱ-বৈষ্ণৱবাদ মৌলিকতাৰে পৰিপূৰ্ণ। আন বৈষ্ণৱবাদৰ পৰা এই মৌলিক বৈশিষ্ট্য সমূহে শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনক পৃথক কৰিছে। নৱ-বৈষ্ণৱবাদৰ প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হ'ল একেশ্বৰবাদ। একেশ্বৰবাদত বিষ্ণু বা নাৰায়ণ একমাত্ৰ উপাস্য দেৱতা। শংকৰদেৱে বিষ্ণু বা কৃষ্ণক ব্ৰহ্মাৰূপে, পৰমাত্মাৰূপে আৰু ভগৱানৰূপে নৱ-বৈষ্ণৱবাদত বৰ্ণনা কৰিছে। শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনত উল্লেখ কৰিছে। এক ঈশ্বৰ ভক্তিৰে নৱবৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ যোগেদি মহাপুৰুষ শংকৰদেৱে সমাজত মানৱতাবাদৰ বীজ সিঁচিছিল।

আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰৰ জৰিয়তে শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনত ঈশ্বৰৰ স্থান সম্পৰ্কে আলোচনা আৰু নৱ-বৈষ্ণৱ ধৰ্মত শংকৰাচাৰ্যৰ অদ্বৈত বেদান্তৰ প্ৰভাৱ কেনেদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে তাৰ ব্যাখ্যা আগবঢ়াবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

**বীজ শব্দ ঃ**

কৃষ্ণ, বৈষ্ণৱ, মানৱতাবাদ, ঈশ্বৰ, দৰ্শন।

**০.০ অৱতৰণিকা ঃ**

মধ্যযুগৰ কামৰূপ অসমত মহাপুৰুষ শংকৰদেৱে গুৰি ধৰা ভক্তি আন্দোলনক কপাৰনিকাচৰ নৱজাগৰণৰ লগত তুলনা কৰিব পাৰি। বাৰ শতাব্দীৰ পৰা ষোল্ল শতাব্দী জুৰি ভাৰতবৰ্ষত হোৱা বৈষ্ণৱ নৱ-জাগৰণৰ ইতিহাসত শংকৰদেৱ একক আৰু অনন্য। সৰ্বভাৰতীয় ভক্তি আন্দোলনতকৈ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱৰ ভক্তিধৰ্ম বা তেওঁৰ ধৰ্মীয় দৰ্শন সম্পূৰ্ণ পৃথক। আন সকলো প্ৰদেশৰ ভক্তিমতৰ পৰা পৃথক হৈ নিজস্ব মৌলিকতাৰে নৱ-বৈষ্ণৱধৰ্মৰ প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল এইজনা মহান সমাজ সংস্কাৰক, সমসাময়িক ভাৰতীয় দাৰ্শনিক শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱে। ১৮১৫ শকত শংকৰদেৱে জন্মভূমি অসম কামৰূপলৈ প্ৰত্যাৱৰ্তন কৰিছিল। প্ৰতিটো সাম্প্ৰদায়কে দাৰ্শনিকতা আৰু সাধনমাৰ্গ বিচাৰ কৰি গ্ৰহণ বৰ্জনৰ যোগেদি শংকৰদেৱে এক সজীৱ আৰু গতিশীল

জীৱন দৰ্শন অসমত প্ৰৱৰ্তন কৰে। এই ধৰ্মীয় দৰ্শন একক, অনন্য আৰু বিশিষ্টপূৰ্ণ।

এটা যুগোপযোগী গতিশীল ধৰ্ম-প্ৰৱৰ্তন কৰিবৰ কাৰণে কিছুমান নীতি থাকিলেই নহব। তাৰ এটা উচ্চ দৰ্শন থাকিব লাগিব। শংকৰদেৱৰ সাহিত্যত চাৰিওফালে অদ্বৈত বেদান্ত দৰ্শনৰ সিঁচৰিত হৈ থকা দেখা যায়। গুৰুজনাৰ ৰচনাৱলীত সন্নিৱিষ্ট দাৰ্শনিক উক্তিসমূহে পাঠকক স্পষ্টভাৱে বুজাই দিয়ে যে মহাপুৰুষজনৰ দাৰ্শনিক উপলব্ধি কেনে আছিল। শংকৰদেৱৰ দৰ্শন ভাগৱত পুৰাণ আশ্ৰিত। ভাগৱত পুৰাণৰ বিভিন্ন স্কন্ধৰ অনুবাদত আৰু ভাগৱতৰ কাহিনীৰে ৰচনা কৰা 'কীৰ্ত্তন ঘোষা' আদি কাব্যত শ্ৰীধৰ স্বামীত ভাষ্য 'ভাগৱত ভাৱাৰ্থ দীপিকা'ৰ বাখ্যা সমূহকে গ্ৰহণ কৰিছিল। শ্ৰীধৰ স্বামী আছিল ১৪০০ খ্ৰীষ্টাব্দৰ পুৰীৰ শংকৰমঠৰ আচাৰ্য্য শ্ৰীধৰ স্বামীপাদ শংকৰাচাৰ্য্য প্ৰতিপাদিত অদ্বৈত বেদান্তৰ পণ্ডিত। সেইবাবে শংকৰদেৱৰ ৰচনাত অদ্বৈত বেদান্ত পোনপটীয়াকৈ প্ৰকাশ হৈছে। তাৰোপৰি ভাগৱত পুৰাণ অদ্বৈত সুৰীয়া। সেয়েহে শংকৰদেৱ অদ্বৈতবাদৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈছিল যদিও তেওঁ আছিল ভক্তিমতৰ প্ৰবৰ্ত্তক। জ্ঞানবাদী সাধন মাৰ্গৰ অনুগামী নহয় বাবে কোনো কোনো পণ্ডিতে শংকৰদেৱ ৰামানুজচাৰ্য্যৰ বিশিষ্টাদ্বৈতবাদৰ দ্বাৰাহে প্ৰভাৱিত বুলি ভাবে। "সেইসকলে শংকৰদেৱৰ সাহিত্যকৃতৰ কেন্দ্ৰীয় উপলব্ধি দকৈ হৃদয়ঙ্গম কৰিবৰ প্ৰয়াস নকৰি কেৱল, ভক্তিৰ শ্ৰেষ্ঠ আৰু দাস্যভাৱৰ কাৰণেই ৰামানুজচাৰ্য্যৰ মতৰ লগত শংকৰদেৱৰ মতৰ মিল দেখা পায়।"[১] কিন্তু দাস্যভাৱ আৰু ভক্তি ভাগৱত পুৰাণৰে তত্ত্ব। ৰামানুজৰ মতৰ প্ৰামাণ্য গ্ৰন্থ ভাগৱত পুৰাণ নহয়। ৰামানুজ পঞ্চৰাত্ৰ মতৰ ওপৰতহে অধিক গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল। ভাগৱত পুৰাণ আৰু ভাগৱত পুৰাণৰ শ্ৰীধৰ স্বামীৰ কৃত ভাষ্যই শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনৰ আধাৰ। অসমৰ বৈষ্ণৱধৰ্ম মহামনিষী শংকৰাচাৰ্য্যৰ অদ্বৈত বেদান্তৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত।

**গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ**

আমাৰ গৱেষণাপত্ৰৰ প্ৰথম উদ্দেশ্য হ'ল শংকৰদেৱৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা আৰু নৱ বৈষ্ণৱবাদত ঈশ্বৰৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা। ঈশ্বৰ বা বিষ্ণু এক আৰু অদ্বৈত বুলি শংকৰদেৱৰ সৃষ্ট সাহিত্য সমূহ যেনে- কীৰ্ত্তন ঘোষা, দশম আদিত উল্লেখিত ঘোষা সমূহৰ বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে অদ্বৈত সুৰীয়া শংকৰদেৱৰ দৰ্শন বাখ্যাই এই পত্ৰৰ উদ্দেশ্য।

**গৱেষণা পদ্ধতি ঃ**

গৱেষণা পত্ৰখনি প্ৰস্তুত কৰোতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিকে গুৰুত্ব দিয়া হৈছে। উক্ত বিষয়টো আলোচনাৰ সময়ত অসমৰ সংস্কৃতি, সামাজিক তথা নৱবৈষ্ণৱ ধৰ্ম সম্পৰ্কীয় বিভিন্ন গ্ৰন্থ সমল হিচাবে লোৱা হৈছে। ভাৰতীয় দৰ্শন সম্পৰ্কীয় বিভিন্ন গ্ৰন্থ, প্ৰবন্ধ, প্ৰাসংগিক অন্যান্য পুথি আৰু আলোচনী আদি অধ্যয়ন কৰা হৈছে। মুখ্য আৰু গৌণ দুয়োটা উৎসৰ পৰা বিষয়বস্তু লৈ পত্ৰখনত বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

**বিষয়বস্তুৰ বিশ্লেষণ ঃ**

শংকৰদেৱৰ নৱ-বৈষ্ণৱবাদ এক সমাজ সংস্কাৰমুখী ধৰ্মীয় দাৰ্শনিক মতবাদ। এই বৈষ্ণৱবাদে সেই সময়ত প্ৰচলিত সামাজিক কু-সংস্কাৰ, অন্ধবিশ্বাস, মূৰ্ত্তিপূজা আদিৰ বিৰুদ্ধে এটি সংস্কাৰমুখী আন্দোলন গঢ়ি তুলি জনমানসত এক ঈশ্বৰ সৰ্বতে বিৰাজমান আৰু কেৱল ভক্তিৰ দ্বাৰাই ঈশ্বৰক সন্তুষ্ট কৰি মোক্ষ লাভ কৰিব পাৰিব বুলি জনগণৰ মাজত বিশ্বাস বিলাইছিল। শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱৰ ধৰ্ম আৰু দৰ্শনৰ মূল তত্ত্বসমূহ ভাগৱত গীতা আৰু ভাগৱত পুৰাণৰ পৰা সংগৃহীত হৈছে। তেওঁ মূলত ভাগৱত পুৰাণক পৰম বেদান্ত বুলি অভিহিত কৰিছে। শংকৰদেৱৰ ঈশ্বৰ সম্পৰ্কীয় ধাৰণাৰ লগত শংকৰাচাৰ্য্যৰ অদ্বৈত বেদান্তৰ অনুপম সংমিশ্ৰণ দেখা যায়।

শংকৰদেৱৰ দৰ্শনত ঈশ্বৰ আৰু ব্ৰহ্ম অভিন্ন। ব্ৰহ্ম হ'ল নিৰ্গুণ, নিৰাকাৰ আৰু ব্ৰহ্মাৰ সাকাৰ, সগুণ ৰূপটোৱেই হ'ল ঈশ্বৰ। এই ঈশ্বৰক শংকৰদেৱৰ দৰ্শনত ব্ৰহ্মা, পৰমাত্মা, পুৰুষোত্তম, পৰমেশ্বৰ, নাৰায়ণ, কৃষ্ণ ইত্যাদি বিভিন্ন নামেৰে জনা যায়। সকলোবোৰ নাম প্ৰকৃততে একে ঈশ্বৰকে নিৰ্দেশ কৰে। শংকৰদেৱৰ দৰ্শনত নিৰ্গুণ ব্ৰহ্ম আৰু সগুণ কৃষ্ণ বা ঈশ্বৰ এক আৰু অভিন্ন। মানুহে 'মতিভেদ' অনুসৰি এই এক আৰু অভিন্ন সত্তাক ভিন্ন যেন অনুভৱ কৰে। ভাগৱতত শংকৰদেৱে কৈছে—

তোমাকেসে বোলয় জ্ঞানী ব্ৰহ্মা নিৰংকুশ
সাংখ্যমতে বোলয় তুমি প্ৰকৃতি পুৰুষ
ভকতৰ মতে তুমি পৰম ঈশ্বৰ
মতিভেদে তোমাকেসে পাৱয় নিৰন্তৰ।।

(পদ - ১৮ ৩০)[২]

শংকৰদেৱৰ ঈশ্বৰতত্ব অদ্বৈত সুৰীয়া। অদ্বৈত বেদান্তৰ প্ৰভাৱ তেওঁৰ ৰচনাৱলীৰ ঠায়ে ঠায়ে সিঁচৰিত হৈ আছে।

শংকৰাচার্য্যৰ অদ্বৈত বেদান্ত অনুসৰি 'ব্রহ্ম সত্য, জগত মিথ্যা; জীৱ ব্রহ্মৈৱ নাপাৱঃ।'[৩] অর্থাৎ ব্রহ্ম হৈছে একমাত্র সত্য, জগত মিছা আৰু জীৱ হ'ল ব্রহ্ম স্বৰূপ। ব্রহ্ম সৎ চিৎ আৰু আনন্দ স্বৰূপ। শংকৰাচার্য্যৰ এই মত মহাপুৰুষ শংকৰদেৱেও স্বীকাৰ কৰিছে। শংকৰদেৱৰ মতে ব্রহ্ম অর্থাৎ ঈশ্বৰ একমাত্র সত্য, ব্রহ্মৰ বাহিৰে জগতক কোনো সত্যতা নাই। জগত অসত্য আৰু অসাৰ। কীর্ত্তনঘোষাত তেওঁ কৈছে —

তুমি সত্য ব্রহ্ম তোহ্মাত প্রকাশে
জগত ইটো অসন্ত
জগততো সদা তুমিও প্রকাশা
অন্তর্যামী ভগৱন্ত। (পদ - ১৬৬৯)[৪]

অদ্বৈত দর্শনৰ সূত্রৌতিসূত্রৈ তত্ত্ব ৰাজি উপলব্ধি কৰি শংকৰদেৱে সেই দর্শন ভাগৱত পুৰাণৰ ভক্তিৰ ভেটিত প্রতিষ্ঠা কৰি, সর্বভাৱতীয় বৈষ্ণৱ ধর্মৰ ভক্তিমতৰ পৰা পৃথক এক অনন্য ধর্মীয় দর্শন অসমবাসীক দি গ'ল। তেওঁৰ দর্শনত ঈশ্বৰ সমস্ত কাৰণৰ কাৰণ। জগতৰ সকলো বস্তু ঈশ্বৰৱে প্রকাশ। ঈশ্বৰ হ'ল সমস্ত দেৱতাৰো দেৱতা। কেৱল ঈশ্বৰৰ অস্তিত্ব আছে। বাকীসকলো বস্তুৰ অস্তিত্ব ঈশ্বৰ নির্ভৰশীল। ঈশ্বৰ কেৱল কাৰণেই নহয়, ঈশ্বৰ কার্যও। জগতৰ সৃষ্টিকর্তা হিচাপে ঈশ্বৰ নিমিত্ত কাৰণ। জগতখন যিহেতু ঈশ্বৰৰ পৰাই সৃষ্ট, সেইকাৰণে ঈশ্বৰ উপাদান কাৰণ। শংকৰদেৱে তেওঁৰ কীর্ত্তনঘোষাত সোণ আৰু অলংকাৰৰ মাজত যেনেদৱে কোনো পার্থক্য নাই, তেনেদৱে ঈশ্বৰৰূপী কার্যৰ মাজতো কোনো পার্থক্য নাই বুলি এনেদৱে উপস্থাপন কৰিছে—

তুমি পৰমাত্মা জগতৰ ঈশ এক
একো বস্তু নাহিকে তোমাত ব্যতিৰেক
তুমি কার্য কাৰণ সমস্ত চৰাচৰ
সুৱর্ণ কুণ্ডলে যেন নাহিকে অন্তৰ।
(হৰমোহন পদ - ৫১৯-২০)[৫]

ঈশ্বৰ কাৰণ হলেও অকাৰণ। ব্রহ্ম বা ঈশ্বৰ সমস্ত জগতৰ কাৰণ হ'লেও তেওঁৰ কোনো কাৰণ নাই। ঈশ্বৰৰ আদি অন্ত মধ্য বুলি একো নাই। তেওঁ অচিন্ত্য শক্তি আৰু পূর্ণানন্দ পুৰুষ। শংকৰদেৱৰ মতে—

নমো নমো অচিন্ত্য শকতি নাৰায়ণ
কাৰণৰে কাৰণ তুমিসে অকাৰণ।।
নাহি আদি অন্ত মধ্য পৰি ছন্ন যাৰ
পূর্ণানন্দ প্রভু হেৰা কাৰো নমস্কাৰ।
(ভাগৱত দশম স্কন্ধ- পদ - ৬৫০)[৬]

শংকৰদেৱৰ ঈশ্বৰতত্ত্বত ঈশ্বৰৰ তিনিটা ধাৰণা দিছে- নির্গুণ, সগুণ আৰু মানৱৰূপী ঈশ্বৰ। গুৰুজনা যিহেতু অদ্বৈতবাদৰ সমর্থক, সেয়েহে তেওঁৰ মতে ঈশ্বৰ এক। কিন্তু এই এক ঈশ্বৰেই জগতত বিভিন্ন ৰূপে প্রকাশিত হয়। অৱশ্যে ঈশ্বৰৰ কোনো ভেদ নাই। ঈশ্বৰ সজাতীয় ভেদৰহিত। ঈশ্বৰ সমজাতীয়, বিজাতীয়, স্বগতভেদ -কেনো ভেদৰ আঁওতালৈ নাহে। ভাগৱতত শংকৰদেৱে অদ্বৈত সুৰত এই কথাকে কৈছে—

এক ব্রহ্ম আছে সর্বদেহতে প্রকট।
যেন এক আকাশ প্রত্যেক ঘটে ঘটে।।
জলত সূর্যক দেখি ভিন ভিন।
এহিমতে জানিবা ব্রহ্মাতো ভেদ হীন।।
(দ্বাদশ স্কন্ধ)[৭]

শংকৰদেৱৰ ধর্মীয় দর্শন অদ্বৈতবাদী হলেও শংকৰাচার্যৰ অদ্বৈতবাদৰ লগত কিছু পার্থক্য দেখা যায়। শংকৰদেৱে ঈশ্বৰক কেৱল নির্গুণ ৰূপতে স্বীকাৰ কৰা নাই। এইখিনিতে ৰামানুজৰ বিশিষ্টাদ্বৈতবাদৰ নিচিনাকৈ সগুণ ব্রহ্মা বা ঈশ্বৰক সাধাৰণ জনগণৰ ভক্তিৰ বাবে স্বীকাৰ কৰিছে। অর্থাৎ শংকৰদেৱৰ দর্শনত নির্গুণ আৰু সগুণ- ব্রহ্মৰ এই দুয়োটা দিশেই স্বীকৃত। "অসমীয়া বৈষ্ণৱ দার্শনিক সকলে (যেনে- শংকৰদেৱ) ঈশ্বৰৰ নির্গুণ দিশটোক অস্বীকাৰ নকৰি, সগুণ দিশটোৰ ওপৰত অত্যধিক গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে। এই উদ্দেশ্যে যে, ঈশ্বৰ কেৱল ব্যক্তিক নহয়, ঈশ্বৰ জগতৰ অতিবর্ত্তী আৰু অন্তৰর্ত্তী উভয়ে" [৮] শংকৰদেৱৰ ঈশ্বৰ সম্পর্কীয় মতবাদৰ বিশেষত্ব এযে যে নিৰাকাৰ ঈশ্বৰক সাকাৰ বুলি ভাবি ভকতে উপাসনা কৰে।

শংকৰাচার্য্যৰ দৰে শংকৰদেৱে মায়াক শক্তিবুলি স্বীকাৰ কৰিছে যদিও এই শক্তিয়ে সঁচা জগতখনক সৃষ্টি নকৰি এখন মিছা জগতক সঁচা বুলি দেখুৱায়। মায়াৰ দুই শক্তি আছে— আৱৰণ আৰু বিক্ষেপন। আৱৰণ শক্তিয়ে বস্তুৰ প্রকৃত স্বৰূপক আৱৰি ৰাখে। ই প্রকৃত সত্যক ঢাকি ৰাখে। বিক্ষেপন শক্তিয়ে অসত্যক সত্য বুলি দেখুৱায়।

অবস্তুক দেখাৱয় বস্তুক আৱৰি
এহিসে মোহোৰ মায়া জানা নিষ্ট কৰি।
(ভগৱত, দ্বিতীয় স্কন্ধ, পদ-২২৯)[৯]

শংকৰদেৱৰ দর্শনত ঈশ্বৰৰ নির্গুণ ৰূপটোত কৈ সগুণ ৰূপটোহে বেছি গুৰুত্বপূর্ণ। তেওঁৰ দর্শনত ঈশ্বৰ নির্গুণ হৈও সগুণ। নির্গুণ ব্রহ্মক যেতিয়া গুণেৰে বিভূষিত কৰা হয়

তেতিয়া আমি পৰমব্ৰহ্মক ঈশ্বৰ হিচাপে পাওঁ। এই সগুণ ব্ৰহ্ম বা ঈশ্বৰ সাকাৰ, জগতৰ সৃষ্টিকৰ্তা, পালনকৰ্তা আৰু সংহাৰকৰ্তা। ঈশ্বৰে ব্ৰহ্মাৰূপে জগত সৃজন কৰে, বিষ্ণুৰূপে পালন কৰে আৰু ৰুদ্ৰৰূপে সংহাৰ কৰে। ভাগৱত, দশম স্কন্ধত তেওঁ কৈছে।

ব্ৰহ্মা ৰূপে সৃজা পালা বিষ্ণু ৰূপধৰি।
ৰুদ্ৰ ৰূপে নিয়া সৰে জগত সংহাৰি।। (পদ- ৮২)

**সামৰণি ঃ**

শংকৰদেৱৰ দৰ্শনত ব্ৰহ্ম, ঈশ্বৰ আৰু অৱতাৰী কৃষ্ণ একেই। পৰমব্ৰহ্মৰ দুই ৰূপ - নিৰাকাৰ আৰু সাকাৰ। শংকৰদেৱে ঈশ্বৰৰ নিৰ্গুণ আৰু সগুণ ৰূপ স্বীকাৰ কৰিলেও ই কেতিয়াও বিভ্ৰান্তিৰ সৃষ্টি নকৰে। যৌক্তিকভাৱে একে সময়তে ঈশ্বৰ সগুণ আৰু নিৰ্গুণ হব নোৱাৰে। যদিও তাৰ অৰ্থ এইটো নহয় যে, ঈশ্বৰ এইবোৰ গুণৰ অধিকাৰী হব নোৱাৰে। শংকৰদেৱৰ এইবোৰ গুণৰ অধিকাৰী হব নোৱাৰে। শংকৰদেৱৰ বেদান্ত প্ৰায়োগিক বেদান্ত বুলি কব পাৰি। নিৰ্গুণ ব্ৰহ্মৰ ধাৰণা হৃদয়ঙ্গম কৰিবলৈ হ'লে সগুণ সাকাৰ ৰূপৰ আৱশ্যক। ব্ৰহ্মৰ এই সগুণ সাকাৰ ৰূপ হ'ল কৃষ্ণ যাৰ মাধ্যমেদি নিৰ্গুণ ব্ৰহ্মৰ চিন্তা কৰিব পৰা যায়। তাত্ত্বিক বিচাৰত বেদান্তৰ ব্ৰহ্মই লক্ষ্য আৰু ভাগৱতৰ কৃষ্ণ হ'ল মাধ্যম।

শেষত, মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱৰ অনুপম উদাৰতাৰ ধৰ্মীয় দৰ্শন নৱ-বৈষ্ণৱ ধৰ্ম। জাতিবৰ্ণৰ উৰ্দ্ধলৈ আহি মানুহক মানুহ ৰূপে চোৱাৰ ধৰ্ম। মানৱতাৰ ধৰ্ম। সেয়েহে, শংকৰদেৱে মুছলমানৰ ঘৰত লালিত পালিত হোৱা ভক্ত সাধক কবীৰকহে শ্ৰদ্ধা কৰিছিল। নিৰাকাৰ ব্ৰহ্মৰ উপলব্ধিত গুৰুত্ব দি চুফীবাদ আৰু অদ্বৈতবাদৰ সমন্বয় কৰি নিৰ্গুণ ধৰ্মৰ কবীৰ আছিল বিগ্ৰহ উপাসনা বিৰোধী, জাতি-বৰ্ণ বিৰোধী এজন বিপ্লৱী ভক্তি সাধক। অসীম প্ৰতিভাৰ শংকৰদেৱে জ্ঞানবাদী অদ্বৈত দৰ্শনৰ সৈতে ভক্তিবাদৰ সমন্বয় কৰি অসম কামৰূপত এক শৰণ বৈষ্ণৱধৰ্ম প্ৰৱৰ্তন কৰি থৈ যায়। শংকৰদেৱৰ আধ্যাত্মিক দৰ্শনে বৰ্তমান সমাজৰ নৱ প্ৰজন্মৰ মাজত মানৱতাৰ বীজ ৰোপণ কৰিব। তেওঁৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনৰ প্ৰাসংগিকতা যুগে যুগে। ❑


**প্ৰসংগ পুথি ঃ**

1. দত্ত, ড° অনিমা ঃ "অসমৰ বৈষ্ণৱ সাহিত্য আৰু দৰ্শন"। লয়ার্চ বুক ষ্টল। ২০০৩, দ্বিতীয় প্ৰকাশ
2. Chutia, Dharmeswar (ed.) : Mahapurush Sankaradeva Vakyamrta, Srimanta Sankaradeva Sangha, published by Hariprasad Hazarika, Nagaon, 1998.
3. Sarma C. D. : Critical Survey of Indian Philosophy.
4. Chutia, Dharmeswar (ed.) : Mahapurush Sankaradeva Vakyamrta, Srimanta Sankaradeva Sangha, published by Hariprasad Hazarika, Nagaon, 1998.
5. Ibid
6. Ibid
7. Ibid
8. S N Sarma : The Neo-Vaishnavite Movment and the Sathre Institution of Assam, P-37.
9. Sarma, Nilima (Ed.) : The philosophy of Sankaradeva : An Appraisal, piblished by Srimanta Sankaradeva Sachetan Mancha, Assam, 2008, P-1
10. Neog, Maheswar : Sankaradeva and His Times: Early History of the Vaisnava Faith and Movement in Assam

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# অসমৰ মহাফেজখানাৰ ভাষা (১৮৩৬-৭৩) ঃ এক চমু অধ্যয়ন

ড° স্বপন জ্যোতি নাথ

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
খাগৰিজান মহাবিদ্যালয়
নগাঁও, অসম
৯১২৭২২৯৯৮৭
swapanjnath2016@gmail.com

**পাতনি ঃ**

ভাষা মানৱ সভ্যতা-সংস্কৃতিৰ এক অপৰিহার্য অংগ। মানৱ সংস্কৃতিৰ এক বিশাল দিশ ভাষাই আৱৰি ৰাখিছে। মানৱ সভ্যতাৰ প্রথম সোপান ৰচিত হৈছে ভাষাৰ মাধ্যমেৰে। ভাষাৰ জন্ম মানুহৰ জন্মৰ পৰৱর্তী স্তৱহে। শৰীৰৰ মুদ্রাৰে মনৰ ভাব প্রকাশ কৰাৰ পৰিৱর্তে কিছুমান ধ্বনি প্রতীকৰ সৃষ্টি হ'বলৈ ধৰিলে। এনেদৰে মানৱ সভ্যতাৰ কেইবাটাও ঢাপ পাৰ হোৱাৰ পিছতহে ভাষাৰ জন্ম আৰু ক্রমবিকাশৰ দিশটো উন্মোচিত হয়। সেইবাবেই সাধাৰণ অর্থত ভাষা হ'ল ভাব প্রকাশৰ বাহন। ভাষাই এজনে আন এজনৰ লগত মনৰ ভাব প্রকাশৰ নিমিত্তে যিটো মাধ্যমৰ দ্বাৰা সহযোগিতা কৰে তাকেই ভাষা বুলি কোৱা হয়।

**মূল বিষয় ঃ**

প্রস্তাৱিত আলোচনা পত্রৰ মূল বিষয়— 'অসমৰ মহাফেজখানাৰ ভাষা (১৮৩৬-৭৩) ঃ এটি চমু অধ্যয়ন' (বিশেষ উল্লিখসহ)। মহাফেজখানা শব্দটোৰ আভিধানিক অর্থ হ'ল— নথি-পত্র সুৰক্ষিত কৰি ৰখা ঘৰ, যাক ইংৰাজীত 'A reeord room' বুলি কোৱা হয়। মহাফেজ নাইবা মহাপেচ দুয়োটা শব্দৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। অসমত ব্রিটিছ ৰাজত্বকালৰ বিশেষকৈ নগাঁও জিলাৰ প্রশাসনীয় কার্য পৰিচালনা আৰু অসম চৰকাৰৰ মহাঅভিলেখাগাৰৰ পৰা প্রাপ্ত নথিসমূহৰ এটি চমু বিশ্লেষণ দাঙি ধৰিবলৈ বিনম্র প্রয়াস কৰা হ'ব। উক্ত নথিসমূহ প্রধানকৈ লিখিত ৰূপত পোৱা গৈছিল। ১৮৩৬ খ্রীষ্টাব্দৰ পৰা ১৮৭৩ খ্রীষ্টাব্দৰ ভিতৰত প্রস্তুত কৰা চৰকাৰী নথিসমূহত যিটো ভাষা প্রয়োগ কৰা হৈছিল, সেই ভাষাটোৱে অসমীয়া ভাষাটোক বাৰুকৈয়ে প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰিছিল। বিশেষকৈ ইংৰাজে অসমত শাসনকার্য পৰিচালনাৰ সময়ত চৰকাৰী নথি হিচাপে আদালতৰ ৰায়, ঘোষণা পত্র, গোচৰ, মাটি-বাৰী সংক্রান্তীয় নথি-পত্রত যিটো ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিছিল, সেইসমূহৰ ভাষাগত বিভিন্নতাৰ লগতে প্রাপ্ত নথিসমূহৰ উল্লেখেৰে একোটা বিশ্লেষণাত্মক আলোচনা দাঙি ধৰা হ'ব।

১৮২৬ খ্রীষ্টাব্দৰ ইয়াণ্ডাবু সন্ধিৰ পৰৱর্তী সময়ত অসম সম্পূর্ণভাৱে ইংৰাজৰ হাতলৈ যায়। ১৮১৩ খ্রীষ্টাব্দত শ্রীৰামপুৰত ব্রিটিছ মিছনেৰি ড° উইলিয়াম কেৰিয়ে অসমীয়া ভাষাত 'ধর্ম্মপুস্তক' বাইবেল ছপা কৰি উলিওৱাৰ পাছত অসমীয়া ভাষা আৰু জাতিৰ পূর্ণবাসনৰ যুঁজত প্রথম অসমীয়া যুঁজাৰু আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ পিতৃ হলিৰাম ঢেকিয়াল ফুকনে বঙালী ভাষাত ৰচনা

কৰা আৰু ১৮২৯ চনত প্ৰকাশ কৰা 'আসাম বুৰঞ্জী' উল্লেখযোগ্য বুলি ক'ব পাৰি। পৰৱৰ্তী সময়ত ১৮৩৯ চনত ৰবিন্সনে অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰথমখন ব্যাকৰণ ৰচনা কৰিলেও বঙালী ভাষাৰ প্ৰতি পক্ষপাতিত্ব লৈ অসমীয়া ভাষাক বঙালীৰ উপভাষা বুলি দেখুৱাবলৈ আৰু অসমৰ স্কুলত বঙলা ভাষা প্ৰচলনৰ বৌদ্ধিক ক্ষমতা প্ৰয়োগ কৰিছিল।

অসমত ব্ৰিটিছ ৰাজত্বৰ সময়ত বিশেষকৈ নগাঁও জিলাৰ প্ৰশাসনীয় কাৰ্য পৰিচালনাৰ্থে যি যি কাৰ্যবিধি নথি হিচাপে লিপিবদ্ধ কৰিছিল সেই নথিসমূহৰ পৰ্যালোচনা তলত দাঙি ধৰা হ'ল—

১৮৩৬ খ্ৰীষ্টাব্দৰ পৰা ১৮৭৩ খ্ৰীষ্টাব্দলৈকে অসমৰ স্কুল-আদালতত প্ৰায় দুকুৰি বছৰ বঙলা ভাষাই প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিছিল। বিশেষকৈ আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকন নগাঁৱৰ প্ৰশাসক হৈ থকা সময়ত অৰ্থাৎ পঞ্চাশৰ দশকৰ প্ৰায় আটাইকেইটা বছৰত নগাঁৱৰ কাছাৰীৰ ভাষা আছিল বঙলা। ১৮৫৬ খ্ৰীষ্টাব্দৰ ২১ জানুৱাৰী তাৰিখে শ্ৰীগোন্ধাই কলিতালৈ পঠোৱা আনন্দৰাম-স্বাক্ষৰিত এটা হুকুম আৰু প্ৰায় একেখিনি কথা ১৮৬৪ খ্ৰীষ্টাব্দৰ আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ অন্য এটা হুকুমৰ ভাষা অবিকলভাৱে তলত উল্লেখ কৰা ১ নং আৰু ২ নং লিখনিত প্ৰকাশ পাইছে—

**হুকুমনামা নং ১**

"মুলুকে আসাম জিলে নওগাঞেৰ শ্ৰীযু কালেক্টৰ চাহেবেৰ আজ্ঞা— শ্ৰীগোন্ধাই কলীতা ৰায়ত মোতালকে নওগাও মৌজে ভেলুগুৰি সাবধানে সুনিবি তঞি যে উপৰ লেখা মৌজাৰ আবাদি মাটি উপভোগকৰ তাৰে সন ১২৬২ সনেৰ প্ৰতেকবাৰে যে মাটিৰ যে ধন দিবাৰ লাগে তাৰ বিবৰণ এই পাট্টাপত্ৰৰ তলত লিখা গেল তদানুৰূপে কিস্তিবন্দি অনুসাৰে তোৰ গাঞেৰ বিষয়াৰ হাতত সোধাই এই পাট্টাৰ পিঠিত তাৰ হাত আখৰেৰে ৰসিদ লবি ৰসিদ নপোওাকৈ কদাচ খাজনা নিদিবি কিস্তি কিস্তি বন্দিৰ দৰে টকা নিদিলে বিষয়াৰ প্ৰাৰ্থনা মত তোৰ মাল বস্তু নিলাম কৰি খাজানাৰ টাকা আদায় কৰাজাব আৰু কোন বিসয়া এই পাট্টাত লিখা টাকাকৈ বেলেগে অন্য কোন বাবদে ফডাকে লবৰ খুজিলে কদাপি নিদিবি এহাকে নিশ্চয় ২ জানিবি ইতি সন ১৮৫৬ ইংৰাজি তাৰিখ ২৯ জানুৱাৰি।"

(আনন্দৰামৰ হুকুমনামাখনৰ মূলতঃ বাংলা ভাষাৰ 'ৰ' ধ্বনি আছিল। গ্ৰন্থ প্ৰণেতা যোগেন্দ্ৰনাৰায়ণ ভূঞাই 'ৰ'ৰ সলনি অসমীয়া 'ৰ' ধ্বনি প্ৰয়োগ কৰিছে)

ওপৰত উল্লেখ কৰা ১৮৫৬ চনৰ ২৯ জানুৱাৰী তাৰিখে জনৈক গোন্ধাই কলিতালৈ পঠোৱা হুকুম নামাখনত এনেধৰণৰ বৈশিষ্ট্য দেখা যায়—

১৮৫৬ চনৰ সময়ছোৱাত অসমত ভাষাৰ মাধ্যম আছিল বঙলা, সেই গতিকে বঙলা 'ৰ'ৰ প্ৰভাৱ হুকুমনামাখনত বিদ্যমান। যেনে— উপৰ (উপৰ), দিবাৰ (দিবাৰ), ভেলুগুৰি (ভেলুগুৰি), বিবৰণ (বিবৰণ) আদি। সেইদৰে 'চ'ৰ পৰিৱৰ্তে 'স'ৰ প্ৰয়োগ দেখা যায়। যেনে— সাহেব, ৰসিদ, সন ইত্যাদি। কেতিয়াবা 'ষ'ৰ পৰিৱৰ্তে 'স'ৰ প্ৰয়োগ উল্লেখযোগ্য দিশ— 'বিসয়া'। শব্দত 'য'ৰ পৰিৱৰ্তে 'জ'ৰ প্ৰয়োগ দেখা যায়, যেন— জাব। 'ৱ'ৰ ব্যৱহাৰ নাই; 'ৱ' বুজাবলৈ কেতিয়াবা 'আ' আকৌ কেতিয়াবা 'ও' ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। যেনে— নপোওা, জানুআৰি আদি। পুৰণি অসমীয়া শব্দৰ প্ৰয়োগ উক্ত হুকুমনামাখনৰ বিশেষত্ব— এহাক (এওঁলোকক) আদি। কামৰূপী উপভাষাৰ শব্দৰ প্ৰয়োগ যেনে— গেল, দিবাৰ, লিখা গেল (গ'ল), দিবাৰ (দিবৰ) আৰু এহাকে (ইহাকে)। এই হুকুমনামাখন যতিচিহ্নবিহীনভাৱে প্ৰস্তুত কৰাইছে। ঊৰ্ধকমাৰ ("- -") ভিতৰতে আৰম্ভ কৰি ইয়াক সমাপ্ত কৰা হৈছে। ইংৰাজী শব্দ উচ্চাৰণ মতে লিখা পৰিলক্ষিত হৈছে। যেনে— নওগাঞ, নওগাও আদি। বাংলা চনৰ ব্যৱহাৰ যেনে— ১২৬২ সন আদি। উক্ত হুকুমনামাখনৰ লিপিকাৰ (Copist) কোনো অসমীয়াভাষী আছিল বুলি অনুমান কৰিব পাৰি। কিয়নো হুকুমনামাখনত প্ৰয়োগ কৰা ভাষা বঙলামিশ্ৰিত অসমীয়া। ইয়াৰ প্ৰমাণ হিচাপে একেটা শব্দক 'টকা' আৰু 'টাকা' দুই ধৰণে ব্যৱহাৰৰ উল্লেখ পোৱা গৈছে। হয়তো লিপিকাৰ বঙলাভাষী হোৱা হ'লে নঞৰ্থক শব্দ বুজোৱা শব্দত 'না' বা 'ন' ধ্বনিমূল শব্দৰ পিছত ব্যৱহাৰ হ'লহেঁতেন। হুকুমনামাখনত নঞৰ্থক শব্দ বুজাবলৈ মূল শব্দৰ আগত 'ন' ব্যৱহাৰ দেখা যায়— নিদিবি, নিদিলে আদি।

**হুকুমনামা নং ২**

"মুলকে অপৰ আসাম জিলা নগাঁও শ্ৰীযুত ডিপুটী কমিস্যনৰ সাহাবৰ আজ্ঞা শ্ৰী ভোগৰাম তাগলাৰী ৰায়ত টাঙ্গনি সাপৰি মৌজে, জুৰিআ সাকিন হুজ সাবধানে

শুনিবা, তুমি যে এই মৌজাতে মাটি-বাৰি উপভোগ কৰি আছা, তাৰ বাবে ১২৭০ সালৰ যি ৰাজকৰ দিব লাগে, তাকে এই পাট্টাৰ তলত লিখা গল। তোমাৰ উচিত পাট্টা অনুসাৰে কিস্তিবন্দিৰ খাজানা ধন নিজ মৌজাৰ বিসয়াৰ হাতে শোধাই বাকি ৰাখিলে তোমাৰ সকলো দ্রব্য বস্তু ক্রোক কৰি খাজানা আদায় কৰাত আজ্ঞা দিয়া যাব। পাট্টাত লিখাৰ দৰে ৰাজকৰৰ বাহিৰে বিসয়ক অধিককৈ ধন নিদিব। ইয়াকে নিশ্চয়ে জানিবা। সন ১৮৬৪ তাৰিখ ১৯ ফোৱাআৰি ৮ ফাল্গুন।"

ওপৰত উল্লেখ কৰা ১৯৬৪ চনৰ হুকুমনামাখনৰ লিখন পদ্ধতিলৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে হুকুমনামাখন ঊৰ্ধকমাৰ ভিতৰতে আৰম্ভ কৰি শেষ কৰিছে। 'য' বুজাবলৈ কেতিয়াবা 'য়' আৰু কেতিয়াবা 'আ' ধ্বনি ব্যৱহাৰ মন কৰিবলগীয়া — যেনে- জুৰিয়া, বিষয়া, আদি। 'ৱ'ৰ ব্যৱহাৰ নাই। 'ৱ'ৰ পৰিৱর্তে 'আ' ধ্বনিৰ ব্যৱহাৰহে দেখা যায়। যেনে— ফুৰ্কআৰি (ফেব্রুৱাৰী) 'ৱ' ধ্বনি ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্রত হেমচন্দ্র বৰুৱাই 'আত্মজীৱন চৰিত্র'ত উল্লেখ কৰা কথাখিনিকো প্রসংগক্রমে উল্লেখ কৰিব পাৰি। নিধিৰাম ফাৰোৱালে 'ৱ' আখৰটো প্রচলন বন্ধৰ বাবে যথেষ্ট বাধা প্রদান কৰিছিল বুলি হেমচন্দ্রৰ আত্মজীৱন-চৰিত্রত উল্লেখ পোৱা যায়। অৱশ্যে 'ৱ' আখৰটো আমেৰিকাৰ পৰা ঢলাই আনিব লাগে; কিন্তু মিছন সভা অধিক ব্যয় কৰিবলৈ মান্তি নহয়। শেষত হেমচন্দ্র বৰুৱা গুৱাহাটীলৈ অহাৰ পিছত পাদ্রী ডক্টৰ কম্পৰ্ট চাহাবৰ সহায়ৰ বাবে এনে বিষয়ৰ সকলো আপত্তি খণ্ডন হ'ল। শেষত হেমচন্দ্র বৰুৱাৰ মতকে মানি 'ৱ'ৰ ব্যৱহাৰ চলিল।

এনেবোৰ কথাৰ বাবেই হয়তো 'ৱ' ধ্বনিটো ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্রত থকা খাম-খেয়ালিৰ বাবে 'ৱ' ধ্বনিৰ পৰিৱর্তে 'আ' ধ্বনিৰ ব্যৱহাৰ মন কৰিবলগীয়া বিষয়। 'য' ৰ ব্যৱহাৰ নাই। 'য' বুজাবলৈ 'স' ৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়— বিসয়া (বিষয়া)। যতিচিনৰ ব্যৱহাৰ যেনে— দাড়ি, কমা আদিৰ ব্যৱহাৰ হুকুমনামাখনত যথাযথভাৱে পালন কৰা দেখা গৈছে। ইয়াৰ ভাষা বঙলামিশ্রিত অসমীয়া। যেনে— আসাম, সন, সাল, ফাল্গুন আদি। আৰবী আৰু ফার্চী শব্দৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়; যেনে— ৰায়ত, খাজনা আদি। বঙলা চনৰ ব্যৱহাৰ যেনে— ১২৭০ সাল। ইংৰাজী শব্দৰ প্রয়োগ; যেনে— ডিপুটী কমিশ্যনৰ, ফোৱাআৰি আদি। ইয়াৰ উপৰি কামৰূপী উপভাষাৰ শব্দ আৰু পুৰণি অসমীয়া ভাষাৰ শব্দৰ প্রয়োগ দেখা যায়। যেনে— অপৰ অসম, পাট্টা আৰু দিয়া যাব ইত্যাদি।

অসম চৰকাৰৰ মহাঅভিলেখাগাৰৰ পৰা প্রাপ্ত ১৮৬২-১৮৭৩ চনৰ নথিৰপৰা দুটা ফৌজদাৰী আদালতৰ গোচৰ তথ্য হিচাপে তলত আলোচনা দাঙি ধৰা হ'ল—

(৩)

**ফৌজদাৰি আদালতৰ গোচৰ**

গুচৰিয়া গোচৰ

শ্রীবিহগুৰ্টি কলিতা কার্যৰপৰা ধৰি নি মাৰ

পদকীয়া কিল কৰি বন্দিকৈ থোয়া।

শ্রীৰঙ্গাচৰণ কোচ

গল আঘোন মাহৰ পৰা বন্দিয়ে পদকিয়াৰ ঘৰত ভাত কাপৰিয়া গৰখিয়া হৈ আছিলো। কিন্তু খোয়া বোয়া পিন্ধা ওৰাত বৰ টান পাই যোয়া দেওবাৰৰ দিনা ময় তাৰ ঘৰৰ পৰা ওলাই আহি শাত দিনমান চাহমৰা ঘৰত বন কৰি পেট পুহি আছিলো গল কালি গধুলি মুনিছনি বেলিকা নৈ ঘাটৰ পৰা আহোতে পাছফালৰ পৰা এটা মানুহে মোক গবা মাৰি ধৰিলে আৰু এটাই মুখত শোপাদি পদকিয়াৰ ঘৰলৈ ছোঁ ছোঁৰাই লৈ গল পদকিয়াই মোক দেখি "বাৰু টিলঘি লাইছ পলাই যোয়াৰ শোট ওনিম" এই বুলি মোক খোটাত বান্ধি চকুত জলকিয়া দি এডাল বাঁহৰ এচাৰিয়ে একুৰিমান কোব মাৰি একো খাবলৈ নিদিয়াকৈ ৰাতি এটা ভিতৰৰ ঘৰত বন্দিকৈ থলে ৰাতি নিঃপাল দিয়াত বন্দিশালৰ পৰা পলাই আহি হুজুৰত গোচৰ কৰিচোহি সোধ-পোছ কৰিলে বন্দি দেশত ৰক্ষা পাওঁ।

উল্লিখিত ফৌজদাৰী গোচৰটোৰ ভাষালৈ লক্ষ্য কৰিলে কেইটামান বৈশিষ্ট্য চকুত পৰে—

১৮৩৬ খ্রীষ্টাব্দৰ পৰা ১৮৭৩ খ্রীষ্টাব্দলৈকে অসমত বঙলা ভাষাৰ প্রচলন আছিল যদিও উক্ত গোচৰৰ গোচৰীয়া অসমীয়া ব্যক্তি হোৱা বাবে তেওঁ আদালতত তৰা গোচৰটোৰ ভাষা অসমীয়া আছিল। স্মর্তব্য, আৱেদনখনৰ ভাষা অসমীয়া হোৱা সত্ত্বেও অসমীয়া ব্যঞ্জন বর্ণমালাৰ 'ৰ' বুজাবলৈ বঙলা বর্ণমালাৰ 'ৰ'ৰ ব্যৱহাৰ কৰা দেখা গৈছে। যেনে— ৰঙ্গাচৰণ, বাটৰ পৰা ধৰি, ঘৰ, ভিতৰ, পদকিয়াৰ আদি। গোচৰীয়া

অসমীয়া লোক হোৱা বাবে আৰু তদানীন্তন সময়ত অসমত বঙলা ভাষাৰ প্ৰভাৱ থকাৰ বাবে অসমীয়া 'ৱ' আৰু বঙলা 'ৱ' দুয়োটা বৰ্ণ ব্যৱহাৰ কৰা বুলি অনুমান কৰিব পাৰি। যেনে— বাৰু আৰু আদি শব্দ। ইয়াৰ উপৰি 'ৱ' ধ্বনিৰ ব্যৱহাৰ সমূলি নাছিল। 'ৱ' বুজাবলৈ 'য়' ৰ ব্যৱহাৰ কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। যেনে— যোয়া, খোয়া, বোয়া আদি। অন্যহাতে দীৰ্ঘইকাৰ (ঈ) বুজাবলৈ হ্ৰস্ব ই (ই) ব্যৱহাৰ মন কৰিব লগীয়া দিশ; যেনে— গৰখিয়া, পদকিয়া, কাপৰিয়া, জলকিয়া আদি শব্দ। শেষত যতিচিহ্নৰ ব্যৱহাৰ যথা ৰীতিমতে পালন কৰা হোৱা নাই। গোটেই গোচৰটোত মাত্ৰ দুটা যতিচিহ্নহে দেখা পোৱা গৈছে।

(৪ নং)

ফৌজদাৰি আদালতেৰ নালিশ

(N.B. This is writter in a Sanskritized Bengeli or such Bengali as not commonly words )

বাদি মোকৰ্দ্দমা
শ্ৰীবিহগুটি কলিতা ৰাস্তা হইতে
ধৰিয়া নিয়া মাৰপিট
প্ৰতিবাদি পূৰ্ব্বক কয়েদ ৰাখা।
শ্ৰীৰঙ্গাঁচৰণ কোঁচ

গত অগ্ৰহায়ন মাশ অবধি এ দাশ আশামিক ঘৰে অন্নবস্ত্রে প্ৰতিপালন হইয়া ৰাখাল কৰ্ম্মে ছিলাম কিন্তু অন্নবস্ত্রে অত্যন্ত কষ্ট পাইয়া গত ৰবিবাৰেৰ দিবশ আমি ঘৰহইতে বাৰি হইয়া আসিয়া সাতদিবশ আন্দাজ চা তৈয়াৰী ঘৰেতে কাজ কৰিয়া ওদৰ পৰিপোষণ কৰিতে ছিলাম গতকল্য সন্ধ্যাৰ সময় নাদিৰ ঘাট হইতে আইশাতে একজন লোক আমাকে পৃষ্ঠ দিগ হইতে গড়াইয়া ধৰিল ও অপৰ এক ব্যক্তি আমাৰ মুখবন্ধ ক্ৰমে আশামিৰ ঘৰেতে আমাকে টানিয়া নিয়া গেল। আশামি আমাকে দেখিবা মাত্ৰ "ভাল নেচে বেড়াচ্ছ পালিয়ে যাওয়াৰ প্ৰতিকাৰ দিব"। এই বলিয়া আমাকে এক খুটাৰ শহিত বন্ধন ক্ৰমে চক্ষে মৰিচ দিয়া একটা বাঁশেৰ লড়িৰ দ্বাৰা বিশ ঘা আন্দাজ প্ৰহাৰ কৰিয়া অনাহাৰে ৰাত্ৰে অন্তঃপুৰেৰ এক ঘৰে কয়েদ কৰিয়া ৰাখিয়াছিল ৰাত্ৰি নীৰব হওয়াতে পালন কৰিয়া আসিয়া হুজুৰে নালিশা কৰিতেছি বিচাৰ কৰিলে দাশ দেশে তিষ্ঠিতে পাৰি।

ওপৰত উল্লেখ কৰা অসম চৰকাৰৰ মহা অভিলেখাগাৰৰ পৰা প্ৰাপ্ত আদালতৰ নালিশখনলৈ চালে দেখা যায় যে কোনো এটা গোচৰ নিস্পত্তিৰ নিমিত্তে গোচৰীয়া আৰু পদকীয়াই প্ৰত্যাহ্বান জনাই ন্যায় বিচাৰি গোচৰ তৰাৰ নিয়ম। ৪ নং গোচৰৰ আৱেদনখনৰ বাক্য গাঁথনিৰ পৰা অনুমান কৰিব পাৰি যে ই সম্পূৰ্ণভাৱে বিশুদ্ধ বঙলা ভাষাৰ নিদৰ্শন। ইয়াৰ শব্দ, বাক্য গাঁথনিৰ পৰা আৰম্ভ কৰি সম্পূৰ্ণ বৈয়াকৰণিক দিশকেইটা বঙলা ভাষাৰ আৰ্হিত প্ৰস্তুত কৰা হৈছে।

উল্লেখনীয় যে, একেটা সময়তে অসমৰ আদালতত ব্যৱহৃত ভাষাটো কেতিয়াবা অসমীয়ামিশ্ৰিত বঙলা ভাষা, কেতিয়াবা বঙলামিশ্ৰিত অসমীয়া। কেতিয়াবা সম্পূৰ্ণভাৱে বঙলা ভাষাৰ ঠাঁচ ৰক্ষা কৰি নথি-পত্ৰ প্ৰস্তুত কৰা দেখা যায়।

**সিদ্ধান্ত ঃ**

অসমৰ মহাফেজখানাৰ ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত বিচাৰ কৰিলে দেখা যায় যে পূৰৰ দেশসমূহৰ সৈতে ব্যৱসায়-ব্যাণিজ্য কৰাৰ বাবে ১৬০০ খ্ৰীষ্টাব্দত 'ব্ৰিটিছ ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানী' নামৰ এটা ব্যয়সায়ী গোষ্ঠীক ৰাণী এলিজাবেথে (প্ৰথম) অনুমতি প্ৰদান কৰিছিল। ১৮৫৭ চনৰ চিপাহী বিদ্ৰোহৰ পৰৱৰ্তী পৰ্যায়ত ভাৰতৰ শাসনভাৰ কোম্পানীৰ হাতৰ পৰা পোনপটীয়াকৈ ইংলেণ্ডৰ ৰাণীৰ হাতলৈ যায়। কোম্পানীৰ এশ বছৰীয়া আমোলতেই ভাৰতীয় উপমহাদেশৰ প্ৰায়বোৰ অঞ্চল দখল কৰি এখন বিশাল সাম্ৰাজ্যৰ ভেটি প্ৰতিষ্ঠা কৰে। ফলশ্ৰুতিত অসমো ব্ৰিটিছৰ অধীনলৈ যায় ঊনবিংশ শতিকাৰ তৃতীয় দশকত।

মহাফেজখানাৰ ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত কেইটামান গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ হ'ল—

বংগদেশত ইংৰাজ শাসন প্ৰৱৰ্তনৰ ফলত প্ৰশাসনিক কাৰ্যত ইংৰাজ মানুহৰ সংখ্যা বৃদ্ধি পাইছিল। সেইদৰে অসমত ইংৰাজৰ প্ৰশাসনিক কাৰ্য পৰিচালনাৰ বাবে বংগদেশৰ পৰা কেৰাণী, মহৰী পদৰ বাবে কিছু বঙালী লোক আনিলে। সেই বঙালী লোকসকলে বিদেশী ইংৰাজ লোকৰ অজ্ঞতাৰ সুযোগ লৈ অসমৰ সমস্ত চৰকাৰী মাধ্যমৰ পৰা অসমীয়া ভাষাৰ পৰিৱৰ্তে বঙলা ভাষা প্ৰৱৰ্তনৰ হকে তেওঁবিলাকে আগভাগ লৈছিল।

সেই বাবে ইংৰাজসকলে একো বুজিব নোৱাৰি অসমৰ চৰকাৰী মাধ্যমৰ পৰা অসমীয়া ভাষাক আঁতৰাই বঙলা ভাষাক স্থান দিলে। ইয়াৰ ফলত বঙলা ভাষাৰে আৱেদন কৰা গোচৰৰ সিদ্ধান্ত আদি লিখা কামত ব্যৱহাৰ হ'ল। সেই বাবে অসমীয়া নকল নবিছে (Copist) বঙলা ভাষাটো শুদ্ধকৈ নিশিকাৰ বাবে ভাষাৰ ক্ষেত্ৰত এক মিশ্ৰিত ভাষাহে প্ৰয়োগ দেখা যায়। উল্লেখযোগ্য যে ১৮৮১ চনৰ এখন সিদ্ধান্ত পত্ৰৰ লিপিকাৰ (Copist) আছিল কুদ্ৰথ আহমেদ নামৰ এজন মুছলমান লোক। তেখেতৰ চহীটো আদালতৰ ষ্টাম্পটোৰ কাষত উৰ্দু ভাষাত লিখি দিছিল। ইয়াৰ পৰিণতিত অসমীয়া ভাষাত অনেক উৰ্দু, ফাৰ্চী শব্দৰ আগমন হ'বলৈ ধৰিলে— সাহেব, আদালত, কৈফিয়ৎ, জৱান, দখল, দাখিল ইত্যাদি। প্ৰায়ভাগ নথি-পত্ৰত 'ৰ' বৰ্ণটো কোনো ঠাইত অসমীয়া 'ৰ' আৰু কোনো ঠাইত 'ব' হিচাপে ব্যৱহাৰ হ'বলৈ ধৰিলে। যেনে— বোঙ্গাবি, দবঙ্গ, মহেশ্বৰ, সৰকাৰ আদি। আকৌ কেতিয়াবা অন্তস্থ 'য়' ৰ ঠাইত 'য' ব্যৱহাৰ দেখা যায়। যেনে— গযৱহ, দিয আদি। শ, ষ, সৰ ঠাইত কেৱল 'স' ব্যৱহাৰ— সাহেব, এজলাস, আসাম, সন, সৰ্ম্মা, সৰকাৰ, সাবুদ, সঙ্গত আদি। তালব্য 'শ' ৰ ব্যৱহাৰো মাজে মাজে দেখা যায়— শাহেব, শৰ্মা, শীৱ শীংহ, আশন আদি।

যুক্তাক্ষৰবোৰ আধুনিক অসমীয়াৰ পৰা কিছু পৃথক— ফ্ৰান্সিছ জিস্কীছ (ফ্ৰান্সিছ জেনকিন্স), মহেশ্বৰ (মহেশ্বৰা), ব্ৰহ্মোত্তৰ, আশীষ্টাণ্ট (Assistant), ডিকৰি (ডিগ্ৰী), জনোৰ্দ্ধন (জৰ্নাদন), অশনমত (অসন্মত), মাৰ্চেৰ (মাৰ্চৰ) আদি। বঙলা শব্দৰ প্ৰয়োগো দেখা যায়— কৰিয়া, জিজ্ঞাসা, কৰাতে, এবং, দেআ, থাকা আদি। 'য়'ৰ পৰিৱৰ্তে 'এ' বৰ্ণ ব্যৱহাৰ, যেনে— মৌজাএ, জনাজাএ আদি। সেইদৰে মূৰ্দ্ধণ্য 'ণ'ৰ ঠাইত দন্ত 'ন' ব্যৱহাৰ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। ১৮৪২ খ্ৰীষ্টাব্দৰ এখন নথিত নিলকণ্ঠ, মনশী, নকল আদি বৰ্ণৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়। আকৌ 'য'ৰ ঠাইত 'জ' ব্যৱহাৰ— জানা গেল, জে, জাবত, জানাজাএ আদি। ঠাইৰ নাম এনেদৰে লিখা হৈছিল— নওগও (Nowgong), ননইৰ, শীদ্ধা (চিধা), শীদ্ধিয় পোতনি (শিঙীয়া পোতনি) আদি।

**সামৰণি ঃ**

এনেবোৰ কথাৰ পৰা ইয়াকে ক'ব পাৰি যে, ১৮৩৬ খ্ৰীষ্টাব্দৰ পৰা ১৮৭৩ খ্ৰীষ্টাব্দলৈ উক্ত সময়ছোৱাত অসমত চৰকাৰী প্ৰশাসন যন্ত্ৰৰ অমনযোগিতা বা বঙালী লোকৰ নিজৰ ভাষাৰ প্ৰতি থকা আনুগত্যৰ বাবেই অসমীয়া ভাষাটোৱে অনেক সংঘাতৰ সাক্ষী হ'ল। ইয়াৰ বাবে অসমীয়া ভাষাটোৱে কোনো ক্ষেত্ৰত মিশ্ৰিত ভাষাৰ ৰূপ গ্ৰহণ কৰা যেন বোধ হয়। লগতে দেশী-বিদেশী অনেক শব্দৰ সংযোজন আৰু বিয়োজনৰ ফলত অসমীয়া ভাষাটো ক'ৰবাত সবল হোৱা যেন বোধ কৰিবৰ স্থল দেখা যায়। ভাষা সদায় একে ৰূপতে নাথাকে সেই বাবে অসমীয়া ভাষাটোও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। ❑


**সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ**

১. প্ৰত্নতত্ত্ব চিন্তন সমীক্ষা ঃ বিপুল কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য, ১ম প্ৰকাশ, ২০১২, কামধেনু প্ৰকাশন, কলিয়াবৰ নগাঁও।
২. ভাষাতত্ত্ব ঃ দিপ্তী ফুকন পাটগিৰি, বনলতা, ২য় প্ৰকাশ, ১৯৯৫ চন, গুৱাহাটী।
৩. মহাফেজখানাৰ খিড়িকীয়েদি ঃ যোগেন্দ্ৰনাৰায়ণ ভূঞা, ১ম প্ৰকাশ, ১৯৮৫, ৰুমী-ৰূপক এণ্টাৰপ্ৰাইজ, নতুন বজাৰ, নগাঁও-১
৪. উৱলিযোৱা নথিৰপৰা ঃ যোগেন্দ্ৰনাৰায়ণ ভূঞা, ১ম প্ৰকাশ, ১৯৯০ চন, পুথিঘৰ, নগাঁও-১
৫. ঊনবিংশ শতিকাৰ অসম সংবাদ ঃ যোগেন্দ্ৰনাৰায়ণ ভূঞা, ১৯৯০ চন, প্ৰকাশক ঃ ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়।
৬. আসাম বন্ধু ঃ গুণাভিৰাম বৰুৱা (সম্পা.), অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ১৯৮৪ চন, ১ম প্ৰকাশ।
৭. স্নাতকৰ কথা বন্ধ ঃ মহেশ্বৰ নেওগ (সম্পা.), ৩য় প্ৰকাশ ১৯৯০ চন, বিশ্ববিদ্যালয়ৰ প্ৰকাশন বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়।
৮. আলোচনী ঃ গৰীয়সী ঃ চন্দ্ৰপ্ৰসাদ শইকীয়া (সম্পাদক), ১ৰ্থ বছৰ, ৪ৰ্থ সংখ্যা, জানুৱাৰী, ১৯৯৭চন।
৯. নথি ঃ অসম চৰকাৰৰ মহা অভিলেখাগাৰ (Assam cmmissionars office, file No-471-471, Assom Langnage, 1802-1873)

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# পাশ্চাত্য আৰু জোনাকী যুগৰ ত্রিমূর্তিৰ কবিতাত প্রকৃতি চিত্রণ ঃ এক বিশ্লেষণ

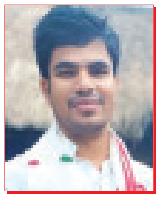

ৰাজেন দাস

গৱেষক ছাত্র, অসমীয়া বিভাগ
ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ডিব্রুগড়
(অসম), ডাক-৭৮৬০০৪
৯১০১২২১৪৩৬
rajendas3687@gmail.com

**সাৰাংশ ঃ**

সভ্যতাত সংপৃক্ত প্রকৃতি আৰু মানুহৰ সম্পর্ক গভীৰ। এনে গভীৰ সম্পর্কই কবি-সাহিত্যিকৰ মন আৰু চিন্তনত প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰি আহিছে। প্রকৃতিৰ বায়ু-পানী, মাটি, জলবায়ু, জীৱ-জন্তু, পাহৰ-ভৈয়াম, গছ-গছনি, চৌপাশৰ পাৰিপার্শ্বিক বাতাবৰণ, নৈ-নিজৰা আদি সৃজনীশীল আৰু চিন্তাশীল লেখকৰ নখ দর্পণত স্পষ্ট হৈ উঠা দেখা যায়। প্রকৃতিক লৈ বহু সাহিত্য ইতিমধ্যে ৰচিত আৰু প্রকাশিত হৈছে। প্রকৃতি সাহিত্যই এক বিশেষ মাত্রাত সাহিত্য নব্য ধাৰাত সাৰ-পানী যোগাই অহাটো অতি গুৰুত্বপূর্ণ দিশ। প্রাক্-ৰৈষ্ণৱ নাইবা তাৰো পূর্বৱর্তী আৰু পৰৱর্তী সময়ত প্রকৃতিৰ বিভিন্ন উপাদান সাহিত্যিকৰ চিন্তা-চর্চালৈ সাহিত্যৰ ভিন্ন বিধাত 'প্রকৃতি সাহিত্য'ৰ পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাৰ মাজেদি আহিবলৈ ধৰিলে। প্রকৃতিত তেওঁবিলাকে কাল্পনিক আৰু বাস্তৱিক সমলসমূহৰ পৰা তথ্য সংগ্রহ কৰি সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে বুলিব পাৰি। ইংৰাজী ৰোমান্টিক কবি আৰু অসমৰ জোনাকী যুগৰ কবিৰ কবিতাত প্রকৃতি চিত্রণ সম্পর্কে এই গৱেষণাপত্রত সামৰি লোৱা হ'ব।

*" ইংৰাজী সাহিত্যৰ ৰমন্যাসিক কাব্যৰ ইতিহাসত দুটা তৰংগ পৰিলক্ষিত হয়। প্রথমটো তৰংগত আছে, ৱর্ডছৱর্থ আৰু ক'লৰিজ।...দ্বিতীয়টো তৰংগত আছে, কনিষ্ঠ কবি তিনিজন-শ্যেলী, কীট্ছ আৰু ৰায়ৰণ।"* (উৎস-ৰমন্যাসবাদ, পৃষ্ঠা-২১) Cec গুৰুকুল লাইভ বক্তৃতাৰ চিৰিজত শ্যেলী (উৱর্ডছৱর্থ, কিটছ আদিৰো বক্তৃতা পোৱা যায়)ৰ বক্তৃতাত ৰোমান্টিকচিজম কি ? ইয়াক বিভিন্ন অর্থ সম্প্রতি আছে বক্তৃতাটোত উল্লেখ কৰিছে। ইংৰাজী সাহিত্যত ৰোমান্টিকতাৰ ধাৰা, ইয়াত শৈলীক আগত ৰাখি ৰোমান্টিক ৰৈপ্লৱিক প্রসংগ, শ্যেলী, কিটছ, বাইৰণ আদিৰ প্রসংগ সমল ব্যক্তি ৰিছা বাজাজ (Richa Bajaj) এ গুৰুত্বসহকাৰে উত্থাপন হৈছে। বক্তৃতাৰ বিষয়- P.B. Shelley : The Revolutionary Romantic, Lec. delivered by Dr. Richa Bajaj. " ... Which includes Wordsworth and Coleridge and before that..." (উৎস-https://youtu.be/JACXXr3GXhw-cec.)। ইংৰাজী সাহিত্যৰ অষ্টাদশ শতিকাতে ইংৰাজী সাহিত্যত ৰোমান্টিকৰ পুনৰ জাগৰিত হৈ উঠে। ইয়াৰ অন্তৰালত গ্রে, ৰিচাৰ্ডচন, থমছন (poem by Thomson-The Sessions) ডিফো আৰু ফিল্ডিং ইত্যাদিসকলে বিদ্রোহ কৰে। এই বিদ্রোহ আছিল ধ্রুপদীবাদৰ বিৰুদ্ধে। উল্লিখিত শতাকাত কবিসকলৰ কবিতাসমূহত ৰোমান্টিক পুনৰজাগৰণৰ বিভিন্ন লক্ষণ ফুটি উঠা পৰিলক্ষিত হৈছিল বাবে থমাছ গ্রে, অলিভাৰ গল্ডস্মিথ, উইলিয়াম কাউপাৰ, ৰবার্ট বার্ণচ ইত্যাদিসকলক

ৰোমান্টিক পুনৰজাগৰণৰ বাটকটীয়া বুলি কোৱা হৈছে। । এই প্ৰসংগত ৰোমান্টিক যুগ (আন্দোলন) আৰম্ভ কৰি দিয়াত ৱৰ্ডছৱৰ্ড (William Wordsworth) আৰু ক'লৰীজ (Samuel Taylor Coleridge) ৰ 'লিৰিকেল বেলাড' (Lyrical Ballads, 1798, second edition published, 1800, 3rd edition 1802, 4th edition 1805) এ বিশেষ ভূমিকাত অৱতীৰ্ণ হৈছিল (যুটীয়াভাৱে প্ৰকাশ)। কবিতাৰ বাদেও ৰোমান্টিক আদৰ্শৰ গণ্ডীত স্কট, আষ্টিন আৰু চার্লচ লেম্বৰ দৰে গদ্য লেখক আৰু ঔপন্যাসিকো আছিল। ৰোমান্টিক যুগ বুলি চিহ্নিত হোৱা বা সেই যুগৰ প্ৰায়খিনি লক্ষণ প্ৰকাশ পোৱা আন আন কবিসকল আছিল উল্লেখযোগ্য তাৰে ভিতৰত *'ৰোমান্টিক সাহিত্যৰ প্ৰায়বোৰ বৈশিষ্ট্যই এই যুগৰ প্ৰধান কবি ৱৰ্ডৰ্চ্ওৱৰ্থ, ক'লৰীজ, চাইডে, শ্যেলী, কীট্চ, বাইৰণ আদি কবিসকলৰ হাতত বেছি স্পষ্ট আৰু অতিশয় হৃদয়গ্ৰাহী ৰূপত ফুটি উঠে, আৰু এইসকলৰ সৃষ্টিৰে ইংৰাজী সাহিত্যক এক অতিশয় উচ্চ আসনত প্ৰতিষ্ঠিত কৰি তোলে।'* (অসমীয়া সাহিত্যৰ অধ্যয়ন, লক্ষ্মীকান্ত মহন্ত, পৃ-২৬৬)। গৱেষণা পত্ৰখনত প্ৰকৃতি ৰোমান্টিক কবিৰ কবিতা আৰু জোনাকীৰ ত্ৰিমূৰ্তিৰ কবিৰ কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ সম্পৰ্কে আলোকপাত কৰা হ'ব।

**বীজ শব্দ ঃ**

জোনাকী আলোচনী, জোনাকী, যুগ, কবিতা, প্ৰকৃতি, ৰোমান্টিক, কল্পনা আদি।

**অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ** বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি।

**অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ** ইংৰাজী ৰোমান্টিক কবিৰ প্ৰভাৱৰ দ্বাৰা অসমীয়া ৰোমান্টিক কবিৰ কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ আৰু অসমীয়া ৰোমান্টিক কবিৰ কবিতাত প্ৰকৃতিৰ নানা দিশৰ চিত্ৰণৰ ছবি স্পষ্ট কৰা।

**মূল আলোচনা ঃ**

**ইংৰাজী ৰোমন্টিক কবিৰ চমু পৰিচয়**

ইংৰাজী সাহিত্যৰ বিধা বিশেষকৈ কাব্যসাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰা ৱৰ্ডছৱৰ্ড, শ্যেলী, কিটছ,ক'লৰিজ আৰু বাইৰণৰ অৱদান উল্লেখযোগ্য। উল্লিখিত কবিসকলৰ কবিতাত প্ৰকাশিত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ সম্পৰ্কে আভাস দাঙি ধৰা হ'ল।

**ৱৰ্ডছৱৰ্ড** (Wordsworth)

শৈশৱৰ স্বপ্নৰাজ্যক বিচাৰি পোৱাত সহায় কৰা কবি ৱৰ্ডছৱৰ্ড এগৰাকী ওঠৰ শতিকাৰ বিখ্যাত কবি ।এইগৰাকী ইংৰাজীসাহিত্যৰ ইতিহাসৰ ৰোমান্টিক কবি (১৭৭০-১৮৫০০ এ চেমুৱেল কলেৰিজ (১৭৭২) ক লগ পাই আৰু তেওঁৰ সৈতে বিখ্যাত লিৰিকেল বেলাড (১৯৭৮) প্ৰকাশ কৰে। আধ্যাত্মিক বুৰঞ্জী ৰচনা কৰি এক নতুন কবিতাৰ ধাৰা জন্ম দিয়া তেওঁৰ দ্য প্ৰিলুড (An Autobiographical poem, The Prelude,1850)। এই গ্ৰন্থখনক ৰোমান্টিকতাবাদৰ মুকুটমণ্ডিত কৃতিত্ব বুলি কোৱা হৈছিল যি তেওঁৰ বাবে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ। তেওঁক শ্যেলীয়ে 'প্ৰকৃতিৰ কবি (Poet of Nature)' বুলি অভিহিত কৰিছিল। উইলিয়াম উৱৰ্ডছৱৰ্ডৰ প্ৰকৃতি বিষয়ক এটি লেখাত তেওঁক কৈছে—" His Whole life had a close connection with nature-the permanent Subject sung highly by human being. Worthsworth was called by Shelly "Poet of Nature". (On Lyrical Poetry of Wordsworth, a poet of Nature, Hiaolin Huang, Feifei Pei, Changle Fu, Scientific Research, open Access, Web Link-https://www.scirp.org/html/3-2820087_51083.htm) ৱৰ্ডছৱৰ্ডৰ (Wordsworth) প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ সম্বলিত কবিতা—

"ENOUGH of rose-bud lips,and eyes
Like harebells bathed in dew,
Of cheek that with carnation vies,
And veins of violet hue;
Earth wants not beauty that may scorn
A likening to frail flowers;
Yea, to the stars, if they were born

For seasons and for hours." (Source-Research Paper,'Nature-In the hands of Wordsworth', january, 2018, RakhshindaJabeen,vol.1,no.2,194-203,www.researchgate.net/publication/332104170)

**শ্যেলী (Shelly) ঃ**

গীতিময়তা আৰু ন-মানৰ সমাজ গঢ়াৰ দিশ কবিতাত প্ৰতিফলিত কৰা আন এজন ৰোমান্টিক কবি শ্যেলী (১৭৯২)। ৰোমান্টিকচিজিম সময়ছোৱাৰ কবিগৰাকীৰ কাব্যগ্ৰন্থ The minor poems (1846), poems (1993), The Complete Poetry of Percy Bysshe Shelley (Edited by Donald H.Reiman Neil Fraistat and Nora Crook, 2005) ইত্যাদি উল্লেখযোগ্য। **তেওঁ নিজকে 'প্ৰকৃতিৰ উপাসক' (A Worshiper of Nature) বুলি কৈছিল। প্ৰকৃতিপ্ৰিয় শ্যেলীৰ কবিতাত প্ৰকৃতি, ডাৱৰ, পাহাৰ, প্ৰাকৃতিক দৃশ্য ইত্যাদি। গৱেষণা পত্ৰিকা এখনত উল্লেখ**

আছে - In Ode to the west Wind, he personifies Nature as the Destroyer and the Preserver, and in the Cloud, the cloud is a possessor of mighty powers. He also belived in the healing aspect of Nature and this is revealed in his Euganean Hills in Which he is healed and soothed by the natural scene around him and also the imaginary island. In the Recollection the same idea of the healing power of nature is applied.,,( Title-Romantic poets love nature and celebrate it in different aspects, by-Dr. Amal.M.A.Ibrahim, European Journal of English Language and Literature Sttudies,ISSN-2055-0138, Print, ISSN-2055-0146,Online, Link-https://www.eajournals.org/wp-content/uploads/Romantic-Poets-Love-Nature-and-Celebrate-It-in-Different-Aspects.pdf) শ্যেলীৰ *(Shelly)* প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ সম্বলিত কবিতা—

'Of waters,–with a sound but half its own,
Such as a feeble brook will oft assume
In the wild woods, among the mountains lone,
Where waterfalls around it leap for ever,
Where woods and winds contend, and a vast river" (Source-Selected and arranged by Stopford A Brooke, London, Macmillan and co.1880, 'Poems of Nature and Man', p.111)

**কীটছ (John Keats)**

আবেদনময়ী শৈলীৰ বৈশিষ্ট্য বহন কৰা সত্য আৰু সৌন্দৰ্যক গুৰুত্ব আৰোপ কৰা কবিজনেই হৈছে জন কিটছ (৩১ অক্টোবৰ, ১৭৯৫-১৮২১)। তেওঁ ইংৰাজ ৰমন্যাসিক কবি। তেওঁক ইংৰাজী সাহিত্যত জনপ্ৰিয় কৰি তোলা কবিতাসমূহৰ ভিতৰত আছিল শ্লিপ এণ্ড পয়েট্ৰি (Sleep and Poetry), অ'ড টু এ নাইটিংগেল (Ode to a nightingale,1819) , অ'ড অন এ গ্ৰীচিয়ান আৰ্ন (Ode on a Grecian Urn,1819) আৰু ছনেট -অন ফাষ্ট লুকিং ইনটু চেপমেন'ছ হোমাৰ (On fast looking into Chapman's homer, 1816) আদি। কীটছৰ (John Keats) প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ সম্বলিত কবিতা—

"To swell the gaourd, and plump the hazal shells
With a sweet kernel; to set budding more,
And still more, later flowers for the bees,
For Summer has o'er-brimm'd their clammy cells.
(Source-To Autumn,2004,poem Hunter.com-Thehive, World's poetry Arp.199)

**বাইৰণ (Byron)**

কবিতাত গভীৰ অসন্তুষ্টিৰ ভাৱ প্ৰকাশিত বৈশিষ্ট্য সম্বলিত ইউৰোপত আন কবিসকলতকৈ বেছি প্ৰভাৱ থকা ইংৰাজী ৰোমান্টিক আন্দোলনৰ অন্যতম কবি বাইৰণ (১৭৮৮-১৮২৪, জৰ্জ গৰ্ডন বাইৰন)। ডন জুয়ান (Don Juan, 1819) তেওঁৰ বিখ্যাত কবিতা পুথি। তদুপৰি তেওঁৰ আন আন কবিতা পুথিসমূহৰ ভিতৰত- She walks in Beauty, (Lyrical poem) 1814, Childe Harold's, 1812 (Narrative poem), Manfred,1817 Etc. বাইৰণৰ *(Byron)* প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ সম্বলিত কবিতা—

"Where rose the mountains, there to him were friends;
Where roll'd the ocean, thereon was his home;
Where a blue sky, and glowing clime, extends,
He had the passion and the power to roam;
The desert, forest, carvern, breaker's foam,"
(Source-selected poems of lord byron, edi. Matthew Arnold, New york, Thomas y. crowell&co. Publishers, copyright, 1184and 1894,' Nature the consoler', p.28)

**ক'লৰিজ (Coleridge)**

ইংৰাজী ৰমন্যাসিক ইতিহাসৰ আন এগৰাকী কবি ক'লৰিজ। তেওঁৰ কবিতাত থকা এটি অন্যতম বৈশিষ্ট্য হৈছে সপোন আৰু দিঠকৰ একাকাৰ। ৱৰ্ডছৱৰ্ড আৰু ক' লৰিজে সান্নিধ্য পাই কিদৰে দুটি ভিন্ন দৃষ্টিভংগীৰে কবিতা লিখিবলৈ লৈছিল সেইবিষয়ে পোৱা যায় এইদৰে-*"...দুয়োজন কবিয়ে পৰস্পৰৰ সান্নিধ্যলৈ অহাৰ কালছোৱাত কেনেকৈ দুটা বেলেগ ভংগীৰে কবিতা লেখিবলৈ চুক্তিবদ্ধ হৈছিল। এজন লেখিবলৈ লৈছিল, চিনাকি বস্তুকেই অচিনাকিৰ মায়াৰে ৰঙীণ কৰি তোলা কবিতা, আনজনে লেখিবলৈ লৈছিল, মাথোঁন কল্পনা-চকুৰে দেখা পোৱা এখন অচিনাকি জগতক চিনাকিৰ নিচিনাকৈ মাটিৰ পৃথিৱীৰ ওচৰ চপাই অনা কবিতা।"* (উৎস-ৰমন্যাসবাদ, পৃ-৬৩) তেওঁৰ গ্ৰন্থ বায়োগ্ৰাফিয়া লিটাৰেৰিয়া। তেওঁৰ আন আন গ্ৰন্থৰ ভিতৰত -The Rime of the Ancyent Marinere, English Romantic Poetry: An Anthology, Lyrical Ballads, The Romantics Poets, Bigraphia Literaria Etc. ক'লৰিজৰ *(Coleridge)* প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ সম্বলিত কবিতা—

" The Sun's rim dips; the stars rush out,
At one stride comes the dark,
With fer heard whisper o'er the sea

Off shot the spectre bark;" (Source-The treatment of Nature in the poetry of Colridge by Easther Spears Brenton,Butler University, Indianspolis, 1934, p.60)

**জোনাকী যুগ আৰু প্ৰকৃতি প্ৰসংগ ঃ**

*'...ৰোমান্টিক আন্দোলনৰ বিকাশত এইধৰণৰ আলোচনাবোৰে বিশেষ অৱদান আগবঢ়ায়। 'ৰোমান্টিক' শব্দটোৰ যোগেদি নতুনত্ব বা আধুনিকতাকে আদৰণি জনোৱা হয়। ঊনৈশ শতিকাৰ আৰম্ভণিতে ই আধুনিক' শব্দটোৰ প্ৰতিশব্দৰূপেই ব্যৱহৃত হয় আৰু বহল অৰ্থত ই খ্ৰীষ্টীয় সভ্যতাৰ নান্দনিক দিশসমূহক সামৰি লয়। ৰোমান্টিক লেখক 'Chateaubrind' এ ইয়াক খ্ৰীষ্ট্ৰীয় সভ্যতাৰ সাৰৰূপে অভিহিত কৰিছে আৰু ইয়াৰ অন্তৰালত মধ্যযুগীয় ধৰ্মীয় আদৰ্শ, মধ্যযুগীয় উপকথা, মহাকাব্য, ৰোমাঞ্চ, ডান্টে, পেট্ৰাৰ্ক, এৰিওষ্টো, শ্বেইক্সপীয়েৰ, মিল্টন আদিৰ প্ৰতিভাৰ অনুপ্ৰেৰণা নিহিত হৈ থকাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে।'* (আধুনিক সাহিত্য ঃ চিন্তা আৰু সৃষ্টি, পৃ-৭১) অষ্টাদশ শতিকাৰ শেহত ইউৰোপত ৰমন্যাস নামৰ শিল্প মতবাদ, ফৰাচী বিপ্লৱৰ সাম্য, মৈত্ৰী স্বাধীনতা এইসমূহৰ ধ্বনি, ভাৱৰ আদৰ্শৰাজি, ৰুচোৰ প্ৰকৃতিলৈ প্ৰত্যাৱৰ্তন, কাণ্ট আৰু হেগেলৰ অতীন্দ্ৰিয়বাদী, ১৭৯৮ চনত প্ৰকাশিত ৱৰ্ডচৱৰ্ড, কলৰিজৰ লিৰিকেল ৰেলাড (Lyrical Ballad) ইংৰাজী সাহিত্যত শুভাৰম্ভ কৰা ৰমন্যাসবাদ এই বাদে শ্যেলী (Shelly), ' কলা-কৈৱল্যবাদ (Art for Art's Sake)' ৰ বিশ্বাসী অথবা ৰোমান্টিক কবিসকলৰ মজিয়াত প্ৰাকৃতিক চিত্ৰকল্পৰ সহায়েৰে আবেগ আৰু চৰমক জোৰ দিয়া ইংৰাজ কবি কীটচ (Kittes), বাইৰণ (Byraon) ব্ৰাউনিং (Brawning), মেথিউ আৰ্ণল্ড (Methew Arnald) চুইণবাৰ্ণ (Suinbarn) ৰ হাতৰ পৰশত বিস্তৃতি ঘটিবলৈ উপক্ৰম হৈছিল। জোনাকীৰ ত্ৰিমূতিৰ বিশেষকৈ *'স্বদেশ আৰু স্বজাতিৰ উন্নতিৰ মঙ্গলময় সিংহদুৱাৰ হৈছে মাতৃভাষা' (*বেজবৰুৱা-বিমৃশা, পৃ-১) বুলি বহু গভীৰকৈ উপলব্ধি কৰা লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা আৰু চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাই যি আলোচনীত সাহিত্যচৰ্চা কৰিছিল সেই কবিদুগৰাকীৰ বিশেষ আধুনিকতাবাদীৰ দিশত বহুকেইটা, পৰ্ব, ধাৰা, কবিৰ প্ৰসংগ আহি পৰে। *"এলিজাবেথ যুগৰ লগত যেনেকৈ ইংৰাজী সাহিত্যৰ নৱন্যাস যুগ (১৮০০-৫০) দ্বিতীয় সৃজনমূলক প্ৰতিভাৰ যুগ বুলিব পাৰি, তেনেকৈ বৈষ্ণৱ সাহিত্যৰ তুলনাত বৰ্ত্তমান সাহিত্যৰ ঢেকীয়াল ফুকনৰ জন্মৰ পৰা বেজবৰুৱাৰ শেষ কাললৈকে প্ৰথম এশ বছৰ (১৮৩০-১৯৩০) সাধাৰণভাৱে তেনে সৃজনমূলক যুগ বুলিব লাগিলে ই আগতে ক'বৰ দৰে সমুদ্ৰৰ বৃহৎ জোৱাৰৰ লগত ব্ৰহ্মপুত্ৰ ক্ষুদ্ৰ ঢৌৰ তুলনা হয়। জোৱাৰেই হওঁক বা ঢৌৰেই হওঁক, তাৰ শিৰ অৱশ্যে শেষৰ দুকুৰি বছৰ (১৮৯০-১৯৩০), অৰ্থাৎ "জোনাকী" আৰু "আৱাহন" কাকতৰ মাজৰ অসমীয়া নৱন্যাসৰ কালছোৱা। ইংলণ্ডৰ নৱন্যাসৰ দৰেই অসমৰ নৱন্যাসো কবিত্বপ্ৰধান,..."* (নতুন পোহৰত অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, পৃ-৩২৫)

ভৱেন বৰুৱাদেৱে কৈছেই - *"বেজবৰুৱা আৰু চন্দ্ৰকুমাৰৰ জোনাকী-বাঁহী যুগৰ অসমীয়া কবিতাৰ ধাৰাটোৱে ঘাইকৈ যতীন্দ্ৰনাথ দুৱৰাৰ মাজেদিয়েই কথা-কবিতাৰ আধুনিকতাৰ উপৰিও এই বিশেষ আধুনিকতামুখী পৰ্বত সোমাইছিল-যি বিৱৰ্তনৰ পৰ্বটোত ব্লেইক, ৱৰ্ডচৱৰ্থ, শ্যেলী আদিৰ ঠাইত একাধিক ৰূপত ভিক্টৰিয়ান মানসিকতাৰ কবিৰ প্ৰভাৱেই দেখা যায় ঃ টেনিছন, ব্ৰাইনিং, ফিটজেৰাল্ডেই তাত প্ৰধান আৰ্হি হিচাপে সক্ৰিয় হৈছিল।"* (বৰুৱা, ভৱেন, আধুনিক যুগৰ কবিতা আৰু দৰ্শনৰ সমস্যা, ডঁ মহেন্দ্ৰ বৰা স্মাৰক প্ৰথম বক্তৃতা, আগকথা, গ, ঘ) *'ৱৰ্ডৱৰ্থৰ প্ৰকৃতি প্ৰীতি তেওঁৰ মজ্জাগত হ'লেও সি তেওঁৰ সমসাময়িক এক সামাজিক দৰ্শনৰ লগত জড়িত...'* (ভাষা-সাহিত্য, সম্ভাৰ, পৃ-৪২)। বঙলা আৰু ইংৰাজী সাহিত্যৰ যোগেদি অসমৰ অসমীয়া সাহিত্যলৈ বিশেষকৈ কলিকতীয়া ছাতৰক প্ৰভাৱিত কৰিলে। জোনাকী (১৮৮৯), বিজুলী (১৮৯০), আসাম বন্ধু (১৮৮৫), আদি কাকতে নতুন-নতুন বিষয়বস্তুৰ সাহিত্যত সংযোগ-বিয়োগ কৰি লেখক সাহিত্যিকৰ জন্ম দিলে। সাতসাগৰ তেৰ নদী পাৰ হৈ খ্ৰীষ্টান ধৰ্মৰ প্ৰচাৰ, প্ৰসাৰৰ উদ্দেশ্য আগত থিয় কৰি মিছনেৰী (ব্যপ্তিছ) সকলে উলিওৱা মাহেকীয়া অৰুণোদয় (প্ৰথম সম্পাদক-নাথান ব্ৰাউন,১৮৪৬) আলোচনীৰ পিচত যেন এক গতিপথ বিভিন্ন বিষয়বস্তুৰে আলোচনী ওলাই থাকিল। অসমৰ পৰা উচ্চশিক্ষা অধ্যয়ন কৰিবলৈ যোৱা জ্ঞানপিপাসু কলিকতীয়া ছাত্ৰসকলে উলিওৱা জোনাকী আলোচনী অসমীয়া আলোচনী সাহিত্যৰ (আলোচনীকেন্দ্ৰিক) পথ প্ৰদৰ্শক। আলোচনীখন চাহ মেলৰ যোগেদি অসমক হাড়ে-হিমজুৰে ভালপোৱাৰ ফলশ্ৰুতিতে ইংৰাজী ১৮৮৯ চনৰ ৯ ফ্ৰেব্ৰুৱাৰীত পোন প্ৰথম বাৰৰ বাবে এই আলোচনীখন জোনাকীৰ ত্ৰিমূৰ্তিৰে এজন চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ সম্পাদনাত কলিকতা (Kalkata) ৰ পৰা প্ৰকাশ হয়। অসমীয়া সাহিত্যত জোনাকীৰ আৰ্ৱিভাৱ ঘটিল। এই

জোনাকীৰ মাধ্যমেৰেই পহিলাই পশ্চিমীয়া সাহিত্যৰ আৰ্হিৰে অসমীয়া সাহিত্যৰ বিভিন্ন দিশ উন্মোচিত হৈ উঠে, সমৃদ্ধিও হয়। সেই দিশসমূহ *'প্ৰকৃতিপ্ৰীতি, সুন্দৰৰ লগত বিস্ময়ভাৱৰ সংযোগ, ভৌতিকবাদ, সাহিত্যত উদাৱপ্ৰাণতা, সাধাৰণ প্ৰাণী বা বস্তুত অসাধাৰণ গুণ আৰোপ, অতীতলৈ আকুল আৰু ভৱিষ্যতলৈ শ্ৰদ্ধাপূৰ্ণ দৃষ্টি, প্ৰেম আৰু সৌন্দৰ্যৰ আৰাধনা, মানসী প্ৰিয়াৰ ৰূপ বৰ্ণনা, প্ৰকৃতিত প্ৰিয়াৰ ৰূপ দৰ্শন, বাস্তৱ বিমুখতা, কল্পনালোকৰ সহায়ত আত্মমুক্তিৰ চেষ্টা বা পলায়নবাদ, আৱৰ্জনাময় পুৰণিক ভাঙি শৃংখলাপূৰ্ণ নতুনক সৃষ্টি কৰাৰ প্ৰচেষ্টা, কাহিনীগীতি (ballad) ৰচনাৰ প্ৰচেষ্টা, নতুন ছন্দ পৰীক্ষা আদি ৰোমান্টিক সাহিত্যৰ ঘাই লক্ষণ।"* (অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত, পৃ-২১২-২১৩) অসমীয়া ছাত্ৰ সাহিত্য সভা (১৮৭২, Assamese Students Literary Club, ASL Club) আৰু অসমীয়া ছাত্ৰৰ সভা (Assamese Student Society) ৰ পিচতে অসমীয়া সাহিত্যৰ ন-ন দিশে পত্ৰে-পুষ্পে বিয়পিব ধৰা অনুষ্ঠান জোনাকীসকলে উলিওৱা মাহেকীয়া কাকত জোনাকী আছিল অসমীয়া ভাষাৰ উন্নতি সাধিনী সভা (অ.ভা.উ.সা.সভা) ৰ মুখপত্ৰ। চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালা (১৮৪৬) ৰ পিছতে দ্বিতীয় সম্পাদক আছিল ফুলৰ চাকিৰ কবি হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী (১৮৭২)। পৰৱৰ্তী সময়ত আন আন জোনাকীলৈ এই দায়িত্ব পালন কৰিবলৈ আহে। জোনাকী কাকতখন গুৱাহাটীৰ পৰাও ওলায়। ইয়াৰ সম্পাদকদ্বয় আছিল 'বহল ব্যাকৰণ'ৰ প্ৰণেতা সত্যনাথ বৰা (১৮৬০) আৰু আৰ্লি হিষ্টৰী অব কামৰূপ (Early history of Kamrupa,1993) গ্ৰন্থৰ প্ৰণেতা কনকলাল বৰুৱা (১৮৭২)। এই যুগসৃষ্টিমুখী কাকততে চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ 'বনকুৱৰী' কবিতা প্ৰকাশিত হৈছে, যিটো কবিতা ৰোমান্টিক কাব্য-পৰিক্ৰমাৰ প্ৰথম কবিতাৰ আসন শুৱনি কৰিলে। কাকতখনৰ আন এজন পুৰোধা ৰসৰাজ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই 'লিতিকাই' নাটক (প্ৰহসন) ৰ মাধ্যমেৰে প্ৰথম সাহিত্য সৃষ্টিত হাত উজান দিয়ে আৰু কৃপাবৰ বৰুৱাৰ কাকতৰ টোপোলা (ৰসৰ ভঁৰাল) শিতানটি শুভাৰম্ভ কৰে। অসমৰ কলিকতিয়া ডেকাৰ অশেষ শ্ৰম অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ লগতে বিকাশত জোনাকীৰ কাকতৰ সৈতে জড়িত সকলোৰে অৱদান উল্লেখযোগ্য। ইংৰাজী ৰোমান্টিক কবিসকলৰ প্ৰকৃতিপ্ৰীতি অসমীয়া কবিৰ প্ৰতিতাত ইয়াৰ প্ৰতিধ্বনি, সাদৃশ্য আদিও দেখা যায়। *"ৰোমান্টিকভাৱৰ কবিসকলৰ কবিতাত মূৰ্ত হৈ উঠিছিল সান্ধ্যসমীৰৰ শীতলতা, বিশাল সাগৰৰ গভীৰতা, বিকশিত কুসুমৰ অনাবিল কোমলতা, সুদূৰ নিঃসংগ তৰাৰ সংগীতময়তা, অনাখৰী গ্ৰাম্যজীৱনৰ শান্ত শোভা, মৃত অতীতৰ ম্লান সৌন্দৰ্য, ব্যৰ্থ প্ৰেমিকৰ কৰুণ ক্ৰন্দন, ফুল-ফল-পখী, মঞ্জুৰী-পল্লৱ-মহীৰুহ, ঊষা, সন্ধ্যা, দ্বিপ্ৰহৰ, গ্ৰীষ্ম, বৰ্ষা, শৰৎ, হেমন্ত, শীত, বসন্তৰ বৰ্ণনাৰে ৰূপ, ৰস, গন্ধ, স্পৰ্শ গীতৰ সাড়ম্বৰ সমাবেশ।"* (উৎস-লীলা গগৈ,সম্পাদক, শুৱালকুছি বাৰ্ষিকী, পৃ-১৩৮) অসমৰ প্ৰায়সংখ্যক কবিয়ে এই সময়ৰ বিশেষকৈ প্ৰভাৱিত হৈছিল। এই প্ৰভাৱ আছিল ইউনাইটেড কিংডম (United Kingdom)ৰ ব্ৰিটিছ সমালোচক, এন্থোলজিষ্ট (Anthologist) আৰু কবি (Francis Turner Palgrave) ফ্ৰান্সিছ টাৰ্ণাৰ পালগ্ৰেভ (১৮২৪-১৮৯৭) ৰচনা Golden Treasury, 1861)ৰ। পেলগ্ৰেভৰ আন আন গ্ৰন্থসমূহৰ ভিতৰত-The Treasury of Sacred Song (1889), Landscap in Poetry from Homer to T ennyson, with Many IIlustrative Examples (1897) , The Children s Treasury o f Lyrical Poetry (1875) The Golden Treasury of the Best Songs and Lyrical Poems (1895) Etc.

লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱায়ো পেলগ্ৰেভৰ Golden Treasuryৰ প্ৰতি আনুগত্য যদিও আছিল কৃপাবৰী ৰচনাৰ যোগেদি যে নব্যচিন্তাৰ উন্মেষ ঘটাইছিল সেই কথা ড° বসন্ত কুমাৰ গোস্বামীয়ে ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ৰ অসমীয়া বিভাগত সাহিত্যৰথী লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা আসনৰ উদ্যোগত আয়োজিত বক্তৃতা বিষয়-বেজবৰুৱাৰ ৰচনাত জাতীয় চেতনা-শীৰ্ষকত তুলি ধৰা কথাষাৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ । তেওঁ তুলি ধৰা কথাষাৰ এনেধৰণৰ— *"আজিকালি কবি আপোন গুণে কবি হয় নে বিষয় গুণে কবি হয়। বিষয় গুণহে। ফুল, ফুলনি মলয়া, কপৌ, চন্দ্ৰ, পদুম, ভেট প্ৰভৃতি কিছুমান বিষয় আছে যি নিজ গুণেই কবিতা। বাৰু তুমি যদি সঁচাসচিকৈয়েই কবি তেন্তে বিলাতী কবি পোপৰ দৰে তেহ শহাপহুৰ বিষয়ে কবিতা লিখি ওপৰত কোৱা ওঠৰতা ৰসৰ নিচিনা কবিতা লিখি ৰসৰোওৱাচোন চাওঁ ? সৰু কথাত ডাঙৰ ভাৱৰ পয়দা কৰিব যি সিহে কবি।"* (বেজবৰুৱাৰ ৰচনাত জাতীয় চেতনা-পৃ-১৭)

জোনাকী প্ৰকাশৰ পৰা চলি আছিল। এই সময়েই অসমীয়া সাহিত্যৰ জোনাকী যুগ (*Jonaki Era*) অৰ্থাৎ ৰোমান্টিক যুগ-১৮৮৯-১৯১৩, পণ্ডিত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ

যুগ বিভাজন অনুসৰি) (*Romantic Era*) বুলিও কোৱা হয়। বিশিষ্ট সাহিত্যিক তথা মিতভাষৰ শ্ৰষ্টা ড° নগেন শইকীয়াদেৱৰ এটি মন্তব্য প্ৰণিধানযোগ্য—

*" জোনাকী এখন কেৱল আলোচনী নহয়, ই এটা যুগ, এটা আন্দোলন, এটা সাহিত্যিক ব্যক্তিত্ব। আদুনিক অসমীয়া মনৰ বৌদ্ধিক আৰু সৃষ্টিশীল জাগৰণৰ 'জোনাকী'য়েই সংঘটন কৰিলে। "নতুন প্ৰাণৰ ন-চকু যুৰি"ত নতুন দীপ্তি লৈ আধুনিক অসমীয়া মনে নিজৰ জীৱনক আৰু সামগ্ৰিকভাৱে সমষ্টিগত জীবন আৰু বিশ্বক ন-কৈ চাবলৈ শিকিলে জোনাকীৰ মাজেদিয়েই"।* (জোনাকী, শইকীয়া, নগেন, ভূমিকা, ।। এক।।)

দীঘলীয়া বৰ্ণনাত্মক, গীতিকবিতা বা খণ্ড কবিতাৰ উন্মেষ হোৱা যুগটোত প্ৰকৃতিপ্ৰীতি, গ্ৰাম্যপ্ৰীতি, অতিপ্ৰাকৃতৰ দিশ, পৰম্পৰাগত ছন্দ পৰিহাৰ, স্বদেশভাৱ, প্ৰেম, ৰহস্য, মানৱতা ইত্যাদি দিশৰ ভিতৰত আমাৰ আলোচনাই জোনাকী কাকতৰেই ৰোমান্টিক যুগৰ প্ৰথম তৰংগৰ কবি অৰ্থাৎ জোনাকী যুগৰ ত্ৰিমূৰ্তি ৰূপে খ্যাত কবিকেইগৰাকীৰ কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব। তাৰ আগতে ইংৰাজ প্ৰকৃতি কবিকেইগৰাকীৰ যিকেইগৰাকীৰ প্ৰভাৱ ৰোমান্টিক ভাৱধাৰা বা ৰোমান্টিক (অসমীয়া জোনাকী) কাব্য আন্দোলনত পৰিছিল। সেই কেওগৰাকীৰ চমু পৰিচয়ো প্ৰাক্‌স্থানত তুলি ধৰা হৈছে ।

**জোনাকী যুগৰ ত্ৰিমূৰ্তিৰ কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰ ঃ**

জোনাকী যুগক লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা, হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী আৰু চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাই সমৃদ্ধি প্ৰদানত বিশেষ ভূমিকা লৈছিল। সাহিত্য বিভিন্ন শাখাত তেওঁবিলাকৰ ভূমিকাৰ বিষয়ে আলোচনালৈ নগৈ মাত্ৰ অসমীয়া কবিতা য'ত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ প্ৰকাশিত হৈছে সেয়া গৱেষণা পত্ৰখনত সামৰা হৈছে।

**লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ কবিতাত প্ৰকৃতিচিত্ৰণ ঃ**

**লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা (১৮৬৪-১৯৩৮) ৰ চমু পৰিচয়**

*'দৰাচলতে বেজবৰুৱাৰ প্ৰকৃত কবিমানসত সৃষ্টি হোৱা ৰসসঞ্চাৰী কবিতাখিনি ইংৰাজ কবি চেম্পিয়ন (Campion), হেৰিক (Herick), বাৰ্ণছ (Burns), ৱৰ্ডছ্ৱৰ্ড (Wordssworth), শ্বেলী (Shelley) আদিৰ কবিতাৰ ভাৱ আৰু চিত্ৰক আত্মগত কবি বুকুৰ উমনি দি, অসমীয়া পৰিৱেশত দ্বিজত্ব দান কৰিছে।'* (সত্যেন্দ্ৰনাথ শৰ্মা, অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, পৃ-২৯১)। ৰোমান্টিক এই কবি শ্যেলীৰ *'Love's Philosophy'* সৈতে বেজবৰুৱাৰ 'চুমা' ৰ সাদৃশ্যও মন কৰিবলগীয়া। এক বৃহৎ জাতীয় পণ লৈ যুগান্তৰকাৰী সাহিত্য আন্দোলন তথা জোনাকীৰ ত্ৰিমূৰ্তিৰ অথবা ৰোমান্টিক (*Romantic*) কাব্য আন্দোলনৰ এগৰাকী কবি ৰসৰাজ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা। যিয়ে *"কবিতা হয় যদি হওঁক, নহয় যদি নহওঁক"* বুলি ঘোষণা কৰিছিল। কদমকলি (১৯১৩), পদুমকলি (১৯৬৮) তেওঁৰ কবিতাপুথি। সাহিত্যৰ বিভিন্ন দিশত হাত উজান অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল ভৰাই তুলি বাঁহী (১৯০৯-১৯২৯) কাকতত লেখক এদল গঢ়ি তোলে আৰু সেই কাকত সম্পাদনা কৰা কবিয়ে 'সন্ধ্যা' আৰু ' মৃত্যুশয্যা' কবিতাৰে আসাম বন্ধু (১৮৮৫) আলোচনীত শব্দশিল্পৰ পোখা মেলে। জোনাকী কাকতৰ অন্যতম প্ৰতিষ্ঠাপক হোতাগৰাকী এহাতে ব্যৱসায় চম্ভালি আনহাতে অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰৱপীৰাত উঠি হাড়ে-হিমজুৱে ৰৱঙণি দি যোৱা কবিৰ কবিতাত লোকগীতৰ প্ৰভাৱ, পুৰাকথাৰ চৰিত্ৰ, অতীত গুণ-গান, গৰিমা, স্বদেশানুৰাগ, বেদনাবিদ্ধৃত ইত্যাদি দিশ প্ৰকাশিত হৈছে। লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা, চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালা আৰু যতীন্দ্ৰনাথ দুৱৰাৰ কথোপকথনত কাব্যিক চৰ্চাৰ এটি প্ৰসংগলৈ আঙুলিয়াব বিচাৰিছোঁ। সেই প্ৰসংগ এনেধৰণৰ- লক্ষ্মীনাথৰ পৰা যতীন্দ্ৰনাথ দুৱৰা আৰু চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাই কবিতা উলিয়াব বিচৰাৰ তৰ্ক। তাত কোৱা বেজবৰুৱা আৰু চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ কথোপকথনৰ অংশ তুলি ধৰা হ'ল—

*"....লক্ষ্মীনাথ—"নাই, লিখিবলৈ একো নাই নহয়। কি দিম?" এইযাৰ কৈয়েই যতীন্দ্ৰনাথ 'বীণ-বৰাগী' কবিতাটি দিলে। যতীন্দ্ৰনাথে স্পষ্টকৈ মন্তব্য কৰিছে এইদৰে - "অসমীয়া ভাষাত আজিলৈকে মই এনে কবিতা পঢ়া নাই।"*

*শেষত চন্দ্ৰকুমাৰৰ এযাৰ কৈছে এইদৰে-"এৰা, এইটো এটা ওখ খাপৰ কবিতা। হেৰা, কিটিপ জানিলে সকলো হয়।"* (বেজবৰুৱা-বিমৃশা, পৃ- ২৬)

**লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ ঃ**

*'...লক্ষ্মীনাথ নিজে সাহিত্যৰথী বা ৰসৰাজ নহওঁক, মনস্বিতা আৰু মণিষাৰে অসমৰ এটা যুগৰ ৰূপ নিৰ্ণয় কৰি সেই যুগৰ নায়কৰূপে পাদশাতিকা জুৰি বিৰাজ কৰিছিল। এই কাৰণেই নাটক, উপন্যাস, কবিতা, চুটিগল্প আদি অসমীয়া সাহিত্যৰ বিবিধ ক্ষেত্ৰত কোনোজন সাহিত্যিকে লক্ষ্মীনাথক অতিক্ৰম কৰি গ'লেও, লক্ষ্মীনাথৰে সৈতে তেনে সাহিত্যিকৰ তুলনা নহয়- সমগ্ৰ অসমীয়া জাতিৰ মানসিক আলোড়ন আৰু নৱজাগৰণৰ ক্ষেত্ৰলৈকে ই সম্প্ৰসাৰিত" আমুখ', .০৮) কবিতা সম্পৰ্কে বেজবৰুৱাই "কবিতা হয় যদি হওঁক, নহয়*

*যদি নহওঁক বুলি মাজে সময়ে লিখা পদ্যবোৰ গোটাই একে ঠাই কৰি এই কিতাপখন কৰা হল, কবি হ'ৰ দুৰাশা কৰি নহয়।" (লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ সাহিত্য প্রতিভা, বিশ্বনাৰায়ণ শাস্ত্রী, পৃ-১৭৭) বুলি মন্তব্য কৰিছিল।*

**লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ কেইটিমান কবিতাত দেখা পোৱা প্রকৃতি চিত্রণ ঃ**

**ভ্রম ঃ**

লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ কবিতাত প্রকৃতি মূর্ত হৈ উঠিছে। যিয়ে কোমল সৌন্দর্য সৃষ্টিত অৰিহণা দি আহিছে। প্রকৃতিত মন্ত্রমুগ্ধ কবিয়ে সৌন্দর্যবর্ধক দিশ কবিতাত অংকন কৰে। ভ্রম কবিতাত প্রকৃতিৰ চিত্রণ দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে-

"কোনে কয় সেয়া বাঁহী বাজে বুলি
বনদেৱী গীত গায়,
শেৱালীৰ মালা নহয় এই ধাৰ তৰাৰে গুঠিছে সাৰ।
কোনে কয় সিটি হৰিণা পোৱালী?
ইমান চেতনা নাই,
বনৰ সৌন্দর্যই ৰূপ ধৰি আহি
দেও দি দুবৰি খায়।" (সঞ্চয়ন, পৃষ্ঠা-২০৮)

**বীণ-বৰাগী ঃ**

লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ অন্যতম সৃষ্টি বীণ-বৰাগী। কবিতাটিৰ সম্পর্কে প্রখ্যাত সমালোচক ড° হীৰেন গোহাঁইদেৱে কৈছিল- *"...এই কবিতাটিত তেওঁৰ মনত সহাৱস্থান কৰা বিভিন্ন ভাবধাৰা ঐক্যতানৰূপে সংহত হৈছে। সেয়ে কবিতা হিচাপেও তাৰ গাঁথনি জটিল, সূক্ষ্মৈ আৰু বিস্ময়কৰভাৱে গাঢ়।...কবিতাটো ৫ টা খণ্ডত সম্পূর্ণ হৈছে। প্রতিটো খণ্ডতে একোটা নতুন ভাৱ মূর্ত হৈছে।...* ( হীৰেন গোহাঁই নির্বাচিত সমালোচনা, পৃ- ১৬৪-১৬৭)

'বীণ -বৰাগী' কবিতাটিৰ সামৰণিয়ে এক মহত্ব (Sublimity-The Quality or State of being sublime, something sublime or exalted, https//www.merriam-webster.com) ৰো আৰ্হি দেখুৱাই। তেওঁৰ এইটো এটি গুৰুত্বপূর্ণ কবিতা। কবিক বীণে সংগীতময় স্পন্দনত সাৰ-পানী যোগোৱা কবিতাটিত চোতাল, দিন দুপৰ এইসমূহ চিত্রণে প্রকৃতিৰ চিটিকনি স্পষ্ট হৈ আছে। কবিতাটিত কবিয়ে কৈছে-

" দিন দুপৰত, আগ-চোতালত, কোনে বা বজাইছে বীণ।
কিনো গীত গায়, কিনো কথা কয়, উজাৰি লুকুৱা চিন।
বুজোঁ বুজোঁ কৰোঁ, বুজিব নোৱাৰোঁ, ক'ৰে ঐ বৰাগী তই
কি দুখৰ কথা, কি শোক বাৰতা কি কৈছ নুবুজো মই। ( ভাষা-সাহিত্যৰ সমীক্ষণ, পৃ-৯৭)

**চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালাৰ কবিতাত প্রকৃতি চিত্রণ ঃ**

**চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালাৰ চমু পৰিচয় ঃ**

অসমৰ সাহিত্যৰ ক্ষেত্রখন আলোচনীকেন্দ্রিক। কিন্তু ইয়াৰ পূর্বতে আলোচনীয়েই নাছিল যদিও সাহিত্য আছিল। অৰুণোদয়ৰ সমসাময়িক আলোচনীসমূহ বিভিন্ন ধৰণেৰে প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰি অহাৰ দৰে ইয়াৰ যোগেদি সৃষ্টি যুগসমূহেও প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰি আহিছে। তেনে এটি যুগ জোনাকী যুগ (*Junaki Era]*। ইয়াক ৰোমান্টিক যুগ *[Romantic Era]* বুলিও কোৱা হয়। ৰোমান্টিকিচিজিমৰ পহিলা হোতা তথা জোনাকী যুগৰ ত্রিমূর্তিৰ প্রথমজনাই চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালা। *"..চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালাৰ কবিতা জোনাকীৰ পাততে আত্মপ্রকাশ কৰিয়েই অসমীয়া কবিতাক বয়ঃপ্রাপ্ত কৰি তুলিলে। তেওঁৰ কবিতাৰ মাজত প্রকাশিত গভীৰ সৌন্দর্য-চেতনা, মানৱিকতাবোধ আৰু অন্তৰ্মুখিতাই আধুনিক অসমীয়া কবিতাক নতুন আয়তন দান কৰিলে। তদুপৰি তেওঁৰ কবিতাৰ শব্দচয়ন, চিত্রকল্প, উপমা আদিয়ে জড়তা ভাঙি কবিতাৰ এটি নতুন ৰূপ প্রতিষ্ঠা কৰিলে। এনে ধৰণৰ নতুনত্ব স্থাপন কৰিলেও তেওঁৰ কবিতাৰ মাজত লোকজীৱন, লোক-সংস্কৃতি আৰু ঐতিহ্যৰ অৱস্থিতিৰ সহজ প্রকাশ ঘটিছিল। গভীৰ আন্তৰিক ব্যক্তিনিষ্ঠ ৰূপৰ লগত অসমীয়া কবিতাৰ পাঠকৰ নতুন পৰিচয় স্থাপনৰ বাট মোকলাই দিলে চন্দ্রকুমাৰৰ কবিতাই।"* (নগেন শইকীয়া, জোনাকী ঃ ভূমিকা, পৃ-০.৪২) তেওঁ অসমীয়া সাহিত্যত গীতি কবিতাৰ প্রর্বতক। জোনাকী কাকতৰ প্রথমজন সম্পাদক। ইংৰাজী ৰোমান্টিক থূলৰ কবি কলেৰি'জ (২১ অক্তোবৰ, ১৭৭২- ২৫ জুলাই, ১৮৩৪) ৰ দৰে অতিভৌতিক (Supernatural- Existing or occuring outside the normal experience or knoweledge of man, not explainable by the known forces oa laws of nature, specific, of, involving, or atributed to god or a god. yoursictionary.com], প্রকৃতি চিত্রণ, পুনৰনির্মাণ [Reconstruction] ইত্যাদি বৈশিষ্ট্যৰে সমৃদ্ধ। প্রতিমা (১৯১৩) (প্রতিমাখন সৰু কিন্তু নিভাঁজ সোণৰ, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই কৈছিল, অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, পৃ-২৮৮) আৰু বীণ-বৰাগী (১৯২৩) আদি তেওঁৰ কবিতাপুথি। চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালাৰ জোনাকী (১৮৮৯)ত প্রকাশিত 'বনকুঁৱৰী' কবিতাটিৰ কথা লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ মনোভাৱ 'মোৰ জীৱন-সোঁৱৰণ"ত আছে। সমসাময়িক

সময় আৰু বেজবৰুৱাই পোষণ কৰা সেই মুহূর্তটো *"যি সকলে আগেয়ে ভাবিছিল যে অসমীয়া ভাষাত বর্তমান কালৰ উপযোগী শুৱলা কবিতা (Poem) লেখিব নোৱাৰি, এই কবিতা পঢ়ি সেইসকলৰ প্ৰান্তিক গ'ল। মনত আছে, এদিন ৰায়বাহাদুৰ জগন্নাথ বৰুৱা বি.এ আৰু মাণিকচন্দ্ৰ বৰুৱাই মোৰ হতুৱাই 'বনকুৱৰী' কবিতাটো পঢ়াই শুনি বিস্ময়-বিমিশ্ৰিত আনন্দ লভিছিল। মই স্পষ্টকৈ বুজিব পাৰিছিলো যে তেওঁলোকে আগেয়ে ভাবিবকে নোৱাৰিছিল যে ৰৰ্ডছৱৰ্থৰ দৰে কবিতাৰ নিচিনা এনে মনোৰম কবিতা এটা কলেজত পঢ়া অসমীয়া ছাতৰ এজনে অসমীয়া ভাষাত ৰচনা কৰিবলৈ পাৰে।' ইয়াৰ পিছত দ্বিতীয় সংখ্যা "জোনাকী" ত শ্ৰদ্ধাস্পদ বন্ধু শ্ৰীযুত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'কাকো আৰু হিয়া নিবিলাও' নামৰ প্ৰেমৰ কবিতা ওলাল"*। (জোনাকী ঃ ভূমিকা, পৃ-.৪২,) বেজবৰুৱা, মোৰ জীৱন সোঁৱৰণ, বেজবৰুৱা গ্ৰন্থাৱলী, পৃ-৪৮)

ৰৰ্ডছ্ৱৰ্থৰ দৰে পোনতে, চন্দ্ৰকুমাৰৰ ভাষা যে অত্যন্ত ঘৰুৱা সৰল আৰু সোৱাদ তেওঁৰ সকলো কবিতাতে ইয়াৰ প্ৰমাণ পোৱা যায়। দ্বিতীয়তে, ৰৰ্ডছ্ৱৰ্থৰ দৰেই প্ৰকৃতিৰ লগত এওঁৰ সম্পৰ্ক পোনপটীয়া, আওপকীয়া নহয়, এওঁৰ অনুপম ' ফুলা সৰিয়হ ডৰা', 'নিয়ৰ' আদিয়েই তাৰ উদাহৱণঃ

"মুকুতা মণিটি পাহিত জিলিকে
ফটিক পানীত ধোৱা,
নিশাৰ তৰা এটি সৰিয়েহে আছে
সৰগত টোপনি যোৱা।...
নিয়ৰ কলিৰে শোভে ফুল জুপি
চাইছে ভাবতে ভাহি,
হায়, কি বিষম পেলালি বায়ুৱে
জোকাৰি ফুলৰ পাহি।"

(নতুন পোহৰত অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, পৃ-৩২৭)

**বীণ-বৰাগী ঃ**

*'...এওঁ ইংৰাজ ৰোমান্টিক কবি ৰৰ্ডছ্ৱৰ্ডৰ দৰে প্ৰকৃতিৰ লগত নিবিড় সম্বন্ধ পাতিছে, প্ৰকৃতিৰ সাধাৰণ বস্তুতো অসাধাৰণ ৰূপ দেখা পাইছে '*(অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত, পৃ-২১৩)। ইংৰাজী ৰোমান্টিক কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণত ৰৰ্ডছ্ৱৰ্থ (১৭৭০-৭ এপ্ৰিল-১৮৫০ ২৩ এপ্ৰিল) ৰ অৱদান উল্লেখযোগ্য। বীণ-বৰাগী কাব্যত ৰুচো (*Rossue*) ৰ প্ৰকৃতি দৰ্শন আৰু হাৰফৰ্ড (*Herford*) ৰ "*Extra ordinary development of imaginative Sensibility* " ৰ বিকাশ ঘটা অসমীয়া ৰোমান্টিক অৰ্থাৎ জোনাকী যুগৰ কবি চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ কবিতাটো প্ৰকৃতিৰ সাধাৰণ বস্তুটো কবিয়ে নিবিড় সম্বন্ধৰে অসাধাৰণত্ব দেখা পাইছে।

সেয়েহে কবিয়ে কৈছে-

" মুকুতা মণিটি পাহিত জিলিকে ফটিক পানীত ধুৱা,
নিশাৰ তৰা এটি সৰিয়েহে আছে সৰগত
টোপনি যোৱা।" (অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত, পৃ-২১৩)

বনকুৱৰী কবিতা যিটো ৰোমান্টিক কাব্য আন্দোলনৰ প্ৰথম কবিতা। প্ৰকৃতিৰ অপৰূপ শোভা প্ৰকাশিত হোৱা কবিতাটিত কবিয়ে কৈছে-

" জুৰ জুৰ বতাহ বইছেবাঁহৰ মাজে মাজে ঘুৰে।
পাতে পাতে কিবা ফুচ্ ফচাইছে
মাৰিছে মিচিকি হাঁহি (সম্পূর্ণ অসমীয়া কবিতা, পৃ-৭৭ , পংকজ গোবিন্দ মেধি)

**বীণ-বৰাগী ঃ**

' আধুনিক কবিতাৰ প্ৰথম স্তৰৰ ' প্ৰভাতী কণ্ঠস্বৰ' (আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ তিনিটা স্তৰ, পৃ-৩৪) চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ প্ৰকৃতি চিত্ৰণৰ এটি কবিতা বীণ-বৰাগী। কবিতাটিত প্ৰকাশিত সৌন্দৰ্যৰ দিশটো '*অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*" গ্ৰন্থত ড সত্যেন্দ্ৰ নাথ শৰ্মাই কৈছে- *"বীণ-বৰাগীত কবিৰ দৃষ্টি বহি ঃ সৌন্দৰ্যতকৈ অন্তৰৰ সৌন্দৰ্যৰ প্ৰতিহে নিবন্ধ হৈছে। 'প্ৰতিমা'ৰ ফুলা সৰিয়হ ডৰা, পখিলা বা ফুলৰ চাৰিওফালে গুণগুণাই ফুৰা ভোমোৰা বা নিয়ৰৰ টোপালে কবিৰ মন যেনেকৈ আকৃষ্ট আৰু আপ্লুত কৰিছে 'বীণ-বৰাগী' ত অধিক অন্তৰ্মুখী হৈ আনন্দতীৰ্থৰ পথত আগবাঢ়িছে আৰু মানুহৰ আপাত দানৱৰূপৰ অন্তৰালত প্ৰকৃত দেৱৰূপৰ সন্ধান পাইছে আৰু মুকলি মনৰ মানৱ মূৰ্তিৰ অকলঙ্ক মধুৰিমা দেখা পাইছে।"*

(অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, পৃ-২৮৮)

কৃপাবৰ অৰ্থাৎ বেজবৰুৱাই চন্দ্ৰকুমাৰৰ বিয়াৰ উপলক্ষে কবিতা লিখিছিল—

"কেৰকেৰ কেৰকোচ ব'ৰাগী ভটিয়াই গ'ল
ধনশিৰা মুখতে ৰ'ল
ব'ৰাগীনীক লগপাই আমাৰ বৰাগীকাই যোল্ল কনীয়াটো হ'ল" ।

(বীণ ব'ৰাগী, নগেন শইকীয়াৰ চন্দ্ৰকুমাৰৰ কবিতা সমগ্ৰ চন্দ্ৰকুমাৰৰ কবিতা নামৰ অংশৰ পৰা, পৃ-১১)

বীণ-বৰাগী সংসাৰৰ মায়াজালৰ পৰা মুক্ত। মানুহৰ সত্তাক কবিসকলে জুমি জুমি চোৱাৰ দৰেই আগৰৱালাদেৱেও জুমি চাবলৈ প্ৰকৃতিৰ আশ্ৰয় লৈছে। প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ ৰোমান্টিক কাব্য ভাৱনাৰ অন্যতম বৈশিষ্ট্য।

**তেজীমলা ঃ**

তেজ-মঙহৰ ছোৱালী তেজীমলা। মাহীমাকৰ অনেক যন্ত্ৰণা সহ্য কৰিও প্ৰকৃতিৰ তুলাচনীত জী উঠিছে বাৰে বাৰে। তাতো নিষ্ঠুৰ মানৱতাৰ লঘু-লাঞ্ছনা। প্ৰকৃতিৰ উদাৰতা ৰোমান্টিক যুগৰ অন্যতম কবি চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ কবিতাটোত প্ৰকাশিত হৈছে। এই উদাৰতাৰ কথা ক'বলৈ কবিয়ে স্পষ্টকৈ কৈ পেলাইছে---

" মানুহে মানুহে ইমানহে মৰম
চকুলো পৰে সঁৱৰি।
মানুহৰ চোতালত মাধুৰী ফুলিলে
মানুহে নিচিনা হায়।
সাৰি ছিণ্ডি মোহাৰি পেলালে
মানুহৰ মৰমো নাই।
(ৰাজীৱ বৰা, বিন্দুৰ পৰা সিন্ধুলৈ, পৃ-১৯৭)

কবিয়ে প্ৰকৃতিৰ জগতত তেজীমলাক নতুনকৈ চোৱাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। দুৰাচাৰী মানুহৰ কাষৰৰ পৰা তেজীমলাক আঁতৰাই যিমানে পঠিয়াইছে তেজীমলা যেন পুনৰ চোতালতে ফলে ফুলে ৰূপে ৰঙে জাতিস্কাৰ হৈ পৰিছে। মানুহো উদাৰ থাকে প্ৰকৃতিৰ এই উদাৰতা অসামান্য। সেইবাবে প্ৰকৃতিৰ বুকুত জিৰণি লোৱা তেজীমলাক কবিয়ে মানুহৰ যন্ত্ৰণাৰ পৰা নিলগাই থৈ সুখ পোৱা দেখিছে। নিস্বাৰ্থ প্ৰকৃতিৰ বুকুত যেন তেজীমলাই মৰম চেনেহ সকলো পাইছে। তেজীমলাৰ জকমক থকা চিত্ৰকলা সম্বলিত কবিতাটিত কবিয়ে মুকলিকৈ প্ৰকৃতিৰ উদাৰ বুকুখন দেখুৱাইছে—

" মানুহে কুটুমে দলিয়াই পেলালে
কাকনো কুটুন পালি,
মৰম বেথাৰে আজলি-কুঁৱৰী
আটাইকে নিজা কৰিলি।
তোৰে পানীৰ চৰাই সাঁতুৰি ফুৰিছে
কতো বা উৰিছে বনাই
মলয়া বায়ুৰে মিতিৰ পাতিলি
ঘৰৰহে বাতৰি নাই।"
(বিন্দুৰ পৰা সিন্ধুলৈ, পৃ-১৯৬)

**প্ৰকৃতি ঃ**

চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাৰ 'প্ৰকৃতি' নামৰ কবিতাত প্ৰকৃতিৰ, প্ৰকৃতিৰ ৰহস্য, মনোমোহা অংগ ফুল, ফুলৰ কলি, প্ৰকৃতি জগতত থকা ভোনভোনাই ফুলৰ মৌ চুহি খোৱা ভোমোৱা আদিৰ ছবি দেখা যায়। কবিয়ে কবিতাটিত কৈছে—

" ফুল কলি ফুলি গোন্ধ
ৰোৱাই প্ৰীতিৰ সোঁত
সৰি পাছে নাইকীয়া হ'ল।
যি ফুলৰ মউ-পিয়া
এটা ভোমোৱা বলিয়া
ঘূৰি ঘূৰি ফুৰিছে অকলে। "
(চন্দ্ৰকুমাৰৰ কবিতা সমগ্ৰ, নগেন শইকীয়া, পৃ-১৪)
কোন দেশৰ প্ৰাণী তুমি

চন্দ্ৰ কুমাৰৰ বীণ বৰাগী আৰু অন্যান্য কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ সম্পূৰ্ণৰূপত উদ্ভাসিত হৈ উঠিছে। কবিৰ প্ৰকৃতি জগতৰ কাল্পনিক চিত্ৰণৰ লগতে প্ৰকৃতিৰ এক সুন্দৰ চিত্ৰ মানুহৰ মন মগজুত সৌন্দৰ্যময় ক্ৰিয়া কৰিব পৰাকৈ অংকন কৰিছে. কবিয়ে কবিতাটিৰ এঠাইত কৈছিল—

"আগলি পাতত বহি তুমি
ৰ'দ কাঁচলি লোৱা
ফুলৰ পাহিত আসন পাতি
ফুলৰ মৌ খোৱা।" (চন্দ্ৰকুমাৰৰ কবিতা সমগ্ৰ, নগেন শইকীয়া, পৃ-১০১)

**হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ (১৮৭২-১৯২৮) কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ ঃ**

ইউৰোপৰ এগৰাকী বিখ্যাত কবি আছিল ডান্টে অলিগিয়াৰি (Dante Alighieri, 1265-1321)। তেওঁৰ চনেট কবিতাৰ পেট্ৰাৰ্কে (Francesco Petrarca 1304-1373) বিকশিত কৰে। অসমীয়া জাতিক আৱিস্কাৰৰ বাবে অহোপুৰুষাৰ্থ কৰা হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী প্ৰথম অসমীয়া চতুৰ্দ্দপদী কবিতাৰ জনক হিচাপে পৰিচিত। জোনাকীৰ অন্যতম প্ৰতিষ্ঠাপক তথা জোনাকীৰ ত্ৰিমূৰ্তিৰ এজন। এই জোনাকী বা ৰোমান্টিক যুগৰ কবি যিজনে *'পেট্ৰাকীয় ছনেটৰ ভাৱৰ স্তৱ বিভাগ আৰু অত্যানুপ্ৰাসৰ মিলৰ ৰীতি* (Rhyme-scheme) *গোস্বামীয়ে ছনেটত অনুসৰণ কৰিছে'* (অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, পৃ-২৯৩) সেইগৰাকী (১৮৮৯-১৯১৩, পণ্ডিত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ যুগ বিভাজন অনুসৰি) হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীক হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ ৰচনাৱলীৰ আগকথাত সম্পাদক ৰেণুধৰ শৰ্মাই অসমীয়া সাহিত্যৰ পৰমাচাৰ্য্য বুলি

কৈছে। তেওঁ তাৎপর্যপূর্ণকৈ লিখিছে— *'আমি যিসকল অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ অধ্যাপক আছিলোঁ বা আছোহঁক, সৰহ ক্ষেত্ৰত ঁ হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ " অসমীয়া সাহিত্যৰ চানেকি", হাতেলিখা পুথিৰ বৰ্ণনাত্মক সূচী আৰু সংগ্ৰহ, তাম্ৰশাসন শিলালিপিৰ পাঠ আৰু আন প্ৰবন্ধবিলাকত ভৰ নিদিলে আমাৰ কাম নিসিজে। পুৰণি পুথিৰ সংগ্ৰহ আৰু সম্ভেদৰ সম্পদখিনি একাষৰীয়া কৰিলে ভঁড়াল উদি নহলেও তলি ওলাই নিচলা হৈ পৰিব। অসমীয়া ভাষা আৰু সাহিত্যক কলিকতা বিশ্ববিদ্যালয়ে বি. এ মহলাৰ পঠনীয় বিষয়ৰূপে স্বীকৃতি দিয়াৰ মূলতে আছিল ঁ হেম গোস্বামীয়ে নেপথ্য ভূমিকাৰে যুগুত কৰা অকাট্য যুক্তিপূৰ্ণ টোকা। এম. এ মহলাত আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা বিভাগত এটা বিকল্প পালি বিষয়ৰূপে অসমীয়া ভাষাক স্থান দিয়াত চাৰ আশুতোষৰ সোঁহাত স্বৰূপে বল দিছিল এইজনা আচাৰ্য্য পুৰুষেই "অসমীয়া সাহিত্যৰ চানেকি"ৰ নিচিনা এখন কল্পতৰু গ্ৰন্থ প্ৰস্তুত কৰি দি। এম. এ শ্ৰেণীৰ আনুসঙ্গিক প্ৰয়োজন বিশ্ববিদ্যালয়ৰ অসমীয়া বিভাগৰ কাৰণে গ্ৰন্থ বাচনি আৰু তাৰ যোগান-ব্যৱস্থাও কৰি দিব লগা হৈছিল তেখেতেই। মুঠতে অসমীয়া সাহিত্যৰ উচ্চতৰ অধ্যয়ন আৰু চৰ্চ্চাৰ তেখেতেই আছিল আদিগুৰু। সেই দেখি কৈছো পণ্ডিত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী অসমীয়া সাহিত্যৰ পৰমাচাৰ্য্য।"*

*তাহানিয়ে তোলা সেই বনফুল কিটি, গাঁথিলোঁ লগাই লগ 'ফুলৰ চাকি'টি, চেনেহ-চানেকি মোৰ লোৱাঁ হাত পাতি, নহলে পৰিব জঁয় আদৰ-মালতী*, (পণ্ডিত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী ৰচনাৱলী) ৰোমান্টিক সাহিত্য যজ্ঞৰ তৃতীয় হোতা তথা চতুদৰ্শপদী কবিতা (Sonnet) ৰ প্ৰথম পথ-পদৰ্শক হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী। তেওঁৰ প্ৰকৃতি নামৰ কবিতাত প্ৰকৃতিৰ মাহাত্ম্য প্ৰকাশ পাইছে। আসাম বন্ধু (১৮৮৫) আৰু জোনাকী (১৮৮৯) ত প্ৰকাশিত ফুলৰ চাকি (১৯০৭) কবিতাপুথি আৰু পুৱা, কাকো আৰু হিয়া নিবিলাও, কাকুতি, প্ৰিয়তমাৰ চিঠি (প্ৰথম অসমীয়া চনেট কবিতা, এই বিষয়ক হিতেশ্বৰৰ বৰবৰুৱাৰ মালচ, ৰঘুনাথ চৌধুৰীৰ নৱমল্লিকা), ধৰা পৰা আদি কবিতাৰে জোনাকী যুগৰ কাব্য পৰিক্ৰমাত বৰঙণি যোগাই গৈছে। ড° হীৰেন গোহাঁইয়ে তেওঁৰ আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যত পাশ্চাত্যত প্ৰভাৱ' শীৰ্ষক প্ৰবন্ধত কৈছে— *'আসাম বন্ধু'ত হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী, ভোলানাথ দাস আদিয়ে প্ৰকৃতিৰ বিচিত্ৰ লীলা খেলা, সৃষ্টিৰ বিচিত্ৰ গৌৰৱ আদি বিষয় লৈ কবিতা লিখিছে (যেনে-'মধুহাঁহি', 'বিজুলি', মেঘ' ইত্যাদি) অৰ্থাৎ ধৰ্মীয় বিষয় এৰি পাৰ্থিৱ জগতৰ সৌন্দৰ্য আৰু ৰহস্যত মনোনিবেশ কৰিছে। ..."* (আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যত পাশ্চাত্য প্ৰভাৱ, পৃ-৯)

**প্ৰিয়তমাৰ চিঠিঃ**

অসমীয়া সাহিত্যৰ প্ৰথম চনেট কবি হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'প্ৰিয়তমাৰ চিঠি'। কবিতাটিত প্ৰকৃতিৰ চোঁ ঘৰত কবিয়ে পিতপিতাই ফুৰিছে। কুকুৰাটেঙীয়া আখৰ লিখিলে যদিও সেই আখৰৰ অৰ্ন্তজগতৰ মোহিনী শক্তি ক'তো নাপালে। কবিতাটিত তেওঁৰ আখৰ কেইটিৰ যি মোহিনী অমিয়া শক্তি প্ৰাকৃতিক চিত্ৰৰ সহায়ত আবেদনশীল কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে—

"কবি -নিকুঞ্জত ফুলি ক'ত কবিতাই,
মলয়াত উটি-উটি ফুৰে পৃথিৱীত,
তোমাৰ চিঠিয়ে কিন্তু জানে যিটি গীত,
কবিতাৰ কাব্যে তাৰ গোন্ধকো নাপায়।
ফুল ফুলে, সৰি যায়, শুকায় বননি,
বসন্তৰ কুঁহিপাত ৰ'দত লেৰেলে,
তোমাৰ চিঠিয়ে প্ৰিয়ে, জানে কি মোহিনী,
নিতৌ নেহোৱা বাহি ন ন ফুল মেলে
যত শুঙ্গো চুমা খাওঁ নেলাগে আমনি,
হৃদয়ত হেঁপাহৰ ভোটাতৰা জ্বলে।" (হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী ৰচনাৱলী, পৃ-৭৩)

আকাশত তৰা, পখীৰ কলকাকলি, গছে-বনে-পাতে, ফুলে-ফলে অংকুৰিত কুঁহিপাত ইত্যাদিয়ে প্ৰকৃতিত যে মেলা পাতিছে। প্ৰকৃতিত থকা অফুৰন্ত সৌন্দৰ্য শক্তিক কবিয়ে অনুভৰ কৰিছে -

পুৱা
" জিলিঙনি এটি আহি পদুমবনত
স্বৰ্গৰ ৰহন সানি ঢালিছে
অকলশৰীয়া দুটি পদুমকলিয়ে
চুমা খাই হালিছে জালিছে " ।
(বিন্দুৰ পৰা সিন্ধুলৈ, পৃ-২১৬)

পুৱা নামৰ *'এই কবিতাটি প্ৰথমতে 'জোনাকী' নামে ওলাইছিল* (হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী ৰচনাৱলী, পৃ-৬৭) পুৱা কবিতাত প্ৰকৃতিৰ ৰহস্য, উত্তাল তংৰগ, প্ৰকৃতিৰ শীতল বায়ু, স্বৰ্গ, আকাশ, ফুল-লতা আদিয়ে ভূমুকি মৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। কবিয়ে কৈছে তলত তুলি ধৰা ধৰণেৰে—

স্বৰ্গৰ বাতৰি পাই অপেক্ষি জোনাক

প্ৰকৃতিৰ উত্তাৱল চিত
বহিছে শীতল বায়ু নাচিছে লতাই
ফুল-কলি হাঁহিছে থুপিত।
( এশ বছৰৰ অসমীয়া কবিতা, পৃ-চ৪০-২৪১)

**এপাহি পদুম ঃ**

হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ এপাহি পদুম' নামৰ কবিতাত প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ দেখা যায়। কবিতাটিত প্ৰকৃতিৰ মলয়া বতাহ, কোমল পদুম পাহি আৰু বিল আদিয়ে প্ৰকৃতি জগতলৈ আঙুলিয়াই দিয়ে। যিসমূহক লৈ বেজবৰুৱাই প্ৰকৃতি জগতৰ অপৰূপ সৌন্দৰ্যত মোহ গৈ প্ৰকৃতিৰ সমলৰে পৰিবেষ্টিত উপাদানক লৈ লিখিছে প্ৰকৃতিৰ কবিতা। কবিয়ে কৈছে তলত তুলি ধৰা ধৰণেৰে -

ক. ফটিক ধাৰ যেন নিজনি বিলত
কোমল পদুম পাহি
কেনেকৈ ভাহিছে
মলয়াত উৰি অহা প্ৰেম গীতটি
একেথৰে শুনি শুনি
কেনেকৈ হাঁহিছে। (হেমচন্দ্ৰ গোস্বামী ৰচনাৱলী, পৃ-৭০)

**উপসংহাৰ ঃ**

আলোচনাটিৰ পৰা আমি কেইটিমান উপসংহাৰ বা সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি। সেইসমূহ এনেধৰণৰ-

(ক) ইংৰাজী ৰোমান্টিক কবিসকলৰ প্ৰকৃতি সম্পৰ্কীয় চমু দৰ্শন, চিত্ৰণ সম্বলিত কবিতাত প্ৰকৃতিৰ চিত্ৰণ প্ৰকাশ পাইছে। সেই সকলৰ আদৰ্শত অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰোমান্টিক যুগৰ কবিসকলৰ কবিতাত প্ৰকৃতি চিত্ৰণ বিভিন্ন ৰূপত মূৰ্ত হৈপৰিছে সেইসমূহ স্পষ্ট কৰাৰ যত্ন কৰা হৈছে।

( খ) কবিৰ তুলিকাত সেইসমূহত প্ৰতীক, চিত্ৰকল্প আৰু শব্দচিন্তনে সজাই পৰাই, সমসাময়িক সাহিত্যৰ কবি প্ৰসিদ্ধিৰ পৰা অনুপ্ৰেৰণা লাভ কৰি অসমৰ প্ৰেক্ষাৰপটত উজ্জ্বল ৰূপত অংকন কৰোঁতে প্ৰকৃতি, বায়ু, জলবায়ু, আকাশ, মাটি ইত্যাদিৰে উপচাই পেলোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে।

(গ) উল্লিখিত তিনিওজন কবিৰে কবিতাত প্ৰকৃতি জগতৰ চিত্ৰ, ফল, ফুল, চৰাই-চিৰিকটি, আকাশ-বতাহ, বিল, মৌ, বন, পানী ইত্যাদি দিশসমূহ প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা গৈছে।

(ঘ) অসমীয়া কবিসকলে পাশ্চাত্যৰ প্ৰকৃতিপ্ৰীতিৰ প্ৰখ্যাত কবি শ্যেলী, কিটছ, বাইৰণ আদিৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈছে, সাদৃশ্যও পৰিলক্ষিত হৈছে।

(ঙ) অসমীয়া ৰোমান্টিক কবিসকলে স্বকীয় দৃষ্টিভংগীৰে প্ৰকৃতি জগতৰ পৰা বুটলি লোৱা সমলসমূহ কল্পনাৰ সংমিশ্ৰণে পাঠকৰ মাজলৈ আগবঢ়াই দিছে। ❑


**সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ**

১. গগৈ, লীলা ,সম্পাদক, শুৱালকুছি বাৰ্ষিকী, অসম সাহিত্য সভা, প্ৰকাশকাল ঃ মাৰ্চ, ১৯৮১, যোৰহাট-৭৮৫০০১
২. গোস্বামী, মালিনী, আহমেদ, কামালুদ্দিন (সম্পাদনা), আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ তিনিটা স্তৰ, পৰিৱেশক, বাণী মন্দিৰ, লাৱণ্য প্ৰকাশন, ডি-৫, উদ্যোগপাম, আমিনগাঁও, গুৱাহাটী, প্ৰথম সংস্কৰণ, জুলাই, ২০০৯ চন।
৩. গোস্বামী, যতীন্দ্ৰনাথ বেজবৰুৱা-বিমৃশা, কৌস্তুভ প্ৰকাশন,প্ৰথম প্ৰকাশ, ৬ নবেম্বৰ, ২০০৬ খ্ৰীষ্টাব্দ, মিলন নগৰ, ডিব্ৰুগড়-৩
৪. দাস, নাৰায়ণ ৰাজবংশী, পৰমানন্দ (সম্পাদক), আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যত পাশ্চাত্য প্ৰভাৱ, তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০০৯, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, মা প্ৰিণ্টার্চ, শিলপুখুৰী, গুৱাহাটী-৩
৫. দত্ত, জয়ন্ত, পৰমাচার্য, দত্ত (সম্পাদক), অফছেট প্ৰিণ্টার্ছ, ঢেকীয়াল তিনিআলি, জানুৱাৰী ২০২২ চন।
৬. নেওগ, ডিম্বেশ্বৰ, নতুন পোহৰত অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, শুৱনী প্ৰকাশ, ষষ্ঠ সংস্কৰণ, ১৯৯৩ চন, গুৱাহাটী, অসম।
৭. নাথ, ভনিতা-(সম্পাদনা)-অসমীয়া কবিতা-ৰামধেনুৰ পৰা সাম্প্ৰতিকলৈ-পূৰ্বায়ণ প্ৰকাশন, প্ৰথম সংস্কৰণ-মে'-২০১৭, বান্ধৱ, যশোৱন্ত ৰোড, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-১
৮. বৰা, মহেন্দ্ৰ, সাহিত্য উপক্ৰমণিকা, নৱম প্ৰকাশ, জুলাই, ২০১৯ চন, বনলতা, পাণবজাৰ গুৱাহাটী-১
৯. বৰুৱা,ভৱেন, আধুনিক যুগৰ কবিতা আৰু দৰ্শনৰ সমস্যা (ড° মহেন্দ্ৰ বৰা স্মাৰক প্ৰথম বক্তৃতা), ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়ৰ অসমীয়া বিভাগ, প্ৰথম প্ৰকাশ, নবেম্বৰ, ২০০৫ চন।
১০. বৰা, মহেন্দ্ৰ , ৰমন্যাসবাদ, বনলতা, নতুন বজাৰ ডিব্ৰুগড়, বনলতা সংস্কৰণ, ১৯৯৫, ডিব্ৰুগড়-৭৮৬০০১
১১. বেজবৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ-মোৰ জীৱন সোঁৱৰণ, বনলতা, মার্চ, ১৯৯৮চন, অসম প্ৰিন্টিং ওৱর্কছ (প্ৰাঃ) লিমিটেড, ডিব্ৰুগড়-১
১২. বেজবৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ-বেজবৰুৱা গ্ৰন্থাৱলী (২য় খণ্ড), গুৱাহাটী, সাহিত্য প্ৰকাশ, প্ৰথম প্ৰকাশ-১৯৯৮ চন।
১৩. বৰা, ৰাজীৱ (সম্পাদনা)- অসমীয়া কবিতা, বিন্দুৰ পৰা সিন্ধুলৈ-পাঞ্চজন্য বুকছ, প্ৰথম প্ৰকাশ-অক্টোবৰ, ২০১৮ চন,সৰস্বতী ৰোড, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-০১
১৪. বৰগোহাঞি, হোমেন (সম্পা.)-অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী (ষষ্ঠখণ্ড), পৰিবর্ধিত সংস্কৰণ, ভবানী অফছেট এণ্ড ইমেইজিং ছিষ্টেমছ,

প্রা.লি.আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা, অসম, তৃতীয় প্রকাশ-২০১৫ চন, উত্তৰ গুৱাহাটী, গুৱাহাটী-৭৮১০৩০
১৫. ভট্টাচার্য,পৰাগ কুমাৰ, আধুনিক সাহিত্য ঃ চিন্তা আৰু সৃষ্টি, এঞ্জেলিকা ইমপ্রিট, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী
১৬. মেধি, পংকজ গোবিন্দ, সম্পূর্ণ অসমীয়া কবিতা, বনলতা, পানবজাৰ, প্রথম সংস্কৰণ, ডিচেম্বৰ-২০১৫, গুৱাহাটী-১
১৭. মহন্ত,, লক্ষ্মীকান্ত , অসমীয়া সাহিত্যৰ অধ্যয়ন, বনলতা, ১৬.১,৯৩
১৮. শর্মা, বেণুধৰ হেমচন্দ্র গোস্বামী ৰচনাৱলী, প্রকাশক শ্রীযতীন্দ্রনাথ গোস্বামী, প্রধান সম্পাদক, অসম সাহিত্য সভা, চন্দ্রকান্ত সন্দিকৈ ভৱন, যোৰহাট-ৰ, নৱজীৱন প্রেছ, প্রকাশ প্রকাশ, ১৯০৭, ৬৬ গ্রে ষ্টীট, কলিকতা-৬।
১৯. শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ, অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, সৌমাৰ প্রকাশ, ৰিহাবাৰী, দশম সংস্কৰণ, পুনৰ মুদ্রণ, জুন, ২০১১ চন, অৰুণোদয় প্রেছ, শিলপুখুৰী, গুৱাহাটী-৩
২০. শর্মা, হেমন্ত- অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত, দ্বাদশ সংস্কৰণ, আগ° ২০১০চন, অজন্টা প্রিন্টাৰচ, ৬১ সূর্যসেন ষ্ট্রীট, কলকাতা-৭০০০০৯
২১. —, অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত, ত্রয়োদশ সংস্কৰণ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১১ চন, বীণা লাইব্রেৰী, অজন্টা প্রিন্টাৰচ, ৬১ সূর্যসেন ষ্ট্রীট, কলকাতা-৭০০০০৯
২২. শইকীয়া, নগেন, চন্দ্রকুমাৰৰ কবিতা সমগ্র, বনলতা, ৬ মে', বুদ্ধ পূর্ণিমা, ১৯৯৩, আশ্রয়, জীৱন ফুকন নগৰ, ডিব্রুগড়. ১৪. ৰৰগোঞি, হোমেন (সম্পাদনা), এশ বছৰৰ অসমীয়া, কবিতা, , অসম প্রকাশন পৰিষদ, পঞ্চম প্রকাশ, ডিচেম্বৰ, ২০১৭ চন, গুৱাহাটী-৭৮১০২১
২৩. শইকীয়া, নগেন (সম্পাদক), একত্র সংকলন, জোনাকী ১৮৮৯-১৮৯৯ আৰু ১৯০১-১৯০৩, অসম সাহিত্য সভা, জানুৱাৰী, ২০০১ চন, জি. এল. মিডিয়া ছাভির্চেজ লিমিটেড প্রেছ।
২৪. শাস্ত্রী, বিশ্বনাৰায়ণ , লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ সাহিত্য প্রতিভা, শৰাইঘাট প্রকাশন,দ্বিতীয় প্রকাশ, অক্টোবৰ, ১৯৯৮, বামুণীমৈদাম, গুৱাহাটী-৭৮১০২১
২৫. সোণোৱাল, কাকলি , (মুখ্য সম্পাদক), ভাষা-সাহিত্যৰ সমীক্ষণ, পূর্বাঞ্চল প্রকাশ, প্রথম প্রকাশ ২০১১ চন, গুৱাহাটী-১
২৬. হাজৰিকা,পৰীক্ষিত, অসমীয়া সাহিত্যৰ সুবাস, চন্দ্র প্রকাশ, প্রথম প্রকাশ, জুলাই ১৯৯৪, গুৱাহাটী-১।
২৭. হাজৰিকা, জ্যোতিৰেখা (সম্পা.)-চন্দ্রকুমাৰ আগৰৱালাৰ বীণ-বৰাগী, বনলতা, প্রথম প্রকাশ মে'-২০০৫ চন, অসম প্রিণ্টিং ৰর্কছ প্রাঃ লিমিটেড, পানবজাৰ, গুৱাহাটী-১
২৮. হাজৰিকা, জ্যোতিৰেখা, বুজৰ্ৱৰুৱা পল্লৱী ডেকা (সম্পা) প্রসঙ্গ ঃ অসমীয়া সাহিত্য আৰু সংস্কৃতি, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১২; , বনলতা, নতুন বজাৰ, ডিব্রুগড়-১

**প্রসংগ-টোকা ঃ ( ইংৰাজী)**

*Selected and arranged by Stopford A Brooke,London,Macmillan and co.1880,'Poems of Nature and Man', p.111.*
*To Autumn,2004,poem Hunter.com-Thehive, World's poetry Arp.199.*
*The treatment of Nature in the poetry of Colridge by Easther Spears Brenton,Butler University,Indianspolis,1934, p.60.*

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

# ঔপনিবেশিক যুগত অসমলৈ অহা পূৰ্ববংগীয় প্ৰব্ৰজনকাৰী সকলৰ পুনৰ সংস্থাপন ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক আলোচনা

বিনয় কুমাৰ নাথ

সহকাৰী প্ৰাধ্যাপক
সন্দিকৈ ছোৱালী মহাবিদ্যালয়
গুৱাহাটী- ১
৯৬৭৮৯৬৩৮৬২
binoy3112@gmail.com

**সাৰাংশ ঃ**

ঔপনিবেশিক কালত অসমৰ ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক আৰু সামাজিক-সাংস্কৃতিক ক্ষেত্ৰত এক আমূল পৰিবৰ্তন আহিছিল। সেই সময়ত বৃটিছ চৰকাৰৰ প্ৰত্যক্ষ সহযোগত পূৰ্ব বংগৰ পৰা হোৱা খেতিয়ক সকলৰ প্ৰব্ৰজনে অসমৰ স্থানীয় লোকক বিভিন্ন ধৰণেৰে প্ৰভাৱ পেলাইছিল। অবিভক্ত গোৱালপাৰা জিলাৰ জমিদাৰ সকলেও আৰম্ভণিতে এই প্ৰব্ৰজনক উৎসাহ যোগাইছিল। নতুনকৈ হোৱা এই প্ৰব্ৰজনে অসমৰ থলুৱা অধিবাসীসকলৰ মাজত প্ৰতিক্ৰিয়াৰ সৃষ্টি কৰিছিল।

চৰকাৰে প্ৰব্ৰজনকাৰী সকলক অনিয়ন্ত্ৰীত ভূমি অধিকাৰত বাধা প্ৰদান কৰি চৰকাৰীভাৱে পুনঃসংস্থাপন দিয়াৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল। ইয়াৰ বাবে বিভিন্ন আঁচনি যেনে- লাইন প্ৰথা, ঔপনিবেশিকৰণ আঁচনি, উন্নয়ন আঁচনি, 'গ্ৰ ম'ৰ ফুড' আঁচনি ইত্যাদি গ্ৰহণ কৰিছিল। এইসমূহ আঁচনিৰ দ্বাৰা থলুৱা লোকৰ সুৰক্ষাৰ কথা কোৱা হৈছিল যদিও দেখা গৈছিল যে অসমৰ বহু পতিত ভূমি আৰু চৰকাৰী সংৰক্ষিত বনাঞ্চল প্ৰব্ৰজনকাৰীসকৰ পুনৰ সংস্থাপনৰ বাবে মুকলি কৰি দিয়া হৈছিল।

**সূচক শব্দ ঃ**

পূৰ্ববংগ, প্ৰব্ৰজনকাৰী, পতিত মাটি, লাইন প্ৰথা।

**অৱতৰণিকা ঃ**

প্ৰব্ৰজন হৈছে এক প্ৰাকৃতিক পৰিঘটনা আৰু এক ঐতিহাসিক প্ৰক্ৰিয়া। প্ৰাচীন কালৰে পৰাই ভাৰতৰ আন ঠাইৰ লগতে অসমলৈ বিভিন্ন ঠাইৰপৰা মানুহ প্ৰব্ৰজিত হৈ আহিছে। প্ৰব্ৰজিত লোক সকলে স্থানীয় অধিবাসীসকলৰ লগত মিলি অসমীয়া জাতি গঠন প্ৰক্ৰিয়াত উল্লেখযোগ্য বৰঙণি যোগাইছিল। বৃটিছসকলে অসম শাসন কৰাৰ আগলৈ প্ৰব্ৰজনক লৈ কোনো ধৰণৰ বিতৰ্কৰ সূচনা হোৱা নাছিল। বিংশ শতিকাত ভাৰতৰ বিভিন্ন প্ৰান্তৰ পৰা অসমলৈ চাহ শ্ৰমিক, নেপালী সম্প্ৰদায় আৰু পূৰ্ববংগৰ মুছলমান খেতিয়ক সকলৰ আগমন ঘটিবলৈ আৰম্ভ কৰে। অসমলৈ প্ৰব্ৰজিত হোৱা আন লোক সকলতকৈ পূৰ্ববংগীয় লোক সকলৰ প্ৰব্ৰজন আধুনিক অসমৰ ইতিহাসৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ঘটনা হিচাপে পৰিগণিত হৈছে।

এইখিনিতে উল্লেখ কৰা প্ৰয়োজন যে অসম আৰু বংগ দুয়োখন প্ৰদেশ বৃটিছ শাসিত আছিল। সেয়েহে একে শাসনৰ তলত থকা এখন প্ৰদেশৰ পৰা আন এখন প্ৰদেশলৈ গৈ থকা লোকসকল প্ৰব্ৰজিত লোক বুলি কোৱাৰ ক্ষেত্ৰত কিছু দ্বিধাগ্ৰস্ততাৰ

সৃষ্টি হৈছিল। পিছলৈ ১৯২৯ চনৰ মার্চ মাহৰ ৫ তাৰিখে নগাঁও জিলাৰ উপায়ুক্ত ই. বি. শ্বই (E.B. Shaw) ঘোষণা কৰে যে অসমত প্ৰব্ৰজনকাৰী বুলি ক'লে বংগ, বিহাৰ, উৰিষ্যা আৰু ইউনাইটেড প্ৰদেশৰপৰা অহা লোক সকলক ধৰা হয়, কিন্তু চাহ বনুৱাসকলক ধৰা নহয় । (Assam Gazette, 1930, P.1040)

সেই সময়ত অসমলৈ আটাইতকৈ বেছিকৈ জনশ্ৰোত হৈছিল বংগদেশৰ পূৱ প্ৰান্তৰ ঢাকা, মৈমনসিং আদি ঠাইৰ পৰা। ইয়াৰ বেছিভাগ লোকেই মুছলমান আছিল আৰু তেওঁলোক কৃষিজীৱি আছিল। সেয়েহে কেতিয়াবা তেওঁলোকৰ প্ৰব্ৰজনক মৈমনসিঙীয়া প্ৰব্ৰজন বুলিও কোৱা হৈছিল। পিছলৈ শিৱসাগৰ জিলাৰ উপায়ুক্ত কে কেণ্টলি (K. Cantlie) য়ে বংগৰপৰা অসমলৈ কৃষিকৰ্মৰ উদ্দেশ্যে আহি বসবাস কৰা লোকসকলক প্ৰব্ৰজনকাৰী বুলি উল্লেখ কৰিছিল। (Assam Secretariat Proceedings, 1928, P. 4)

এই অধ্যয়নত সেয়েহে প্ৰব্ৰজনকাৰী বুলি উল্লেখ কৰোতে পূৰ্ববংগৰ মুছলমান খেতিয়ক সকলৰ কথাহে প্ৰধানত বুজোৱা হৈছে। বংগৰ এইসকল খেতিয়ক জমিদাৰ সকলৰ বিভিন্ন ধৰণৰ শোষণৰ বলি হৈছিল। তাৰ উপৰিও প্ৰতি বছৰে পানী মেটেকাই তেওঁলোকৰ শস্য নষ্ট কৰাৰ ফলত বহু ঠাইত তেওঁলোকে খেতি কৰিবলৈ এৰি দিছিল। (Iqbal, 2005)

বংগৰ আন অংশৰ তুলনাত পূৰ্ববংগৰ মুছলমান সকলৰ মাজত জনসংখ্যাৰ বৃদ্ধিৰ হাৰ বেছি আছিল। (Iqbal, 2005)। বৰ্দ্ধিত জনসংখ্যাক কৃষিয়ে সংস্থাপন দিয়াত ব্যৰ্থ হৈছিল। ইতিমধ্যে বংগৰ বিখ্যাত হস্ততাত উদ্যোগ বৃটিছ শাসনৰ ফলত ধ্বংস হৈছিল আৰু তাত জড়িত লোকসকলো কৃষিৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ হ'বলগীয়া হৈছিল (Anindita Dasgupta, 2000, P. 56)। বংগৰ চুবুৰীয়া প্ৰদেশ অসমত তাৰ বিপৰীত ছবি দেখিবলৈ পোৱা গৈছিল। অসমৰ পতিত ভূমিয়ে বংগৰ এই দুখীয়া কৃষকসকলক সহজতে আকৰ্ষণ কৰিছিল।

অসমৰ গোৱালপাৰা জিলাৰ জমিদাৰসকলে পতিত ভূমি কৃষিভূমিলৈ পৰিবৰ্তন কৰি ৰাজহ বৃদ্ধি কৰিব বিচাৰিছিল (Hossain, 2007, P. 14)। স্থানীয় লোকৰ দ্বাৰা এই কাৰ্যসমূহ সম্ভৱ নহয় বুলি জানি তেওঁলোকে বংগৰ খেতিয়কসকলক অসমলৈ আহিবলৈ উদ্‌গনি যোগাইছিল। ইয়াৰ বাহিৰেও ঔপনিবেশিক শাসকেও অসমৰ পতিত ভূমি কৃষিভূমিলৈ পৰিবৰ্তন কৰাৰ সপোন দেখিছিল। সেই সময়ত অসমৰ স্থানীয় লোকসকলে ভাৰতৰ আন প্ৰদেশৰ লোকৰ তুলনাত বৰ আৰামেৰে জীৱন নিৰ্বাহ কৰিছিল। (Proceedings of Chief Commissioner, 1901, P. 11)। অসমৰ স্থানীয় অধিবাসীসকল সেয়েহে আৰু অধিক কষ্টকৰ কাম কৰিবলৈ ইচ্ছুক নাছিল। ইতিমধ্যে বৃটিছসকলে অনুধাৱন কৰিছিল যে অসমৰ গোৱালপাৰা, নগাঁও, বৰপেটা আৰু দৰং জিলাৰ ভূমি মৰাপাট খেতিৰ বাবে উপযুক্ত। কিন্তু অসমীয়াসকল এই খেতিৰ বাবে ইচ্ছুক নাছিল। আনহাতে পূৰ্ববংগৰ মুছলমান কৃষকসকল মৰাপাট খেতিত পাৰ্গত। সেয়েহে অসমৰ বৃটিছ শাসকে বংগৰ মুছলমান খেতিয়ক সকলক অসমলৈ আহিবলৈ উদ্‌গনি যোগাইছিল।

১৮৯২ চনত আৰম্ভ হোৱা অসম-বংগৰ ৰেল সেৱাই দুয়োখন প্ৰদেশৰ মানুহক অহা-যোৱাত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰিছিল। (Medhi, 1978, P. 68) ৫ টকাৰ এটা টিকটৰ যোগেদি পূৰ্ববংগৰ এটি পৰিয়াল অসমলৈ আহিব পাৰিছিল। ১৯১১ চনৰ লোকপিয়লৰ প্ৰতিবেদনত প্ৰথম বাৰৰ বাবে বংগৰপৰা গোৱালপাৰা জিলাৰ নদী কাষৰীয়া অঞ্চলত হোৱা প্ৰব্ৰজনৰ কথা উল্লেখ আছে। (Census of Assam, 1911, P. 5) লাহে লাহে প্ৰব্ৰজনৰ বাবে অসমৰ জনসংখ্যাৰ বৃদ্ধিৰ হাৰ বাঢ়িব ধৰিলে। ১৯০১ চনৰ পৰা ১৯৫১ চনৰ ভিতৰত অসমত জনসংখ্যা বৃদ্ধিৰ হাৰ আছিল ১৯.৫১ শতাংশ, কিন্তু তাৰ তুলনাত ভাৰতৰ ৰাষ্ট্ৰীয় হাৰ আছিল মাত্ৰ ৪.৯১ শতাংশ।

**অধ্যয়নৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ**

**এই অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল ঃ**

(ক) বৃটিছ যুগত অসমলৈ পূৰ্ববংগৰ পৰা হোৱা প্ৰব্ৰজনৰ কাৰকসমূহৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা।

(খ) পূৰ্ববংগৰ মুছলমান খেতিয়ক সকলক অসমত পুনৰ সংস্থাপনৰ বাবে লোৱা চৰকাৰী প্ৰচেষ্টাৰ বিশ্লেষণ কৰা।

**অধ্যয়নৰ সমল আৰু পদ্ধতি ঃ**

বৃটিছ যুগত পূৰ্ববংগৰ পৰা অসমলৈ অহা প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ পুনঃসংস্থাপন সম্পৰ্কে কৰা এই অধ্যয়নত ঐতিহাসিক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। প্ৰাথমিক আৰু গৌণ উভয় উৎসৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ইয়াক অধ্যয়ন কৰা হৈছে। প্ৰাথমিক তথ্যসমূহ অসম ৰাজ্যিক অভিলেখাগাৰ ৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। প্ৰকাশিত কিতাপ, ই-আলোচনীৰ তথ্যও এই অধ্যয়নত ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

**আলোচনা ঃ**

অসমলৈ আগমন ঘটা পূর্ববংগৰ মুছলমান প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক আৰম্ভণীতে স্থানীয় লোকসকলে বাধা প্ৰদান কৰা নাছিল। কিন্তু মাটি ভোকাতুৰ প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলে পিছলৈ পতিত ভূমি, চৰকাৰী বনাঞ্চল আদি বিভিন্ন উপায়েৰে দখল কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিব ধৰিলে। লাইন প্ৰথা তদন্ত সমিতিৰ সন্মুখত নগাঁও জিলাৰ উপায়ুক্তই মন্তব্য কৰিছিল যে অনুপ্ৰবেশকাৰীসকলে অসমীয়া মানুহৰ ধাননি পথাৰত গৰু এৰি দিয়ে আৰু কেতিয়াবা ধান কাটি পেলায়। শান্তিপ্ৰিয় স্থানীয় লোকে এনে অত্যাচাৰ সহ্য কৰিব নোৱাৰি শেষত প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক মাটি বিক্ৰি কৰি আন ঠাইত গৈ নতুন গাঁও প্ৰতিষ্ঠা কৰি লৈছিল। শান্তিপ্ৰিয় স্থানীয় অধিবাসী আৰু প্ৰব্ৰজনকাৰীসকল কেতিয়াও ওচৰা-ওচৰিকৈ থাকিব পৰা নাছিল। অসম বিধান পৰিষদৰ ৰাজহ সদস্য ডব্লিউ এল স্কটে (W.L. Scott) আঙুলিয়াই দিছিল যে পূর্ববংগৰ এই প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ সংস্কৃতি বেলেগ আছিল আৰু যদিহে তেওঁলোকৰ অর্থনৈতিক আৰু বর্ণগত সুবিধা নিষিদ্ধ কৰা নহয়, তেন্তে থলুৱা বাসিন্দাসকলক তেওঁলোকে নিজা মাটিৰপৰা খেদি পঠিয়াব। (Assam Gazette, 1936, P. 1528) সেয়েহে প্ৰথম বাৰৰ কাৰণে অসমত স্থানীয় অধিবাসীসকলক সুৰক্ষা দিয়া তথা প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ পুনঃসংস্থাপনৰ ব্যৱস্থা ঔপনিবেশিক চৰকাৰে আৰম্ভ কৰে। এইদৰেই অসমত লাইন প্ৰথাৰ প্ৰৱর্তন কৰা হৈছিল। প্ৰথমে নগাঁও জিলা আৰু পিছলৈ বৰপেটা আৰু দৰঙত ইয়াক প্ৰৱর্তন কৰা হৈছিল। ইয়াৰ জৰিয়তে প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ বসতি স্থাপনৰ বাবে গাওঁসমূহৰ সীমা নির্দ্ধাৰণ কৰা হৈছিল। ক'ল'নাইজেছন বিষয়াই প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক প্ৰিমিয়ামৰ বিনিময়ত মাটি প্ৰদান কৰিছিল। (Report on Line System Committee, 1938, P. 2)

এই ব্যৱস্থাৰ জৰিয়তে গাঁওবোৰক চাৰিটা ভাগত বিভক্ত কৰা হৈছিল -

(ক) কিছুমান গাঁও কেৱল প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ বাবে মুক্ত আছিল।

(খ) কিছুমান গাঁও স্থানীয় লোকৰ বাবে উপলব্ধ আছিল।

(গ) কিছুমান গাঁও দুয়োটা সম্প্ৰদায়ৰ বাবে মুক্ত আৰু

(ঘ) কিছুমান গাঁওৰ স্থানীয় লোক থকা লাইনৰ ফালে প্ৰব্ৰজনকাৰীক ভূমি অধিগ্ৰহণ কৰিবলৈ দিয়া হোৱা নাছিল (Baruah, 2007, P. 49)

লাইন প্ৰথা সমসাময়িক অসমৰ ৰাজনৈতিক জীৱনৰ এক গুৰুত্বপূর্ণ বিষয় হৈ পৰিছিল। মুছলমান জন প্ৰতিনিধিসকলে এই ব্যৱস্থাক বৈষম্যবাদী বুলি অভিহিত কৰিছিল। তেওঁলোকৰ মতে লাইন প্ৰথাই অসমীয়া আৰু প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ মাজত সম-অনুভৱ, সদিচ্ছা সৃষ্টিত বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছিল।

স্থানীয় লোকে লাইন প্ৰথা বাহাল ৰখাৰ পোষকতা কৰে যদিও থলুৱা মুছলমানৰ আগ্ৰাসন বন্ধ নহ'ল। ইতিমধ্যে অসমত পুনঃসংস্থাপন পোৱা প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলে নিজৰ নিৰাপত্তাৰ খাতিৰত নতুনকৈ অহা লোক সকলক মাটি বিক্ৰী কৰিছিল। বহু স্থানীয় লোকেও অধিক লাভৰ আশাত নিজৰ ভূমি বঙালী প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক বিক্ৰী কৰি দিছিল।

**ঔপনিবেশিকৰণ আঁচনি (Colonisation Scheme) আৰু পুনৰ সংস্থাপন ঃ**

লাইন প্ৰথা বর্তি থকা সময়তেই ঔপনিবেশিক চৰকাৰে পমুৱা মুছলমানসকলৰ পুনঃসংস্থাপনৰ বাবে ঔপনিবেশিকৰণ আঁচনি (Colonisation Scheme) নামেৰে এখন নতুন আঁচনি আৰম্ভ কৰে। ইয়াৰ জৰিয়তে সম্প্ৰদায় ভিত্তিক মাটি বিতৰণৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছিল আৰু আশা কৰা হৈছিল যে অসমীয়া আৰু প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ মাজত হোৱা সংঘাত নোহোৱা কৰিব। স্থানীয় আৰু প্ৰব্ৰজনকাৰীৰ আবেদনৰ ভিত্তিত একোটা পৰিয়ালক ৩০ বিঘাকৈ ভূমি আৱণ্টন দিয়াৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছিল। আঁচনিখনৰ নিয়মসমূহ তলত দিয়া ধৰণৰ আছিল (Assam Secretariate Proceedings, 1938, P. 8)

(ক) আবেদনকাৰীসকলে ক'ল'নাইজেছন বিষয়াৰ ওচৰত মাটিৰ বাবে আবেদন কৰিব লাগিছিল।

(খ) প্ৰতি বিঘা ভূমিৰ বাবে ২৫ টকা প্ৰিমিয়াম নির্দ্ধাৰণ কৰা হৈছিল। ২ টকা মাটি আৱণ্টন দিয়াৰ সময়ত, ৩ টকা বার্ষিক পট্টা জাৰি কৰাৰ সময়ত আৰু ২০ টকা সময়কালীন পট্টা পোৱাৰ সময়ত দিব লাগিছিল।

(গ) তৃতীয় বছৰত জৰীপৰ ভিত্তিত বার্ষিক পট্টা প্ৰদান হৈছিল আৰু চতুর্থ বছৰৰ পৰাহে ৰাজহ সংগ্ৰহ কৰা হৈছিল।

(ঘ) মাটিৰ পট্টাদাৰসকলে আৱণ্টিত ব্লকত বাস কৰি মাটিত খেতি কৰিব লাগিছিল।

(ঙ) পঞ্চম বছৰত ক'ল'নাইজেছন বিষয়াৰ আদেশ অনুসৰি সময়কালীন পট্টা জাৰি কৰা হৈছিল। ১৯৩৮ চনত

লাইন প্রথা তদন্ত সমিতি নিযুক্তিৰ সময়লৈকে মুঠ ১,৫৯,৮৩৯ বিঘা মাটি এই আঁচনিৰ জৰিয়তে আৱণ্টন দিয়া হৈছিল।

**ডেভেলপমেণ্ট স্কিম (Development Scheme) ঃ**

অসমত বিধান সভাৰ নিৰ্বাচন হোৱাৰ পিছত ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যকাৰ মুছলমান নেতা ছাৰ ছাদুল্লাই ১৯৩৭ চনৰ এপ্ৰিল মাহত ইউৰোপীয় আৰু অন্যান্য জনজাতীয় আৰু অ-জনজাতীয় সদস্যৰ সহায়ত মিত্ৰজোঁট চৰকাৰ গঠন কৰে। ছাদুল্লা মন্ত্ৰীসভাৰ পতনৰ পিছত গোপীনাথ বৰদলৈয়ে কংগ্ৰেছ মিত্ৰজোঁটৰ মন্ত্ৰীসভা গঠন কৰে। সেই সময়ত লাইন প্ৰথাৰ ভৱিষ্যত আৰু অসমৰ পতিত ভূমিৰ বিষয়ে তদন্ত কৰিবলৈ লাইন প্ৰথা তদন্ত সমিতি গঠন কৰা হৈছিল। এফ. ডব্লিউ হকেনহালৰ (F.W. Hockenhull) অধ্যক্ষতাত গঠিত ন'জনীয়া সমিতিয়ে ১৯৩৮ চনৰ ফেব্ৰুৱাৰী মাহত ইয়াৰ প্ৰতিবেদন দাখিল কৰে যদিও এই সমিতিয়ে প্ৰব্ৰজনক পোনচাতেই বন্ধ কৰাৰ পোষকতা কৰা নাছিল, তথাপি জনজাতীয় লোকৰ ভূমি সংৰক্ষণ কৰাৰ ব্যৱস্থাৰ কথা কৈছিল। গোপনীনাথ বৰদলৈৰ দ্বিতীয় মন্ত্ৰীসভাই (১৯ চেপ্তেম্বৰ ১৯৩৮ ৰ পৰা ১৬ নবেম্বৰ ১৯৩৯) পদত্যাগৰ আগমূহুৰ্তত এটা প্ৰস্তাৱ গ্ৰহণ কৰি ১৯৩৮ চনৰ ১ জানুৱাৰীৰ আগতে অসমলৈ অহা ভূমিহীন কৃষকসকলৰ পৰিয়াললৈ ৩০ বিঘাকৈ ভূমি দিবলৈ ঠিৰাং কৰে। ইয়াৰ বাহিৰেও যিসকল প্ৰব্ৰজনকাৰীয়ে সংৰক্ষিত বনাঞ্চল অবৈধভাৱে দখল কৰি আছিল সেই সকলক তাৰপৰা উচ্ছেদ কৰিবলৈ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিছিল। (Dev and Lahiri, 1985, P. 67)

কিন্তু বৰদলৈ মন্ত্ৰীসভাই সেই প্ৰস্তাৱ কাৰ্যকৰী কৰাৰ পূৰ্বেই দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত পদত্যাগ কৰিবলগীয়া হৈছিল। ইয়াৰ সুযোগ লৈ ছাদুল্লাৰ অধিনত মুছলিম লীগে চৰকাৰ গঠন কৰি প্ৰব্ৰজনকাৰীক পুনৰ সংস্থাপন দিবলৈহে উঠিপৰি লাগিছিল। ডেভেলপমেণ্ট স্কিম (Development Scheme) নামেৰে এক নতুন আঁচনি ঘোষণা কৰি চৰকাৰে ভৱিষ্যৎ প্ৰজন্মৰ বাবে ৩০ শতাংশ মাটি সংৰক্ষণ কৰি বাকী সকলো মাটি কৃষিৰ বাবে মুকলি কৰিবলৈ ঠিৰাং কৰে। ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ গৰা খহনীয়াত যিসকল পমুৰা মুছলমান খেতিয়কে মাটি হেৰুৱাই চৰকাৰী বনাঞ্চল দখল কৰি আছে তেওঁলোকৰ লগতে যিসকল প্ৰব্ৰজনকাৰী ১৯৩৮ চনৰ জানুৱাৰী মাহৰ আগতে অসমলৈ আহিছিল তেওঁলোকক এই আঁচনিৰ দ্বাৰা সংস্থাপিত কৰিবলৈ ব্যৱস্থা লোৱা হৈছিল। প্ৰতিটো তেনে পৰিয়ালক ৩০ বিঘাকৈ ভূমি দিবলৈ ঠিৰাং কৰা হৈছিল। (Report on Development Scheme, 1942, P. 7-9) মন্ত্ৰীসভাৰ এই আঁচনিখন স্থানীয় লোকে বিৰোধ কৰে। তেওঁলোকে পমুৰা মুছলমান কৃষক সকলৰ ওচৰত থাকিবলৈ বিচৰা নাছিল আৰু সেয়েহে তেওঁলোকে ভূমিৰ বাবে আবেদনো কৰা নাছিল।

**'গ্ৰ ম'ৰ ফুড আঁচনি** (Grow More Food Campaign) **ঃ**

দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ সময়ত দেশত খাদ্যশষ্যৰ অভাৱ ঘটিছিল। ইয়াৰ বাবে ভাৰত চৰকাৰে ১৯৪৩ চনৰ ভিতৰত অসমত কৃষি ভূমিৰ পৰিমাণ ৫২.৮ লাখ একৰৰ পৰা ৫৭ লাখ একৰলৈ বৃদ্ধি হোৱাটো বিচাৰিছিল। (Kar, 1989, P. 60) ছাদুল্লা চৰকাৰে 'গ্ৰ ম'ৰ ফুড নামেৰে আঁচনি এখন প্ৰস্তুত কৰি অধিক খাদ্যশস্য উৎপাদনত মনোনিবেশ কৰিলে। এই আঁচনিখনৰ দ্বাৰা তেওঁ পূৰ্ববংগৰ মুছলমান খেতিয়ক সকলক অসমত পুনঃসংস্থাপন দিবলৈ এক সুবিধাহে পালে। এই মন্ত্ৰীসভাই এক প্ৰস্তাৱ গ্ৰহণ কৰি নগাঁও, কামৰূপ আৰু দৰঙত প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ বাবে মাটি আৱণ্টন দিবলৈ ধৰে। আনকি চৰণীয়া সংৰক্ষিত বনাঞ্চল সমূহো মুকলি কৰিবলৈ ধৰে। পমুৰা মুছলমান কৃষক সকলৰ সংস্থাপনৰ বাবে ১৯৪২ চনৰ ১ জানুৱাৰীক ভিত্তিবৰ্ষ হিচাপে লয়। কিন্তু অসমৰ স্থানীয় লোকসকলে ছাদুল্লাৰ এই নীতিক সমালোচনা কৰিছিল। আনকি ভাইচৰয়ে তেওঁৰ ভূমি নীতি পৰ্যালোচনা কৰি মন্তব্য কৰিছিল যে 'গ্ৰ ম'ৰ ফুড অসমত মুছলমানৰ সংখ্যা বঢ়োৱাৰ বাদে আন একো নহয়। (Kar, 1989. P. 73) কিন্তু ১৯৪৩ চনৰ চেপ্তেম্বৰ মাহত অসমৰ চৰণীয়া পথাৰসমূহৰ অৱস্থা আৰু উপলব্ধতাৰ বাবে গঠিত এখন কমিতিয়ে ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ কাষৰ পেছাদাৰী চৰণীয়া পথাৰসমূহ সংস্থাপনৰ বাবে মুকলি কৰিব নালাগে বুলি চৰকাৰক পৰামৰ্শ দিছিল। কিন্তু ছাদুল্লা মন্ত্ৰীসভাই ইয়াক আওকাণ কৰি প্ৰব্ৰজনকাৰী সকলৰ বাবে চৰণীয়া পথাৰবোৰ মুকলি কৰি দিছিল। তেওঁৰ এই নীতি জনজাতি আৰু গো-পালকসকলক ক্ষতিগ্ৰস্থ কৰিছিল। অসম জাতীয় মহাসভাই ১৯৪৪ চনৰ ২৫ আগষ্টত 'অসম ভূমি নীতি প্ৰতিবাদ' দিৱস পালন কৰে। শেষত ১৯৪৫ চনৰ ১৫ জানুৱাৰী তাৰিখে চৰকাৰে পেছাদাৰী চৰণীয়া পথাৰসমূহ সংৰক্ষণ কৰিবলৈ প্ৰস্তাৱ গ্ৰহণ কৰে আৰু বিশেষ বেল্টত থকা জনজাতি সমূহক সুৰক্ষা দিয়াৰ প্ৰতিশ্ৰুতি দিয়ে। পিছলৈ বৰদলৈ চৰকাৰে অবৈধভাৱে অধিগ্ৰহণ কৰা ভূমিৰ পৰা প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক উচ্ছেদ কৰিবলৈ ব্যৱস্থা হাতত লৈছিল।

**সামৰণি ঃ**

বিংশ শতিকাত পূৰ্ববংগৰ পৰা হোৱা পমুৰা মুছলমান কৃষকৰ প্ৰব্ৰজনে অসমৰ ৰাজনৈতিক, সামাজিক, সাংস্কৃতিক আৰু অৰ্থনৈতিক ক্ষেত্ৰত এক বিৰাট প্ৰভাৱ পেলাইছিল। বংগৰ দুখীয়া মুছলমান কৃষকসকলে বিভিন্ন প্ৰাকৃতিক আৰু মানৱসৃষ্ট কাৰকৰ প্ৰভাৱত নিজৰ ভূমি হেৰুৱাবলগীয়া হৈছিল। বংগৰ নিচেই কাষতে থকা একে বৃটিছ শাসনত তলত থকা অসমৰ বিস্তৃৰ্ণ পতিত ভূমিয়ে সেই কৃষকসকলক আকৰ্ষণ কৰিছিল। আৰম্ভণীতে অসমৰ জমিদাৰ আৰু আন স্থানীয় লোক তথা বৃটিছ চৰকাৰৰ সহযোগত এই প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলে অনায়াসে শ শ বিঘা পতিত ভূমি অধিকাৰ কৰিছিল। পিছলৈ স্থানীয় মানুহৰ প্ৰতিবাদত প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক এক সুনিয়ন্ত্ৰীত ব্যৱস্থাৰে অসমত পুনঃসংস্থাপন দিয়াৰ বাবে চৰকাৰে ১৯২০ চনত লাইন প্ৰথাৰ প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল। ইয়াক প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ আগ্ৰাসনৰ বিৰুদ্ধে স্থানীয় লোকৰ বাবে এক সুৰক্ষাৰ কবচ যেন দেখা গৈছিল। ইয়াৰ পিছত ১৯২৯ চনত ক'ল'নাইজেছন আঁচনি আৰম্ভ কৰি বৃটিছ চৰকাৰে প্ৰায় ১ লাখ ৬০ হাজাৰ বিঘা মাটি খেতিৰ বাবে আৱণ্টন দিছিল। স্থানীয় লোকেও এই আঁচনিৰ দ্বাৰা ভূমিৰ বাবে আবেদন কৰিব পাৰিছিল, কিন্তু আটাইতকৈ লাভৱান হৈছিল পমুৰা মুছলমানসকল। ১৯৪০ চনত ডেভেলপমেণ্ট স্কিমৰ যোগেদিও বহু ভূমি প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ বাবে মুকলি কৰি দিয়া হৈছিল। শেষত দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ সময়ত খাদ্যশস্যৰ অনাটনৰ সুবিধা গ্ৰহণ কৰি ছাৰ ছাদুল্লা মন্ত্ৰীসভাই অসমত অধিক শষ্য উৎপাদন কৰাৰ নামত পূৰ্ববংগৰ বহু মুছলমান কৃষকক অসমত পুনঃসংস্থাপন দিছিল। এইদৰে বৃটিছ আমোলত পূৰ্ববংগীয় প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ অসমত পুনঃসংস্থাপনৰ বাবে বিভিন্ন ধৰণৰ আঁচনি গ্ৰহণ কৰা হৈছিল। ❑


**প্ৰসঙ্গ সূত্ৰ ঃ**

1. Assam Secretariat Proceedings, Public on the draft Assam Land and Revenue (Amendment) Bill, 1926, relating to the Settlement and Transfer of land to Immigrants, Revenue Department, Rev. A, June 1928, No. 39-52.
2. Assam Secretariat Proceedings, Revenue Department. Nowgong Colonization Scheme, March 1931, Rev. A, Nos. 83-134.
3. Assam Gazette, Debates of the Assam Legislative Council, 1930, March Session, Vol. X, No.1.
4. The Assam Gazette, Part VI, No.18, 1936.
5. Proceedings of the Chief Commissioner of Assam, Revenue & Agricultural Department of the Government of India, March 1901, Resettlement of the Assam Valley. Shillong: Assam Secretariat Printing Office, 1901.
6. Revenue Department, Assam Government, Report on the Development Schemes, Rev, File No. RD 10/42.
7. Report of the Line System Committee. Shillong: Assam Government Press, 1938.
8. Baruah, Sagar. Migration from East Bengal to Assam: Response, Reaction and Assimilation (1900-1947). Guwahati: Jagaran Sahitya Prakashan, 2007.
9. Mullan, C. S. Census of India 1931, Vol. III Assam, Part I, Report. Shillong: Assam Secretariat Printing Office, 1932.
10. Dasgupta, Anindita. "Emergence of a Community: The Muslims of East Bengal Origin in Assam in Colonial and Post-Colonial Period." Ph.D. Thesis, Gauhati University, 2000.
11. Dev, Bimal J. and Lahiri, D.K. Assam Muslims: Politics and Cohesion. Delhi:Mittal Publications, 1985.
12. Kar, M. Muslims in Assam Politics. Delhi: Om Sons Publications, 1989.
13. Medhi, S. B. Transport System and Economic Development in Assam, Guwahati: Publication Board Assam, 1978
14. Iqbal, Iftekhar. "Towards an Environmental History of Colonial East Bengal: Paradigm and Praxis." http://www. Asiaticsociety.org.bd/journals/golden jubilee vol/articles/H.htm.
15. হুচেইন, ইছমাইল, অসমৰ জাতীয় জীৱন আৰু অভিবাসী অসমীয়া মুছলমান, অনামিকা গ্ৰন্থালয়, নলবাৰী, ২০০৭।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ অভিধানবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন

লক্ষীপ্রসাদ দিহিঙ্গীয়া

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
পদ্মনাথ গোহাঞিবৰুৱা চৰকাৰী আদর্শ মহাবিদ্যালয়, কাকপথাৰ
তিনচকিয়া, অসম
৯১০১৫১৯৮৯৯
lakhiprasaddihingia123@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

অসমীয়া অভিধানৰ ইতিহাস ঊনবিংশ শতিকাতে আৰম্ভ হ'লেও বৈদ্যুতিন অভিধান অসমীয়া ভাষাত একবিংশ শতিকাৰপৰাহে উপলব্ধ হয়। একবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয় দশকৰপৰাহে অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধানৰ উদ্ভৱ তথা বিকাশ হয়। অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধানৰ অন্তর্গত এখন অভিধান হৈছে *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*। কম্পিউটাৰত ব্যৱহাৰৰ উপযোগী *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* সাধাৰণ আৰু বিশিষ্ট অভিধানৰ লক্ষণ অন্তর্ভুক্ত হৈ আছে। শব্দৰ অর্থ থকাৰ উপৰিও বিভিন্ন চিত্র, জতুৱা ঠাঁচ, সমার্থক, বিপৰীতার্থক শব্দ আদিকো সন্নিৱিষ্ট কৰি অভিধানখন প্রস্তুত কৰা হৈছে। এই গৱেষণা পত্রখনত অভিধানখনত থকা লক্ষণসমূহ আলোচনা কৰা হ'ব। অভিধানখনে গ্রহণ কৰা ৰীতিসমূহৰো আলোচনা পত্রখনৰ অধ্যয়নৰ ভিতৰত সামৰা হৈছে।

**ৰীজ শব্দ ঃ**

অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান, অসমীয়া অভিধান, বৈদ্যুতিন অভিধান, সাধাৰণ অভিধান, বিশিষ্ট অভিধান।

**০.০ অৱতৰণিকা ঃ**

**০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ**

অসমীয়া ভাষাত বৈদ্যুতিন অভিধান প্রণয়ন এটা অর্বাচীন আভিধানিক বিধা। ফণীন্দ্রনাৰায়ণ দত্তবৰুৱাৰ সম্পাদনাত কেন্দ্রীয় ভাৰতীয় ভাষা প্রতিষ্ঠান (CIIL) ৰপৰা *পশ্চিম অসমীয়া শব্দকোষ* নামেৰে উপলব্ধ হোৱা অসমীয়া ই-বুক অভিধানখনেই প্রথম বৈদ্যুতিন অভিধান। পৰৱর্তী সময়ত কেইবাখনো অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধান পোৱা যায়। এইসমূহৰ ভিতৰত *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান* অন্যতম।

অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধানৰ প্রবিষ্টি সংস্থাপন মুদ্রিত অভিধানৰ প্রবিষ্টি সংস্থাপনতকৈ পৃথক। শব্দসাৰ পৃষ্ঠা অনুসৰি পোৱা নাযায় আৰু নির্বাচন প্রণালীত এটা এটাকৈ শব্দসাৰ বাচনি কৰি লৈ তাৰ অর্থ বিচাৰিব লাগে। লেক্সিকেল ডাটাবেচৰ ক্ষেত্রত মুদ্রিত অভিধানৰ ডাটাবেচতকৈ বৈদ্যুতিন অভিধানৰ ডাটাবেচ পৃথককৈ প্রস্তুত কৰা হয়। সেয়ে প্রবিষ্টিৰ গঠনত অসমীয়া মুদ্রিত অভিধানৰ লগত বৈদ্যুতিন অভিধানৰ পার্থক্য পৰিলক্ষিত হয়।

অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধানৰ ব্যৱহাৰ মুদ্রিত অভিধানৰ ব্যৱহাৰতকৈ বেলেগ। ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্র, ব্যৱহাৰৰ সুবিধা আদিৰ সুকীয়া ৰূপ এটা অসমীয়া বৈদ্যুতিন

অভিধানে বহন কৰিছে। মুদ্রিত অভিধানতকৈ বৈদ্যুতিন অভিধানৰ প্ৰবিষ্টি সংস্থাপনৰ প্ৰণালী, শব্দসাৰ নিৰ্বাচন আদিৰ ক্ষেত্ৰত পৃথক লক্ষণ পৰিলক্ষিত হয়। অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধানৰ মুদ্রিত অভিধানতকৈ পৃথক লক্ষণসমূহ প্ৰবিষ্টিৰ গঠনগত আৰু অভিধানৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কীয় হিচাপে মূল্যায়ন কৰিব পাৰি।

বৈদ্যুতিন অভিধানসমূহৰ এটা প্ৰকাৰ হৈছে ছফ্‌টৱেৰ অভিধান। এটা অভিধানৰ ছফ্‌টৱেৰ বিকাশ কৰি তাক কম্পিউটাৰত ব্যৱহাৰ কৰিব পৰা অভিধানসমূকে ছফ্‌টৱেৰ অভিধান বোলা হয়। অসমীয়া ভাষাত দুখন ছফ্‌টৱেৰ অভিধান পোৱা যায়, *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান* আৰু *সহজ সন্ধান অসমীয়া অভিধান*। অনিল বৰুৱাৰ পৰিকল্পনাত প্ৰস্তুত কৰা *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*খনেই প্ৰথম অসমীয়া ভাষাত প্ৰণয়ন কৰা ছফ্‌টৱেৰ অভিধান।

**০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ**

***অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ৰ অভিধানবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন** বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য হৈছে —

অসমীয়া বৈদ্যুতিন অভিধান হিচাপে *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ৰ পৰিচয় দাঙি ধৰা।

- *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ত সাধাৰণ অভিধানৰ প্ৰকৃতি বিচাৰ কৰা।
- *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ত বিশিষ্ট অভিধানৰ প্ৰকৃতি বিচাৰ কৰা।

**০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ**

***অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ৰ অভিধানবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন** বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ বাবে অভিধানতাত্ত্বিক পদ্ধতিৰ আধাৰত বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি, বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হ'ব।

**০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ**

***অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ৰ অভিধানবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন**ত অসমীয়া ভাষাত উপলব্ধ দুখন ছফ্‌ট্‌ৱেৰ অভিধানৰ ভিতৰত অনিল বৰুৱাৰ সম্পাদিত *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*খনহে অধ্যয়নৰ ভিতৰত ৰখা হৈছে।

**০.৫ পূৰ্বকৃত অধ্যয়নৰ সমীক্ষা ঃ**

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে অভিধান আৰু বৈদ্যুতিন অভিধান সম্পৰ্কে অসমীয়া আৰু ইংৰাজী ভাষাত প্ৰণয়ন কৰা গ্ৰন্থ, গৱেষণা গ্ৰন্থ আৰু বিভিন্ন ভাষা বিষয়ক গ্ৰন্থত প্ৰকাশ পোৱা প্ৰবন্ধৰ অধ্যয়ন কৰা হৈছে। অৰ্পণা কোঁৱৰৰ *অভিধানতত্ত্ব* গ্ৰন্থ, Pedro A. Fuertes-Oliveraএ সম্পাদনা কৰা *The Routledge Handbook of Lexicography* গ্ৰন্থ, *Lexicography in India* গ্ৰন্থত প্ৰকাশিত গোলেক চন্দ্ৰ গোস্বামীৰ 'Requirments and Priorities of Assamese Lexicography' প্ৰবন্ধ, ফণীন্দ্ৰ নাৰায়ণ দত্ত বৰুৱাৰ *প্ৰয়োগ ভাষাবিজ্ঞানৰ ৰূপৰেখা* গ্ৰন্থত সন্নিৱিষ্ট 'অভিধান প্ৰণয়ন কলা' প্ৰবন্ধ আদিত অভিধনা আৰু অসমীয়া অভিধানৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছে।

Sagolsem Poireiton Meiteiৰ গৱেষণা গ্ৰন্থ *Electronic Dictionary Manipuri to English and its Impect in Development of Manipuri language*, চম্পাকলি তালুকদাৰৰ *অসমীয়া ভাষাৰ ভাষাবৈজ্ঞানিক চৰ্চা ঃ এক ঐতিহাসিক বিচাৰ* (২০০৮), কৰবী গগৈৰ *অসমীয়া অভিধানৰ ডেৰশ বছৰ আৰু আধুনিক অভিধান প্ৰণেতাৰ সন্মুখত প্ৰত্যাহ্বান* (২০১১), দীপকজ্যোতি মহন্তৰ *অসমৰ ভাষাতাত্ত্বিক আৰু ভাষাবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন* (২০১৪) আৰু অভিজিত বৰাৰ *অভিধানতত্ত্ব আৰু অসমীয়া ভাষাৰ অভিধান* (২০১৫)গৱেষণা গ্ৰন্থতো অভিধানৰ বিষয়ে আলোচনা পোৱা যায়।

**১.০ *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*ৰ পৰিচয় ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধান*খনত সাধাৰণ অভিধান আৰু বিশিষ্ট অভিধান দুয়োটাৰে লক্ষণ পোৱা যায়। কেইবাটাও শিতানত অভিধানখনত অৰ্থ প্ৰদান কৰা হৈছে। অসমীয়া আৰু ইংৰাজী দুয়োটা ভাষাতে প্ৰবিষ্টি উপস্থাপন কৰিছে। মুঠ ২১ টা শিতানত অভিধানখনত বেলেগ বেলেগ বিষয় সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে।

অভিধানখনত তিনিধৰণৰ সাধাৰণ অভিধানৰ লক্ষণ পোৱা যায় — অসমীয়া-অসমীয়া, অসমীয়া-ইংৰাজী আৰু ইংৰাজী-অসমীয়া। অৰ্থাৎ অসমীয়া-অসমীয়া অভিধানখন হৈছে একভাষিক অসমীয়া অভিধান; য'ত প্ৰবিষ্টিৰ আটাইবোৰ দিশ অসমীয়া ভাষাতে আছে। অসমীয়া-ইংৰাজী আৰু ইংৰাজী-অসমীয়া অভিধান দুখনত দ্বিভাষিক অভিধানৰ লক্ষণ পোৱা যায়। অসমীয়া-ইংৰাজী অভিধানত শব্দসাৰ অসমীয়াত দিয়া আছে আৰু অৰ্থ বা সমাৰ্থক শব্দ ইংৰাজীত দিয়া আছে। ঠিক তেনেদৰে ইংৰাজী-অসমীয়া অভিধানত শব্দসাৰ ইংৰাজীত দিয়া আছে আৰু অৰ্থ অসমীয়াত দিয়া আছে।

অভিধানখনত বিশিষ্ট অভিধানৰ লক্ষণ পৰিস্ফুট হয়। বিভিন্ন বিশিষ্ট অভিধানৰ লক্ষণ সামগ্ৰিকভাৱে অভিধানখনত উপস্থাপন কৰা হৈছে। কেইবাখনো বিশিষ্ট অভিধানৰ লক্ষণ একেলগে পোৱা যায়। বিশ্বকোষীয় অভিধান, চিত্ৰ অভিধান, ফকৰা-যোজনাৰ অভিধান, সমাৰ্থক-বিপৰীতাৰ্থক শব্দৰ অভিধান আদি বিশিষ্ট অভিধানৰ ধৰ্ম অভিধানখনে বহন কৰিছে।

**২.০ *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* প্ৰবিষ্টি ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* প্ৰবিষ্টিৰ সাৰশব্দসমূহ দুটা ভাষাত পোৱা যায়, অসমীয়া আৰু ইংৰাজী। অসমীয়া ভাষাৰ শব্দসমূহ উপস্থাপন কৰোঁতে ইয়াত অসমীয়া ভাষাতে শব্দসাৰ দিয়া হৈছে আৰু ইংৰাজী ভাষাৰ শব্দৰ অসমীয়া ভাষাৰ অৰ্থ উপস্থাপন কৰোঁতে ইংৰাজী ভাষাত শব্দসাৰ দিয়া হৈছে। অসমীয়াত প্ৰবিষ্টি দিওঁতে অসমীয়া বৰ্ণমালাৰ ক্ৰম ৰক্ষা কৰিছে আৰু ইংৰাজীত প্ৰবিষ্টি দিওঁতে ইংৰাজী বৰ্ণমালাৰ ক্ৰম ৰক্ষা কৰা হৈছে। অভিধানখনত সাধাৰণ অভিধানত থকাৰ দৰে জতুৱা ঠাঁচ আৰু খণ্ডবাক্যৰো প্ৰয়োগ আছে।

**২.১ প্ৰবিষ্টিৰ বৰ্ণানুক্ৰমিকতা ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* প্ৰবিষ্টিসমূহ সংস্থাপন কৰোঁতে সেই প্ৰবিষ্টিবোৰ স্বৰৰপৰা ব্যঞ্জনলৈকে এটা ক্ৰম ৰক্ষা কৰা হৈছে। অসমীয়া ভাষাৰ স্বৰবৰ্ণমালা আৰু ব্যঞ্জনবৰ্ণমালাৰ ক্ৰম ৰক্ষা কৰি প্ৰবিষ্টিসমূহ সংস্থাপন কৰা হৈছে। অভিধানখনৰ বৰ্ণক্ৰমক দুই ধৰণেৰে ভাগ কৰি ল'ব পাৰি - স্বৰবৰ্ণ ক্ৰম আৰু ব্যঞ্জনবৰ্ণ ক্ৰম।

**২.১.১ স্বৰবৰ্ণ ক্ৰম ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* স্বৰবৰ্ণসমূহক অসমীয়া ভাষাৰ বৰ্ণমালাৰ ক্ৰমত ৰখা হৈছে; ক্ৰমে 'অ, আ, ই, ঈ, উ, ঊ, ঋ, এ, ঐ, ও আৰু ঔ'। এই ক্ৰমটো শব্দসাৰৰ আদি স্থানতহে ৰক্ষা কৰা হৈছে। শব্দসাৰৰ মধ্য বা অন্ত্য স্থানতো বৰ্ণৰ ক্ৰম ৰক্ষা কৰা দেখা যায়। অসমীয়া আখৰমালাত অসমীয়া ভাষাৰ ১১ টা আখৰ আছে। অভিধানখনত অসমীয়া ভাষাৰ আঠটা বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি বা বৰ্ণৰ /অ'/ আৰু /এ'/ বৰ্ণ দুটাৰ ভিতৰত /অ'/ বৰ্ণটোহে প্ৰবিষ্টি হিচাপে পৰিচয় দিছে আৰু বৰ্ণটো আদি স্থানত থকা শব্দসাৰ উল্লেখ কৰিছে কিন্তু /এ'/ বৰ্ণটোৰ প্ৰবিষ্টি হিচাপে কোনো পৰিচয় দিয়া নাই।

অসমীয়া ভাষাৰ বৰ্ণসমূহ পৰিচয় দিয়া হৈছে আৰু বৰ্ণকেইটাৰ বৰ্ণমালাত ক্ৰমও দিছে; যেনে — 'অ' অসমীয়া স্বৰবৰ্ণমালাৰ প্ৰথম আখৰ, 'আ' অসমীয়া স্বৰবৰ্ণমালাৰ দ্বিতীয় আখৰ।

**২.১.২ ব্যঞ্জনবৰ্ণ ক্ৰম ঃ**

অসমীয়া ভাষাৰ ব্যঞ্জনবৰ্ণ মালাৰ ক্ৰম অনুসৰি *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* শব্দসাৰৰ ক্ৰম কৰা হৈছে। 'ক' বৰ্ণৰপৰা 'য়'লৈকে বৰ্ণ মালাৰ ক্ৰম দেখুৱাইছে। কিন্তু অসমীয়া ভাষাত সকলো বৰ্ণৰে আদি স্থানত প্ৰয়োগ নাই, সেয়ে যিবোৰ বৰ্ণ আদি অৱস্থানত শব্দত প্ৰয়োগ নহয় তাৰ পৰিচয়ো অভিধানখনত নাই, যেনে - ঙ, ঞ, ড়, ঢ়, ৎ, ং, ঃ আৰু ঁ এই বৰ্ণকেইটাৰে অসমীয়া ভাষাত শব্দ আৰম্ভ নহয় গতিকে বৰ্ণক্ৰমত আদি স্থানত ইয়াৰ প্ৰয়োগ নাই। এই বৰ্ণকেইটাৰ উপৰিও 'য়' বৰ্ণৰ বৰ্ণ হিচাপে পৰিচয় দিয়া নাই। ং, ঃ আৰু ঁ ৰ ক্ৰমৰ উদাহৰণ দেখুওৱা হৈছে —**অনংগাৰি** প্ৰবিষ্টিৰ 'ং' ৰ পাছত **অনগ্ৰসৰ** প্ৰবিষ্টিৰ 'গ' ক্ৰম ৰখা হৈছে। চং শব্দৰ **ং** ৰ পাছত চখ শব্দৰ **খ** ক্ৰম ৰখা হৈছে। ঠিক সেইদৰে, 'ঃ' বৰ্ণটো অভিধানখনত 'ং' বৰ্ণৰ পাছতে ৰখা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে —**অংহিপ্ৰ**ৰ 'অ'ৰ পাছৰ 'ং'বৰ্ণৰ পাছতে আনটো অঃ প্ৰবিষ্টি স্থাপন কৰা হৈছে। '◌ঁ' বৰ্ণৰ ক্ৰম অভিধানখনত ং বৰ্ণৰ পাছত ৰখা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে — **খং সাৰ** শব্দৰ পাছত **খঁক** প্ৰবিষ্টিটো ৰখা হৈছে।

**৩.০ *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* আখৰ-জোঁটনি ঃ**

ভাষাত ব্যৱহাৰ কৰা ৰূপ বা শব্দসমূহৰ নিৰ্দিষ্ট শৃংখলেই আখৰ-জোঁটনি। বাক্যত ব্যৱহাৰ কৰা পদসমূহৰ সুশৃংখলিত বন্ধন বা গাঁথনিক আখৰ-জোঁটনি বোলা হয়। অসমীয়া ভাষাৰ আখৰ-জোঁটনিৰ সম্পৰ্কত বিভিন্ন ৰীতি পোৱা যায়। মাইলচ্ ব্ৰন্সনে *অচমিয়া আৰু ইংৰাজি অভিধান* ৰচনা কৰাৰপৰা বৰ্তমানলৈকে অসমীয়া ভাষাত বহুতো অভিধান প্ৰকাশ হৈছে আৰু অভিধানসমূহৰ আখৰ-জোঁটনিৰ নীতি বেলেগ বেলেগ হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। *অচমিয়া আৰু ইংৰাজি অভিধানত* অসমীয়া ভাষাৰ উচ্চাৰণৰ ভিত্তিত তাৰ আখৰ-জোঁটনি নিৰূপণ কৰিছিল কিন্তু তেওঁৰ পৰৱৰ্তী সময়ত প্ৰকাশ পোৱা হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ *হেমকোষ* অভিধানৰ আখৰ-জোঁটনি বেলেগ। অসমীয়া ভাষাত প্ৰকাশিত তৃতীয়খন অভিধান *চন্দ্ৰকান্ত অভিধানত* অসমীয়া ভাষাৰ আন এটা আখৰ-জোঁটনিৰ নীতি গ্ৰহণ কৰা হয় সেই নীতিক অনুকৰণ

কৰি পিছত গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ে আন এটা আখৰ-জোঁটনিৰ নীতি প্ৰস্তুত কৰে।

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* আখৰ-জোঁটনিৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰধানকৈ গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ আখৰ-জোঁটনিৰ ৰীতি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে। (সম্পাদকৰ মতে) কিন্তু তেওঁ উল্লেখ কৰিছে সচৰাচৰ ব্যৱহাৰ কৰা আখৰ-জোঁটনিও ইয়াত আছে।

**৩.১ ৰেফযুক্ত দ্বিত্ব বৰ্জন ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* ৰেফযুক্ত দ্বিত্ব বৰ্ণসমূহত ৰেফযুক্তভাৱে ব্যৱহাৰ কৰা দুটা বৰ্ণৰপৰা এটা বৰ্ণ বাদ দিয়া হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে — কার্য -বি. কাম; সকাম। সূর্য - বি. পোহৰ আৰু তাপ বিকিৰণকাৰী সৌৰজগতৰ কেন্দ্ৰস্থ নক্ষত্ৰ। পর্বত - বি. ওপৰলৈ ক্ৰমে ঠেক হৈ যোৱা ওখ আৰু বৃহৎ শিলাময় ভূমি; গিৰি।

**৩.২ 'ঙ' সংযুক্ত শব্দত 'ং' ৰ ব্যৱহাৰ ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* 'ঙ' সংযুক্ত 'ক্ষ'ৰ সলনি 'ংক' আৰু 'ঙ্গ'ৰ সলনি 'ংগ' প্ৰয়োগৰ ৰীতি দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে — অংক - বি. গণনাৰ চিন হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰা শূন্যৰপৰা ন লৈকে ৰাশিবোৰ। গণিতৰ নিয়মেৰে কৰা গণনা (পূৰণ, হৰণ আদি)। নাটকৰ আধ্যা বা পৰিচ্ছেদ। কোলা (যেনে— অংকশায়ী)। চিহ্ন; চিন; ৰেখা। কলংক।

**৩.৩ দুটা 'আ' ওচৰা-ওচৰিকৈ থাকিলে 'এ'ৰ প্ৰয়োগ ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* দুটা ওচৰা-ওচৰিকৈ 'আ' থকা প্ৰবিষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰথম 'আ' টো 'এ' ৰূপেও শব্দসাৰত প্ৰয়োগ কৰা পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে — এন্ধাৰ - বি. আন্ধাৰ; পোহৰ নথকা অৱস্থা। বিণ. পোহৰ নথকা (যেনে- এন্ধাৰ ৰাতি)। এজাৰ - বি. বেঙেনাবুলীয়া ফুল ধৰা সুকাঠী গছ-বিশেষ।

**৩.৪ 'চ', 'শ' যুক্ত প্ৰবিষ্টিত 'ছ' হিচাপে প্ৰয়োগ ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* সাধাৰণতে মধ্য আৰু অন্ত্যত 'চ' আৰু 'শ' প্ৰয়োগ হোৱা শব্দসমূহক প্ৰবিষ্টি হিচাপে উপস্থাপন কৰোঁতে 'ছ' হিচাপে প্ৰয়োগ কৰিছে। বিছ - বি. দুই দহ; একুৰি।

**৪.০ সংযোজক নীতি ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* আখৰ-জোঁটনিৰ ক্ষেত্ৰত আন এটা মন কৰিবলগীয়া নীতি হৈছে সংযোজক নীতি। সংযোজক চিন (Hyphen)এৰে প্ৰবিষ্টি গঠন কৰা হয়। যুৰীয়া শব্দ প্ৰবিষ্টি হিচাপে উত্থাপন কৰোঁতে তাত সংযোজক চিন ব্যৱহাৰ কৰাৰ লগতে সমাসবদ্ধ শব্দৰ প্ৰবিষ্টিতো সংযোজক চিনৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। উদাহৰণ — ভাই-ককাই - বি. ককাই-ভাই; একে মাক-বাপেকৰপৰা জন্ম হোৱা ল'ৰা সন্তানৰ মাজৰ সম্পৰ্ক। ডা-ডাঙৰীয়া - বি. গণ্য-মান্য ব্যক্তিসকল; বিষয়ববীয়াসকল। গছ-গছনি - বি. গছ আৰু অন্যান্য উদ্ভিদ; গছ-বিৰিখ।

**৫.০ *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* ব্যাকৰণগত সম্ভেদ ঃ**

অভিধান এখন প্ৰবিষ্টিত পদ (parts of speech) ৰো পৰিচয় পোৱা যায়; ইয়াৰ লগতে কিছুমান ব্যাকৰণগত ৰূপ সাধনো প্ৰবিষ্টিত পোৱা যায়। এইসমূহে প্ৰবিষ্টিৰ ব্যাকৰণগত দিশৰ সন্ধানত সহায় কৰে। অভিধানৰ প্ৰবিষ্টিত বাক্যত ব্যৱহাৰ কৰা পদসমূহৰ পৰিচয় দিয়া থাকে (যেনে - বিশেষ্য পদ, ক্ৰিয়া পদ আদি)। এইসমূহ অভিধান এখনত পোনপটীয়াকৈ প্ৰবিষ্টিৰ কাষতে সংস্থাপন কৰা হয়। কিন্তু অভিধানৰ প্ৰবিষ্টিবোৰৰ মাজত কিছুমান বাক্যত ব্যৱহাৰ কৰিব পৰা ব্যাকৰণসিদ্ধ শব্দৰ সাধিত ৰূপ থাকে। ব্যাকৰণসম্মত সাধিত শব্দবোৰ ব্যাকৰণৰ বিষয়। ব্যাকৰণৰ সম্ভেদে বাক্যৰ গঠন বিধিৰ ইংগিত দিব পাৰিব লাগে। (গোস্বামী, পৃ. ৪২)

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* প্ৰবিষ্টিত থকা ব্যাকৰণগত সম্ভেদসমূহক গৱেষণা কৰ্মত দুটা দিশৰপৰা অধ্যয়ন কৰা হৈছে —

ক) পদ পৰিচিতিগত ব্যাকৰণৰ সম্ভেদ

খ) শব্দসাধনগত ব্যাকৰণৰ সম্ভেদ

**৫.১ পদ পৰিচিতিগত ব্যাকৰণৰ সম্ভেদ ঃ**

পদ পৰিচিতিগত ব্যাকৰণৰ সম্ভেদে বাক্যৰ ব্যৱহাৰত শব্দসাৰ এটা কি পদ হিচাপে প্ৰয়োগ হয় তাৰ সম্ভেদ দিয়ে, সেই পদটোৰ নাম কি তাৰ আভাস দিয়ে। *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* পদসমূহৰ পৰিচিতি সংক্ষিপ্তভাৱে শব্দসাৰৰ কাষত দিয়া আছে। ব্যৱহাৰকাৰীয়ে অভিধানখন ব্যৱহাৰ কৰাৰ সময়ত শব্দসাৰটো কি পদ সেয়া বিচাৰি পায়। *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* প্ৰয়োগ কৰা এই ব্যাকৰণগত সম্ভেদসমূহৰ সংক্ষিপ্ত ৰূপৰ তালিকা হৈছে —

| | |
|---|---|
| বি. | বিশেষ্য |
| বিণ. | বিশেষণ |

| | |
|---|---|
| ক্রি. বিণ. | ক্রিয়া বিশেষণ |
| সর্ব. | সর্বনাম |
| ধা. | ধাতু |
| অব্য. | অব্যয় |
| অনুক. | অনুকাৰ |

**৫.১.১ বিশেষ্য পদ ঃ**

অভিধানখনৰ সৰহসংখ্যক প্ৰবিষ্টি বিশেষ্য পদৰ। বিশেষ্য পদৰ উদাহৰণস্বৰূপে, অংগদ - বি. বাহুত পিন্ধা এবিধ অলংকাৰ; বাজু। (ৰামায়ণ) কিষ্কিন্ধ্যাৰাজ বালীৰ পুত্ৰ। ঘেঁচ - বি. জৰীত সী লোৱা মণিৰ খন্দা বা ভাগ (যেনে - মণিধাৰত দুই ঘেঁচ আছে)।

**৫.১.২ বিশেষণ পদ ঃ**

প্ৰবিষ্টিৰ বিশেষণ পদৰ পৰিচয় দিবৰ বাবে প্ৰবিষ্টিৰ অৰ্থ নিৰ্বাচন বাকচত বিণ. সংক্ষিপ্ত ৰূপটো দিয়া হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, গ'ল - বিণ. গত; অতীত (যেনে— গ'ল বছৰ)। চিঁচিৰা - বিণ. চিঞা; আন অংশতকৈ লাহী বা খীণ।

**৫.১.৩ ক্ৰিয়া বিশেষণ ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* প্ৰবিষ্টিত ক্ৰিয়া বিশেষণ পদৰ পৰিচিতিও দিয়া আছে। উদাহৰণস্বৰূপে, ভক্তিভৰে - ক্রি. বিণ. ঈশ্বৰৰ প্ৰতি বা মান্যজনৰ প্ৰতি গভীৰ শ্ৰদ্ধা ভাবৰ সৈতে। ক্ষণো - ক্রি. বিণ. কেতিয়াবা; মাজে-সময়ে।

**৫.১.৪ সর্বনাম ঃ**

অভিধানখনত সর্বনাম পদৰ প্ৰবিষ্টিৰো পৰিচিতি দিয়া আছে। উদাহৰণস্বৰূপে, মই - সর্ব. বক্তা স্বয়ং; কওঁতাজনে নিজক বুজোৱা শব্দ; একবচনত প্ৰথম পুৰুষ (ব্যাকৰণ)। এইটি - সর্ব. আগত বা ওচৰত থকা কোনো বস্তু বা সৰু প্ৰাণী আদিক নির্দিষ্টকৈ বুজোৱা শব্দ; 'এইটো' শব্দৰ কোমল ৰূপ।

**৫.১.৫ ধাতু ঃ**

অভিধানখনত অসমীয়া ভাষাৰ ধাতুকো প্ৰবিষ্টি হিচাপে উল্লেখ কৰিছে। যেনে, শ'লঠেকত পৰ - ধা. এৰাব নোৱৰা বিপদত পৰ। জক্‌মকা - ধা. চকমকা; উজ্জ্বল ৰঙীন ৰশ্মিৰদ্বাৰা উজলি উঠ।

**৫.১.৬ অব্যয় পদ ঃ**

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* অসমীয়া ভাষাৰ অব্যয় পদকো শব্দসাৰ হিচাপে ৰখা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, হ'বলা - অব্য. হ'ব পায়; কিজানি; 'অনুমান হয়' - এনে অর্থ-প্রকাশক শব্দ (যেনে— তেওঁ আহিল হ'বলা)। কি - অব্য. প্রশ্নবোধক শব্দ-বিশেষ; নির্দিষ্ট কিবা এটা সম্পর্কে নিশ্চিত হ'বলৈ প্রশ্ন কৰা শব্দ (যেনে— কি আনিছা?, কি খাইছা?)।

**৫.১.৭ অনুকাৰ ঃ**

অসমীয়া ভাষাৰ অনুকাৰ শব্দও অভিধানখনত শব্দসাৰ হিচাপে ৰখা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, ভক্ ভক্ - অনুক. পুৰিলে হোৱা পীড়াৰ ভাব-প্রকাশক শব্দ। ধপ্ ধপ্ - অনুক. ডাঙৰ চৰায়ে ডেউকা কোবালে বা বহল পাতেৰে বেগাই কোবালে হোৱাৰ দৰে শব্দ। ঘনাই বুকু বা কলিজা কঁপাৰ শব্দ।

**৫.১.৮ অসমাপিকা ক্ৰিয়া ঃ**

অসমীয়া ভাষাৰ বহুতো অসমাপিকা ক্ৰিয়াৰ শব্দ অভিধানখনত অন্তর্ভুক্ত কৰিছে। যেনে, নকৰা - অস.ক্রি. যিটো কৰা হোৱা নাই; সম্পন্ন নোহোৱা। দংশি - অস.ক্রি. (সাপে) দংশন কৰি; কামুৰি।

**৫.২ শব্দসাধনৰ ব্যাকৰণগত সম্ভেদ ঃ**

প্ৰবিষ্টিয়ে ব্যাকৰণগত চাহিদা পূৰণৰ সময়ত ব্যৱহাৰকাৰীক সহায় কৰে। ব্যাকৰণৰ চাহিদা পূৰণ কৰা প্ৰবিষ্টিসমূহ হৈছে অভিধান এখনৰ শব্দসাধৰ ব্যাকৰণগত সম্ভেদ। বদ্ধৰূপসমূহক প্ৰবিষ্টি হিচাপে স্থাপন কৰা আৰু মুক্তৰূপৰ লগত বদ্ধৰূপ (কাৰক বিভক্তি আৰু শব্দবিভক্তি) যোগ হোৱা প্ৰবিষ্টিসমূহৰ প্ৰয়োগ অভিধানখনত উপস্থাপন কৰা হৈছে। এই ব্যাকৰণগত সম্ভেদৰ আলোচনা কৰা হৈছে। বদ্ধৰূপসমূহকো অভিধানখনত শব্দসাৰ হিচাপে ৰখা হৈছে আৰু তাৰ অর্থ বর্ণনা বা সংজ্ঞা, উদাহৰণ আদিৰ সহায়ত দিয়া হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, বি - শব্দ একোটাৰ আদিতে যোগ হৈ উৎকৃষ্টতা, বিশিষ্টতা, অভাৱ, বৈপৰীত্য, বিকাৰ, অনুৎকৃষ্টতা আদি বুজোৱা উপসর্গ-বিশেষ (যেনে— বিপক্ষ, বিকৃত আদি)। মখা - অনুস. ডাঙৰ মুঠা বা আটি; জাক; সমূহ (সাধাৰণতে ইতৰ প্ৰাণীত খাটে, তুচ্ছার্থত মানুহৰ ক্ষেত্রতো প্রয়োগ হয়)।

**৬.০ অর্থ সংস্থাপন ঃ**

শব্দত অর্থ আৰোপ কৰা মানৰ সমাজৰ এক মানসিক ব্যাপাৰ। (গোস্বামী, পৃ. ৪৪) অর্থ বিভিন্ন দিশৰ লগত জড়িত হৈ থাকে। সামাজিক, অর্থনৈতিক, ৰাজনৈতিক, সাংস্কৃতিক দিশৰ লগত জড়িত শব্দসমূহৰ অর্থ প্রসংগ অনুসৰি বেলেগ

বেলেগ হয়। *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* শব্দসমূহৰ অর্থ উপস্থাপন বেলেগ বেলেগ ধৰণেৰে কৰা হৈছে। *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* অর্থ সংস্থাপন কৰোঁতে শব্দগোটৰ বর্ণনা আৰু সংজ্ঞা, একে অর্থবাচক অন্য শব্দৰ সমৰূপক অর্থ, উদাহৰণৰ যোগেদি, বর্ণনামূলক চিত্র, ক্রম নির্দেশনা আৰু মর্যাদা - এই দিশবোৰৰ জৰিয়তে অর্থ স্পষ্ট কৰিছে।

**৬.১ শব্দগোটৰ বর্ণনা আৰু সংজ্ঞা ঃ**

শব্দৰ অর্থ স্পষ্ট কৰিবৰ বাবে শব্দসাৰটোৰ অর্থ বর্ণনা বা সংজ্ঞাৰ মাধ্যমেৰে দিয়া হয়। বর্ণনা বা সংজ্ঞা কোনো কাৰণতে দ্ব্যর্থবোধক হ'ব নালাগে। (কোঁৱৰ, পৃ. ২৪) যিহেতু শব্দৰ পোনপটীয়া অর্থ প্রদান কৰাই অভিধানৰ উদ্দেশ্য গতিকে সেই অর্থ বর্ণনা বা সংজ্ঞাত্মকভাৱে অভিধানত দিয়া থাকে। *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* বর্ণানুক্রমিকভাৱে উপস্থাপন কৰা প্রবিষ্টিবোৰৰ অর্থ প্রদানত বর্ণনা আৰু সংজ্ঞা দিয়া হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে , খমখমীয়া - বিণ. যিটো শুকান আৰু লৰচৰ কৰিলে খম্‌খমাই উঠে; মাড় দি শুকুৰাই থোৱা (কাপোৰ)। বংগদেশ - বি. ভাৰত উপ-মহাদেশৰ অসমৰ পশ্চিমে থকা অঞ্চল, য'ত বঙালী লোকৰ বসতি (বর্তমান ইয়াৰে পশ্চিমবংগ ভাগ ভাৰতৰ ৰাজ্য, পূর্ববংগ ভাগ বাংলাদেশ)।

**৬.২ একে অর্থবাচক অন্য শব্দৰ সমৰূপক অর্থ নির্দেশ ঃ**

কিছুমান শব্দৰ বর্ণনা বা সংজ্ঞাৰ জৰিয়তে অর্থ দিলেও তাৰ সমৰূপক আন অর্থৰ সহায়তহে অভিপ্রেত অর্থটো বেছি স্পষ্ট হয়। তেতিয়া সেই শব্দটোৰ অর্থৰ বাবে একে অর্থবাচক শব্দ দিয়া হয় যাতে ব্যৱহাৰকাৰীয়ে সেই একে অর্থবাচক শব্দৰ জৰিয়তে শব্দটোৰ অর্থ বিচাৰি উলিয়াব পাৰে। *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* যিসমূহ শব্দৰ অর্থ স্পষ্ট কৰিবৰ বাবে বর্ণনা বা সংজ্ঞা অক্ষম হয় তেনেবিলাক শব্দৰ অর্থ একে অর্থবাচক আন শব্দৰ জৰিয়তে দিয়া হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, কুণ্ড - বি. গাঁত; গহ্বৰ। জলাশয়; নাদ; পুখুৰী। পানী থ'বৰ বাবে বিশেষভাৱে তৈয়াৰী পাত্র (যেনে— তাম্রকুণ্ড)। ভকভকা - ধা. চেংচেঙা; ভক্ ভক্ কৰ।

**৬.৩ উদাহৰণৰ যোগেদি ঃ**

অভিধান এখনত অর্থ স্পষ্ট কৰিবৰ বাবে বর্ণনা বা সংজ্ঞা দিয়াৰ পিছত শব্দটোৰ অর্থ অধিক বোধগম্য কৰিবৰ বাবে ভাষাত ব্যৱহাৰ কৰা কিছুমান বাক্য বা বাক্যাংশ উদাহৰণ হিচাপে দিয়া হয়। *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* তেনে ধৰণৰ উদাহৰণ বহু পৰিমাণে পোৱা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে, খন্দ মাৰি দে - ধা. কিছু বছৰলৈ চুক্তি কৰি মাটিত খেতি কৰিবলৈ দে (যেনে - দুবছৰলৈ খন্দ মাৰি মাটি দিছে)। খমলা - বি. কোনো তৰল বস্তুৰ তৰলতা কমি গোট মৰা অৱস্থা (যেনে - খমলা দৈ); সেমেকি ইটোৰ গাত সিটো লাগি ধৰি লদা আকাৰ লোৱা গুড়ি বস্তু।

**৬.৪ মর্যাদা ঃ**

বিশেষ অঞ্চল, ব্যৱসায় অনুযায়ী ভাষাৰ ভেদ আৰু শৈলী অনুসৰি বেলেগ ধৰণেৰে ব্যৱহাৰ কৰা শব্দবোৰ বুটলি আনি সামাজিক আৰু আঞ্চলিকভাৱে স্বীকৃত উপযুক্ত ৰূপবোৰ অভিধানত ঠাই দিয়া হয়। (কোঁৱৰ, পৃ. ২৫)এই শব্দবোৰক অভিধানত ৰাখি শব্দবোৰক মর্যাদা প্রদান কৰা হয়। *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* অসমৰ নৃগোষ্ঠীয় ভাষাৰ শব্দকো প্রবিষ্টি হিচাপে মর্যাদা প্রদান কৰা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, কং (খাচি) - বি. বায়েকক কৰা সম্বোধন; কেঁচুৰা ৰখা ঠাই। বখৰা (ৰাভা) - বি. ভাগ; অংশ।

**৭.০ *অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* বিশিষ্ট অভিধানৰ লক্ষণ ঃ**

*অসমীয়া ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানত* সাধাৰণ অভিধানৰ লক্ষণ থকাৰ লগতে বিশিষ্ট অভিধানবো কিছুমান লক্ষণ পোৱা যায়। এই লক্ষণসমূহে মুদ্রিত সাধাৰণ অভিধান এখনতকৈ ছ্ফ্টৰেৰ অভিধানখনে বেলেগ ৰূপ প্রদান কৰিছে। সেয়ে আমাৰ গৱেষণা কর্মত বিশিষ্ট অভিধানৰ লক্ষণসমূহক সাধাৰণ অভিধানৰ লক্ষণৰ সমানেই গুৰুত্ব প্রদান কৰা হৈছে। বিশ্বকোষীয় লক্ষণ, নির্দিষ্ট বিষয় সম্পর্কীয় (সমার্থক আৰু বিপৰীতার্থক শব্দ, চিত্র, বৈজ্ঞানিক নাম) দিশ অভিধানখনত অন্তর্ভুক্ত হৈছে। বিশ্বকোষ, নির্বাচিত চিত্র, যুক্তাক্ষৰ, বৈজ্ঞানিক নাম, সমার্থক আৰু বিপৰীতার্থক শব্দ, সংক্ষিপ্ত ৰূপ আদি বিশিষ্ট লক্ষণযুক্ত অভিধানৰ বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

**৭.১ বিশ্বকোষৰ লক্ষণ ঃ**

বিশ্বকোষত ২০ টা শিতানেৰে বিভিন্ন বিষয়ৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিছে, সেইকেইটা ক্রমে - স্বনামধন্য ব্যক্তি, বিজ্ঞান আৱিষ্কাৰ, শিক্ষানুষ্ঠান, গ্রন্থ আলোচনী, চৰাই, জাতি-জনজাতি, বুৰঞ্জী, বঁটা, পর্যটন-সম্পর্কীয়, ঠাই, উৎসৱ, ৰোগ, খেল, অনুষ্ঠান-প্রতিষ্ঠান-সংস্থা, অন্যান্য, অসমৰ জিলাসমূহ, অসমৰ অভয়াৰণ্য, কুটিৰ শিল্প, কৃষ্টি-সংস্কৃতি আৰু শাক-পাচলি, ফলমূল। এই শিতানসমূহৰ প্রবিষ্টিবোৰৰ আলোচনা

সাধাৰণ অভিধানৰ দৰেই কৰিব পাৰি। *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানৰ* বিশ্বকোষৰ প্ৰবিষ্টি নিৰূপণৰ ক্ষেত্ৰত বৰ্ণানুক্ৰম, আখৰ-জোঁটনি, অৰ্থ সংস্থাপনৰ দিশকেইটা জড়িত হৈ আছে।

শব্দসাৰসমূহ অসমীয়া আৰু ইংৰাজী দুয়োটা ভাষাতে দিয়া হৈছে। অসমীয়া বৰ্ণমালাৰ ক্ৰম অনুসৰি প্ৰবিষ্টিসমূহ সংস্থাপন কৰা হৈছে কিন্তু ইংৰাজী শব্দসাৰসমূহ অসমীয়াৰ স্থানতে পৰিভাষাৰ ৰূপটোৰ প্ৰয়োগ কৰি উপস্থাপন কৰা হৈছে।

বিশ্বকোষৰ লক্ষণৰ ভিতৰত অৰ্থৰ বৰ্ণনাৰ দিশটো জড়িত হৈ থাকে। গতিকে ইয়াৰ অৰ্থৰ দিশত সেয়া মন কৰিবলগীয়া। শব্দৰ অৰ্থ বৰ্ণনা, ছবি, উদাহৰণৰ জৰিয়তে বিশ্বকোষ শিতানত অন্তৰ্ভুক্ত কৰিছে।

### ৭.২ নিৰ্বাচিত চিত্ৰৰ শিতান ঃ

*অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* উপলব্ধ এটা শিতান হৈছে চিত্ৰ। এই শিতানৰ লক্ষণ অনুসৰি ইয়াক বিশিষ্ট অভিধানৰ শাৰীত ৰখা হয়। চিত্ৰৰ শিতানটোক চিত্ৰ অভিধান বুলিব পাৰি। সাধাৰণ অভিধান এখনত প্ৰবিষ্টিৰ অৰ্থ স্পষ্ট কৰিবৰ বাবে চিত্ৰৰ প্ৰয়োগ কৰা হয়, কিন্তু *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* **নিৰ্বাচিত চিত্ৰৰ** শিতানত শব্দৰ পৰিচয় কেৱল চিত্ৰৰ মাজেদিয়েই দিছে। ইয়াৰ শব্দসাৰ কেৱল চিত্ৰ সংস্থাপনৰ বাবেই ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে; চিত্ৰৰ সমান্তৰালভাৱে কোনো ধৰণৰ শাব্দিক ব্যাখ্যা পোৱা নাযায়। চিত্ৰসমূহ সংযোজন কৰাৰ পাছত চিত্ৰৰ কাষতে চিত্ৰ সংগ্ৰহকাৰীৰ নাম দিয়া আছে। **নিৰ্বাচিত চিত্ৰত** চিত্ৰ বাচি উলিয়াবৰ বাবে নটা মূল শিতান আছে, ক্ৰমে - চৰাই, জন্তু, পৰ্যটন-সম্পৰ্কীয়, ফুল, ফল, অন্যান্য, নৃত্য, কৃষ্টি-সংস্কৃতি আৰু শাক-পাচলি, উদ্ভিদ। এই শিতানসমূহৰপৰা ব্যৱহাৰকাৰীয়ে নিজৰ প্ৰয়োজনীয় শিতানৰ চিত্ৰ বাচি উলিয়াব পাৰে। *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* নিৰ্বাচিত চিত্ৰৰ ক্ষেত্ৰত কোনো ধৰণৰ বৰ্ণক্ৰম ৰক্ষা কৰা হোৱা নাই।

### ৭.৩ জতুৰা-ঠাঁচ আৰু খণ্ডবাক্যৰ শিতান ঃ

অভিধানখনত জতুৰা-ঠাঁচ আৰু খণ্ডবাক্যৰ একোটা সুকীয়া শিতান আছে। শব্দসাৰসমূহ জতুৰা-ঠাঁচ আৰু খণ্ডবাক্যত প্ৰতিষ্ঠা কৰি তাৰ অৰ্থ বৰ্ণনা আৰু সংজ্ঞাৰ মাজেদি প্ৰকাশ কৰিছে। অসমীয়া ভাষাত ব্যৱহাৰ কৰা এই জতুৰা-ঠাঁচ আৰু খণ্ডবাক্যসমূহক *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* দুটা ভাগত ভাগ কৰি অৰ্থ আগবঢ়াইছে; ইয়াৰ ব্যাখ্যাও দাঙি ধৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে — 'ক'লেও আয়ে কিল খায়, নক'লেও বোপায়ে চুৰাতে খায় ঃ মাকে বাপেকক চুৰা পাতত খাবলৈ দিয়া দেখি পুতেক বিমোৰত পৰিছে। কাৰণ বাপেকক ক'বলৈ গ'লে মাকে মাৰ খাব আৰু নক'বলৈ হ'লে বাপেকে চুৰাতে খাব। অৰ্থাৎ উভয়-সংকটৰ মাজত দোধোৰ-মোধোৰ অৱস্থাত পৰা।'; 'দৰিদ্ৰ লংকালৈ যায়, সাগৰো শুকায়, মাণিকো লুকায় - সাগৰৰ মাজত থকা লংকাত ধন, সোণ, মণি-মুকুতাৰ অভাৱ নাই। অথচ সেই ঠাইলৈ যদি দৰিদ্ৰজনে মণি-মুকুতা বিচাৰি যায়, সাগৰখন শুকাই যোৱাৰ লগতে মণি-মুকুতাও লুকাই পৰে। অৰ্থাৎ দৰিদ্ৰজন যিমানে ধন-সোণ থকা ঠাইলৈ গ'লেও তেওঁলোকৰ দুখ বা অভাৱ কেতিয়াও অন্ত নহয়।' আদি।

### ৭.৪ সমাৰ্থক আৰু বিপৰীতাৰ্থক শব্দৰ শিতান ঃ

সমাৰ্থক শব্দসমূহ একেশাৰীতে উল্লেখ কৰিছে। প্ৰয়োজনীয় শব্দৰ সমাৰ্থক শব্দ বিচাৰিবৰ বাবে নিৰ্বাচনৰ বাকচত গৈ বিচাৰি ল'ব পাৰি। বিপৰীতাৰ্থক শব্দৰ বাবে বেলেগ শিতান ৰাখিছে। বিপৰীত শব্দসমূহক ইটোৰ সিটোৰ ওচৰতে সংস্থাপন কৰা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে — সমাৰ্থক শব্দ ঃ 'অকথিত, অনুক্ত, অব্যক্ত'; 'অখণ্ড, অভগ্ন, অখণ্ডিত, অবিভক্ত, অখণ্ডনীয়' আদি। বিপৰীতাৰ্থক শব্দ ঃ 'অংগচ্ছেদন-অংগসংস্থাপন'; 'অংশকালীন-পূৰ্ণকালীন' আদি।

### ৭.৫ সংক্ষিপ্ত ৰূপ ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ সংক্ষিপ্ত ৰূপৰ লগতে ইংৰাজী সংক্ষিপ্ত ৰূপৰ সম্পূৰ্ণ ৰূপ *অসমীয়া ছফ্‌টৱেৰ অভিধানত* আছে। ইংৰাজী সংক্ষিপ্ত ৰূপসমূহকেই অসমীয়া লিপিলৈ ৰূপান্তৰ কৰি লিখা হৈছে ইয়াৰ লগতে কেনেধৰণৰ অৰ্থত প্ৰয়োগ কৰা হয় সেয়াও উল্লেখ কৰা থাকে। উদাহৰণস্বৰূপে — 'বি এল টি - বড়ো লিবাৰেশ্যন টাইগাৰ্ছ (বড়ো জনগোষ্ঠীৰ অধুনালুপ্ত এটা সশস্ত্ৰ বিদ্ৰোহী সংগঠন)'; 'এ এ আই - ভাৰতীয় বিমান বন্দৰ প্ৰাধিকৰণ' আদি।

### ৭.৬ কাৰ্যালয়ৰ শব্দ ঃ

সততে কাৰ্যালয়ত ব্যৱহাৰ হৈ থকা শব্দ বা কাৰ্যালয়ৰ লগত জড়িত নাম শব্দসমূহক অভিধানখনত উল্লেখ কৰা হৈছে। ইংৰাজী শব্দসমূহৰ অসমীয়া প্ৰতিশব্দৰ লগতে অসমীয়া শব্দসমূহৰ ইংৰাজী প্ৰতিশব্দ অন্তৰ্ভুক্ত কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে — 'ইচ্ছাপত্ৰ - Will'; 'জলসিঞ্চন প্ৰদৰ্শক - Irrigation Demontstrator' আদি।

**৮.০ উপসংহাৰ ঃ**

● *অসমীয়া ছ্ফ্টৱেৰ অভিধানত* দ্বিভাষিক অভিধানৰ লক্ষণ পোৱা যায়। কিন্তু 'অসমীয়া অভিধান' শিতানটোত একভাষিক লক্ষণ পোৱা যায়।

● বৰ্ণানুক্ৰম অভিধানখনত নিৰ্দেশ কৰা হৈছে। সেই অনুসৰি বৰ্ণানুক্ৰমৰ তালিকা এখনো কাষতে সংযোগ কৰা থাকে।

● *অসমীয়া ছ্ফ্টৱেৰ অভিধানত* গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ আখৰ-জোঁটনি নীতি গ্ৰহণ কৰিছে।

● *অসমীয়া ছ্ফ্টৱেৰ অভিধানত* সাধাৰণ অভিধানৰ লক্ষণ থকাৰ লগতে বিশিষ্ট অভিধানৰো লক্ষণ পোৱা যায়। বিশ্বকোষীয় লক্ষণ, সমাৰ্থক আৰু বিপৰীতাৰ্থক শব্দকোষ, জতুৱা-খণ্ডবাক্যৰ অভিধান, চিত্ৰ অভিধানৰ চৰিত্ৰ এই অভিধানখনে বহন কৰিছে। ❑


**গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ**

কোঁৱৰ, অৰ্পণা। *অভিধানতত্ত্ব*। প্ৰথম প্ৰকাশ, অসম বুক ট্ৰাষ্ট। ২০১৯।

কোঁৱৰ, অৰ্পণা, অনুৰাধা শৰ্মা।*ভাষাবিজ্ঞান পাৰিভাষিক কোষ*। প্ৰথম প্ৰকাশ, অসমীয়া বিভাগ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়। ২০০৮।

গোস্বামী, বসন্ত কুমাৰ। *অভিধান-তত্ত্ব*। প্ৰথম প্ৰকাশ, যোৰহাট অসম সাহিত্য সভা। ১৯৯৭।

Fuerts-Olivera, Pedro A. and Henning Bergenholtz. *e-Lexicography The Intenet, Digital Initiatives and Lexicography*. 1st published, Continuum International Publishing Group. 2011.

Granger, Sylviane and Magali Paquot (ed.). *Electronic Lexicography*. 1st published, Oxford University Press. 2012.

গগৈ, কৰবী। *অসমীয়া অভিধানৰ ডেৰশ বছৰ আৰু আধুনিক অভিধান প্ৰণেতাৰ সন্মুখত প্ৰত্যাহ্বান*। অসমীয়া বিভাগ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়। ২০১১।

বৰা, অভিজিৎ। *অভিধানতত্ত্ব আৰু অসমীয়া ভাষাৰ অভিধান*। আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়। ২০১৫ Meitei, Sagolsem Poreiton. *Electronic Dictionary Manipuri to English and its Impect in Development of Manipuri language.* Department of Computer Science, Assam University. 2010.

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

# নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ দৃষ্টিৰে বিহুগীতৰ ভাষা ঃ এটি অধ্যয়ন

হিনাশ্রী দিহিঙীয়া

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-৭৮১০০১
৭০০২৪৮৭৯৫৫
hinashree21@gmail.com

**সাৰাংশ ঃ**

ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ প্ৰাক্-ইতিহাস জানিবলৈ মানুহ সদায় আগ্ৰহী। ভাষা মানৱ-সংস্কৃতিৰ এক অপৰিহাৰ্য অংগ হোৱাৰ বাবে ভাষা অধ্যয়নৰ লগে লগে সাংস্কৃতিক দিশৰো বহু কথাৰ সন্ধেদ পোৱা যায়। ভাষা অধ্যয়নত সাধাৰণতে নৃতাত্ত্বিক দৃষ্টিভঙ্গীৰে ভাষাৰ ভিন্নতা, পৰিৱৰ্তন আদি আৰম্ভণিৰ পৰা অনুসন্ধান কৰি বিশ্লেষণ কৰা হয়। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞান বুলিলে ভাষাৰ লগত নৃতত্ত্বৰ সম্পৰ্ক কি তাৰ প্ৰণালীৱদ্ধ অধ্যয়নক সূচায়। অৰ্থাৎ য'ত ভাষাক সাংস্কৃতিক সম্পদ আৰু অভ্যাস হিচাপে অধ্যয়ন কৰা হয় সিয়েই হ'ল নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞান।

নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞান প্ৰতিষ্ঠাৰ মূলতে এডৱাৰ্ড চাপিৰ। চাপিৰে তেওঁৰ এই বিষয়ৰ অধ্যয়নত মূল প্ৰতিপাদ্য বিষয় হিচাপে ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ পাৰস্পৰিক সম্পৰ্কৰ বিশ্লেষণ বুলিয়েই অভিহিত কৰিছে। আমাৰ সংস্কৃতিৰ এক অপৰিহাৰ্য অংগ হৈছে বিহুগীতবোৰ। সামাজিক, সাংস্কৃতিক, সাহিত্যিক আৰু সাংগীতিক মূল্যৰ দ্বাৰা বিহুগীতে অসমীয়া লোকসাহিত্যৰ ভঁৰাল অতীজৰে পৰা চহকী কৰি আছে। বিহুগীতে কেৱল বিহুৰ দৰে বসন্তকেন্দ্ৰিক সংস্কৃতিকেই চহকী কৰা নাই, ই মানুহৰ জীৱন-যাত্ৰা, চিন্তা-চেতনা, সুখ-দুখ, আনন্দ-বিষাদ আৰু সদ্ভাৱ-সমন্বয়ৰ মাধ্যমত পৰিণত হৈছে। সেয়েহে বিহুগীত অসমৰ জাতীয় জীৱনৰ এৰাব নোৱাৰা অংগ। অতীতৰে পৰা বৰ্তমানলৈ বহুতো বিহুগীত সমাজত প্ৰচলিত হৈ আছে। এই বিহুগীতবোৰত প্ৰকাশ পোৱা ভাষা, শব্দ আদি নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ লগত কিদৰে জড়িত হৈ আছে আৰু এইবোৰ শব্দৰ দ্বাৰা অসমীয়া সংস্কৃতিৰ চিত্ৰ এখন কিদৰে প্ৰতিফলিত হৈ আছে তাৰেই আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

**বীজশব্দ ঃ**

বিহুগীত, নৃতাত্ত্বিক ভাষা-বিজ্ঞান, অসমীয়া সমাজ-সংস্কৃতি।

**নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ পৰিচয় ঃ**

ভাষাৰ ব্যৱহাৰ সমাজত বিভিন্নজন ব্যক্তিয়ে সমাজৰ বিভিন্ন কৰ্মক্ষেত্ৰত বিভিন্ন কাৰ্যত প্ৰতিদিনে ব্যৱহাৰ কৰি থাকে। ভাষাৰ মাজেদিয়েই একোখন সমাজৰ বিবিধ সামাজিক সংগঠনৰ প্ৰতিফলন ঘটে। সামাজিক পৰিৱেশ অনুসৰি ব্যক্তিগত মাত-কথা আৰু ভাষাই সংগঠনৰ মাজেদি নিৰ্ধাৰিত ৰূপ লয়। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ আত্মীয়তাসূচক সম্বন্ধবাচক শব্দবোৰৰ যোগেদি সমাজৱদ্ধ মানুহৰ ভাষাৰ প্ৰথম

বিকাশ ঘটে। মানুহৰ অগ্রগতিৰ কথা ভাষাৰ ব্যৱহাৰতেই বিচাৰ কৰিব পাৰি বিশেষকৈ নৃতত্ত্ববিদসকলে এই দিশটো চকু ৰখাটো বাঞ্ছনীয়। সমাজ বিৱর্তনৰ সকলো কথা ভাষাৰ মাজতেই সংৰক্ষিত হৈ থাকে।

নৃতত্ত্ব মানৱ-বিজ্ঞান (ভাষা বিজ্ঞানৰ ভূমিকা, ডঃ ৰমেশ পাঠক, পৃষ্ঠা-৪৪)। ভাষা সংস্কৃতিৰ ওপৰত নির্ভৰশীল। নৃতাত্ত্বিকসকলে দূৰ অতীতৰ সংস্কৃতি অধ্যয়নত মনোনিৱেশ কৰে।

ভাষাৰ মাজেদিয়েই একোখন সমাজৰ বিবিধ সামাজিক সংগঠনৰ প্রতিফলন ঘটে। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ জন্ম হয় আমেৰিকা যুক্তৰাষ্ট্রত। অৱশ্যে আমেৰিকাৰ উপৰিও কানাডাটো নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ অধ্যয়নৰ আৰম্ভণি ঘটে। বিংশ শতিকাৰ এই দুখন দেশত নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ আৰম্ভ হয়। উত্তৰ আমেৰিকাৰ নৃতত্ত্বৰ চাৰিটা ক্ষেত্রত অধ্যয়ন আগবঢ়াৰ ফলশ্রুতিত এই নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে জন্মলাভ কৰা বুলি ক'ব পাৰি। ই প্রথমতে আদিবাসীসকলৰ ভাষাক বিশেষকৈ (North America) উত্তৰ আমেৰিকাৰ আদিবাসী ভাষা আৰু ব্যাকৰণত গাঁথনিক বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে আৰম্ভ হয়। পৰৱর্তী সময়ত মধ্যস্থতাকাৰী ভাষাৰ কার্যাৱলী আৰু কার্যৰ মাজৰ সম্পর্ক বিচাৰ বিশ্লেষণত অগ্রসৰ হয়। এই অধ্যয়নক Thomas Kuhn, Franz Boas এইসকল নৃতত্ত্ববিদে নৃতাত্ত্বিক আলোচনা কৰিবলৈ গৈ ভাষা আৰু নৃতত্ত্বৰ সম্পর্ক বিচাৰ বিশ্লেষণত মনোনিৱেশ কৰাৰ ফলশ্রুতিত নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ জন্ম হয়। Dell Hymes-এ নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ প্রতিষ্ঠাৰ ক্ষেত্রত গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা লয়। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানীৰ প্রথম পর্যায়ত Thomas Koun আৰু Fraz Boas-এ এক নির্দিষ্ট ৰূপৰেখা দিয়াৰ পাছত ইয়াৰ এক সুপ্রতিষ্ঠিত ৰূপ দিয়ে Dell Hymes-এ ১৯৬০ চনত। এইদৰেই নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে ১৯ শতিকাৰ পৰা যাত্রা আৰম্ভ কৰি বিংশ শতিকাত প্রতিষ্ঠা লাভ কৰে।

**নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ পৰিসৰ ঃ**

সাম্প্রতিক সময়ত ভাষাবিজ্ঞানৰ আলোচনাত সঘনাই উচ্চাৰিত ভাষাবিজ্ঞানৰ এটি প্রকাৰভেদ হ'ল নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞান। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞান কলা আৰু বিজ্ঞান উভয়ৰ আলোচনাৰ আৰু অধ্যয়নৰ পৰিসৰৰ এটি বিষয়। এই ভাষাবিজ্ঞানে ভাষা আৰু সমাজ, ভাষা আৰু সংস্কৃতি ইত্যাদি দিশটোৰ আলোচনাতহে গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞান পৰিভাষাটোৰ মাজত দুটা কথা সোমাই আছে। এটা হ'ল- নৃতত্ত্ব আৰু আনটো- ভাষাবিজ্ঞান। নৃতত্ত্ব হ'ল মানৱ সম্পর্কে কৰা সর্বাত্মক আৰু তত্ত্বপূর্ণ অধ্যয়ন। ই প্রাণীতত্ত্ব, প্রাক্ ইতিহাস জাতিতত্ত্ব আৰু মানুহৰ ভাব বিনিময়ৰ প্রণালী হিচাপে ভাষাৰ আলোচনাক সামৰে। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে ভাষাৰ লগত নৃতত্ত্বৰ সম্পর্ক কি সেই বিষয়ত আলোচনা কৰে। সমাজ জীৱনৰ দ্বাৰা ভাষা কিদৰে উদ্বুদ্ধ হয় তাক প্রণালীৱদ্ধভাৱে নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে অধ্যয়ন কৰে। বিনিময়ৰ মাধ্যম হিচাপে ভাষাৰ ৰূপ, সামাজিক পৰিচয়ৰ ৰূপ আৰু সদস্যৰ থূপে এক বৃহৎ সংস্কৃতি আৰু আদর্শবাদৰ পৰিসৰ সৃষ্টি কৰিব পাৰে তাক উন্মোচিত কৰে।

ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ অধ্যয়ন পৰস্পৰে পৰস্পৰৰ ওপৰত নির্ভৰশীল। ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ পাৰস্পৰিক সম্পর্ক নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ অধ্যয়নৰ বিষয়। বোৱাচ, চাপিৰ, পাইক, ব্লুমফিল্ড আদি পণ্ডিতসকলে নৃতাত্ত্বিক অনুশীলনৰ অংগ হিচাপে ভাষা চর্চা কৰিছিল। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে সমাজৰ বিভিন্ন ব্যক্তি অনুযায়ী পৰিলক্ষিত ভাষাৰ ভিন্নতাৰ ভিত্তিত অতীতৰ সমাজখন কেনে আছিল অর্থাৎ মানৱ ইতিহাস পোহৰলৈ আনিবলৈ প্রয়াস কৰে। মানৱ সংস্কৃতি অধ্যয়ন কৰোঁতে অর্থাৎ নৃতত্ত্ববিদে পৌৰাণিক পাঠ, শিলালিপি, প্রত্নলিপি উদ্ধাৰ কৰোঁতে সদায় ভাষাৰ সহায় লয়। প্রত্নসংস্কৃতি জানিবলৈ নৃতাত্ত্বিক আৰু ভাষাতাত্ত্বিক পৰস্পৰে কায চাপিব লাগে। ভাষাটোৰ অধ্যয়নৰ বাবে পাঠ উদ্ধাৰ কৰি কৌশল বা কাৰিকৰী দিশৰ জ্ঞান আহৰণত সহায় কৰে নিতত্ত্ববিদে। মুঠতে মানৱ ভাষা সংস্কৃতি অধ্যয়নত নৃতত্ত্ববিদৰ সম্পূর্ণ সহযোগিতা আছে।

ভাষাৰ পূর্ণাংগ ইতিহাস অধ্যয়নত নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ প্রয়োজনীয়তা কোনেও অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰে। গতিকে দেখা যায় যে বিভিন্ন দিশৰ পৰা নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ অধ্যয়নৰ প্রয়োজনীয়তা যথেষ্ট।

**বিহুগীতৰ ভাষাত প্রয়োগ হোৱা শব্দৰ মাজেৰে প্রতিফলিত সমাজ ঃ**

বিহুগীতবোৰ হ'ল পৰম্পৰাগত গীত। এই গীতবোৰ বিহুতলী বা গৃহস্থৰ চোতাল, নৈৰ চাপৰি, খেতি-পথাৰ, হাবিতলী আদিত গোৱা হয়। বিহু উৎসৱেই হৈছে বিহুগীতৰ মূল উপজীব্য। সামাজিক, সাংস্কৃতিক, সাহিত্যিক আৰু

সাংগীতিক মূল্যৰ দ্বাৰা বিহুগীতে অসমীয়া লোকসাহিত্যৰ ভঁৰাল অতীজৰে পৰা চহকী কৰি আহিছে। উৎপাদনৰ কামনাই হ'ল বিহুগীতৰ প্ৰতিপাদ্য বিষয়। ড° লীলা গগৈদেৱে বিহু শব্দটো টাই ভাষাৰ "বৈহু" শব্দৰ পৰাও আহিব পাৰে বুলি ভাব প্ৰকাশ কৰিছে। "বৈ" মানে "পূজা" আৰু "হু" মানে "গৰু"। গগৈদেৱে অৱশ্যে "বিষুৱ" শব্দৰ পৰা "বিহু" শব্দৰ উৎপত্তি হোৱা মতকো নুই কৰা নাই।

ভাষাবিজ্ঞানৰ আলোচনাত পোৱা গৈছে যে প্ৰকাশভংগীৰ মুক্ত ৰীতিয়ে বিহুগীতৰ ভাষাক অধিক আকৰ্ষণীয় ৰূপ প্ৰদান কৰিছে। উজনিত অঞ্চল বিশেষে এই উপভাষাৰ সুকীয়া ৰূপ পৰিলক্ষিত হোৱা বাবে বিহুগীততো অঞ্চলবিশেষে ধ্বনিগত, ৰূপগত, বাক্যগত আৰু শব্দগত বৈশিষ্ট্যৰ সূত্ৰেই পাৰ্থক্য বিদ্যমান। এই বৈশিষ্ট্যসমূহে বিহুগীতৰ ভাষাক সুকীয়া ৰূপত প্ৰতিষ্ঠা কৰিছে।

বিহুগীতক নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ দৃষ্টিৰে বিশ্লেষণ কৰিলে বিহুগীতৰ ভাষাত প্ৰতিফলিত অসমীয়া সমাজ জীৱন, প্ৰকৃতি, প্ৰেম, কৃষি, সাংস্কৃতিক উপজীব্য ইত্যাদি সাঙুৰি ল'ব লাগিব। বিহুগীত সম্পৰ্কে অনেক সাহিত্য সমালোচকে অনেক মতবাদ আগবঢ়াইছে। লীলা গগৈৰ মতে, "বিহুনাম অসমীয়া লোকসাহিত্যৰ এটি অমূল্য সম্পদ। ইয়াৰ বুকুত আছে জাতিৰ স্পন্দন, জীৱনৰ বুৰঞ্জী আৰু সমাজৰ প্ৰতিচ্ছবি। ইয়াৰ ভাষা সৰল, ছন্দ সাৱলীল আৰু সুৰ মনোমোহা।" (লীলা গগৈ, অসমীয়া লোক-সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা, পৃষ্ঠা-২৫১)।

অতীজৰে পৰা বিহু উৎসৱৰ লগত সংপৃক্ত গীত-নাচৰ পৰম্পৰা ঘাইকৈ অসমৰ উজনি অঞ্চলত পালিত হৈ অহাৰ বাবে বিহুগীতৰ ভাষা হৈছে অসমীয়া উপভাষাৰ অন্যতম উজনিৰ উপভাষা। স্বৰাগম, স্বৰভক্তি, স্বৰসমীভৱন, ধ্বনিগত বৈশিষ্ট্য, ৰূপগত বৈশিষ্ট্য, স্বাৰ্থিক প্ৰত্যয়, নিৰ্দিষ্টতাবাচক প্ৰত্যয়ৰ বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ প্ৰয়োগ আদি বৈশিষ্ট্যৰে এই গীতৰ ভাষাই এক নিটোল ৰূপ লাভ কৰিছে। বিহুগীতৰ ভাষা বহু সাংস্কৃতিক অসমীয়া জাতিৰ আয়ুস ৰেখা। এই বিহুগীতৰ ভাষা স্বতঃস্ফূৰ্ত যদিও বিহুগীতৰ ভাষাত এক নান্দনিক সৌন্দৰ্য প্ৰতিফলিত হৈছে।

অসমীয়া সমাজ মূলতঃ অনাৰ্যমুলীয় মংগোলীয় জনগোষ্ঠীৰ দ্বাৰা সৃষ্ট। পৰৱৰ্তীকালত বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন কাৰণত নানা জাতি-জনগোষ্ঠীৰ আগমন এই ভূমিত ঘটে আৰু সকলোবোৰৰে সাংস্কৃতিক, ভাষিক মিলন ঘটি বৃহৎ অসমীয়া জাতিৰ গঠন হয়। এই সমন্বিত অসমীয়া জাতিৰ সমাজ বিহুগীতৰ ভাষাত প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়। জাতীয় সাহিত্যত জাতিৰ জীৱনৰ চিত্ৰ প্ৰতিফলিত হয়। সেয়েহে বিহুগীতসমূহ প্ৰধানকৈ ডেকা-গাভৰুৰ প্ৰণয়-পিৰীতিক কেন্দ্ৰ কৰি ৰচিত যদিও সিবোৰৰ মাজে মাজে অসমীয়া জাতীয় জীৱনৰ দুই-এটা চিত্ৰ ফুটি উঠা দেখা যায়। ভাৰতৰ অন্যান্য ঠাইৰ দৰে অসমতো প্ৰাচীন কালৰ পৰা জাতিভেদ প্ৰথা চলি আহিছে। এই প্ৰথাৰ কাৰণেই সমাজত খোৱা-লোৱা, বিয়া-বাৰু আদিত বাধা নিষেধ আছে আৰু ৰক্ষণশীল সমাজখনেও সেই বাধা নিষেধক খামুচ মাৰি ধৰি ৰাখে। সেয়েহে বেলেগ জাতি-কুলৰ ডেকা-গাভৰুৰ মাজত প্ৰণয় হ'লে বহু সময়ত তেওঁলোক পিতা-মাতা তথা সামাজিক বাধাৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়াত পৰে। অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ 'শব্দ প্ৰয়োগ' সম্বন্ধে বিশ্লেষণ কৰিলে প্ৰত্যক্ষ কৰোঁ যে অসমীয়া বিহুগীতসমূহে সমন্বয়ৰ কথা কৈছে। বিহুগীতে সামাজিক ভেদাভেদ জাতি-কুলৰ বিৰোধিতা কৰি কৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ

"তোমাৰ কটা তামোল নেখাওঁ মই লাহৰি
আমাৰনো মাৰিব কূল,
অজাতি নহ'লোঁ বিজাতি নহ'লোঁ
তোমাৰ আমাৰ একেটি কূল।"
(বিহুনামৰ জুৰুলি, ইছমাইল হোছেইন, পৃষ্ঠা-৩)

তোমালৈ চাওঁতে জপনা দিওঁতে
বিন্ধিলে অঘৈয়া হুলে,
তোমাৰ মন হ'লে আমাৰ মন হ'লে
কি কৰিব কলিতা কূলে।
(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শৰ্মা, পৃষ্ঠা-১২৮)

অসমৰ প্ৰকৃতিত যেনেকৈ বাৰেৱৰণীয়া সৌন্দৰ্যৰে ভৰা ঠিক তেনেকৈ অসমত বিভিন্ন জাতি-বৰ্ণৰ লোকে সমন্বয়ৰে বসবাস কৰি আছে। এই বিহুগীতসমূহৰ মাজেৰে কূল, অঘৈয়া হুল, কলিতা কূল, জাতি কূল আদি শব্দৰ প্ৰয়োগ দেখিবলৈ পাওঁ। ইয়াত অসমৰ সমাজ জীৱন যে সংস্কাৰমুখী আছিল সেই কথা এই বিহুগীতত প্ৰকাশ পোৱা শব্দবোৰৰ ভাবৰাশিয়ে তাকেই প্ৰতীয়মান কৰে।

সমাজৰ মূল হৈছে জীৱন। বিবাহৰ দ্বাৰা এই জীৱন শৃংখলিত হোৱা আমি দেখিবলৈ পাওঁ। বিবাহ হৈছে দুটি দেহৰ দুটি মনৰ স্বৰ্গীয় বান্ধোন। সমাজত বিবাহ প্ৰথা

প্রচলিত আছিল যদিও দুটি মনৰ মিল হ'লে কেতিয়াবা কোনোবাই ছোৱালী পলুৱাই নিয়াও দেখা যায়। এনে ডেকা-গাভৰুৱে গা-ধন দি বিয়া কৰাব পাৰিছিল। বিহুগীতত ইয়াৰ উল্লেখ থকা দেখা যায়।

"বিহু মাৰি থাকিবৰ মনে ঐ লাহৰী
বিহু মাৰি থাকিবৰ মন,
বিহু মাৰি থাকোঁতে পলুৱাই নিনিবা
ভৰিব লাগিব ধন"

(বিহুনামৰ জুৰুলি, ইছমাইল হোছেইন, পৃষ্ঠা-১৩২)

অসমীয়া মানুহৰ জাতীয় উৎসৱ বিহুটি হ'ল মূলতঃ কৃষিকেন্দ্রিক উৎসৱ। কৃষিজীৱী অসমীয়া মানুহৰ আশা-আকাংক্ষা, চিন্তা, স্বপ্ন-কামনা সকলোবোৰেই বিহুগীতসমূহৰ মাজেৰে প্রকাশ পাইছে। 'যি নাই ঘৰতে সি নাই ভাৰতে' বুলি কোৱাৰ দৰে বিহুগীতত যি নাই অসমীয়া সমাজতে নাই বুলিব পাৰি। অসমীয়া স্বভাৱতে কৃষিজীৱি লোক। সেয়েহে বিহুগীতত চহা মনৰ চহা কৰ্মৰ মুক্ত প্রকাশ লক্ষ্য কৰা হয়। বিহুগীতত পথাৰ, হাল, গৰু, যুঁৱলী, মৰণা, ধান, কঠীয়া আদি বিভিন্ন শব্দৰ প্রয়োগ দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ

"এইবেলি আহুধান পানীয়ে মাৰিলে
অহাবেলি আহুধান পাম,
মহৰশিঙৰ পেঁপাটি বনকিয়াই আনাগৈ
তোমাৰ শপত বিহুলৈ যাম।"

কৃষিজীৱী গাঁৱলীয়া সমাজৰ চহা শব্দৰ প্রয়োগ মন কৰিবলগীয়া। যেনেকৈ বিহুগীতত প্রয়োগ হৈছে তাৰ বিভিন্ন ধৰণৰ উদাহৰণ আমি পাব পাৰো। যেনে প্রকৃতিৰ বুকুতে মানুহে সংগীতৰ সন্ধান পাইছিল। প্রকৃতিৰ বর্ণনাৰ মাজেৰে জীৱনৰ চানেকি পোৱা দেখা যায়। বহল লুইতৰ পাৰ, সুদীর্ঘ শ্যামল পর্বতমালা, বিশাল বননি, সু-বিশাল মুক্ত খেতি-পথাৰ, ফুল-ফলেৰে নান্দনিক সৌন্দর্য্যৰে জাতিষ্কাৰ অসমৰ প্রকৃতিৰ বর্ণনাৰে বিহুগীতৰ শব্দৰ প্রয়োগ দেখা যায়।

পূর্বতে পূর্বতে বগাব পাৰো মই
লতা বগাবলৈ টান,
বলিয়া হাতীকো বলাব পাৰো মই
তোমাক বলাবলৈ টান।

(অসমৰ সংগীত ঃ ঐতিহ্য আৰু পৰম্পৰা, পৃষ্ঠা২৮৮)

বুৰঞ্জীয়ে এটা জাতিৰ সত্তাৰ পুষ্ট কৰে। অসমীয়া জাতিৰ বুৰঞ্জী মুখ্যতঃ আহোমসকলক কেন্দ্র কৰি গঢ়ি উঠিছে। আহোমসকলৰ পিছত অহা বৃটিছসকলেও অসমীয়া জাতিৰ ওপৰত এক গভীৰ ছাঁপ পেলাবলৈ সক্ষম হৈছিল। এই দুয়োটা শাসকগোষ্ঠীৰ শাসনতন্ত্রৰ কালছোৱাত অসমীয়া সমাজখন যি পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হৈছিল, সমাজখনত যিবোৰ ঘটনা বা বিষয়ে গা কৰি উঠিছিল সেইবোৰৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি তাৰ প্রকাশ বিহুগীতৰ যোগেদি কৰা দেখা যায়। এনে বিহুগীতবোৰত জয়মতী, জেৰেঙা পথাৰ, চাউদাঙ, বৰগোঁহাই, গদাপাণি, কোঁৱৰ, চকলং, গন্ধীয়া, ফুকন, তামোলী, তাংকক আদি শব্দবোৰ দেখিবলৈ পাওঁ।

হাবিতে কান্দিলে হয়কলি চৰায়ে
চিটিকাৰ মুখলৈ চাই,
জেৰেঙা পথাৰত কান্দে জয়মতী
চাউদাঙৰ মুখলৈ চাই।
মাদুৰি চহৰত ডাঙৰ হৈ আছিলোঁ
বৰগোহাঁইৰ আছিলোঁ জী,
গদাপাণি কোঁৱৰে নিলে তুংখুঙলৈ
চকলং বিয়াকৈ দি।

বিহুগীতত অসমীয়া জনসমাজৰ অর্থনৈতিক পৰিস্থিতিৰ কথাও প্রকাশ পাইছে। কৃষিজীৱি অসমীয়া মানুহৰ বেছিভাগেই দৰিদ্রতাৰ মাজেৰে জীৱন-যাপন কৰিবলগীয়া হয়। গতিকে অর্থনৈতিক পৰিস্থিতি আৰু জীৱনৰ সাৰ শূন্যতাৰ প্রতিফলন বিহুগীতবোৰৰ মাজেৰে সঘনাই ঘটা দেখা যায়।

ঈশ্বৰে দুখীয়া কৰিলে চেনাইকন
খাইছোঁ বাঁহৰ চুঙাৰ পানী
জগন্নাথৰ দোকানত আছে মাটি কলহ
আনিব নোৱাৰো কিনি।

(উপেন ৰাভা হাকাচাম ঃ বৰ অসমৰ বিহু সংস্কৃতি, পৃ-২১০)

অসমীয়া সমাজত প্রয়োগ হোৱা সমন্ধবাচক শব্দ, সমাজত তিৰোতাৰ স্থান কেনেকুৱা, তাঁতশালৰ সঁজুলি, ঘৰ সাজোঁতে ব্যৱহাৰ কৰা সঁজুলিৰ নামাজ, অসমীয়া জনজাতীয় সমাজৰ বিভিন্ন খাদ্যৰ নাম আদি শব্দও প্রয়োগ হোৱা দেখা যায়।

বিহুগীত যিহেতু অসমীয়া লোকগীতৰেই এটা অন্যতম প্রধান অংশ, সেয়ে বিহুগীতবোৰত অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ প্রতিটো দিশেই প্রতিফলিত হোৱাটো স্বাভাৱিক। সেইয়া যিয়েই নহওক, বিহুগীতে অসমীয়া সমাজ জীৱনত এক সুকীয়া স্থান অধিকাৰ কৰি আহিছে। প্রকৃতিৰ পৰশত, সময়ৰ বুলনিত আনন্দমুখৰ হৈ উঠা অসমীয়া জাতিটোৰ প্রাণৰ উচ্ছাসৰ স্বীকৃতি দিয়ে এই বিহুগীতে।

**বিহুগীতৰ ভাষাত প্ৰয়োগ হোৱা শব্দৰ মাজেৰে প্ৰতিফলিত সংস্কৃতি ঃ**

সংস্কৃতি এখন সমাজৰ দাপোণস্বৰূপ। মানৱ মনৰ সৌন্দৰ্যবোধ, সৃষ্টিশীল প্ৰতিভা, মানৱতাবোধৰ আধাৰত সংস্কৃতিৰ জন্ম হয়। এনে সংস্কৃতিৰ এক অন্যতম উদাহৰণ হৈছে বিহুগীতবোৰ। অসমত ইতিহাসে ঢুকি পোৱা কালৰ আগৰে পৰা যিবোৰ নৃগোষ্ঠীৰ আগমন হৈছে সেই আটাইবোৰৰে জীৱিকা নিৰ্বাহৰ মুখ্য মাধ্যম হৈছে কৃষি। ইয়াৰ ফলত মানুহৰ মাজত কিছুমান লোকবিশ্বাসৰ জন্ম হয়। ইয়াক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই লোকসংস্কৃতিয়ে মূৰ দাঙি উঠে আৰু তাৰেই এটা অন্যতম হৈছে এই বিহু।

কোনো জনসমষ্টিৰ সামূহিক জীৱন পদ্ধতিৰ অভিব্যক্তিয়ে সেই ঠাইৰ সংস্কৃতি। "আত্মপ্ৰকাশক ৰূপায়িত কৰা এই আকুলতাটোৱেই সাংস্কৃতিক শিল্পকলাৰ জন্ম কোষ। কোনো এখন ঠাইৰ সংস্কৃতিক প্ৰকাশৰ মাধ্যম হৈছে ভাষা, গতিকে তাৰ মাজেদি কোনো জনসমষ্টিৰ ভাবধাৰা যে কিছু পৰিমাণে পৰিস্ফুট হয় তাত সন্দেহ নাই। মূলতঃ ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ ইটোৱে সৈতে সিটোৰ সম্পৰ্ক নাই যদিও কাৰ্যত দুয়োৰে মাজৰ সম্পৰ্ক ঘন। ভাষা মানৱ সংস্কৃতিৰ এটা উপাদান, অকল উপদানেই নহয় ই সকলো সাংস্কৃতিক কামৰ ভেটিস্বৰূপ। লিওনার্ড ব্লুম ফিল্ডে কোৱাৰ নিচিনা "কোনো জনসমষ্টিৰ বিষয়ে জানিবলৈ হ'লে আমি তাৰ ভাষা বুজিবই লাগিব।" (ভাষাবিজ্ঞান, ড° উপেন্দ্ৰনাথ গোস্বামী, পৃষ্ঠা-৬৩)

বিহু অসমীয়াৰ সাংস্কৃতিক উৎসৱ। সংস্কৃতি যদি জাতীয় জীৱনৰ ধাৰা হয়, বিহুৰ লগতো অসমীয়া জাতীয় জীৱনৰ ওতঃপ্ৰোত সম্পৰ্ক জড়িত হৈ আছে। সংস্কৃতি মানুহৰ সৌন্দৰ্য্যবোধ, সৃষ্টি প্ৰতিভা আৰু মানসিক উৎকৰ্ষ বা মানৱতাবোধৰ গইনা লৈ সৃষ্টি হয়। অসমীয়া সংস্কৃতিৰ আটাইকেইপদ বহুমূলীয়া সম্পদ বিহুৰ লগত জড়িত হৈ আছে আৰু সংস্কৃতি যদি বোৱঁতী নৈ, সংস্কৃতি যদি সমন্বয়ৰ সৃষ্টি, তেনেহ'লে এই বিহু উৎসৱেই ইয়াৰ সাক্ষী। বিহু উৎসৱৰ লগত আৰ্য অষ্ট্ৰিক বা নিষাদ, মংগোলীয় বা কিৰাট আৰু আলপাইন সংস্কৃতি এনেভাৱে সংমিশ্ৰিত হৈছে, যে তাক আজি বিশ্লেষণ বিচাৰত আঁতৰাই দেখুওৱা টান।

অসমৰ সংস্কৃতি হৈছে লুইতপৰীয়া সংস্কৃতি। লুইতক আশ্ৰয় কৰি গঢ়ি উঠা চহা জীৱনৰ স্বাভাৱিক প্ৰকাশ এই বিহুগীতবোৰত দেখা যায়। ধনশিৰীৰ পৰা

সোঁৱণশিৰীলৈকে প্ৰায় আটাইবোৰ নৈয়েই কিবা নহয় কিবা সুযোগত বিহুনামত ভূমুকি মাৰিছে। লুইত, দিখৌ, দিহিং, ৰঙা নৈ, নামচাং, জাঁজী, কলং, কঁপিলী, মিচিছিপি, কাকডোঙা, ভোগদৈ, ব্ৰহ্মপুত্ৰ আদিও ভালেমান বিহুগীতত পোৱা যায়।

ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পাৰৰে বৰহমথুৰি এজুপি
আমিনো খৰি লুৰা ঠাই,
ব্ৰহ্মপুত্ৰ দেৱতা উটুৱাই নিনিবা
তামোল দি মাতোতা নাই।
(লীলা গগৈ, বিহু ঃ এটি সমীক্ষা, পৃষ্ঠা-২৪)

"দিখৌ নৈৰ পাৰৰে থোৱালি ঢেকীয়া
নিতৌ চাৰি আঙুল বাঢ়ে,
তোলৈ লাহৰী মনত ঐ পৰিলে
ৰাতিও টোপনি নাহে।"
(লীলা গগৈ, বিহু ঃ এটি সমীক্ষা, পৃষ্ঠা-৬৭)

ধনশিৰী ভেটিলে জেঙে ঐ জাবৰে
সোৱণশিৰী ভেটিলৈ কিহে?
(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শর্মা, পৃষ্ঠা-৮)

বিহু সংস্কৃতিৰ ভোগজৰা, ভোগমনৰ ভোগথলী আৰু ৰঙাইৰ ৰংচৰা। বিহুত আছে— ভোগৰ আনন্দ, তৃপ্তিৰ অৱসাদ, সৃষ্টিৰ গৌৰৱ আৰু দৃষ্টিৰ ৰোমাঞ্চ। বিহুৱে কয়— অতীতৰ ইতিহাস, বর্তমানৰ বিৱর্তন আৰু ভৱিষ্যতৰ ভৱিষ্যৎবাণী। বিহুৰ বুকুত বগাই বগাই জীয়াই আছে লোকবিশ্বাস, লোকনৃত্য, লোকসংগীত, লোকাচাৰ আৰু লোকপৰম্পৰা। বিহু সমন্বয়ৰ উৎসৱ। অসমীয়া জাতিটো যেনেকৈ আর্য্য-অনার্য্য-অষ্ট্রিক-মংগোলীয় জাতিৰ সংমিশ্রণ, ঠিক তেনেকৈ অসমীয়া সংস্কৃতিও সংমিশ্রিত। বিহুৰ বুকুত এই সকলোবোৰ সংস্কৃতিৰ সম্পদ সোমাই আছে।

পিতৃপ্রধান আর্য্য আৰু মংগোলীয়সকলৰ মাজত ঘৰৰ জ্যেষ্ঠজনক সন্মান জনোৱাটো পুৰণি ৰীতি। বিহুৰ দিনা সৰুৱে ডাঙৰক সেৱা কৰাটো সংস্কৃতিৰ পৰিচায়ক। বিহুৰ দিনা নিজৰ প্রাত্যহিক জীৱনৰ দুখ বেদনাবোৰ জাৰি-জোকাৰি আনন্দ প্রকাশ কৰিলেও সামূহিক জীৱনৰ কর্তব্যও আছে। গুৰু ভকতৰ মান-সৎকাৰ কৰা, ৰাইজৰ ওচৰত মূৰ দোঁওৱা আদি বিহুৰ আনুষংগিক কর্তব্য। এনেধৰণৰ কথাও বিহুগীতৰ মাজেৰে প্রকাশ পায়।

চ'ততে চকৰী ব'হাগত বগৰী
জেঠত আমনা ধান,
গৰু বিহুৰ দিনাখন সৎকাৰ কৰিবা
তেহে পাবা বৈকুণ্ঠত থান।
(লীলা গগৈ, বিহু ঃ এটি সমীক্ষা, পৃষ্ঠা-৫৯)

এটা জাতিৰ সভ্যতা আৰু সংস্কৃতিৰ উচ্চতা আৰু প্রাচুর্য জোখা হয় কাপোৰেৰে। অসমীয়া জাতি অতি পুৰণি কালৰে পৰাই কাপোৰত চহকী। হিউৱেনচাঙৰ ভ্রমণ বৃত্তান্তত ভাস্কৰবর্মাই দিয়া অতি উৎকৃষ্ট কাপোৰৰ কথা উল্লেখ আছে। বিহুৱানখনে অসমত কাপোৰৰ প্রাচুর্য প্রমাণ কৰাৰ উপৰিও কাপোৰখন জকমকীয়া কৰি তোলা ফুলজাৰিবোৰে অসমীয়া নাৰীৰ কলা জ্ঞান আৰু সৃষ্টি প্রতিভাৰ উজ্জ্বল চানেকি দাঙি ধৰে।

যেনে ঃ

ময়ে বয়ে যাম বিহুৰে গামোচা
তুমি পাতি দিবা শাল,
ময়ে কৰি যাম ৰোৱনী-দাৱনী
তুমি বায়ে যাবা হাল।
(বিহু আৰু বৈদিক যজ্ঞৰ বিকৃতি, ড° সূর্য দাস, পৃষ্ঠা-১০৮)

**বিহুৱানৰ ব্যৱহাৰ ঃ**

বিহু আমাৰ যেনেকৈ আদৰৰ, বিহুৱানখনিও তেনেকুৱা আদৰৰ। বিহুৱানখনিয়েই যদি নাথাকে তেন্তে বিহুৰ সার্থকতাই নাথাকিব। কিয়নো বিহুৱানখনিয়েই আমাৰ অতি চেনেহৰ, অতি হেঁপাহৰ, অতি আনন্দৰ বস্তু। বিহুৱানখনেই আমাৰ মনলৈ কঢ়িয়াই আনে পূজনীয়-পূজনীয়াসকলৰ আশীর্বাদ, বন্ধু-বান্ধৱীসকলৰ শুভেচ্ছা, মৰম-চেনেহ সকলো। সেইদৰে বিহুৱানো হয়তো কাপোৰৰ ঠাইত কিতাপ নাইবা শুভেচ্ছা জ্ঞাপন চিঠিলৈ পৰিৱর্তন হ'ল তথাপি তাৰ মাজেদিয়েই অসমীয়াৰ অতি পুৰণি কালৰে পৰা বিহুৱান দিয়া প্রথাটো চলি আহিছে। অতি প্রাচীন কালৰে পৰা যে বিহুৱানখনিক অসমীয়াই অতি শ্রদ্ধাৰ বা আদৰৰ চকুৰে চাইছিল তাৰ প্রমাণ বিহুগীতবোৰৰ পৰাই পাব পাৰি। বিহুগীতত বিহুৱানস্বৰূপে ফুলাম গামোচা, হাঁচতি, চেলেং চাদৰ, মুগাৰ ৰিহা আদিৰ প্রতি থকা অসমীয়াৰ ধাউতিৰ সুন্দৰ আভাস পোৱা যায়।

"তুমি কৰি যাবা ৰোৱনী দাৱনী
মইনো বাই যাম হাল,
তুমি লগাই যাবা বিহুলৈ বিহুৱান

মইনো পাতি দিম শাল।

(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শর্মা, পৃষ্ঠা-১২৫)

প্রকৃততে অসমীয়া তিৰোতাসকল আছিল স্বভাৱ শিপিনী। গান্ধীজীয়ে কোৱাৰ দৰে তেওঁলোকে কাপোৰত সপোন ৰচিব জানিছিল। আজি আধুনিক যুগত পাশ্চাত্য সভ্যতাৰ প্রভাৱত বা যুগৰ দাবী মানি ভালেমান তিৰোতাই কাপোৰ বোৱা অভ্যাস এৰিলেও এতিয়াও গাঁৱে-ভূঞে বহুতো আগশাৰীৰ শিপিনী আছে যিসকলে গান্ধীজীৰ বাণী সফল কৰি তুলিব পাৰে। আনপিনে ঘৰত শিপিনী নাথাকিলেও বিহু উপলক্ষে বজাৰৰ পৰা কিনি হ'লেও আশীর্বাদ আৰু মৰম সনা বিহুৱান এখনি দিয়া বা লোৱাৰ দস্তুৰ এতিয়াও সকলো অসমীয়াৰ মাজত আছে। বিহুৱান মিলন-শুভেচ্ছাৰ প্রতীকস্বৰূপ। বিহুৱান অসমীয়া সংস্কৃতিৰ পৰিচায়ক।

**তামোল-পাণৰ ব্যৱহাৰ ঃ**

অসমৰ সংস্কৃতিৰ লগত তামোল-পাণৰ সম্বন্ধ অতি নিবিড়। প্রাচীন কালৰে পৰা অসমবাসীয়ে ভোজনৰ সামগ্রী হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰাৰ উপৰি সামাজিক আৰু ধার্মিক জীৱনতো তামোল-পাণ ব্যৱহাৰ কৰি আহিছে। সংস্কৃতত 'তাম্বুল' শব্দটি আছে যদিও ইয়াৰ মূল অনার্য মনখেমৰ 'বুল' ধাতুৰ লগত তম উপসর্গ লগ লাগি তাম্বুল হৈছে বুলি পণ্ডিতে মত দিয়ে। ভাস্কৰবর্মাই হর্ষবন্ধনক উপহাৰস্বৰূপে কেঁচা তামোল দিয়াৰ উল্লেখ প্রাচীন গ্রন্থত পোৱা যায়। বলবর্মাৰ সময়ত প্রাগজ্যোতিষ নগৰ তামোল-পাণেৰে পৰিবেষ্টিত আছিল। ড° বিৰিঞ্চি কুমাৰ বৰুৱাদেৱে "অসমৰ লোক-সংস্কৃতি" গ্রন্থত উল্লেখ কৰিছে যে দশম শতিকাত ৰচিত কালিকা পুৰাণেই তামোলক পূজা উপচাৰৰ অন্যতম উপকৰণ বুলি প্রথমে গণ্য কৰিছে। ষোড়শ শতিকাত ৰচিত 'যোগিনী-তন্ত্রত' অসমীয়া তিৰোতাই সকলো সময়তে তামোল চোবাই বুলি উল্লেখ আছে। আহোমসকলৰ চকলং বিবাহ পদ্ধতিত তামোলৰ ব্যৱহাৰ অপৰিহার্য আছিল। এনেদৰে আমি তামোলৰ বিষয়ে বিহুগীতত উল্লেখ পাব পাৰো।

থুৰীয়াই থুৰীয়াই তামোল কাটি দিলা
তাৰ মাজত দিছিলা লং।
মৌলৈ আহিম বুলি কাপোৰ ধুই দিছিলা
মনত লগাইছিলা ৰং।"

(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শর্মা, পৃষ্ঠা-৫৩)

তামোল-পাণে অসমীয়া জাতীয় জীৱনক প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰে। দুখীয়া হ'লেও প্রতিঘৰ অসমীয়াই দুই-এজোপা তামোল আৰু দুই-এডাল পাণ যত্ন কৰি বাৰীত ৰাখে। তামোল-পাণৰ সৌন্দর্যৰ কথা বিহুগীতত এইদৰে প্রকাশ পাইছে—

"আগবাৰী শুৱনি কাকিনী তামোল
পাছবাৰী শুৱনি পাণ।
পদুলি মুখৰে তামোল চাৰি জুপি
বাঁহনি ঢাপৰে পাণ।"

(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শর্মা, পৃষ্ঠা-৫২)

ডেকাই ধুনীয়া গাভৰুৰ পৰা তামোল খোজাৰ ছলেৰে প্রেম বিচাৰিছিল। সেইদৰে গাভৰুৱেও মন খোৱা উপযুক্ত ডেকাৰ পৰা তামোল খুজি প্রেম নিবেদন কৰাৰ দৰে শব্দবোৰ বিহুগীতত আমি দেখিবলৈ পাওঁ।

কোনফালে ওলালা গোহাঁইদেউ লিগিৰা
ৰঙাকৈ বিচনী লৈ
কঁকালৰ গামোচা কৰে তিৰবিৰ
তামোলখনি দি যোৱা ৰৈ।

(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শর্মা, পৃষ্ঠা-৫৪)

**আ-অলংকাৰ ঃ**

অসমীয়া তিৰোতাৰ বিহুগীতত সাজপাৰৰ দৰে বিবিধ অলংকাৰৰ কথাও পোৱা যায়। সেইবোৰৰ ভিতৰত সোণৰ-মাদলি, মণি, কেৰু, নৰা জাংফাই, খাৰু, থুৰীয়া, গেজেৰা আদি প্রধান। সোণেৰে তৈয়াৰী বিভিন্ন অলংকাৰৰ পৰা অসমত প্রাচীন কালৰে পৰা সোণৰ ব্যৱহাৰৰ কথা অনুমান কৰিব পাৰি। প্রেমিকাই প্রেমিকৰ পৰা কাপোৰৰ দৰে অলংকাৰো বিচাৰে। বিহুগীতৰ মাজত এই কথা প্রকাশ পোৱা আমি দেখিবলৈ পাওঁ —

হাৰৈ খুজিলে হাৰে কটা মাদলি
পাৰৈ ঐ খুজিলে মণি,
বুকুৰ নুমলীয়ে খুজি পঠিয়াইছে
এখনি হাতীদাঁতৰ ফণি।

(লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত, ড° হেমন্ত কুমাৰ শর্মা, পৃষ্ঠা-১৫৩)

শুৱায় কি নুশুৱায় সোণৰ পোৱালমণি
বনিয়াই বনিয়াই চাওঁ,
আঠতোলা সোণৰ বিৰি গঢ়াই দিয়া
বিহু মাৰিবলৈ যাওঁ।
(বিহুনামৰ জুৰুলি, ইছমাইল হুছেইন, পৃষ্ঠা-৮৬)

**বাঁহৰ প্ৰয়োগ ঃ**

অসমীয়া সংস্কৃতিৰ এক অপৰিহাৰ্য অংগ হৈছে বাঁহ। যিকোনো ক্ষেত্ৰতেই বাঁহৰ প্ৰয়োগ বিশেষ মন কৰিবলগীয়া। ঘৰ সজাৰ পৰা আৰম্ভ কৰি মৃত্যুৰ পাছত শ লৈ যোৱা চাঙিখন বনাবলৈয়ো এই বাঁহৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। সেইবাবে এই বাঁহৰ প্ৰয়োগ বিহুগীতসমূহৰ মাজেৰেও ফুটি উঠা দেখিবলৈ পাওঁ। খাদ্যৰ ক্ষেত্ৰত বাঁহ-গাজ, বিভিন্ন ধৰণৰ বাদ্যৰ ক্ষেত্ৰত গগনা, বাঁহী, টকা, আকৌ বাঁহৰ খৰিকা, ভলুকা বাঁহ আদি শব্দৰ প্ৰয়োগ দেখিবলৈ পাওঁ। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ

বাঁহৰে আগতে পুঠিমাছে কমলে
ধৰি আন খৰিকাত দিওঁ,
এইজনী নাচনী বৰকৈ বাঢ়িছে
ধৰি আন ফাটেকত দিওঁ।
(বিহু নামৰ জুৰুলি, ইছমাইল হোছেইন, পৃষ্ঠা-১২২)

বাঁহৰ তলে তলে বাঁহীটি বজালো
শাহুআয়ে শুনকহি বুলি,
শাহুআয়ে শুনিলে মিচিকিয়াই হাঁহিব
জোঁৱাই ধেমেলীয়া বুলি।
(বিহু নামৰ জুৰুলি, ইছমাইল হোছেইন, পৃষ্ঠা-১২২)

ভলুকা বাঁহৰে গাজে প্ৰাণেশ্বৰী
ভলুকা বাঁহৰে গাজ,
কত কথা কলি বিহা পাৰি পাৰি
কিহৰনো এতিয়া লাজ।
(বিহু নামৰ জুৰুলি, ইছমাইল হোছেইন, পৃষ্ঠা-১২৩)

সৃষ্টিশীল মনৰ আধাৰ হৈছে সংস্কৃতি। বিহুগীতসমূহ হৈছে হোজা মানুহৰ মনৰ ভাব প্ৰকাশৰ এক মাধ্যম। সৃষ্টিশীল মন এটাই মাটিৰ পৰা আকাশলৈকে প্ৰতিটো সমল, উপদান আদিক লৈ এই বিহুগীতসমূহৰ জন্ম দিছে। ভাব-কল্পনাৰে অনুপম প্ৰকাশভংগী এই বিহুগীতসমূহ নিজেই এক সংস্কৃতি হৈ পৰিছে। এই সংস্কৃতিক আমি বিহু সংস্কৃতি বুলি ক'ব পাৰো।

**উপসংহাৰ ঃ**

বিহুগীতসমূহ অসমীয়া জাতীয় জীৱনৰ আধাৰস্বৰূপ। অসমৰ সংস্কৃতি কোষলৈ বিহুগীতবোৰ হ'ল জীৱনজোৰা অক্ষয় কল্পতৰুৰ বীজস্বৰূপ, যাক পৃথিৱীৰ কোনো এটা কোণত অকলে বহি আওৰালেও যেন ভাহি আহিব প্ৰতিজন অসমীয়াৰ আদিপাঠ। বিহুগীতৰ বিভিন্ন সমাজ সংস্কৃতি দিশৰ আলোচনা ইতিমধ্যে হৈ গৈছে যদিও নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ দৃষ্টিৰে বিহুগীতৰ আলোচনা পুঙ্খানুপুংখভাৱে হোৱা দেখা পোৱা নাযায়। এই বিষয়টো লোকচক্ষুৰ দৃষ্টিলৈ অনা বিভিন্ন বিহুগীত সমালোচক সংস্কৃতিবিদ, ভাষাতত্ত্ববিদ, সাহিত্যিক আদিৰ অধ্যয়নৰ আধাৰত পৰ্যবেক্ষণ আৰু বিশ্লেষণ কৰি আমি দেখিবলৈ পাওঁ যে নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে সমাজ আৰু সংস্কৃতিৰ সম্পৰ্ক অধ্যয়ন কৰিবলৈ যাওঁতে মানৱ জীৱ-বিদ্যা, ভাষা অৰ্জনৰ প্ৰক্ৰিয়া আৰু ভাষাৰ আন্তঃ সম্পৰ্কও বিচাৰ কৰে। গতিকে নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানৰ লগত সমাজ সংস্কৃতিৰ বিচাৰ বিশ্লেষণত এইটো স্পষ্ট হয় যে সমাজ, ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰ মাজৰ সম্পৰ্ক যথেষ্ট নিবিড় আৰু গুৰুত্বপূৰ্ণ। নৃতাত্ত্বিক ভাষাবিজ্ঞানে বিভাজন কৰা বিভিন্ন মানৱ সম্প্ৰদায়ৰ নিজা নিজা ভাষাৰ মাজত সেই ভাষিক আচৰণ, গীত-নৃত্য, চিত্ৰকলা আদি সামাজিক সাংস্কৃতিক দিশ অন্তৰ্নিহিত হৈ থাকে। সেই সম্পৰ্কে অৱগত হ'ব পাৰো। বিহুগীতত অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ শব্দ প্ৰয়োগ সম্বন্ধে বিশ্লেষণ কৰিলে প্ৰত্যক্ষ কৰোঁ যে অসমীয়া বিহুগীতে সামাজিক ভেদাভেদ জাতিকূলৰ বিৰোধিতা সংস্কাৰমুখীতাৰ কথাও কয়। অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ বিভিন্ন পৰম্পৰা, নীতি বিহুগীতৰ শব্দত প্ৰতিফলিত হৈছে। যেনে ঃ পলুৱাই বিয়া পাতিলে গা-ধন দিয়া, থুৰীয়া তামোলেৰে আহুদি কৰা আদিৰ বিষয়ে জানিব পাৰো। কৃষিজীৱি অসমীয়া সমাজৰ পথাৰ আৰু পথাৰৰ লগত জড়িত সমলেই বিহুগীতত বৰ্ণিত হৈছে। সেয়ে বিহুগীতত পথাৰ, হাল, গৰু, যুঁৱলী, মৰণা, ধান, কঠীয়া আদি শব্দৰ প্ৰয়োগ দেখা পাওঁ। তদুপৰি অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ চহা জীৱন যাত্ৰা, খাদ্যাভাস, প্ৰকৃতি, প্ৰেম, নদী আদিৰ বিষয়ে বিহুগীতৰ শব্দত উল্লেখ পোৱা যায়। অসমীয়া জাতিটো যেনেকৈ আৰ্য্য-অনাৰ্য অষ্ট্ৰিক-মংগোলীয় জাতিৰ সংমিশ্ৰণ ঠিক তেনেকৈ অসমীয়া সংস্কৃতিও সংমিশ্ৰিত। বিহুৰ বুকুত এই সকলোবোৰ সংস্কৃতিৰ সম্পদ সোমাই আছে। ঐতিহাসিক সমলৰ লগতে অসমীয়া জাতীয় জীৱনৰ স্বাভিমানী কাহিনী বিহুগীতৰ মাজেৰে বৰ্ণিত হৈছে। আ-অলংকাৰৰ সৈতে জড়িত সমাজ সাংস্কৃতিক বিশ্বাস এই বিহুগীতসমূহত বৰ্ণিত হৈ আছে। ❑

**গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ**


১। কোঁৱৰ অপর্ণা, *ভাষাবিজ্ঞান উপক্রমণিকা*, নৱম সংস্কৰণ, বনলতা প্রকাশন, নতুন বজাৰ, ডিব্রুগড়-১, ২০২১
২। কলিতা নিপম, বৰা ভূগুত্তম সম্পাদনা, *ভাষাবিজ্ঞান আৰু অসমীয়া ভাষা*, প্রথম প্রকাশ, পূর্বায়ণ প্রকাশন, ২০২১
৩। গগৈ লীলা, *বিহু এটি সমীক্ষা*, চতুর্থ সংস্কৰণ, বনলতা প্রকাশন, নতুন বজাৰ, ডিব্রুগড়-১, ২০১০
৪। গগৈ লীলা, *অসমীয়া লোক-সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা*, তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০১৭
৫। গগৈ লীলা, *নৈ বৈ যায়*, বনলতা প্রকাশন, (নতুন) তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০২০
৬। গোস্বামী হেমচন্দ্র, সম্পাদক, *অসমীয়া সাহিত্যৰ চানেকি*, বাণী মন্দিৰ, ১৯২৯
৭। গোস্বামী উপেন্দ্রনাথ, ভাষা বিজ্ঞান, চর্তুবিংশতিতম সংস্কৰণ, মণি-মাণিক প্রকাশ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-৭৮১০০১, ২০১৭
৮। ডেকা, দীনবন্ধু, *বিহুৰ শিপা সংকট আৰু উত্তৰণ*, প্রথম প্রকাশ, ২০ জুলাই, ০৩ খ্রীঃ
৯। দাস সূর্য, *বিহু আৰু বৈদিক যজ্ঞৰ বিকৃতি*, প্রথম প্রকাশ, অসম বুক ট্রাষ্ট, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-৭৮১০০১, অক্টোবৰ, ২০২২
১০। নেওগ প্রদীপ, *বিহু-বিনন্দীয়া*, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, জ্যোতি প্রকাশন, ডিচেম্বৰ ২০০৯
১১। নেওগ মহেশ্বৰ, অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা, ষোড়শ সংস্কৰণ, চন্দ্র প্রকাশ, পাণবজাৰ, ২০১৯
১২। পাঠক ৰমেশ, *ভাষা বিজ্ঞানৰ ভূমিকা*, ত্রয়োদশ সংস্কৰণ, অশোক বুক ষ্টল, পাণবজাৰ, নৱেম্বৰ, ২০২০
১৩। ফুকন তীর্থ, *বিহুনামৰ তাৎপর্য্য আৰু নান্দনিক সৌন্দর্য্য*, নতুন অসম, ডিচেম্বৰ, ২০০০
১৪। ভট্টাচার্য্য সতীশ চন্দ্র, *এডৱার্ড চাপিৰ আৰু নৃতাত্বিক ভাষা বিজ্ঞান*, নাহেন্দ্র পাদুন সম্পাদিত চিন্তাপ্রবাহ, ১৯৯৭
১৫। ৰাভা হাকাচাম উপেন, *ৰৰ অসমৰ বিহু সংস্কৃতি*, জ্যোতি প্রকাশন, গুৱাহাটী, ২০১৭
১৬। শইকীয়া মিণ্টুমণি, *এহেজাৰ এটা বিহুনাম*, ৰেখা প্রকাশন, এপ্রিল, ২০১৪
১৭। শর্মা, হেমন্ত কুমাৰ, *অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত*, প্রথম সংস্কৰণ, বীণা লাইব্রেৰী, ১৯৬১
১৮। শর্মা, হেমন্ত কুমাৰ, *লোক-সংস্কৃতিত বিহু আৰু বিহুগীত*, প্রথম সংস্কৰণ, বীণা লাইব্রেৰী, গুৱাহাটী, অসম, ২০১৮
১৯। শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ, *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*, দশম সংস্কৰণ, পুনৰ মুদ্রণ, সৌমাৰ প্রকাশ, ২০২০
২০। হুছেইন ইছমাইল, *বিহুনামৰ জুৰুলি*, প্রথম সংস্কৰণ, বনলতা প্রকাশন, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-১, এপ্রিল, ২০০৯
২১। অসম সাহিত্য সভা, *অসমৰ সংগীত-ঐতিহ্য আৰু পৰম্পৰা*, গ্রন্থস্বত্ব, ২০১৬

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# বয়ঃসন্ধিকাল সংগ্রামৰ কাল ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন
## ('বুলবুল কেন চিং' চলচ্চিত্ৰৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)

বিন্দিয়া ছিদ্দিকা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয়, ডিফু চৌহদ
৭০০২৪৮৭৯৫৫, ৭০৮৬৫২৮৪০৪
bindiasiddika5@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

বাল্যকালৰ সমাপ্তিৰ পিছৰ আৰু বয়স্ক কালৰ আগৰ কালছোৱাক কৈশোৰ কাল বুলি কোৱা হয়। এই কালছোৱাক বয়ঃসন্ধি কাল বুলিও জনা যায়। এই সময়ছোৱাত ব্যক্তিৰ শাৰীৰিক, মানসিক, সামাজিক, নৈতিক, আবেগিক, আধ্যাত্মিক ইত্যাদি দিশৰ বিকাশ হয়। মনোবিজ্ঞানী ষ্টেন্টলী হলে বয়ঃসন্ধি কালছোৱাক ধুমুহা আৰু পীড়ণৰ কাল বুলি কৈছে। কিয়নো এই কালছোৱাত কিশোৰ-কিশোৰীসকলে নানান ধৰণৰ সংগ্রামৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হয়। কৈশোৰ কালছোৱাক সংগ্রামী, সমস্যা পীড়িত আৰু জটিলতৰ কৰি তোলাত দ্রুত দেহ মানসিক তথা আবেগিক বিকাশৰ লগতে বর্তমান সমাজৰ অসুস্থ প্রভাৱৰ ভূমিকা গুৰুত্বপূর্ণ। কর্মবিমুখ শিক্ষা ব্যৱস্থা, নিৰনুৱা সমস্যা, সমাজৰ নৈতিক মানদণ্ডহীনতা, বাধা ইত্যাদিয়ে কৈশোৰ কালছোৱাক সংকটময় কৰি তোলে।

সাহিত্যৰ বিভিন্ন অংগসমূহৰ দৰে চলচিত্ৰৰ যোগেদিও কৈশোৰ কালছোৱাৰ নানান সমস্যাক তুলি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। আমাৰ গৱেষণা পত্রখনত ৰীমা দাসৰ 'বুলবুল কেন চিং' চলচিত্ৰৰ যোগেদি বয়ঃসন্ধি কালৰ সংগ্রাম, মনস্তত্ত্ব কিদৰে প্রকাশ পাইছে সেই সম্পর্কে আলোচনা দাঙি ধৰা হ'ব।

**বীজ শব্দ ঃ**

চলচ্চিত্র, বয়ঃসন্ধি কাল, সংগ্রাম, সমাজ, সমাজৰ বাধা।

**০.০১ অৱতৰণিকা ঃ**

**বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ**

চলচ্চিত্র হৈছে মানৱীয় অনুভৱ প্রেৰণ-গ্রহণৰ এক শক্তিশালী কলা। বহু কলাৰ সংমিশ্রণত এই কলাই আত্মপ্রকাশ কৰে। চিনেমা, কথাছবি, বোলছবি, চলচ্চিত্র, মোচন পিকচাৰ, মুভি, ফ্লিম ইত্যাদি বিভিন্ন শব্দৰে বজোৱা দৃশ্য-শ্রব্যৰ এই মাধ্যমটি বিশ্বৰ সর্বকনিষ্ঠ কলা মাধ্যম। দৃশ্য-শ্রব্য গুণবিশিষ্ট এই কলা মাধ্যমটোৱে, একো একোখন সমাজৰ ভিন ভিন দিশসমূহ যেনে— সমাজৰ চিন্তা-চর্চা, ধ্যান-ধাৰণা, সাংস্কৃতিক ঐতিহ্য পৰম্পৰা, অর্থনীতি, ৰাজনীতি, নৈতিকতা, মনস্তত্ত্ব ইত্যাদিক প্রভাৱিত কৰাৰ লগতে এই দিশসমূহক কলাসন্মতভাৱে দাঙি ধৰি আহিছে। সেয়েহে চলচ্চিত্রক সমাজৰ দাপোণ, পৰিৱর্তনৰ কাৰক তথা এটি গুৰুত্বপূর্ণ কলা মাধ্যম বুলি অভিহিত কৰা হয়।

সাম্প্রতিক গণসংযোগৰ মাধ্যমবিলাকৰ ভিতৰত চলচ্চিত্রক সর্বাধিক জনপ্রিয় মাধ্যম বুলি আখ্যা দিয়া হয়। ঊনবিংশ শতিকাৰ অন্তিম দশকত জন্ম লাভ কৰা চলচ্চিত্র শিল্পই বর্তমান সময়ত সবাতকৈ বলিষ্ঠ চিত্তাকর্ষক আৰু প্রভাৱশালী কলাৰ ৰূপ পৰিগ্রহণ কৰা দেখা যায় যদিও তাহানিৰ নির্বাক চৰিত্রৰ যুগতো এই শিল্পৰ জনপ্রিয়তা আছিল বিশ্ববিয়পা। জর্জ মেলিজ, চার্লছ পাখে, মেৰু ছেনেট আদিৰ দৰে প্রতিভাশালী আৰু কলাকুশলী শ্রষ্ঠাৰ যুগতে আমেৰিকা চহৰত নির্বাক চিত্রৰ সফল দর্শনী অনুষ্ঠিত হয়। সেই ব্যক্তিসকলৰ পদচিহ্ন অনুসৰণ কৰি পৰৱর্তী সময়ত আগবাঢ়ি আহিছিল চার্লি চেপলিন, গ্রেটা গাৰো, বেৰিমোৰ আদি বিখ্যাত তাৰকাসকল। এনেদৰে চলচ্চিত্র শিল্পই ১৯২৬ চনৰ পৰা লাহে লাহে এক ক্রান্তিকাৰী আৰু যুগান্তকাৰী ৰূপত অৱতীর্ণ হয়হি। (পাঠক, পাতনি)

ভাৰতীয় চলচ্চিত্রৰ শুভাৰম্ভ হয় ১৯১৩ চনত দাদা চাহেব ফাল্কেৰ নির্মিত 'ৰজা হৰিশ্চন্দ্র' নামৰ নির্বাক চিত্রখনিৰ জৰিয়তে। ইয়াৰ ১৮ বছৰৰ পিছত ১৯৩১ চনত প্রথম ভাৰতীয় সবাক চিত্র 'আলম আৰা' নির্মিত হয়। পৰৱর্তী সময়ত বিভিন্ন ভাৰতীয় ভাষাত চলচ্চিত্র নির্মাণৰ ধাৰাটো সূচনা হয়। অসমতো চলচ্চিত্র নির্মাণৰ ধাৰাটো প্রৱর্তন হয় ১৯৩৫ চনত ৰূপকোঁৱৰ জ্যোতিপ্রসাদ আগৰৱালাৰ দ্বাৰা নির্মিত 'জয়মতী' চলচ্চিত্রৰ যোগেদি। চল্লিছৰ দশকত ১৯৩৫ চনৰ পাছত জ্যোতিপ্রসাদ আগৰৱালাৰ 'ইন্দ্রমালতী', ৰোহিনী কুমাৰ বৰুৱাৰ 'মনোমতী', পার্বতী প্রসাদ বৰুৱাৰ 'ৰূপহী', কমল নাৰায়ণ চৌধুৰীৰ 'বদন বৰফুকন', সুৰেশচন্দ্র গোস্বামীৰ 'ৰুণুমী', ফণী শর্মাৰ 'চিৰাজ'এ অসমীয়া চিনেমাৰ ধাৰাটোক আগবঢ়াই লৈ যায়।

চলচ্চিত্র যিহেতু মানৱীয় অনুভৱ প্রেৰণ-গ্রহণৰ এক মাধ্যম সেয়েহে ইয়াত চৰিত্রসমূহৰ মনস্তাত্ত্বিক দিশটো প্রতিফলিত হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। মানৱ জীৱনক কেইবাটাও স্তৰত ভাগ কৰা হয়। যেনে— শৈশৱ কাল, বাল্যকাল, কৈশোৰ কাল, প্রাপ্তবয়স্ক কাল, বৃদ্ধকাল। এই কালসমূহৰ ভিতৰত কৈশোৰ বা বয়ঃসন্ধি কালছোৱা মানৱ জীৱনৰ অতি গুৰুত্বপূর্ণ কাল। বয়ঃসন্ধিকালতে ব্যক্তিৰ জীৱনৰ এক আমূল পৰিৱর্তন হয়। সাধাৰণতে ১০-১৯ বছৰ বয়সলৈকে মানৱ জীৱনৰ এইখিনি বয়সক বয়ঃসন্ধি কাল বুলি কোৱা হয়। বয়ঃসন্ধিকালত কিশোৰ-কিশোৰীসকলে ভিন্নধর্মী সমস্যা আৰু সংগ্রামৰ মাজেদি পাৰ কৰিবলগীয়া হয়। এই সময়ছোৱাত কিশোৰ-কিশোৰীসকল প্রায় তেওঁলোকৰ ভূমিকাৰ বিষয়ে বিভ্রান্ত হয় আৰু বর্ধিত প্রাপ্তবয়স্ক হিচাপে তেওঁলোকৰ দায়িত্ব আৰু শিশু হিচাপে তেওঁলোকৰ আকাংক্ষাৰ মাজত বিভক্ত হয়। এই টো সময় এনে এক সময় যেতিয়া কিশোৰ-কিশোৰীসকলে তেওঁলোক কোন, তেওঁলোক কোন হ'ব বিচাৰে আৰু তেওঁলোকৰ চাৰিও কালৰ পৃথিৱীত কেনেদৰে খাপ খায় সেই বিষয়ে প্রশ্নৰ সৈতে যুঁজি থকাৰ সময়। ইয়াৰ ফলস্বৰূপে বহুক্ষেত্রত কিশোৰ-কিশোৰীসকলক আত্ম পৰিচয়ৰ সংকটত ভোগা দেখিবলৈ পোৱা যায়। বয়ঃসন্ধিকালতে ল'ৰা-ছোৱালীৰ যৌন অনুভূতি উদ্ভৱ হয়। যৌনতাৰ বিষয়ে অনুভূতি আৰু চিন্তাই অপৰাধবোধৰ জন্ম দিয়া দেখিবলৈ পোৱা যায়। সাহিত্যৰ বিভিন্ন অংগ যেনে— নাটক, চুটিগল্প, উপন্যাস আদিত মানৱজীৱনৰ এই বিশেষ সময়ছোৱাক লৈ নানান ধৰণৰ ৰচনা সৃষ্টি কৰা হৈছে। এই ক্ষেত্রত চলচ্চিত্রৰ ভূমিকাও গুৰুত্বপূর্ণ।

আৰম্ভণিৰে পৰা চলচ্চিত্রত মানৱ জীৱনৰ বিভিন্ন স্তৰসমূহৰ লগতে সেই কালছোৱাৰ বিভিন্ন সংঘাত, বিপর্যয়ৰ কথাক তুলি ধৰাৰ চেষ্টা কৰি অহা দেখিবলৈ পোৱা যায়। সাম্প্রতিক সময়ত কৈশোৰ অধ্যয়ন গুৰুত্বপূর্ণ হৈ উঠাৰ আঁৰৰ মূলতে হ'ল— দেশ বা সমাজ ব্যৱস্থাৰ তড়িৎ উন্নতিৰ বাবে কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ সবল মানসিক স্বাস্থ্যৰ প্রয়োজনীয়তা। কৈশোৰকাল সন্ধিক্ষণৰ কাল হোৱা বাবে তেওঁলোকে সন্মখীন হোৱা যিকোনো সমস্যাই ব্যক্তিগত পর্যায়ত অপকাৰ কৰাৰ লগতে ক্রমশঃ সমাজলৈও বিয়পি পৰে। কৈশোৰ অধ্যয়নে কিশোৰৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য গঠনৰ বাবে প্রয়োজন হোৱা কাৰকবোৰ আৰু ইয়াৰ প্রত্যাহ্বান সম্পর্কে জ্ঞান আহৰণ কৰাত সহায় কৰে। অসমীয়া চলচ্চিত্র জগতত কৈশোৰ মনস্তত্ত্ব বা কৈশোৰ কালত কিশোৰ-কিশোৰীয়ে সন্মুখীন হোৱা সংগ্রামক লৈ বহুতো চলচ্চিত্র নির্মাণ হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। যেনে— প্রদ্যুৎ কুমাৰ বৰা পৰিচালিত 'সূর্যাস্ত', 'ধুনীয়া তিৰোতাবোৰ', জাহ্নু বৰুৱা পৰিচালিত 'কণিকাৰ ৰামধেনু', ৰীমা দাস নির্মিত 'ভিলেজ ৰকষ্টাৰ', 'বুলবুল কেন ছিং' উৎপল বৰপূজাৰীৰ 'ঈশ্বু', কবীৰ লাল নির্মিত 'অন্তর্দৃষ্টি' ইত্যাদি চলচ্চিত্রৰ নাম উল্লেখনীয়।

আমাৰ এই গৱেষণা পত্রখনত ৰীমা দাস নির্মিত 'বুলবুল কেন ছিং' চলচ্চিত্রখনৰ যোগেদি বয়ঃসন্ধি কালৰ

সংগ্রামৰ বিষয়ে আলোচনা দাঙি ধৰা হ'ব।

**০.০২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব ঃ**

'বয়ঃসন্ধি কাল সংগ্রামৰ কাল ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন' (বুলবুল কেন চিং চলচ্চিত্রৰ বিশেষ উল্লিখনসহ) শীৰ্ষক বিষয়টো অধ্যয়ন কৰিবলৈ যাওঁতে কিছুমান উদ্দেশ্য সন্মুখত ৰখা হৈছে—

১. চলচ্চিত্রৰ ইতিহাসৰ বিষয়ে আলোচনা দাঙি ধৰা।

২. কৈশোৰ কালৰ সংজ্ঞা দিয়াৰ লগতে এই কালছোৱাত কিশোৰ-কিশোৰীয়ে সন্মুখীন হোৱা বিভিন্ন সমস্যা আৰু সংগ্রামৰ বিষয়ে বিস্তৃত আলোচনা দাঙি ধৰা।

৩. চলচ্চিত্রৰ মাজেৰে ব্যক্তি জীৱনৰ সুখ-দুখ, সংগ্রাম কেনেদৰে প্রতিফলিত হয় তাৰ বিষয়ে এক সম্যক ব্যাখ্যা দাঙি ধৰা।

৪. অসমীয়া চলচ্চিত্রত কিশোৰৰ মনস্তত্ত্বই কিদৰে ভূমিকা লাভ কৰিছে সেই সম্পর্কে আলোচনা কৰা।

৫. বুলবুল কেন ছিং চলচ্চিত্রত বয়ঃসন্ধিকালৰ সংগ্রামৰ কথা কেনেদৰে উপস্থাপন কৰা হৈছে, সেই বিষয়ে বিস্তৃত আলোচনা দাঙি ধৰা।

**০.০৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ**

চলচ্চিত্র এবিধ কলা। কলা এই বাবেই যে ই এখন সমাজৰ, এটা জাতিৰ প্রতিচ্ছবি বা কোনো বক্তব্য বা চিন্তা চিত্রৰ মাধ্যমেৰে জনমানসত দাঙি ধৰে। এই শিল্পকলাবিধৰ উদ্দেশ্য কেৱল মনোৰঞ্জন প্রদান কৰাই নহয়, সমাজ বাস্তৱতাৰ সৃষ্টিশীল ৰূপায়ন তথা জীৱনৰ গভীৰতৰ দিশসমূহৰ আলোক সঞ্চাৰী চিত্রায়ণে চলচ্চিত্রৰ অন্যতম উদ্দেশ্য। আৰম্ভণিৰে পৰা চলচ্চিত্রই ব্যক্তি জীৱনৰ আবেগিক কথাবোৰ ধৰি ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰি আহিছে। সাম্প্রতিক সময়ত কৈশোৰ কালছোৱাৰ লগতে কিশোৰ-কিশোৰীৰ মনক গুৰুত্ব দি বহুতো চলচ্চিত্র নির্মাতাই চলচ্চিত্র নির্মাণ কৰিছে। এই চলচ্চিত্রসমূহৰ যোগেদি কিশোৰ-কিশোৰীৰ আভ্যন্তৰীণ জগতখনৰ পৰিচয় পোৱা যায়। আমাৰ এই গৱেষণা পত্রখনত মানৱ জীৱনৰ আটাইতকৈ গুৰুত্বপূর্ণ স্তৰ বয়ঃসন্ধি কালত কিশোৰ-কিশোৰীসকলে সন্মুখীন হোৱা সংকটক 'বুলবুল কেন ছিং' অসমীয়া চলচ্চিত্রখনত কিদৰে প্রতিফলন ঘটিছে তাক অধ্যয়নৰ পৰিসীমাত সামৰি আলোচনা কৰা হ'ব।

**মূল বিষয়বস্তু ঃ**

'বুলবুল কেন চিং' হৈছে জীৱন-মৃত্যু, সমাজ আৰু সমাজৰ বাধাৰ বিষয়ে এক সহজ, তীব্র কাহিনী। ছবিখন আমাৰ সমাজত ৰক্ষণশীলতাৰ দৃষ্টতাৰ বিষয়ে। শিক্ষামূলক, নহয় আৰু বুলবুলৰ অস্তিত্বক আনন্দলৈ ৰূপান্তৰিত কৰা নাই। ৰৱং ছবিখন বুলবুলৰ জীৱন যাত্রাত তাইৰ সুৰক্ষা আৰু যত্ন লোৱা সমাজখনৰ এক দুখজনক প্রতিফলন। ব্যক্তিগত দুখ-যন্ত্রণাত আবদ্ধ হৈ এগৰাকী কিশোৰীৰ অস্তিত্ব ৰক্ষাৰ বাবে চলি থকা যুঁজখন উপস্থাপন কৰাত চলচ্চিত্রখন সফল হৈছে বুলি ক'ব পাৰি।

'বুলবুল কেন চিং' হৈছে নিম্ন শ্রেণীৰ সামাজিক পটভূমিৰ পৰা অহা তিনিজন কিশোৰ বুলবুল, বনি আৰু সুমনৰ জীৱনলৈ অহা বিভিন্ন সংঘাতক লৈ নির্মিত। ছবিখনত আত্মগ্রহণ, যৌনতা, কিশোৰ-কিশোৰীৰৰ প্রেম, পিতৃতন্ত্রক উফৰাই পেলোৱা, হেৰুৱা আত্মপৰিচয়ৰ লগতে তিনিওজন বন্ধুৱে নিজৰ গাঁৱৰ সামাজিক আচাৰ-ব্যৱহাৰ আৰু নৈতিক সংহিতাৰ সৈতে কেনেদৰে সংঘর্ষত লিপ্ত হয়, সেই বিষয়ে অন্বেষণ কৰা হৈছে।

কৈশোৰ কালছোৱাত ল'ৰা-ছোৱালীৰ মন অতি সংবদনশীল হয়। এই সময়ছোৱাত কিশোৰ-কিশোৰীৰ মনত আত্ম প্রত্যয় (Selfconcept), আত্ম-সন্মানবোধ (Self respect), বঢ়াৰ লগে লগে নিজকে সমাজৰ এজন বুলি ভাবিবলৈ বাধ্য ধৰে। তেনে ক্ষেত্রত বয়সস্থসকলে অৱহেলা আৰু অৱমাননা কৰিলে তাৰ সুস্থ সামাজিক বিকাশ বাধাপ্রাপ্ত হৈ পৰে। সমনীয়াৰ দ্বাৰা ক্রিয়া আচৰণসমূহক নিৰুৎসাহজনকভাৱে সমালোচনা কৰা, দুর্বলতাসমূহক লৈ তাৰ ব্যক্তিত্ব অপদস্থ কৰিবলৈ চেষ্টা ইত্যাদি এনেবোৰ আচৰণে কৈশোৰৰ আত্ম প্রত্যয়ত আঘাত হানে। চলচ্চিত্রখনত সুমনৰ ক্ষেত্রতো এনে দেখিবলৈ পোৱা যায়। সুমনৰ সমকামী স্বভাৱৰ বাবে সমনীয়া, সমাজৰ লোক সকলোৱে তাক 'লেডিজ' বুলি উপহাস কৰে। স্কুলৰ ল'ৰাবোৰে সুমন 'লেডিজ' বুলি কৈ পুৰুষত্বৰ সীমাৰেখা চিহ্নিত কৰে, দিঙিত নেকলেচ পিন্ধিবলৈ কয় আৰু পেন্টটো তললৈ টানি লিংগ আছে নে নাই চাবলৈ চেষ্টা কৰা কার্যত সুমন তীব্র অপমান অনুভৱ কৰে। এবাৰ বুলবুলহতঁৰ লগত সুমন মাছ ধৰিবলৈ যাওঁতে সকলোৱে সুমনক ঠাট্টা কৰিব ধৰে আৰু কয় যে মাছ ধৰাটো সিয়াৰ কাম নহয় ৰৱং ঘৰলৈ গৈ ৰন্ধা- বঢ়া কৰাটোহে সিয়াৰ কাম বুলি ইতিকিং কৰিবলৈ

ধৰে। বুলবুল আৰু বনিৰ বাহিৰে সুমনৰ ছোৱালীৰ দৰে কৰা স্বভাৱক সহজভাৱে ল'ব পৰা নাই আৰু যিটোৱে কিশোৰ সুমনৰ মনত চৰম হতাশাৰ সৃষ্টি কৰিছে। এনে উপহাস আৰু অপমানে সুমনৰ আত্ম প্ৰত্যয়ত আঘাত দিয়ে, যাৰ ফলস্বৰূপে সুমন সমনীয়াৰ লগত সংঘাতত লিপ্ত হৈ পৰে। যৌনতা আৰু আত্মপৰিচয়ৰ বিষয়টোক চলচ্চিত্ৰ খনত সুমন চৰিত্ৰটোৰ যোগেদি আকৰ্ষণীয়ভাৱে চিত্ৰিত কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। সুমনৰ মুখৰ সংলাপ-

" মোৰ দোষ কেনেকৈ ভগৱানে মোক এনেকৈয়ে সৃষ্টি কৰিলে? পৃথিৱীত এনেকৈ একমাত্ৰ মই নেকি?"

কৈশোৰ কালত সন্মুখীন হোৱা এক প্ৰধান সংঘাত হ'ল— পিতৃ-মাতৃৰ সৈতে হোৱা সংঘাত। আগতে উল্লেখ কৰা হৈছে যে বয়ঃসন্ধি কালছোৱাত কিশোৰ-কিশোৰীৰ মন সংবেদনশীল হয়। সেয়েহে মাক-দেউতাকৰ গালি-গালাজ, প্ৰতিযোগিতামূলক মনোভাৱৰ লগতে ল'ৰা-ছোৱালীক লৈ কৰা অত্যাধিক প্ৰত্যাশাই কিশোৰ-কিশোৰীক হতাশ কৰি পেলায়। 'বুলবুল কেন ছিং' চলচ্চিত্ৰৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ বুলবুল বন্ধু বনি আৰু সুমনৰ সৈতে খেল-ধেমালি কৰি সুখী হোৱা এগৰাকী উচ্ছল যুৱতী। বুলবুলৰ পিতৃ আছিল সংগীত প্ৰেমী। পিতৃৰ কন্যাক গায়িকা হোৱাৰ আকাংক্ষা বহুদিনৰ, যাৰ ফলত পিতৃয়ে বুলবুলক অত্যাধিক হেঁচা প্ৰয়োগ কৰিবলৈ ধৰে। বুলবুলৰ কণ্ঠ সুৰীয়া, কিন্তু জনসাধাৰণৰ সন্মুখত গান গাবলৈ বুলবুলৰ আত্মবিশ্বাসৰ অভাৱ। বুলবুলে কবিতাহে ভাল পায়, কিন্তু পিতৃৰ সপোন ভগাৰ ভয়ত বুলবুলে পিতৃৰ সন্মুখত কেতিয়াও নিজৰ ভাব ব্যক্ত কৰা নাছিল। ফলস্বৰূপে বুলবুলক অনবৰতে মানসিক অন্তৰ্দ্বন্দ্বত ভুগি থকা দেখিবলৈ পোৱা যায়। এই সকলোবোৰে বুলবুলক হতাশ কৰি পেলায় আৰু শেষত বুলবুলে গান গাবলৈ এৰি দিয়ে। বাহ্যিক জগতৰ চাহিদা পূৰণৰ বাবে কিশোৰ-কিশোৰীসকলৰ অন্তৰাত্মাৰ ভিতৰত অহৰহ চলি থকা সংঘাত তথা সংগ্ৰামৰ প্ৰকৃত ছবিখন 'বুলবুল কেন ছিং' চলচ্চিত্ৰখনত চৰিত্ৰসমূহৰ মাজেদি অতি সাৱলীল ভাৱে উপস্থাপন কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়।

বয়ঃসন্ধি কালছোৱাক খলাবমা আৰু চাকনৈয়াৰে ভৰা সময় বুলি কোৱা হয়। ইয়াৰ মূলতে হ'ল কৈশোৰ কালৰ বিভিন্ন ধৰণৰ সমস্যাবহুল বৈশিষ্ট্যসমূহ। এই সমস্যাসমূহৰ ভিতৰত এক প্ৰধান বৈশিষ্ট্যসমূহ। যৌৱন প্ৰাপ্তিয়ে কিশোৰ-কিশোৰীৰ দেহ-মনত অস্বাভাৱিক যৌন উত্তেজনা আনি দিয়ে। আকৰ্ষণীয় দেহ গঠন সংযোজন ক্ষমতা আদিয়ে বিপৰীত লিংগৰ প্ৰতি তেওঁলোকৰ আসক্তি বৃদ্ধি কৰে। যাৰ ফলস্বৰূপে কিশোৰ

কিশোৰীসকল জৈৱিক তাড়নাত আত্ম নিয়ন্ত্ৰণ হেৰুৱাই পেলোৱাটো স্বাভাৱিক কিন্তু শিক্ষক, অভিভাৱক আৰু সমাজৰ অন্যান্য লোকসকলে যৌৱনৰ দৈহিক-মানসিক পৰিৱৰ্তনসমূহ প্ৰায় ক্ষেত্ৰতে সহজভাৱে গ্ৰহণ কৰিব নোৱাৰে। ফলত তেওঁলোকৰ কৈশোৰ মনৰ ইচ্ছা-অভিৰুচি আদি পদে পদে সংঘাতৰ সন্মুখীন হ'বলগা হয়। ইয়াৰ প্ৰতিক্ৰিয়া হিচাপে তেওঁলোকৰ অসুস্থ দৃষ্টিভংগী আৰু অসুস্থ আচৰণে এই ক্ষেত্ৰত উভয়ৰে অনিষ্ট সাধন কৰিব পাৰে। তথা সমাজৰ অসুস্থ প্ৰভাৱ আৰু কৈশোৰ কালৰ জৈৱিক প্ৰয়োজনসমূহ বা ভুলসমূহৰ প্ৰতি সহানুভূতিশীল দৃষ্টিভংগী আৰু এক উদাসীনতাৰ মনোভাৱে কৈশোৰকালত বিপদজনক অৱস্থা এটাৰ সৃষ্টি কৰিব পাৰে। আৰু এনে বিপদজনক অৱস্থা এটাৰ চিত্ৰ 'বুলবুল কেন ছিং' চলচ্চিত্ৰত দেখিবলৈ পোৱা যায় বনিৰ আত্মহত্যা কৰা কাৰ্যৰ জৰিয়তে। ঘটনাক্ৰমে বনি তাইৰ বন্ধু সকলোৰে সৈতে স্কুলৰ ইউনিফৰ্ম নিজৰ নিজৰ প্ৰেমিকাৰ সৈতে ব্যক্তিগত মুহূৰ্ত পাৰ কৰি থকা অৱস্থাত ধৰা পৰে। আৰু এই কিশোৰ প্ৰেমিকহালৰ ওপৰত অকথ্য শাৰীৰিক নিৰ্যাতন চলায়। আনকি অভিভাৱককে ধৰি স্কুল কতৃপক্ষইও তেওঁলোকৰ ওপৰত মানসিক নিৰ্যাতন চলায়। নিউজ চেনেল এটাই তেওঁলোকৰ প্ৰচাৰত বাবে বিদ্যালয়ত উপস্থিত হৈ বুলবুল, বনি আৰু সুমনক জেৰা কৰে। নিউজ চেনেলৰ বিদ্যালয়লৈ অহাৰ কথাত বিদ্যালয়খনৰ উচ্চ কতৃপক্ষ ক্ষুব্ধ হৈ পৰে আৰু এই নিৰীহ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ ভৱিষ্যতৰ কথা চিন্তা নকৰি তেওঁলোকক বিদ্যালয়ৰ পৰা বহিস্কাৰ কৰি দিয়ে। বিদ্যালয় কতৃপক্ষই ল'ৰা-ছোৱালীৰ ভৱিষ্যততকৈ তেওঁলোকৰ প্ৰতিষ্ঠানৰ সুনামক লৈয়ে চিন্তিত, সেই গতিকে তেওঁলোকৰ শুধৰণিৰ সুযোগ দিয়াৰ পৰিৱৰ্তে সুযোগ দিয়াৰ পৰিৱৰ্তে তেওঁলোকৰ সম্ভাৱনাময় ভৱিষ্যতক নস্যাৎ কৰি পেলোৱাত অকণো কুণ্ঠাবোধ কৰা দেখিবলৈ পোৱা নাযায়। অৱশেষত অভিভাৱক আৰু বিদ্যালয়ৰ শিক্ষক-শিক্ষয়ত্ৰীৰ পৰা পোৱা দণ্ড আৰু নিন্দা সহ্য কৰিব নোৱাৰি বনিয়ে আত্মহত্যাই নিৰীহ জীৱনৰ অকাল অন্ত পেলোৱাই নহয়, তাইৰ লগতে বুলবুলৰ জগতখনৰ ভৰসাও ভাঙি পেলায়।

**সিদ্ধান্ত ঃ**

আমাৰ গৱেষণা পত্ৰখনৰ আলোচনাৰ অন্তত নিম্নোক্ত সিদ্ধান্তবোৰত উপনীত হ'ব পৰা গৈছে—

ক) চলচ্চিত্ৰখনত পৰিয়াল আৰু সমাজৰ নীতি-নিয়মৰ হেঁচাত আত্মপৰিচয়ৰ সন্ধানত গভীৰভাৱে সোমাই পৰা বুলবুল আৰু তাইৰ বন্ধুসকলৰ সংগ্ৰামক অতি সাৱলীলভাৱে চিত্ৰিত কৰা হৈছে।

খ) চলচ্চিত্ৰখনত বন্ধুত্ব আৰু সম্পৰ্কৰ মাজৰ গুৰুত্বৰ ওপৰত আলোকপাত কৰে। বিশেষকৈ যেতিয়া ৰোমান্টিক অনুভূতিয়ে এই সম্পৰ্কবোৰক জটিল কৰি তোলে,তেতিয়া বন্ধুত্ব কেনেকৈ সমৰ্থন আৰু সংঘাতৰ উৎস হ'ব পাৰে, সেই কথাছবিখনত ফুটাই তোলা হৈছে।

গ) গ্ৰাম্য অসমৰ পটভূমিত নিৰ্মিত ছবিখনে পৰম্পৰাগত সমাজ ব্যৱস্থাত কিশোৰীসকলে সন্মুখীন হোৱা প্ৰত্যাহ্বানৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

ঘ) ব্যক্তিগত আৰু সাম্প্ৰদায়িক উভয়ধৰণৰ ক্ষতিৰ বিষয়বস্তু আৰু চৰিত্ৰবোৰে সংগ্ৰামৰ মাজতো কেনেকৈ মোকাবিলা কৰাৰ আৰু আগবাঢ়ি যোৱাৰ উপায় বিচাৰি পায়, সেই কথাও ছবিখনত নিৰ্মাতাই উল্লেখ কৰিছে।

**সামৰণি ঃ**

সামগ্ৰিকভাৱে 'বুলবুল কেন চিং' হৈছে যৌৱনৰ প্ৰতিফলনৰ এক সূক্ষ্ম চিত্ৰণ, য'ত সপোন কঠোৰ বাস্তৱতাৰে ভৰা এখন পৃথিৱীত ডাঙৰ হোৱাৰ সৌন্দৰ্য্য আৰু প্ৰত্যাহ্বানৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে। বুলবুল নামৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰটোৰ জীৱন আৰু বন্ধুত্ব, প্ৰেম আৰু সমাজৰ আশাৰ সৈতে হোৱা তেওঁলোকৰ সংগ্ৰাম আৰু অভিজ্ঞতাক কেন্দ্ৰ কৰি ছবিখনৰ কাহিনীভাগ ৰচিত। চলচ্চিত্ৰখনৰ শেষটো অত্যন্ত মোহনীয়। শেষৰ কাহিনীত আকাশখন ধুনীয়া ৰামধেনু অলংকৃত হোৱা দেখা যায়। যি ৰামধেনু নিজৰ মাজতে গ্ৰহণযোগ্যতা আৰু নিজৰ অস্তিত্বক দাবী কৰাৰ চিন। এই দৃশ্যই দৰ্শক আৰু চৰিত্ৰক নিজৰআৰু চৌপাশৰ লগত শান্তি স্থাপন কৰাত সহায় কৰে। চলচ্চিত্ৰখনত অতি সূক্ষ্মৈ আৰু সাৱলীলভাৱে উপস্থাপন কৰা হৈছে— যে যিকোনো ডাঙৰ পৰিৱৰ্তন কেনেকৈ যুক্তিসংগত হয় তেতিয়াহে যেতিয়া আমি নিজকে যিদৰে আছো তেনেদৰেই গ্ৰহণ কৰোঁ। আৰু এই ক্ষেত্ৰত 'বুলবুল কেন চিং' চলচ্চিত্ৰখন সম্পূৰ্ণৰূপে সফল হৈছে বুলি ক'ব পাৰি। ❑


**সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ**

১) কাকতি, ডালিমা। শিশুৰ মন আৰু অসমীয়া শিশু-সাহিত্য সমীক্ষা। গুৱাহাটীঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০২২। মুদ্ৰিত।
২) নাথ, প্ৰফুল্ল কুমাৰ। তুলনামূলক ভাৰতীয় সাহিত্য বিচাৰ আৰু বিশ্লেষণ। গুৱাহাটীঃ বনলতা, ২০০৫। মুদ্ৰিত।
৩) বড়া, বৰ্ণালী। ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ শিশু-সাহিত্য বিচাৰ আৰু বিশ্লেষণ। গুৱাহাটীঃ পূৰ্বায়ণ প্ৰকাশন, ২০২৩। মুদ্ৰিত।
৪) সম্পা. বৰুৱা, পলাশ। সূৰ্যমুখী সময়। গুৱাহাটীঃ পূৰ্বায়ণ প্ৰকাশন, ২০২২। মুদ্ৰিত।
৫) মণি, শাৰদা। কিশোৰ মনোবিজ্ঞান। হিন্দী মাধ্যম কাৰ্যন্যায় নীৰ্দেশালয়, দিল্লী বিশ্ববিদ্যালয়, ১৯৯৩।
৬) পাঠক, অমৰ। চলচ্চিত্ৰ। অসম প্ৰকাশন পৰিষদ। ১৯৮৪। মুদ্ৰিত।
৭) দত্ত, উৎপল। চলচ্চিত্ৰ কথা। জ্যোতি প্ৰকাশন। ১৯৮০। মুদ্ৰিত।
৮) গগৈ, সদানন্দ। চিনেমা। অসম বুক হাইভ। ২০১৮। মুদ্ৰিত।
৯) মেনা, উৎপল। অসমীয়া চিনেমা। জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশন। ২০১৭। মুদ্ৰিত।

**প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ**

১) অমৰ,পাঠক। চলচ্চিত্ৰ, পৃ-পাতনি।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

# প্ৰব্ৰজন অধ্যয়ন তত্ত্ৱৰ দৃষ্টিৰে অসমীয়া উপন্যাস ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

## (চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ ৰূপাবৰিৰ পলস আৰু দীপক কুমাৰ বৰকাকতীৰ উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈৰ তুলনামূলক বিশ্লেষণেৰে)

দেৱাশিস বুঢ়াগোহাঁই

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
(সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ, কে. চি. দাস কমাৰ্চ কলেজ ছাত্ৰীবাৰী, গুৱাহাটী)
৭৫৭৭৯৩৪৯৮৯
dbg202223@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

জন-প্ৰব্ৰজন মানৰ সভ্যতাৰ অন্যতম পুৰাতম বৈশিষ্ট্য। এই বৈশিষ্ট্যক ঊনবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়াৰ্ধৰপৰা বিদ্যায়তনিক পৰিকাঠামোত অন্তৰ্ভুক্তকৰণ প্ৰক্ৰিয়াৰ আৰম্ভণি ঘটে। ভৌগোলিক দৃষ্টিকোণেৰে *জৰ্জ* ৰাভেনষ্টাইন প্ৰস্তাৱিত 'প্ৰব্ৰজন সূত্ৰ, ১৮৮৫' (Laws of Migration, 1885)-ৰ পিছতে ক্ৰমান্বয়ে ষ্টাউফাৰে সমাজতাত্ত্বিক দিশেৰে, হেৰিছ আৰু টডাৰোৰে অৰ্থনৈতিক দৃষ্টিৰে, বিষয়টো আগবঢ়ায় নিয়ে। বিভিন্ন বিষয়ৰ দৃষ্টিকোণেৰে 'প্ৰব্ৰজন অধ্যয়ন তত্ত্ব' (Migration Studies) বহু-অধ্যয়নক্ষেত্ৰৰ সংমিশ্ৰিত ৰূপ হৈ পৰে। জন-প্ৰব্ৰজনৰ প্ৰসংগেৰে বিভিন্ন ভাষাৰ সাহিত্যত নানা ধৰণৰ উপন্যাস ৰচনা হৈছে। এনেধৰণৰ প্ৰব্ৰজন আৰু কল্পনাপ্ৰসূত গদ্য (fiction) সম্পৰ্কীয় আলোচনা প্ৰব্ৰজন অধ্যয়নৰ এক বিশেষ প্ৰসংগ। অসমীয়া ভাষাত জন-প্ৰব্ৰজনক কেন্দ্ৰ কৰি ভালেমান সাহিত্য ৰচনা হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। যোৱা সহস্ৰাব্দ (১০০১-২০০০)-ৰ ভিতৰত অসমলৈ প্ৰব্ৰজিত টাইগোষ্ঠীসমূহ, চাহ বাগিচাত কামৰ বাবে আগমন ঘটা মধ্যভাৰতৰ বিভিন্ন গোষ্ঠীৰ লোক, আৰু বংগৰপৰা প্ৰব্ৰজিত হিন্দু আৰু মুছলমান উভয় ধৰ্মৰ লোকে অসমৰ জনগাঁথনিত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। এই জনসমষ্টিবোৰৰ প্ৰব্ৰজনেই অসমীয়া প্ৰব্ৰজনকেন্দ্ৰিক উপন্যাসৰ উপজীব্য হিচাপে ব্যৱহৃত হৈ আহিছে। তাৰ উপৰিও বিশেষকৈ বিংশ শতিকাৰ ভিতৰত প্ৰব্ৰজিত বংগমূলীয় লোকসকলক কেন্দ্ৰ কৰি অসমৰ সমাজ-ৰাজনৈতিক পটভূমি কঁপাই যোৱা এটি আন্দোলন, তাৰে ফলশ্ৰুতি হিচাপে সশস্ত্ৰ বিদ্ৰোহপৰ্যন্ত সংঘটিত হৈছে। এই আটাইবোৰ পৰিঘটনা মিলি অসমৰ ৰাজনীতি, অৰ্থনীতি, জনগাঁথনি, সকলো প্ৰভাৱান্বিত কৰি আহিছে। এই জনসমষ্টিসমূহৰ প্ৰব্ৰজনৰ প্ৰসংগত বিশেষকৈ 'বিদেশী বহিষ্কাৰ আন্দোলন' (১৯৭৯-৮৫) পৰৱৰ্তী সময়ছোৱাত ভালেমান উপন্যাস ৰচনা হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। আমাৰ গৱেষণা-পত্ৰত মূলতঃ পূৰ্ববংগমূলীয় প্ৰব্ৰজনকেন্দ্ৰিক দুখন উপন্যাসৰ তুলনামূলক বিশ্লেষণৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। তাৰে ভিতৰত চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *ৰূপাবৰিৰ পলস* হৈছে-- পূৰ্ববংগৰপৰা অসমলৈ ইছলামধৰ্মীয় মানুহৰ প্ৰব্ৰজনৰ আধাৰত ৰচিত উপন্যাস। অন্যহাতে দীপক কুমাৰ বৰকাকতীৰ *উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈ* হিন্দুধৰ্মীয় মানুহৰ অসমলৈ প্ৰব্ৰজনৰ আধাৰত ৰচিত। গতিকে এই

সাহিত্য-পাঠ দুটাৰ বৰ্ণনাৰ আধাৰত তুলনামূলক দৃষ্টিকোণেৰে প্ৰব্ৰজন অধ্যয়ন তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে গৱেষণা-পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰা হৈছে।

**বীজ শব্দ ঃ**

জন-প্ৰব্ৰজন, প্ৰব্ৰজন অধ্যয়ন তত্ত্ব, উপন্যাস, অসমীয়া ভাষা, পূৰ্ববংগমূলীয় প্ৰব্ৰজন।

**প্ৰস্তাৱনা ঃ**

জন-প্ৰব্ৰজন এক বিশ্বজনীন পৰিঘটনা আৰু মানৱ সভ্যতাৰ অন্যতম পুৰাতন বৈশিষ্ট্য। ভাৰত উপমহাদেশ আৰু অসমৰ পূৱত অৱস্থিত দেশসমূহৰপৰা অসমলৈ বহু শতিকাজুৰি প্ৰব্ৰজন হৈ আহিছে। এই প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কে উদয়ন মিশ্ৰই লেখিছে,

"Assam has rightly been called the melting-pot of diverse cultural streams, the Indo-Aryan and the Austro-Mongoloid being the central ones." (1264)

যোৱা সহস্ৰাব্দৰ পূৰ্বে প্ৰব্ৰজিত অষ্ট্ৰ'লয়ড, মংগোলয়ড, ভাৰতীয় আৰ্যৰ উপৰিও তাৰ পৰৱৰ্তী সময়ত অসমলৈ ঘটা প্ৰব্ৰজনৰ ভিতৰত ইছলাম ধৰ্মাৱলম্বী (১২০৬-পৰৱৰ্তী), টাই আহোম (১২২৮), অন্যান্য টাই গোষ্ঠী (টাই ফাকে, টাই আইতন, টাই তুৰুং, টাই খাময়াং, টাই খামতি-- ১৬শ-১৯শ শতিকা)-ৰ প্ৰসংগ উল্লেখ কৰিব পৰা যায়। অসম ব্ৰিটিছ-ভাৰতৰ সৈতে যুক্ত হোৱাৰ ফলশ্ৰুতিত অৰ্থনৈতিক শোষণৰ স্বাৰ্থত ব্ৰিটিছে ভাৰতবৰ্ষৰ বিভিন্ন প্ৰান্তৰৰ লোকক অসমলৈ প্ৰব্ৰজন কৰিবলৈ উৎসাহিত কৰিছিল। এই প্ৰব্ৰজনৰ ঢৌৱে অসমৰ জনগাঁথনিক ব্যাপকভাৱে প্ৰভাৱান্বিত কৰিছিল। এই ঢৌৰ ভিতৰত, "চাহ বাগিচা আৰু নিৰ্মাণকাৰ্যৰ বনুৱা ৰূপে অহা বিহাৰ, বংগ, মাদ্ৰাজ, মধ্যপ্ৰদেশ, উৰিষ্যাৰ বিভিন্ন জনগোষ্ঠীয় লোক; গো-পালন, চকীদাৰ, বিষয়াৰ লগুৱাৰূপে অহা নেপালী লোক; বঙালী, কায়া, মাৰোৱাৰী আদি ব্যৱসায়ী লোক আৰু সাধাৰণ কৃষি কাৰ্যৰ মাধ্যমত জীৱিকা নিৰ্বাহ কৰাত পাৰ্গত আৰু ভূমিহীন পূৰ্ববংগীয় মুছলমান কৃষক আৰু দেশ বিভাজনৰ পিছত অহা হিন্দু শৰণাৰ্থী আদি আছিল প্ৰধান।" (কলিতা, ৰ ৬৫)।

*ভানুমতী* (১৮৯১)ৰে আৰম্ভ হোৱা অসমীয়া উপন্যাসৰ প্ৰথমছোৱা যাত্ৰাত সৰ্বসাধাৰণমুখী কাহিনী ৰচনা হোৱা প্ৰৱণতা নাছিলেই। তাৰ কাৰণৰ ভিতৰত সদ্যসৃষ্ট অসমীয়া মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীটো আছিল উচ্চজাত প্ৰধান, তাৰ উপৰিও গৰিষ্ঠ সংখ্যক ব্ৰিটিছ সমৰ্থনকাৰী চাকৰিয়াল। সেয়ে উক্ত সময়ত ঐতিহাসিক উপন্যাসৰ সংখ্যাই সৰ্বাধিক পৰিলক্ষিত হয়। ক্ৰমে বাঢ়ি অহা ব্ৰিটিছ বিৰোধিতা আৰু কংগ্ৰেছৰ ৰূপত জাতীয়তাবাদী শক্তিৰ উত্থানৰ ফলত অসমত অসহযোগ আন্দোলন (১৯২০-২২)ৰ পিছৰপৰাহে উপন্যাসত প্ৰব্ৰজন পৰিস্ফুট হ'বলৈ লয়। তাৰ আগলৈকে ব্ৰিটিছৰদ্বাৰা নিমন্ত্ৰিত চাহ বাগিছাৰ শ্ৰমিক, পূৰ্ববংগৰ কৃষক, আদিৰ প্ৰতি অসমীয়া ঔপন্যাসিকৰ দৃষ্টি আছিল দেখিও নেদেখাহেন। খোদ ব্ৰিটিছ নিমন্ত্ৰিত প্ৰব্ৰজনকাৰীসকল (চাহ বাগিছাৰ শ্ৰমিক, নেপালৰ গোৰ্খা আৰু পূৰ্ববংগৰ কৃষক আদি)য়ে সৃষ্টি কৰা জনগাঁথনিগত সমস্যাক উপন্যাসত উপস্থাপন কৰিবলৈ যিদৰে ব্ৰিটিছ সমৰ্থনকাৰী ঔপন্যাসিকসকল অপাৰগ আছিল, একেদৰে প্ৰব্ৰজনকাৰী নিম্নবৰ্গৰ সমাজখন চাব পৰাকৈ উচ্চজাতৰ লেখকসকলৰ শ্ৰেণীগতভাৱেও পৃথক আছিল। ব্ৰিটিছ বিৰোধী আন্দোলনৰ ফলত উঠা জাতীয়তাবাদী ঢৌৰ প্ৰভাৱত অসমলৈ হোৱা জন-প্ৰব্ৰজন উপন্যাসৰ মাজত উপস্থাপন হ'বলৈ ধৰিলে। 'আৱাহন যুগ' (১৯২৯-৩৯)ৰ স্নেহলতা ভট্টাচাৰ্য, দৈৱচন্দ্ৰ তালুকদাৰৰ উপন্যাসত, অসমীয়া উপন্যাসৰ মাইলৰ খুঁটি বীণা বৰুৱাৰ *জীৱনৰ বাটত* (১৯৪৪) আদি উপন্যাসত প্ৰথমাৱস্থাত এই প্ৰসংগটো উপস্থাপন কৰা হয়। প্ৰব্ৰজন প্ৰসংগটোৱে আৰ্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক সকলো ফালৰপৰা জটিল ৰূপ ধাৰণ কৰাৰ পাছত বিদেশী বহিষ্কাৰ আন্দোলন (১৯৭৯-৮৫) পৰৱৰ্তী সময়ছোৱাত এই প্ৰসংগ লৈ ৰচিত উপন্যাসৰ পৰিমাণ ক্ৰমাৎ বৃদ্ধি হয়।

**অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ**

গৱেষণা-পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰাৰ উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল---

ক) প্ৰব্ৰজন আধাৰিত অসমীয়া উপন্যাসসমূহৰ এটি ৰূপৰেখামূলক আলোচনা কৰা।

খ) 'প্ৰব্ৰজন অধ্যয়ন' তত্ত্বৰ আধাৰত অসমীয়া উপন্যাসৰ বিচাৰ কৰা।

গ) বিশেষভাবে উল্লিখিত উপন্যাস দুখনৰ তুলনামূলক বিশ্লেষণ কৰা।

**অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ**

প্ৰব্ৰজন আধাৰিত ভালেমান উপন্যাস অসমীয়া সাহিত্যত পৰিলক্ষিত হয়। এই উপন্যাসসমূহক প্ৰব্ৰজিত জনসমষ্টি আধাৰিত বিভাজনেৰে কৰা এক সমীক্ষামূলক আলোচনা গৱেষণা-পত্ৰখনত আগবঢ়োৱা হৈছে। পূৰ্ববংগৰপৰা প্ৰব্ৰজিত লোকসকলৰ জীৱন আধাৰিত

উপন্যাসেই অসমীয়া ভাষাত অধিক। তাৰে ভিতৰত বিশেষভাবে উল্লিখিত চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *ৰূপাবৰিৰ পলস* (১৯৮০) আৰু দীপক কুমাৰ বৰকাকতীৰ *উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈ* (২০০৫)-- এই দুখন উপন্যাসক কেন্দ্রত ৰাখি প্রব্রজন অধ্যয়ন তত্ত্বৰ আধাৰত তুলনামূলক বিশ্লেষণেৰে গৱেষণা-পত্রখন প্রস্তুত কৰা হৈছে।

**অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ**

**ক) তথ্য আহৰণৰ পদ্ধতি ঃ** গৱেষণা-পত্রখন প্রস্তুতৰ ক্ষেত্রত মুখ্য আৰু গৌণ উৎসৰ সহায় লোৱা হৈছে ।

**খ) তথ্য বিশ্লেষণৰ পদ্ধতি ঃ** এই অধ্যয়নৰ বাবে বিশ্লেষণাত্মক, সমীক্ষামূলক আৰু তুলনামূলক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

**গ) তাত্ত্বিক আধাৰ ঃ** এই গৱেষণা পত্রৰ তাত্ত্বিক আধাৰ হৈছে প্রব্রজন অধ্যয়ন তত্ত্ব। জন-প্রব্রজনৰ কাৰক কাৰণ আৰু ফলশ্রুতি বহুমুখী। প্রব্রজনক বিদ্যায়তনিক পৰিকাঠামোত অন্তর্ভুক্ত কৰিবলৈ বিভিন্ন প্রচেষ্টাৰ আৰম্ভণি হৈছিল ঊনবিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়ার্ধত। ৰয়েল জিঅ'গ্রাফিক চ'ছাইটিৰ সভ্য আর্ণেষ্ট জর্জ ৰাভেনষ্টাইনে ১৮৮৫-চনত *Journal of Statistical Society*-ত 'প্রব্রজনৰ সূত্র' (laws of migration) সম্পর্কীয় এক প্রবন্ধ প্রকাশ কৰে। তাৰপিছতে বিংশ শতিকাত সমাজবিজ্ঞান, অর্থনীতি, ভূগোলকে ধৰি বিভিন্ন অধ্যয়নক্ষেত্রৰ তাত্ত্বিকে প্রব্রজনৰ ব্যাখ্যাৰ বাবে নিজাকৈ তাত্ত্বিক কাঠামো গঢ়ি তোলে। প্রদত্ত গৱেষণা-পত্রত প্রব্রজন অধ্যয়ন তত্ত্বৰ ভিতৰত আমেৰিকাৰ সমাজবিজ্ঞানী এভেৰেট এছ. লীৰ বিকর্ষী-আকর্ষী তত্ত্ব (push-pull theory, ১৯৬৬), জে. এডৱার্ড টেইলৰৰ প্রব্রজনকাৰীৰ নেটৱর্ক (migrant networks, ১৯৮৬) তত্ত্ব, প্রব্রজনৰ লিংগভিত্তিক অধ্যয়ন আদিৰ আধাৰত উপন্যাস দুখনৰ আলোচনা কৰা হৈছে।

**মূল বিষয়ৰ আলোচনা—**

**অসমীয়া উপন্যাসত জন-প্রব্রজনঃ ৰূপৰেখামূলক আলোচনা ঃ** অসমলৈ ব্রিটিছ আগমনৰ পূর্বলৈকে হোৱা জন-প্রব্রজন সম্পর্কে উপন্যাসত উপস্থাপন হোৱা বৰ বেছি পৰিলক্ষিত নহয়। সেই সময়লৈকে হোৱা প্রব্রজন আছিল স্বাভাৱিক আৰু সমন্বয়মুখী। সীমিত জনসংখ্যা আৰু অপর্যাপ্ত ভূখণ্ডও তাৰ এক অন্যতম কাৰক আছিল। প্রব্রজনকাৰীৰ আগমনৰ লগত বিভিন্ন আর্থিক-সামাজিক-ৰাজনৈতিক প্রসংগ জড়িত হৈ পৰাৰ ফলত উপন্যাসত প্রব্রজনে ঠাই দখল কৰিবলৈ ধৰিলে। সেয়েহে ঊনবিংশ শতিকা পূর্ৱবর্তী টাইগোষ্ঠীৰ প্রব্রজন, ইছলাম ধর্মাৱলম্বীৰ প্রব্রজন, শিখসকলৰ প্রব্রজন বিষয়ক তেনেই সীমিত সংখ্যক উপন্যাস পৰিলক্ষিত হয়। তাৰ বিপৰীতে পূর্ৱবংগমূলীয়, চাহ জনগোষ্ঠীৰ প্রব্রজন বিষয়ক উপন্যাস অধিক।

জন-প্রব্রজনৰ সম্পর্কে থকা উপন্যাসৰ দুটা ভাগ দেখা যায়। কিছু উপন্যাসত প্রসংগক্রমেহে প্রব্রজনৰ বিষয়টো আহে, কিছু উপন্যাসত প্রব্রজনেই কেন্দ্রত অৱস্থান কৰি থাকে। বীণা বৰুৱাৰ *জীৱনৰ বাটত* (১৯৪৪), নৱকান্ত বৰুৱাৰ *কপিলীপৰীয়া সাধু* (১৯৫৩), প্রথম ভাগৰ উপন্যাস আৰু

চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *ৰূপাবৰিৰ পলস* (১৯৮০), উমাকান্ত শর্মাৰ *কাজলীৰ ৰোগ* (২০০১)- আদি উপন্যাসে দ্বিতীয়টো ভাগক প্রতিনিধিত্ব কৰে।

"কাহিনী প্রসঙ্গত জন-প্রব্রজন বিষয়টো উপস্থাপন কৰিছে স্নেহলতা ভট্টাচার্যই *বীণা* (১৯২৬) উপন্যাসত।" (কলিতা, পৃ ৪৮)। তাৰ উপৰিও দৈৱচন্দ্র তালুকদাৰৰ *অপূর্ণ* (১৯৩০) উ পন্যাসতো প্রসংগক্রমে মৈমনচিঙীয়া প্রব্রজনকাৰীৰ আৰু থলুৱাৰ সংঘাতৰ কথা উপস্থাপন কৰা হৈছে। বীণা বৰুৱাৰ *জীৱনৰ বাটত* (১৯৪৪), আৰু নৱকান্ত বৰুৱাৰ *কপিলীপৰীয়া সাধু* (১৯৫৩)ৱেও কাহিনীৰ তাড়নাত বিশেষকৈ পূর্ববংগৰপৰা প্রব্রজিত লোকসকলৰ প্রভাৱৰ কথা স্পষ্টভাবে প্রকাশিত হৈছে। লক্ষ্য কৰা যায় যে, ঊনবিংশ-বিংশ শতিকাৰ অসমৰ পটভূমি সন্নিবিষ্ট উপন্যাসসমূহত প্রব্রজিত লোকৰ প্রসংগক্রমে হ'লেও উল্লেখ থকাতো অনিবার্য হৈ পৰিছিল।

পূৰবী কলিতাই বিংশ শতিকাৰ পৰা বর্তমানলৈ ৰচিত উপন্যাসসমূহত উপস্থাপিত অসমলৈ প্রব্রজিত লোকসমূহক তলত দিয়া ধৰণে বিভক্ত কৰিছে---

ক) অসমৰ চাহ বাগিচাত কাম কৰাৰ উদ্দেশ্যে মধ্য ভা�ৰতৰ পৰা প্রব্রজিত লোক (এইসকল পিছলৈ চাহ জনগোষ্ঠী হিচাপে পৰিচিত হয়।

খ) অসমৰ চাহ বাগিচাত কাম কৰিবলৈ চীনদেশৰ পৰা প্রব্রজিত লোক।

গ) পূর্ববংগৰ পৰা প্রব্রজিত বাঙালী হিন্দু-মুছলমান লোক। (৪৮)।

তাৰ উপৰিও অসমলৈ প্রব্রজিত টাই-গোষ্ঠীসমূহ, শিখসকল, নেপালৰ গোর্খাসকলৰ উপস্থাপন, অথবা অন্যান্য জনসমষ্টিৰ প্রব্রজন সীমিত সংখ্যক উপন্যাসত পৰিলক্ষিত হয়। অৱশ্যে কলিতাৰ বিভাজন অনুসৰি গ) বিভাজনৰ উপন্যাসেই সৰহ। এই প্রব্রজনক কেন্দ্র কৰি যিবোৰ আর্থ-সামাজিক, ৰাজনৈতিক, জনগাঁথনিগত প্রসংগ উপস্থাপন হৈ আহিছে, সেয়াই কাৰক বুলি ক'ব পৰা যায়।

বিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়ার্ধৰ গুৰুত্বপূর্ণ ঔপন্যাসিক হিতেশ ডেকাৰ উপন্যাসত পূর্ববংগীয়ৰ অসমলৈ প্রব্রজনে এক গুৰুত্বপূর্ণ স্থান দখল কৰিছে। ডেকাৰ *মাটি কাৰ, আজিৰ মানুহ, ৰৈৰী মানুহ, ইতিহাসে সকীয়ায়* আদি তেনে উপন্যাস। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ *মৃত্যুঞ্জয়* (১৯৭০), মহেন্দ্র বৰাৰ *উদাসী সন্ধ্যা* (১৯৬২), *বেগম পাৰা*, লক্ষ্মীনন্দন বৰাৰ *ছাঁ জুইৰ পোহৰত* (১৯৬৬)-- আদি উপন্যাসৰ মাজতো এই পটভূমিৰ উল্লেখ পোৱা যায়।

বিংশ শতিকাৰ সপ্তম দশক পর্যন্ত পূর্ববংগৰপৰা প্রব্রজিত লোকসকল ক্রমান্বয়ে শিক্ষিত হৈ তেওঁলোকৰ মাজত এটা শিক্ষিত মধ্যবিত্ত শ্রেণী গঢ় ল'বলৈ আৰম্ভ কৰিছিল। অসমীয়া মাধ্যমত শিক্ষা গ্রহণ কৰা এই শ্রেণীটোৱে সাহিত্য ৰচনা, উপন্যাস সৃষ্টিতো হাত দিয়াত এই ঘটনাৰাজিৰ এক 'insider' দৃষ্টিভংগী লাভ কৰাৰ বাট প্রশস্ত হয়। এওঁলোকে লেখা উপন্যাসৰ অধিকাংশতে প্রব্রজনক কেন্দ্রত ৰাখি বা প্রসংগক্রমে আনি উপস্থাপন কৰা পৰিলক্ষিত হয়। তাৰ ভিতৰত প্রথম পর্যায়ত ছামচুল হুদাৰ *হেৰোৱা দিন, ৰাজদ্রোহী*, চিৰাজ উদ্দিন শিকদাৰৰ *নদীৰ নাম শিয়ালদ*, তাজুদ্দিন আহমেদৰ *আহত কপৌ*, আব্দুল কুদ্দুছৰ *মন কৰবী*, আব্দুল আওৱালৰ *সাধনা*, মমতাজ আলীৰ *দুঃসময়ৰ মালিতা*-- আদি উপন্যাস উল্লেখযোগ্য। ইয়াৰ পৰৱর্তী সময়ত জমশ্বেৰ আলিৰ *জুইয়ে পোৰা বসন্ত* (২০০০), আব্দুচ ছামাদৰ *বৈ যায় চম্পাৱতী* (২০০৫), *হেৰাই পোৱা পৃথিৱী, বনকুকুৰাৰ ডাক* (২০২০), আবুল হোছেনৰ *অজান চৰৰ চিনাকি পৰশ* (২০১২), কেৰামত আলী শ্বেখৰ *সোণালী ঘোঁৰা* (২০১৪), ছাহিদুল আলমৰ *বিদেশী বন্ধু* (২০১৫), মাজম এ. আহমেদৰ *জীংগ্লাউৰী লামা* (২০১৬), অহিজুদ্দিন শ্বেখৰ *কঁহুৰাৰ হাঁহি* (২০১৭), বেগম আচমা খাতুনৰ *বাইচাল* (২০২১)-- আদি insider দৃষ্টিৰে লেখা উপন্যাস।

"... বিংশ শতিকাৰ সত্তৰ দশকলৈ ৰচিত উপন্যাসত প্রব্রজন পৰিঘটনাটোক ঔপন্যাসিকসকলে দূৰৈৰ পৰাই নিৰীক্ষণ কৰিছে। প্রব্রজনকাৰীসকলৰ প্রতি ঔপন্যাসিক সহমর্মিতা খুব কমেইহে প্রকাশিত হৈছে। তাৰ বিপৰীতে কুৰি শতিকাৰ আশীৰ দশকৰ পৰা ৰচিত উপন্যাসসমূহত প্রব্রজন প্রক্রিয়াটোক এটা স্বাভাৱিক প্রক্রিয়া হিচাপে মানি লৈ প্রব্রজনকাৰীসকলৰ প্রতি সহানুভূতিশীল মনোভাব পৰিস্ফুট হৈছে।" (কলিতা, পৃ ৬৩)। অৱশ্যে কলিতাই এইদৰে লেখিলেও বিশেষকৈ পূর্ববংগৰপৰা হোৱা প্রব্রজনক কঠোৰ দৃষ্টিৰে চোৱা ঔপন্যাসিক সত্তৰৰ দশকৰ পিছতো পৰিলক্ষিত হয়। তাৰ ভিতৰত হিৰণ্য কুমাৰ ভট্টাচার্যৰ *ধর্ষিতা* (১৯৯৭), *গেৰুৱা মাটিৰ চৰুৱা খবৰ* (১৯৯৯) অন্যতম।

তথাপিও পূর্ববংগৰপৰা প্রব্রজিত লোকসকলৰ যন্ত্রণা আৰু পৰিস্থিতিক দায়বদ্ধতাৰে উপস্থাপন কৰা ঔপন্যাসিক

আন্দোলন (১৯৭৯-৮৫) পৰৱৰ্তী সময়ছোৱাত বাঢ়ি যোৱাতো প্ৰত্যক্ষ কৰা যায়। প্ৰব্ৰজন আৰু প্ৰব্ৰজনকাৰীক কেন্দ্ৰত ৰাখি কিছু উপন্যাস হ'ল--- চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *ৰূপাবৰিৰ পলস* (১৯৮০), *মই মৰিনো নগ'লো কিয়* (১৯৯৭- নেলীৰ পটভূমিত), নিৰুপমা ৰৱগোহাঞিৰ *গোহানী আই গোসাঁনী আই*(১৯৮৭), মাণিক ৰৱাৰ *মানুহৰ পৃথিৱী* (১৯৯২), অৰুণ শৰ্মাৰ *আশীৰ্বাদৰ ৰং* (১৯৯৬), মথুৰা ডেকাৰ *ঊনৈশ শ পঞ্চাশ*, উমাকান্ত শৰ্মাৰ *কাজলীৰ ৰোগ*(২০০১), তোষেশ্বৰ চেতিয়াৰ *চৰ-চাপৰিত ফেহুঁজালি* (২০০৫), দীপক কুমাৰ ৰৱকাকতিৰ *উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈ* (২০০৫), ৰুদ্ৰাণী শৰ্মাৰ *কাঁহিবুনৰ মালিতা* (২০১৭), অনামিকা ৰৱাৰ *অস্তিত্ব* (২০১৮), চনম চাংকি দাসৰ *মাঝৈৰচৰ*(২০২২), কলচুম বিবিৰ *ছিন্নমূল*(২০২৩), প্ৰমোদ কলিতাৰ *উৰি গ'ল ৰাজহংস* (২০২৩) আদি।

তাৰ উপৰিও ঊনবিংশ-বিংশ শতিকাৰ অসমৰ জনগাঁথনি, বিদেশী বহিষ্কাৰ আন্দোলন, উগ্ৰবাদ, বিপ্লৱ আদিৰ পটভূমিত ৰচিত ভালেমান উপন্যাস অৱধাৰিতভাবেই পূৰ্ববংগৰপৰা প্ৰব্ৰজিত হোৱা লোকসকলৰ প্ৰসংগ উদ্ধৃত হৈছে। তেনে উপন্যাসৰ ভিতৰত অসম আন্দোলন (১৯৭৯-৮৫), আৰু সমসাময়িক ঘটনাক কেন্দ্ৰ কৰি ৰচিত উপন্যাস স্বৰ্ণ ৰৱাৰ *লুইত পাৰৰ কণ্ঠ*(১৯৮৯), দিলীপ ৰৱাৰ *কলিজাৰ আই*(২০০৬), ৰীতা চৌধুৰীৰ *এই সময় সেই সময়*, ভৃংগেশ্বৰ শৰ্মাৰ *তেজে ধোৱা সময়*, আদি উল্লেখযোগ্য। শীলভদ্ৰৰ *আঁহতগুৰি* (১৯৯৩), পূ�ৰবী ৰৱমুদৈৰ *ৰূপোৱালী নৈৰ সোণোৱালী ঘাট*(২০০১), আদিতো প্ৰব্ৰজনকাৰীৰ ইতিহাস প্ৰসংগক্ৰমে উল্লেখ কৰা হৈছে।

চাহ বাগিচাৰ শ্ৰমিকসকলৰ জীৱন বিষয়ক উপন্যাস এই ধাৰাত দ্বিতীয় সৰ্বাধিক। ৰাস্না ৰৱৱাৰ *সেউজী পাতৰ কাহিনী* (১৯৫৮)ৰেই চাহ বাগিচাৰ শ্ৰমিকসকলৰ জীৱনভিত্তিক উপন্যাসৰ পাতনি ঘটিছিল। তাৰপিছৰ এনে ধাৰাৰ উপন্যাস হ'ল-- শীলভদ্ৰৰ *তৰঙ্গিনী*(১৯৭১), বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ *কালৰ হুমুনিয়াহ*, উমাকান্ত শৰ্মাৰ *এজাক মানুহ এখন অৰণ্য* (১৯৮৬), কুমাৰ নগেন ৰৱাৰ *দৃষ্টিৰ আঁৰত*(১৯৮২), স্বৰ্ণ ৰৱাৰ *মেঘনা যমুনা থেমচ্*(১৯৯৭), প্ৰাণেশ্বৰ লোমগাৰ *সেউজীয়া পাতৰ ৰেদনা*(২০১৩), জুৰি ৰৱা ৰৱগোহাঞিৰ *আংকুশ* (২০১৮), বিশ্বজ্যোতি শৰ্মাৰ *আংৰা* (২০১৮), আৰাধনা পটংগীয়া গোস্বামীৰ *দুৰ্গী* (২০২১), অৰূপা পটংগীয়া কলিতাৰ *জছনাৰ ঝিটাছ* (২০২২) আদি। এই উপন্যাসসমূহত শ্ৰমিকসকলৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ লগতে প্ৰব্ৰজনৰ সকৰুণ দিশটোও ছেগা-চোৱোকাকৈ উপস্থাপন কৰা হৈছে।

চাহ বাগিচাত কামৰ বাবে অনা চীনাসকলৰ প্ৰব্ৰজনকেন্দ্ৰিক অসমীয়া উপন্যাস হ'ল-- অনিল ৰায়চৌধুৰীৰ *শত্ৰু*(১৯৮০), ৰীতা চৌধুৰীৰ *মাকাম*(২০১০) আদি। তাৰ উপৰিও অন্যান্য প্ৰব্ৰজন আধাৰিত অসমীয়া উপন্যাসৰ ভিতৰত-- উমাকান্ত শৰ্মাৰ *ছিমছাঙৰ দুটা পাৰ* (১৯৬৫), *ভাৰণ্ড পক্ষীৰ জাক* (১৯৯২), দেবেন্দ্ৰ নাথ আচাৰ্যৰ *জঙ্গম* (১৯৮২) গুৰুত্বপূৰ্ণ।

**উল্লিখিত উপন্যাস দুখনৰ তুলনামূলক বিশ্লেষণ ঃ**

চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *ৰূপাবৰিৰ পলস* (১৯৮০) পূৰ্ববংগমূলীয় মুছলমান মানুহৰ জীৱন চিত্ৰিত উপন্যাস। গোৰিন্দ প্ৰসাদ শৰ্মাৰ মতে, "... তেওঁৰ "সূৰুযমুখীৰ স্বপ্ন" (১৯৬০) যেনেকৈ অসমীয়া মুছলমান গ্ৰাম্য জীৱনৰ এক সামাজিক দলিল আৰু লগতে তাৰ এক মনোৰম ছৱি, তেনেকৈ সেই উপন্যাসৰ বিছ বছৰ পিছত প্ৰকাশিত "ৰূপাবৰিৰ পলস" অসমৰ অভিবাসী মুছলমানসকলৰ এক সামাজিক দলিল। ..." (৩৪৮)। উপন্যাসখনত বৰ্ণিত কাহিনীটোৰ মুখ্য চৰিত্ৰ বাবৰে মৈমনসিংহৰপৰা ৰে'লেৰে প্ৰব্ৰজন কৰি নগাঁৱৰ ৰূপহীৰ ওচৰৰ ৰূপাবৰি নামৰ গাঁও এখনত বসবাস কৰিবলৈ লয়। কাহিনীত বৰ্ণিত সময়কাল ১৯৩৬-১৯৬৩ চন পৰ্যন্ত। মুখ্য চৰিত্ৰ বাবৰৰ যৌৱন, আদহীয়া কালৰপৰা বৃদ্ধাৱস্থালৈ কাহিনীভাগ আগবাঢ়িছে। বাবৰক কেন্দ্ৰ কৰি কাহিনীটো ঘূৰি থাকোঁতে কুৰি শতিকাৰ তৃতীয় দশকৰপৰা সপ্তম দশকলৈ অসম, পূৰ্ববংগ, ভাৰতৰ সম্পৰ্কৰপৰা বাংলাদেশ গঠনৰ আগৰ সময়লৈকে বৰ্ণনা কৰা হৈছে। এই উপন্যাসখনত মালিকৰ দৃষ্টিভংগী, প্ৰব্ৰজনকাৰী লোকসকলৰ প্ৰতি সহানুভূতিশীল। মালিকৰ জীৱন পৰ্যবেক্ষণ কৰিলেও যৌৱন অৱস্থাত কমিউনিষ্ট মতাদৰ্শৰ প্ৰতি আকৃষ্ট মালিকে ১৯৪৫ চনত মুছলীম লীগত যোগদান কৰাৰ কথা গম পোৱা যায়। মুছলীম লীগ নোহোৱা হৈ যোৱাৰ পিছত মালিক অন্য বহু লোকৰ দৰে কংগ্ৰেছ দললৈ শিবিৰ নসলালে। কমিউনিষ্ট দলৰ শুভাকাংক্ষী হৈ ৰৈ গ'ল। উপন্যাসখনৰ অশিক্ষিত বাবৰে পাকচক্ৰত পৰি মুছলীম লীগত যোগ দিব লগীয়া হৈছে যদিও তেওঁৰ আদৰ্শৰ কংগ্ৰেছৰ সৈতেহে অধিক মিল। কিন্তু মালিকৰ বৰ্ণনাত কি মুছলীম লীগ, কি কংগ্ৰেছ সকলোৱে নেতাবোৰ সন্দেহজনক

চৰিত্ৰৰ। সেই দৃষ্টিৰে মালিকৰ দৃষ্টিভংগী এই উপন্যাসখনত নিৰপেক্ষ বুলিয়েই ক'ব পাৰি। গোৰিন্দ প্ৰসাদ শৰ্মাই লেখিছে, "...কাহিনীৰ বাহিৰত 'কৈফিয়ৎ' নামৰ টোকাটি, তাতো উপন্যাসখনৰ ৰচনাৰ উদ্দেশ্য ব্যক্ত কৰি এই প্ৰব্ৰজনকাৰী, অভিবাসীসকলৰ প্ৰতি তেওঁৰ সহমৰ্মিতা প্ৰকাশ কৰিছে। তথাপি উপন্যাসখনৰ দৃষ্টিকোণ একদেশদৰ্শী নহয়, ৰৱঞ্চ বস্তুনিষ্ঠ আৰু নিৰপেক্ষ। বাস্তৱত আমি দেখাৰ দৰে কাহিনীটো এই অভিবাসী মুছলমান সম্প্ৰদায়ৰ বহুতৰে স্বভাৱচৰিত্ৰ, কামকাজ থলুৱা লোকৰ সমালোচনা আৰু দুশ্চিন্তাৰ বিষয়। ..." (৩৫০)।

এভেৰেট এছ. লীয়ে 'বিকৰ্ষী-আকৰ্ষী তত্ত্ব'ত প্ৰব্ৰজনৰ উৎসস্থান (area of origin)-ৰ সৈতে বিকৰ্ষী কাৰক (push factor) সমূহকে সংযুক্ত কৰিছে। "Factors Associated with the Area of Origin: These are the push factors like economic hardship, political instability, and social issues that compel individuals to leave their current location". (Lee 50) । *ৰূপাৰৰিৰ পলসত* পূৰ্ববংগৰ সামাজিক গাঁথনিক এক বিকৰ্ষী কাৰক হিচাপে চাব পৰা যায়। জমিদাৰৰ নিষ্ঠুৰ শোষণ, ব্ৰিটিছ প্ৰশাসনৰ সৈতে জমিদাৰৰ নিবিড় সম্পৰ্কই সাধাৰণ কৃষকক লাঞ্ছনাৰ ফালে ঠেলি নিয়ে। বাবৰৰ পিতৃক দুহাত দীঘল ৰৌমাছ আনিব নোৱাৰাৰ বাবে বেতৰ কোব দিয়া, মন গ'লেই গাঁৱৰ জীয়ৰীক অপদস্ত কৰাৰ জমিদাৰৰ ঘৰৰ কৰ্তৃত্ব। এটা অনুষ্ঠানত গাঁৱৰ দুজনী জীয়ৰীক জমিদাৰৰ পুতেকে অপদস্ত কৰাৰ প্ৰতিশোধ ল'বলৈ গৈ বাবৰে তাক প্ৰহাৰ কৰি অচেতন কৰিছে। ঘটনাৰ আকস্মিকতাত বাবৰ শংকিত হৈ গাঁও এৰি পলায়ন কৰি অসম আহি পাইছেহি।

দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ মাজতে বংগদেশত অগা-পিছাকৈ কেইবাটাও দুৰ্ভিক্ষ পাৰ হৈ গৈছিল। দুৰ্ভিক্ষৰ লগতে ভূতৰ ওপৰত দানহ পৰাদি জমিদাৰী শাসন, খেতিৰ বাবে মাটি নাই। বংগদেশৰ মানুহৰ হাঁহাকাৰ অৱস্থা। দুৰ্ভিক্ষ উপন্যাসখনত প্ৰব্ৰজনৰ অন্য এটা বিকৰ্ষী কাৰক হৈ পৰিছে।

"ডিমাপুৰ আৰু লামডিং ৰেল ষ্টেচনৰ মাজেদিয়েই হেজাৰে হেজাৰে ভগনীয়া আৰু ছিলেট, চাটগাঁও, পাবনা, মৈমনসিং, কুমিল্লা,নোৱাখলীৰ খাবলৈ নাপাই আহাৰ বিচাৰি ঘৰ-বাৰী এৰি অহা বংগদেশৰ ভগনীয়াৰে অসমৰ বুকু ভৰি পৰিল। পশ্চিমৰ পৰাও ৰংপুৰ কোচবিহাৰ হৈ নিৰন্ন ভোকাতুৰ মিছিলে অসমৰ বুকুত ভাত-কাপোৰ বিচাৰি আহিল।" (মালিক ১৩৬)।

অন্যহাতে, লক্ষ্যস্থান অসমত প্ৰাপ্ত প্ৰচুৰ সম্ভাৱনা, উৰ্বৰা মাটি, স্বঅধিকাৰৰ জীৱন-- এইবোৰ আকৰ্ষী কাৰক (pull factor)। "আচামত মাটি এনেই পৰি আছে, বাটকুৰি উলিয়াই ল'লেই হ'ল।" (মালিক ৬১)। .... "অসমৰ উৰ্বৰা মাটিত সোণৰ শস্য ফলাব পৰা সাৰ আছে--- লুইতৰ বৰবানত কোমল সাৱৰা পলসৰ আশীৰ্বাদ আছে--- ।" (মালিক ৪৬)। "এইয়া দেশৰ জমিদাৰৰ মাটিৰ নিচিনা নহয়, চৰিফ গাঁওবুঢ়াই মাটি বিঘা তাক একেবাৰেই দি দিছে।" (মালিক ৮৮)। সঁচাকৈয়ে বংগৰ দৰে অসমত নিষ্ঠুৰ জমিদাৰৰ শাসন নাছিল, সকলো স্বাধীন। এয়া যেন এক স্বপ্নৰ দেশ। এইবোৰেই প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলক ইয়ালৈ সম্মোহনী শক্তিৰে টানি আনিছিল।

প্ৰব্ৰজনত যাত্ৰাপথৰ বাধা সম্পৰ্কে লীয়ে লেখিছে,

"Furthermore, between every two points there stands a set of intervening obstacles which may be slight in some instances and insurmountable in others. The most studied of these obstacles is distance, which, while omnipresent, is by no means the most important. Actual physical barriers like the Berlin Wall may be interposed, or immigration laws may restrict the movement."।(51)।

দুটা বিন্দুৰ মাজত প্ৰব্ৰজন ঘটোতে বিভিন্ন বাধা আহিব পাৰে। তাৰে এটা অন্যতম বাধা হ'ল- প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় কঠোৰ আইন। তাৰ বিপৰীতে তদানীন্তন শাসকে প্ৰব্ৰজন আইন শিথিল কৰি দি প্ৰব্ৰজনক উৎসাহ যোগাব পাৰে। বংগত জনবহুলতাৰে ভাৰাক্ৰান্ত অৱস্থাত অসমৰ সমতলৰ সাৱৰা মাটি খালি হৈ পৰি থকাতো ব্ৰিটিছে সহ্য কৰিব পৰা নাছিল। ব্ৰিটিছৰ লক্ষ্য আছিল, যথাসম্ভৱ ব্যাপক মাত্ৰাত ৰাজহ সংগ্ৰহ কৰা। সেইবাবে ব্ৰিটিছে আসাম-বেংগল ৰে'লৰেৰ প্ৰসাৰ বৃদ্ধি কৰিছিল। আনকি বিশেষ ৰেহাই মূল্যত টিকট দিয়াৰ ব্যৱস্থা কৰিছিল। ৰে'ল আৰু নদীৰ জল-সংযোগেৰে ব্যাপক মাত্ৰাত অসমলৈ ব্যাপক মাত্ৰাত প্ৰব্ৰজন ঘটিছিল। "... কলিকতাৰ পৰা ৰাণাঘাট, পোড়াদহ, ঈশ্বৰদি, সান্তাহাৰ, পাৰ্বতীপুৰ, লালমণিৰহাট, আৰু গোলকগঞ্জ হৈ গুৱাহাটী, তিনিচুকীয়া, ডিগবৈ, লিডুলৈ ৰেল চলে। আনহাতে আসাম বেংগল ৰেলে ঠেঙুলি মেলিছে লামডিং, বদৰপুৰ, ছিলেট, ঢাকা হৈ চাঁদপুৰ চিটাগাং পৰ্যন্ত।" (মালিক ৩৯)।

দীপক কুমাৰ বৰকাকতীয়ে বৰাক উপত্যকা আৰু তাৰ কাষৰীয়া ৰাজ্য তথা জনগোষ্ঠীসমূহক লৈ কেইবাখনো উপন্যাস ৰচনা কৰিছে। তেওঁৰ *উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈ* (২০০৫) উপন্যাসখন বিষয়বস্তুৰ ফালৰপৰা অসমীয়া

উপন্যাসৰ ইতিহাসত পৃথক। অসমীয়া উপন্যাসৰ সমীক্ষা কৰোঁতে অসমলৈ প্ৰব্ৰজিত পূৰ্ববংগমূলীয় মানুহৰ জীৱনক লৈ লেখা কেইবাখনো উপন্যাস পোৱা গৈছে। কিন্তু তাৰে অধিকাংশ ইছলাম ধৰ্মাৱলম্বী মানুহৰ জীৱনকেন্দ্ৰিক। কিন্তু এয়া ঐতিহাসিক সত্য যে, ভাৰত বিভাজনৰ সময়ত (১৯৪৭) আৰু বাংলাদেশৰ মুক্তিযুদ্ধৰ সময়ত (১৯৭১) ভালে সংখ্যক হিন্দু লোকো পূৰ্ববংগৰপৰা আহিছিল। তাৰ আগেয়েও উন্নত জীৱনৰ আশাত কিছু লোক আহিছিল। এই লোকসকলৰ জীৱনৰ চিত্ৰায়ণ কৰা হৈছে, *উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈ* উপন্যাসখনত। ব্ৰিটিছ আগমনৰ পিছত অবিভক্ত ভাৰতবৰ্ষৰ বিবিধ প্ৰান্তৰৰপৰা অসমলৈ মানুহৰ আগমন ঘটিছিল। তাৰ ভিতৰত এগৰাকী আছিল 'হৰিবিলাস আগৰৱালা', যাৰ সোঁৱৰণত কিতাপখন উছৰ্গা কৰা হৈছে। সেই আগৰৱালা পৰিয়ালটোৰপৰা অসমীয়া সাহিত্য-সংস্কৃতিলৈ অৱদান আগবঢ়োৱা কেইবাগৰাকীয়ো ব্যক্তিৰ জন্ম হ'ল বাবে আমাৰ সামাজিক স্মৃতিত তেওঁলোক ৰৈ গ'ল। কিন্তু অন্য সংস্কৃতিৰপৰা অহা বহু সাধাৰণ অসমপ্ৰেমী মানুহক আমাৰ সমাজে পাহৰি গ'ল। তেওঁলোকৰ উত্তৰসূৰীকে বহিৰাগত বুলি অসমত জোৰ-জুলুম কৰা হ'ল। বোধকৰোঁ এনে ব্যক্তিসকলক লক্ষ্য কৰিয়েই বৰকাকতীয়ে উপন্যাসৰ মুখ্য চৰিত্ৰ কালিকিশোৰক চৰিত্ৰাংকন কৰিছে।

১৯৪৭ চনৰ দেশ বিভাজনৰ পাছত ছিলেটৰপৰা কৰিমগঞ্জ হৈ নগাঁৱৰ কঠীয়াতলিত আহি অসমীয়া মাধ্যমত শিক্ষাকতা কৰিবলৈ বাধ্য কালিকিশোৰৰ পূৰ্বজ বংগৰ প্ৰতাপী জমিদাৰ আছিল। কালিকিশোৰে জীৱনৰ মধ্য বয়সৰপৰা অসমীয়া সত্ত্বাৰ সৈতে মিলি যোৱাৰ চেষ্টা কৰিছে। কালিকিশোৰৰ জী বনশ্ৰীয়ে গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ত পঢ়িবলৈ গৈছে। অসমৰ মাটিপানীৰ সৈতে মিলি গৈছে। উপন্যাসখনত উল্লিখিত বংগৰ পটভূমিৰ বৰ্ণনাই কাহিনীটোক পৃথকত্ব প্ৰদান কৰিছে। পূৰ্ববংগৰ সংখ্যাগুৰুৰ প্ৰতিনিধি ৰছিদ বুঢ়া আৰু আবু মনচুৰ যিদৰে ধৰ্মৰ উৰ্ধলৈ গৈ মানৱতাৰ সৈতে থিয় দিছে, তাৰ বিপৰীতে হবিবুল্লাৰ দৰে ধৰ্মীয় প্ৰতিনিধিয়ে মুছলমান-হিন্দুৰ একতাৰ বিপক্ষে থিয় দিয়া পৰিলক্ষিত হৈছে। সামাজিক স্থিতি, আৰ্থিক স্থিতি, জাতিগত স্থিতি আৰু ধৰ্মীয় পৰিচয় ভিন্ন-ভিন্ন হ'লেও নোৱাখালীত কালিকিশোৰৰ পৰিয়ালক মুছলমান সাজ পিন্ধাই পলোৱাই পঠোৱা বৃদ্ধগৰাকী, ৰছিদ বুঢ়া, আবু মনচুৰ, ডেকাৰজা, গুণাৰাম বৰদলৈ, অধ্যাপক ফুকন আদি অলেখ এনে লোক আছে, যাৰ বাবে পৃথিৱীত শান্তিৰ বাতাবৰণ অটুট আছে। এইসকল কাহিনীটোৰ মাজেৰে স্বতঃস্ফূৰ্তভাবেই মহিমামণ্ডিত হৈ উঠিছে। উপন্যাসখনত অসমীয়া শিখ, বাংলাদেশৰ অসমীয়া গাঁও, অসমত মৈমনছিঙীয়াৰ উপদ্ৰৱ আৰু একে সময়তে বিদেশী বহিষ্কাৰ আন্দোলনৰ বিভীষিকাৰ উপস্থাপনে ঔপন্যাসিক বৰকাকতীক এগৰাকী কথকলৈ পৰিণত কৰিছে, যাৰ নিৰপেক্ষতা আৰু ইতিহাসৰ নিৰন্তৰ সত্য-অন্বেষণৰ লিপ্সা উপন্যাসখনৰ পাতে-পাতে বিৰাজমান। বৰকাকতীৰ উপন্যাসখনত তিনিটা প্ৰজন্মই সন্মুখীন হোৱা বিভিন্ন ধৰণৰ অভিজ্ঞতা, যথাক্ৰমে-- বংগ ভংগ, ভাৰতৰ সৈতে থকা-নথকা সিদ্ধান্তৰ বাবে ছিলেটৰ গণভোট, মুছলীম লীগ গঠনৰ পটভূমি, ভাৰতৰ স্বাধীনতাৰ সময়ত নোৱাখালীৰ ডাঙ্গা, বাংলাদেশৰপৰা অসমলৈ হিন্দু প্ৰব্ৰজনৰ প্ৰেক্ষাপট, অসমৰ মাধ্যম আন্দোলনত প্ৰব্ৰজিত বাঙালীৰ স্থিতি তথা অৱস্থা, চিলেটৰ আসামপাৰা গাঁও, বৰাক উপত্যকাত প্ৰব্ৰজনৰ প্ৰভাৱৰপৰা একেবাৰে বিদেশী বহিষ্কাৰ আন্দোলনলৈকে পটভূমি দেখুওৱা হৈছে।

এভেৰেট লীৰ বিকৰ্ষী কাৰক (push factor)ৰ ভিতৰত অন্যতম হৈছে-- ৰাজনৈতিক, সামাজিক সমস্যা। তদানীন্তন পাকিস্তান (পূব-পশ্চিম উভয়তে)ত হিন্দু বিৰোধী যি পৰিৱেশ স্বাধীনতাৰ পৰৱৰ্তী সময়ত গঢ় লৈ উঠিছিল, সেয়াই কালিকিশোৰৰ দৰে সহস্ৰজন ভাৰতলৈ পলায়নৰ মূল কাৰণ। তেওঁলোকৰ বাবে প্ৰব্ৰজন বহুবিকল্পৰ ভিতৰত এটা নাছিল। তেওঁলোক প্ৰাণৰ মমতাত পলায়ন কৰিবলৈ বাধ্য হৈছিল। "... মেঘনাৰ ওপৰৰ ভৈৰৱী দলঙৰ হত্যাকাণ্ডৰ খবৰ সিহঁতৰ কাণত পৰিল। দলঙৰ ওপৰতো ৰেল ৰখাই বহু হিন্দু মানুহক বোলে ডবাৰ ভিতৰতে হত্যা কৰা হ'ল।..." (বৰকাকতী ৫১)। এই দেশবিভাজন তথা সাম্প্ৰদায়িক সংঘৰ্ষৰ বাবে সাজু নোহোৱাকৈয়ে হিন্দু বঙালীসকল পলায়ন কৰিছে। তেওঁলোক তাত আছিল উচ্চ বৰ্ণৰ মানুহ, যাৰ ঘৰ-মাটি সকলো আছিল। এইদৰে সামাজিক প্ৰতিকূলতাত তেওঁলোকে ভূ-সম্পত্তি সকলো এৰি তত-মুহূৰ্ততে প্ৰব্ৰজনকাৰী হৈ পৰিছে। পৰিচিতি, সামাজিক অৱস্থিতি উচ্চবৰ্গৰপৰা নিম্নবৰ্গৰ মানুহলৈ সলনি হৈছে। "... মানুহবোৰে কালিকিশোৰৰ পৰিয়ালৰ বাবেই বাট চাই

আছিল। সন্ধিয়াৰেপৰা কৰ্মকাৰ, সূত্রধাৰ, শুক্লবৈদ্য, আৰু কাষৰ চন্দ্রবৈদ্যৰ পৰিয়াল দুটাও এটা এটাকৈ আহি পৰিমাল নাথহঁতৰ চুবুৰিত গোট খাবলৈ ধৰিছিল। সিহঁতে কেইবা পুৰুষ ধৰি থকা ঘৰৰ ভেটিটো এৰি অহাৰ সময়ত চকুলো টুকি আহিছিল। ....” (বৰকাকতী ৫৪)।

ভাৰত চৰকাৰে অসমৰ কাছাৰ, কৰিমগঞ্জ আদি জিলাত শৰণার্থী শিবিৰ স্থাপন কৰি দিছিল। সেই সময়ত ভাৰত চৰকাৰে প্রব্রজন সম্পর্কীয় আইন শিথিল কৰিবলৈ ‘নেহেৰু-লিয়াকত চুক্তি’ স্বাক্ষৰ কৰা হৈছিল। কালিকিশোৰৰ পৰিয়ালৰ বহু লোক সেই শিবিৰতে আছিলহি। ভাৰতত সামাজিক দিশত সুস্থিৰতা পাব বুলিয়েই শৰণার্থীসকল ভাৰতত প্রৱেশ কৰিছিলহি। ইয়াত আকর্ষী কাৰক (pull factor) হিচাপে এইসমূহ দিশে ক্রিয়া কৰিছিল। লীৰ আকর্ষী কাৰকক টাইলৰে লক্ষ্যস্থানত থকা নেটৰর্ক তত্ত্ব (network theory)-ৰ ৰূপত আলোচনা কৰে। (Massey et al. 448)। য'ত উৎসস্থান আৰু লক্ষ্যস্থানৰ মাজৰ প্রব্রজনকাৰীসকলৰ মাজৰ জাতিগত, ধর্মগত, বন্ধুত্বৰ ব্যক্তিগত সম্পর্কৰ ফলত প্রব্রজন কৰিবলৈ সহজ হৈ পৰে। এই বিষয়ে জেকুব বিয়াকে লেখিছে, “...The main role of networks is to diminish various costs (not only monetary, but also psychological, and other) and risks associated with migration, and to facilitate the flow of migrants between the origin and destination countries...”। (6-7)। ভাৰতত সংখ্যাগৰিষ্ঠ হিচাপে হিন্দুৰ উপস্থিতি আৰু পৰিয়াল-পৰিজনকে আদি কৰি বহু বাঙালী হিন্দুৰ ঠাল-ঠেঙুলি একে সময়তে ভাৰতলৈ প্রব্রজন কৰা এই দুই প্রসংগই প্রব্রজনকাৰীসকলৰ মনত এটা মানসিক সকাহৰূপে ক্রিয়া কৰিছিল। এই নেটৰর্ক বাঙালী মুছলমানসকলৰ মাজতো পৰিলক্ষিত হয়। “... নতুন দেশ হোৱাৰ আনন্দ মাৰ নাযাওঁতেই আমাৰ মাজত এদিন কামাল ভাই ওলালহি। সি ক'লে--- তহঁতক যদি খেতিৰ মাটি লাগে, ওলা, মোৰ লগত ওলা। মই তহঁতক মাটি থকা ঠাইলৈ লৈ যাম।...” (বৰকাকতী ১৭৫)। অসম-বাংলাদেশৰ অস্পষ্ট সীমান্ত, উন্মুক্ত সীমা আদিয়ে প্রব্রজনক ত্বৰান্বিত কৰিছিল। “... ক'তনো সীমান্ত? বাংলাদেশ হোৱাৰ পৰা সীমান্তৰ চিন-মোকাম নোহোৱাৰ দৰেই। আমি যে পাৰ হৈ আহিলোঁ। গমেই নাপালোঁ।...” (বৰকাকতী ১৭৬)।

উপন্যাসখনৰ পিছৰ খণ্ডবোৰত হিন্দু বাঙালীসকল আহি অসমত মুখামুখি হোৱা প্রত্যাহ্বানবোৰৰ কথা উপস্থাপন কৰা হৈছে। কালিকিশোৰে জীৱন উন্নততৰ কৰাৰ স্বার্থত কেইবাবাৰো অসমত নিজৰ বাসস্থান সলনি কৰিছে। তাৰ পৰৱর্তী সময়ছোৱাত (১৯৭৯-৮৫) সংঘটিত আন্দোলনে কালিকিশোৰ, তেওঁৰ পৰৱর্তী প্রজন্মক শংকাকুল কৰি তুলিছে। প্রব্রজনকাৰীসকল যিদৰে থলুৱাৰ বাবে বিপদজনক হৈ পৰিছিল, এই চেতনাটোৱে তেওঁলোকক থলুৱাৰ শত্রু কৰি তুলিছিল। প্রথমাৱস্থাত আদৰি লোৱা দেশখনৰ পিছৰ অৱস্থা কালিকিশোৰহঁতৰ বাবে সুবিধাজনক হৈ থকা নাছিল। এইদৰে অন্য এখন দেশত প্রব্রজনকাৰীসকলে কেনেকুৱা পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হ'ব পাৰে সেয়া স্পষ্টকৈ বর্ণনা কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে।

**উপসংহাৰ ঃ**

দুয়োখন উপন্যাসত কেন্দ্রীয় চৰিত্র হিচাপে দুটা পৃথক ধর্মৰ মানুহক লোৱা হৈছে। সেইসূত্রেই দুয়োটা চৰিত্রৰে অসমলৈ প্রব্রজনত বিকর্ষী কাৰক হিচাপে ক্রিয়া কৰা প্রসংগসমূহ পৃথক। বাবৰে বংগদেশত সামাজিক গাঁথনিগত সমস্যাই সৃষ্টি কৰা প্রতিকূল অৱস্থাৰ বাবে প্রব্রজন কৰিছে। কালিকিশোৰে সাম্প্রদায়িক সংঘর্ষ আৰু ধর্মীয় হিংসাৰ কাৰণত প্রাণৰ মমতাত পলায়ন কৰিছে। গতিকে বাবৰৰ প্রব্রজন উন্নততৰ জীৱনৰ আশাত কৰা প্রব্রজন, অন্যহাতে কালিকিশোৰৰ প্রব্রজন জীৱন বচোৱাৰ স্বার্থত কৰা প্রব্রজন।

বাবৰৰ প্রব্রজনৰ সময়ত অসমৰ পূর্বৰেপৰা বাস কৰা লোকসকল ঘোৰ প্রব্রজন বিৰোধী নাছিল। বৰঞ্চ ‘ন-অসমীয়া’ পদেৰে প্রব্রজনকাৰীসকলক অসমৰ সমাজৰ সৈতে সমন্বিত কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছিল। কিন্তু কালিকিশোৰৰ সময়লৈকে পৰিস্থিতি একে নাথাকিল। প্রব্রজনকাৰীৰ ক্রমবর্ধিত সংখ্যাই পূর্বৰ বাসিন্দাসকলক চিন্তিত আৰু উগ্র কৰি পেলালে। সমন্বয়ৰ ধাৰণা পৰিতাজ্য হৈ পৰিল। যদিও বাঙালী হিন্দুসকলৰ বাবে চৰকাৰী প্রব্রজন আইন শিথিল হৈছিল, তেওঁলোকে ইয়াত উন্নততৰ জীৱন লাভ কৰা নাছিল। বৰঞ্চ কালিকিশোৰৰ শ্রেণী উচ্চবর্গৰপৰা অৱনমিতহে হৈছিল।

ডায়েস্পৰা সাহিত্যৰ বৈশিষ্ট্যও দুয়োখন উপন্যাসৰ মাজত কিছু কিছু পৰিলক্ষিত হয়। মুখ্য চৰিত্র বাবৰ আৰু কালিকিশোৰে সুযোগ পালেই মাতৃভূমিৰ স্মৃতিৰে

ৰোমাঞ্চিত হৈ উঠে। বাংলাদেশ নামেৰে নতুন দেশ সৃষ্টি হওঁতে কালিকিশোৰ আ াদিত হৈ পৰিছে। অথচ জীয়েক বনশ্ৰীৰ তাক লৈ কোনো অনুভূতি নাই। অৰ্থাৎ পৰৱৰ্তী প্ৰজন্মই পূৰ্বৰ দেশৰ সৈতে থকা আৱেগিক টান উপলব্ধি কৰা নাই। তেওঁলোক ভাৰতীয় অনুভূতিৰ লগতে বিলীন হৈ পৰিছে।

ৰাভেনষ্টাইনৰ প্ৰব্ৰজন সূত্ৰ (laws of migration, 1885)-ত ১৮৮৫ চনতে কোৱা হৈছিল, ''Females are more migratory than males''। ১৮৮৫ চনৰ ইংলেণ্ডৰ সমাজ-গাঁথনিক কেন্দ্ৰ কৰি প্ৰক্ষেপিত এই তত্ত্ব বিভ্ৰান্তি পৰৱৰ্তী সময়ত নিঃসন্দেহে সন্মুখলৈ আহিছে। তথাপি তৃতীয় বিশ্বৰ দেশত তেনে এটা ধাৰণা ভুলকৈ হ'লেও কৰিবলৈ কোনো সুযোগ নাই। দেখা গৈছে, দুয়োখন উপন্যাসতে নাৰীৰ অৱস্থিতি কেৱল কাৰোবাৰ কন্যা, পত্নী, অথবা মাতৃ হিচাপেহে। ইয়ে পাশ্চাত্যৰ সৈতে আমাৰ দেশৰ সামাজিক গাঁথনিৰ বিস্তৰ প্ৰভেদকে আঙুলিয়াই দিয়ে। সেয়ে পাশ্চাত্য-সম্ভূত সকলো তত্ত্ব পোনপটীয়াকৈ প্ৰাচ্যৰ সমাজ-গাঁথনিত প্ৰয়োগ কৰা সম্ভৱপৰ নহয়। ❑


**প্ৰসংগসূত্ৰ ঃ**

**অসমীয়া ঃ**

কলিতা, পূৰবী। *স্বাজোত্তৰ অসমীয়া উপন্যাসত প্ৰব্ৰজনঃ নিৰ্বাচিত উপন্যাসৰ আধাৰত এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন*। ("Migration in Post Independence Assamese Novel an Analytical Study of Selected Novels.")। ২০২৪। অসম বিশ্ববিদ্যালয় ডিফু চৌহদ, পিএইছ. ডি.ৰ গৱেষণা-গ্ৰন্থ। https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/524837 . Accessed 19 Nov. 2024.

কলিতা, ৰমেশ চন্দ্ৰ। "প্ৰব্ৰজনকাৰীৰ সমস্যা আৰু অসমঃ আনন্দৰাম ঢেকিয়াল ফুকনৰ পৰা গোপীনাথ বৰদলৈলৈকে।" *অসম আন্দোলনঃ প্ৰতিশ্ৰুতি আৰু ফলশ্ৰুতি*। হীৰেন গোহাঁই আৰু দিলীপ বৰা সম্পাদিত। তৃতীয় প্ৰকাশ, বনলতা, ডিচেম্বৰ, ২০২০, পৃ. ৬২-৯৪।

বৰকাকতী, দীপক কুমাৰ। *উপত্যকাৰ পৰা উপত্যকালৈ*। দ্বিতীয় প্ৰকাশ, জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০১৬।

মালিক চৈয়দ আব্দুল। *ৰূপাবৰিৰ পলস*। দ্বিতীয় প্ৰকাশ, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ২০১৮।

শৰ্মা, গোৱিন্দ প্ৰসাদ। *অসমীয়া উপন্যাসৰ ইতিহাস*। জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০১৪।

**ইংৰাজী ঃ**

Bijak, Jakub. *Forecasting International Migration: Selected Theories, Models, and Methods (CEFMR Working Paper 4/2006)*. 2006, www.cefmr.pan.pl/docs/cefmr_wp_2006-04.pdf. Central European Forum for Migration Research. Accessed 19 Nov. 2024.

Lee, Everett S. "A Theory of Migration." *Demography*, vol. 3, no. 1, 1966, pp. 47–57, www.jstor.org/stable/2060063.

Massey, Douglas S., et al. "Theories of International Migration: A Review and Appraisal." *Population and Development Review*. vol. 19, no. 3, Sept. 1993, pp. 431–66, https://doi.org/10.2307/2938462.

Misra, Udayon. "Immigration and Identity Transformation in Assam." *Economic and Political Weekly*, vol. 34, no. 21, 1999, pp. 1264–71, www.jstor.org/stable/4407987.

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# মায়ঙৰ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ সাধনা ঃ এক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন

আইমী বৰা

গৱেষক ছাত্ৰী
মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ বিশ্ববিদ্যালয়
জিনজিয়া (শোণিতপুৰ)
পিন ঃ ৭৮৪১৮৪
৮৪৭৩০৭৩৪৩১
aimeeborah5@gmail.com

**সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ**

যাদুৰ নগৰী হিচাপে পৰিচিত মায়ং অসমৰ এখন লেখত ল'বলগীয়া বাসভূমি। মৰিগাওঁ জিলাৰ একেবাৰে পশ্চিম প্ৰান্তত উত্তৰে মহাবাহু ব্ৰহ্মপুত্ৰ নদ আৰু দক্ষিণে কলং-কপিলীৰ সম্মিলিত জলধাৰা, পূবে প্ৰাচীন গোভা আৰু কুমৈ ৰাজ্য আৰু পশ্চিমে মহাবাহু ব্ৰহ্মপুত্ৰৰে আৱৰি ৰখা সৰু ভূমিভাগেই মায়ং। প্ৰাচীন বৈদিক যুগৰে পৰা মায়ং তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ, যাদুবিদ্যাৰ চৰ্চাত অত্যন্ত চহকী। মায়ঙত অৱস্থিত হৰগৌৰীৰ যুগল মূৰ্ত্তি, শৈলস্তম্ভ, যোনীপিঠ, সূৰ্যচক্ৰ, বুঢ়া মায়ঙৰ হৰগৌৰী থান, বুঢ়া-বুঢ়ী থান ইত্যাদি পৌৰাণিক স্তম্ভ, ভগ্নাৱশেষসমূহেই মায়ঙৰ চহকী ঐতিহ্যক তুলি ধৰি আহিছে। প্ৰাচীন মায়ং অঞ্চলৰ অধিবাসীসকলে নানান সুমন্ত্ৰ আৰু কুমন্ত্ৰ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ সাধনাৰ দ্বাৰা যুগে যুগে ব্যৱহাৰ কৰি আহিছিল। ৰোগ নিৰাময়ৰ মন্ত্ৰ, দেও-ভূত খেদা মন্ত্ৰ, শত্ৰুৰ আহুদিৰ পৰা ৰক্ষা কৰা মন্ত্ৰ আদিকে ধৰি নানান সৎকৰ্মত ব্যৱহৃত মন্ত্ৰৰ লগতে কাজিয়া লগোৱা মন্ত্ৰ, নিদ্ৰাবাণ, ঔষধ পোতা মন্ত্ৰ, ছোৱালী পলুৱাই নিয়াকে আদি কৰি অনেক কুমন্ত্ৰৰো প্ৰচলন মায়ঙত অতীজৰে পৰা মুখে মুখে মৌখিক ৰূপত প্ৰচলন হৈ আহিছে। তৎসম, তদ্ভৱ, আৱৰীয়, বঙালী, বড়ো, কছাৰী সকলো ভাষাৰ শব্দৰে সংমিশ্ৰিত ৰূপত সৃষ্টি এই মন্ত্ৰসমূহ মুখ বাগৰি বংশানুক্ৰমে প্ৰচলন হোৱাৰ লগতে কিছু কিছু মন্ত্ৰ যুগুতাই মন্ত্ৰৰ পুথি ৰূপত সংৰক্ষণ কৰাৰো চেষ্টা কৰা হৈছিল যদিও কালৰ পৰিক্ৰমাত সেইসমূহ পুথি ধ্বংস হ'ল আৰু যুগৰ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে জ্ঞান বিজ্ঞানৰ প্ৰগতিৰ যুগত তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ প্ৰতি নৱপ্ৰজন্মৰ আগ্ৰহ হেৰাইছে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনত তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ যাদুকলাৰ পৃষ্ঠভূমি মায়ঙৰ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ সাধনা, সেই মন্ত্ৰ সাহিত্যৰ ভাষা আৰু সাম্প্ৰতিক যুগত মায়ঙৰ মন্ত্ৰসাহিত্য কেনে পৰ্যায়ত আছে সেই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

**সূচক শব্দ ঃ**

তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ, যাদুবিদ্যা, বাস্তৱ, অবাস্তৱ, বিজ্ঞান।

**০.০ অৱতৰণিকা ঃ**

তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ নগৰী হিচাপে সৰ্বত্ৰে পৰিচিত মায়ং অসমৰ এখন লেখত ল'বলগীয়া ঠাই। মৰিগাঁও জিলাৰ পশ্চিম প্ৰান্তত অৱস্থিত মায়ং প্ৰাচীন কালৰে পৰা তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ সাধকৰ দেশ। তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ, যাদু কলাৰ বাবেই সুদূৰ অতীজৰে পৰা এই ভূ-খণ্ড 'ভয়ংকৰ দেশ' বিশেষণেৰে বিভূষিত হৈ আহিছে। তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ লগতে বিভিন্ন কিংবদন্তি, ৰূপকথা,

লোক-কথা, লোক-গীত, ফকৰা-যোজনা, সাধুকথা, বিবিধ পোৰা মাটিৰ ভাস্কর্য, শৈল ভাস্কর্য, শিলালিপি, স্থাপত্যৰ লগতে মায়ঙৰ ৰজাসকলৰ ৰাজবংশাৱলী আৰু মায়ঙৰ স্থানীয় লোকসকলে পূজা কৰি অহা পুত স্থানসমূহৰ অৱস্থিতি আৰু স্থানীয় লোকসকলৰ মাজত প্রচলিত হৈ থকা বিভিন্ন লোককথা, মৌখিক মন্ত্রসমূহেও মায়ঙৰ ঐতিহ্যক বিশেষভাৱে চহকী কৰি তুলিছে।

আজিৰ এই একবিংশ শতিকাৰ গণতান্ত্রিক যুগতো মায়ঙত অতীজৰে পৰা প্রচলন হৈ অহা তন্ত্র-মন্ত্রৰ পৰম্পৰাক স সন্মানে জীয়াই ৰখা মায়ঙৰ বিভিন্ন অঞ্চলত সিচঁৰিত হৈ থকা বহুতো প্রাচীন মঠ-মন্দিৰ, থান, ভগ্নাৱশেষসমূহে মায়ঙৰ মন্ত্র চর্চাৰ কথা লোকসমাজক অৱগত কৰোৱায়। তন্ত্রৰ অধিষ্ঠাতা দেৱতা গণেশ, শিৱ-পার্বতী, বিষ্ণু আদি নানা দেৱ-দেৱীৰ মূর্ত্তি প্রতিষ্ঠান মায়ঙত আছে। ইতিহাস প্রসিদ্ধ মায়ং অঞ্চলৰ তন্ত্র-মন্ত্রৰ গুণ-গৰিমা ভাৰতবর্ষৰ লগতে বিদেশতো সমানে প্রচাৰ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

**০.১ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ**

'মায়ঙৰ তন্ত্র-মন্ত্র সাধনা ঃ এক ক্ষেত্রভিত্তিক অধ্যয়ন ' শীর্ষক গৱেষণা পত্রখনৰ উদ্দেশ্য হ'ল ঃ

(ক) মায়ঙত প্রচলিত যাদু-মন্ত্র, তন্ত্র সাধনাৰ বিষয়ে সামগ্রিক বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱা।

(খ) যাদু-মন্ত্রসমূহৰ ভাষা সম্পর্কে বিশ্লেষণ কৰা।

(গ) মায়ঙত তন্ত্র-মন্ত্রৰ চর্চা সম্পর্কে বিশ্লেষণ কৰা।

**০.২ গৱেষণাৰ উৎস আৰু পদ্ধতি ঃ**

গৱেষণা পত্রখনি প্রস্তুত কৰাৰ ক্ষেত্রত মায়ং অঞ্চলৰ ক্ষেত্রভিত্তিক অধ্যয়ন আৰু ব্যক্তিবিশেষৰ সাক্ষাৎকাৰৰ পৰা লাভ কৰা তথ্যসমূহ মুখ্য সমল হিচাপে আৰু বিভিন্ন গ্রন্থ অধ্যয়ন কৰি আহৰণ কৰা তথ্যক গৌণ সমল ৰূপে গ্রহণ কৰা হৈছে।

গৱেষণা পত্র প্রস্তুত কৰোতে বর্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ ওপৰত অধিক গুৰুত্ব প্রদান কৰা হৈছে।

**০.৩ গৱেষণাৰ ক্ষেত্র আৰু পৰিসৰ ঃ**

গৱেষণাৰ ক্ষেত্র হিচাপে মায়ং অঞ্চলটি গ্রহণ কৰা হৈছে। মায়ঙৰ মন্ত্র-তন্ত্রৰ পৰম্পৰা আৰু সেইসমূহৰ লগত জড়িত স্থাৱৰ অস্থাৱৰ বিভিন্ন মঠ-মন্দিৰ, থান ইত্যাদি অধ্যয়ন কৰাৰ লগতে প্রচলিত মন্ত্রসমূহৰ ভাষা সম্পর্কে বিশ্লেষণেই গৱেষণাৰ পৰিসৰ।

**১.০ মূল বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ**

মৰিগাঁও জিলাৰ পশ্চিম প্রান্তত অৱস্থিত মায়ং অতীজৰে পৰা তন্ত্র-মন্ত্রৰ বাবে ভাৰতৰ লগতে বিদেশতো পৰিচিত। তন্ত্র-মন্ত্র যাদুকলাৰ পৃষ্ঠভূমি মায়ং পুৰাণ প্রসিদ্ধ প্রাচীন কামৰূপ ৰাজ্যৰ মহাপীঠ কামাখ্যাৰ পূর্ব্বাঞ্চলীয় ভূ-খণ্ড। বৈদিক যুগৰ পৰা মায়ঙত যাদু-মন্ত্রৰ চর্চা চলি আহিছে।

ভাষাই লিখিত ৰূপ পোৱাৰ বহু যুগৰ আগতেই মানুহৰ মুখে মুখে পৰম্পৰাগত ৰূপত কিছুমান সাহিত্যই গতি লাভ কৰিছিল। তেনে এবিধ মৌখিক সাহিত্যই হ'ল মন্ত্র সাহিত্য। এই মন্ত্রসমূহে সাহিত্যৰ এক বিশাল অংশ অধিকাৰ কৰি আহিছে। অসমত হিন্দু আৰু বৌদ্ধ এই দুয়ো সম্প্রদায়ৰ লোকে প্রাচীন কালৰে পৰা তন্ত্র-মন্ত্রৰ চর্চা কৰি আহিছে। অসমত উদ্ধাৰ হোৱা তান্ত্রিক গ্রন্থ যোগিনীতন্ত্র, কালিকাপুৰাণত এই মন্ত্র সাহিত্যৰ বিষয়ে পোৱা গৈছে।

তন্ত্র-মন্ত্রসমূহ মায়ঙত কেতিয়াৰ পৰা কোনে প্রথম ব্যৱহাৰ কৰিছিল সেই সম্পর্কে সঠিক তথ্য পোৱা কঠিন। মায়ঙৰ প্রাচীন ৰজাঘৰীয়া লোকসকলে ৰাজকার্যত বা চিকিৎসা কার্যত মন্ত্রৰ ব্যৱহাৰ কৰিছিল বুলি পৰৱর্তী সময়ত জানিব পৰা গৈছে। তদুপৰি মায়ং অঞ্চলৰ বিভিন্ন ঠাইত প্রাপ্ত দেৱ-দেৱীৰ মূর্ত্তি, থান, হৰগৌৰীৰ যুগল মূর্ত্তি, শিৱলিংগ, ত্রিশূল লগতে বহুতো তন্ত্র-মন্ত্রৰ পুথি উদ্ধাৰে এই অঞ্চলত যে প্রাচীন সময়ৰে পৰা তন্ত্র-মন্ত্রৰ সাধনা চলিছিল সেই কথাৰ উমান দিয়ে। মন্ত্রৰ উৎপত্তি সম্পর্কত ড° ৰাজগুৰুৰে কৈছে -

*যাদু বা মন্ত্র প্রথম উৎপত্তিৰ স্থান কি আৰু কোন জাতিয়ে ইয়াক প্রথমে চর্চা কৰিছিল সি মতদ্বৈধৰ স্থল। তথাপি এই কথা ঠিক যে, আদিম অৱস্থাৰ পৰা অধিক অগ্রসৰ নোহোৱা বিভিন্ন আর্য্যেতৰ গোষ্ঠীৰ মাজতেই ইয়াৰ প্রচলন বেছি আৰু এওঁলোকৰ মাজৰ পৰাই আর্য্য সমাজত ইয়াৰ প্রয়োগ ঘটিছিল। আমাৰ অসমতো দেখা যায় যে যাদু বা তন্ত্র-মন্ত্রৰ প্রধান কেন্দ্র বুলি খ্যাতি লাভ কৰা কামাখ্যা মূলতে অষ্ট্রীয় খাছিসকলৰ তীর্থস্থান আছিল। কামাখ্যাৰ পিছতে যাদুৰ ক্ষেত্রত খ্যাতি লাভ কৰা নগাঁও জিলাৰ মায়ং অঞ্চল আর্য্যেতৰ বড়ো কছাৰীৰ অঞ্চল। গতিকে তন্ত্রৰ উৎস যাদু বা ইন্দ্রজালৰ চর্চা ভাৰতবর্ষত আর্য্যেতৰ গোষ্ঠীৰ বিভিন্ন ফৈদৰ লোকসকলৰ মাজতেই প্রথমে আৰম্ভ হৈছিল বুলি ক'ব পৰা যায়।*

অতীজৰে পৰা মায়ঙত প্ৰচলন হৈ অহা মন্ত্ৰসমূহৰ স্থান সুকীয়া। এই মন্ত্ৰসমূহৰ বেছিভাগে ছন্দগন্ধী। কিছুমান মন্ত্ৰ দীঘলীয়া, আন কিছুমান মন্ত্ৰ দুই-তিনিটা শব্দৰ সমষ্টি মাথোন। মন্ত্ৰবোৰৰ ভাষা সংস্কৃত যেন লাগিলেও সম্পূৰ্ণৰূপে সংস্কৃত নহয়। মন্ত্ৰবোৰ সংস্কৃত অসমীয়া, ব্ৰজাৱলী আৰু কাইথেলী ভাষাত লিখা হৈছিল। মায়ঙত প্ৰচলিত মন্ত্ৰসমূহত তৎসম, তদ্ভৱ, বিদেশী শব্দ কিছুমানৰ লগতে বঙালী ভাষাৰ দুই এক শব্দৰ প্ৰয়োগ দেখা যায়। অসমৰ বিভিন্ন অঞ্চলৰ থলুৱা কিছু শব্দ বিশেষকৈ মায়ং আৰু কামৰূপী শব্দৰ ব্যৱহাৰ মন্ত্ৰসমূহত পৰিলক্ষিত হৈছে।

*..... সত্যে সত্যে বোলো মই তোমাৰ যোগত*

*..... যিটো মনুষ্যক হিংসা কৰে দেৱগণ*

*..... কাটিলৈকে চক্ৰে তাক খণ্ড খণ্ড কৰি।*

*(সুদৰ্শন চক্ৰ কৱতী)*[২]

মন্ত্ৰসমূহত বহুতো অৰ্বাচীন অসমীয়া শব্দৰ লগতে জনজাতীয় বড়ো-কছাৰী ভাষাৰ শব্দৰ ব্যৱহাৰো দেখিবলৈ পোৱা যায়। মুছলমানসকলৰ ভাষাত অৰ্থাৎ আৰবী পাৰ্চী ভাষাত লিখা কিছুমান মন্ত্ৰও মায়ঙত উদ্ধাৰ হৈছে।

বাক্যৰ পুনৰুক্তি মন্ত্ৰসমূহৰ মাজত দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে

*শ্ৰী কৃষ্ণায় নমঃ ধনন্তৰায় নম*

*ভেলভেলেকী ভেলামুখী, ভেলেকী লগালো তোক, কি চা মোক।*

*ভেলেকী লগালো তোক। বাইজ মুহিলো দেও মুহিলো, সমাজ মুহিলো মই।*

*পূবে বান্ধো, পশ্চিমে বান্ধো, উত্তৰে বান্ধো, দক্ষিণে বান্ধো মই*

*এই বাক্য থৰিব লৰিব মহাদেৱ পাৰ্ব্বতীৰ মাথা কাটি ভোজন কৰিব*

*সিদ্ধি গুৰু পাৱ, ৰক্ষা কৰা কালিকা কামাখ্যা ধনন্তৰী মাব। (ৰাজমোহিনী মন্ত্ৰ)*[৩]

বৰ্তমান সময়ত মায়ং অঞ্চলৰ ভাষাত এক মিশ্ৰিত ৰূপ দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন কৰিবলৈ মায়ং অঞ্চললৈ যাওঁতে আমি সেই অঞ্চলৰ বহুকেইগৰাকী ব্যক্তিৰ সৈতে ভাৱৰ আদান-প্ৰদান কৰোতে জানিব পাৰিছো যে বহুসংখ্যক লোকে সম্পূৰ্ণ মান্য অসমীয়া ভাষা কথা ভাৱ বিনিময়ত ব্যৱহাৰ কৰিছে যদিও মায়ঙৰ ভিতৰুৱা কিছু গাঁওত ভাষাৰ এক সংমিশ্ৰিত ৰূপ শুনিবলৈ পাইছো। মায়ঙৰ এইলোকসকলৰ মাজত সম্পূৰ্ণ আধুনিক অসমীয়া ভাষাত লিখা মন্ত্ৰও দুই এক পোৱা গৈছে।

মায়ং অঞ্চলৰ ধৰ্মীয় পৰম্পৰাৰ দিশলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা পোৱা যায় যে মায়ঙত অতীজৰে পৰা শৈৱ আৰু শাক্ত ধৰ্মই বিশেষ প্ৰাধান্য লাভ কৰি আহিছে। তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ সাধনা সপ্তম অষ্টম শতিকামানৰ পৰাই মায়ঙত প্ৰচলন হৈ আহিছে। তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ সাধকসকল শিৱ-পাৰ্ব্বতীৰ অৰ্থাৎ শক্তিৰ দেৱ-দেৱীক উপাসনা কৰিছিল। শাক্ত ধৰ্মৰ উদ্দেশ্যি পূজা পাতল, বলি বিধান, পাৰ বলি, ম'হ বলি দিয়াৰ লগতে কেঁচাইখাইতী থানত নৰবলি দিয়া প্ৰথাৰ প্ৰচলন আছিল। প্ৰতিখন গাঁওতে গাঁওৰ মংগলৰ অৰ্থে নৰবলি দিয়াৰ উদ্দেশ্য এখনকৈ কেঁচাইখাইতী থান আছিল। বুঢ়া মায়ঙৰ কেঁচাইখাইতী থানত মানুহ বলি দিয়া হৈছিল। মায়ঙৰ বেছিভাগ তীৰ্থ পীঠেই শক্তিপীঠ। পুৰণি কালত বলি-বিধানৰ প্ৰথা মায়ঙত বহুলভাৱে প্ৰচলন আছিল যদিও বৰ্তমান সময়ত সেই অঞ্চলত বলিবিধান কাৰ্য বহু পৰিমাণে কমিছে লগতে নৰবলি প্ৰথা সম্পূৰ্ণৰূপে লোপ পাইছে।

প্ৰাচীন কালত মায়ঙত মন্ত্ৰৰ প্ৰভাৱত নানাধৰণৰ অবাস্তৱ ঘটনা বাস্তৱ কৰি তুলিছিল। তাৰে কিছুমান হ'ল— পিৰা টিকাত লাগি ধৰা, ৰাতি অহা অতিথিক ছাগলী কৰি বান্ধি থোৱা, ভুকুতে বাঘ মৰা, মোহিনী মন্ত্ৰৰ দ্বাৰা বশ কৰোৱা, মন ভুলোৱা, বিচ্ছেদ কৰি কাজিয়া লগোৱা ইত্যাদি নানান ধৰণৰ অদ্ভুত কাৰ্য মন্ত্ৰৰ দ্বাৰা কৰোৱা হৈছিল। প্ৰথম অৱস্থাত বেছিভাগ মন্ত্ৰই মৌখিক অৱস্থাত আছিল আৰু মন্ত্ৰসমূহ পদ্যত ৰচিত হৈছিল। গদ্যত ৰচিত দুই এক মন্ত্ৰ আছে যদিও পদ্যত ৰচিত মন্ত্ৰৰ সংখ্যাই সৰহ। যিবোৰ মন্ত্ৰ মৌখিক ৰূপত আছিল সেইবোৰ সেই সময়ৰ বেজ-জ্ঞানীসকলৰ মৃত্যুৰ লগে লগে কালৰ সোঁতত হেৰাই গ'ল। যিখিনি মন্ত্ৰ লিপিবদ্ধ কৰা হৈছিল সাঁচিপাত বা তুলাপাতত সেইবোৰ এতিয়াও মায়ঙৰ সংগ্ৰাহালয়ত সংৰক্ষিত হৈ আছে। মায়ঙত অতীজতে কেইবা প্ৰকাৰৰো মন্ত্ৰৰ প্ৰচলন আছিল— গুৰু সম্বন্ধীয় মন্ত্ৰ, মোহিনী মন্ত্ৰ, বাঘ বন্ধা মন্ত্ৰ, বান্ধনি মন্ত্ৰ, ভূত পিশাচ খেদোৱা মন্ত্ৰ, জুঁইয়ে পোৱা মন্ত্ৰ, বাণমৰা মন্ত্ৰ, বাণকটা মন্ত্ৰ, ডিঙিত কাঁইট লগা মন্ত্ৰ, মুখলগা ভঙা মন্ত্ৰ, সাপৰ ধৰণী মন্ত্ৰ, জ্বৰৰ মন্ত্ৰ, সৰ্বঢাক মন্ত্ৰ ইত্যাদি অলেখ মন্ত্ৰ প্ৰচলন আছিল।

এই মন্ত্রসমূহৰ ভাল আৰু বেয়া দুটা দিশ থাকে। অতীজতে মায়ঙত বহুতো কুমন্ত্রবো প্রচলন আছিল। কুমন্ত্রসমূহ প্রয়োগ কৰি শত্রুৰ অন্যায় কৰা হয় অথবা কাৰোবাৰ ওপৰত হিংসাৰ পোতক তোলা হৈছিল। এনে কিছু কুমন্ত্র হ'ল— কাজিয়া লগোৱা মন্ত্র, ঔষধ পোতা মন্ত্র, নিদ্রাবাণ, ছোৱালী পলুৱাই নিয়া, মোহিনী বাণ মন্ত্র, বশীকৰণ মন্ত্র, পতি বশীকৰণ মন্ত্র, চোৰৰ মন্ত্র, ভয়বাণ, পিঠা ভঙা মন্ত্র, বিয়া ঘৰত নচা মন্ত্র ইত্যাদি অনেক মন্ত্রৰ প্রচলন আছিল। এই মন্ত্রবোৰ কাৰোবাক অন্যায় কৰিবৰ বাবে খাদ্য বস্তুত মন্ত্র মাতি সেই মন্ত্র প্রয়োগ কৰা খাদ্য নির্দিষ্ট লোকজনক খুৱাই তেওঁক বশ কৰি বেজৰ ম'তে কাম কৰিবলৈ বাধ্য কৰিব পাৰে নতুবা তেনেধৰণৰ মন্ত্র প্রয়োগ কৰি তাবিজ, মাদলী আদি কাৰোবাৰ ঘৰৰ চৌহদৰ ভিতৰত পুতি ৰাখিলেও সেই নির্দিষ্ট ঘৰখনত নানান অপায় অমঙ্গল, বেমাৰ-আজাৰ দেখা দিব পাৰে।[৪]

মানুহৰ মংগলৰ অর্থে সমাজৰ হিতৰ স্বার্থত ব্যৱহৃত বিভিন্ন মন্ত্র মায়াৰ নগৰী মায়ঙত প্রাচীন কালৰে পৰা প্রচলন হৈ আহিছে। কোনো বেমাৰ-আজাৰ আদিৰ উৎপত্তি মূলতে দেৱ-দেৱী বা অন্যান্য দেৱতাৰ অসন্তুষ্টিৰ কাৰণে হোৱা বুলি পুৰণি কালৰে পৰা লোক বিশ্বাস চলি আহিছে। গতিকে ৰোগ নিৰাময়ৰ বাবে দেৱ-দেৱীক স্তুতি কৰি মন্ত্র উচ্চাৰণ আৰু ভেষজ ঔষধ ৰোগীয়ে ব্যৱহাৰ কৰিলে আৰোগ্য হয় বুলি তেওঁলোকৰ বিশ্বাস। মায়ঙত বিভিন্ন ৰোগৰ পৰা ৰোগীক আৰোগ্য কৰি তুলিবলৈ বেজে নানান মন্ত্র প্রয়োগ কৰিছিল আৰু সেই মন্ত্রই বহুজনক আৰোগ্য কৰি তুলিবলৈ সক্ষম হৈছিল। তেনে কিছু মন্ত্র হ'ল— পেটৰ বিষ জৰা, কঁকালৰ বিষ জৰা, নাড়ী লৰা, গা বন্ধা মন্ত্র, পাস মন্ত্র (ভূত-পিশাচ আদি খেদোৱা মন্ত্র), সিদ্ধ মন্ত্র, কাল্লাম মন্ত্র, ডিঙিত কাঁইট লাগিলে জৰা মন্ত্র, জুয়ে পুৰিলে উপশম হোৱা মন্ত্র, জুই বতাহ নিবাৰণ মন্ত্র, উঠৰমকাম মন্ত্র (শোওঁতে, যাওঁতে, বাটে-ঘাটে দিনে-ৰাতিয়ে সকলোতে এই মন্ত্রটি মাতিব পাৰে) ইত্যাদি।[৫]

প্রাচীনকালৰ মুখে মুখে চর্চিত আৰু লিখিত শক্তিশালী তন্ত্র-মন্ত্রসমূহত ব্যৱহৃত বিভিন্ন গছৰ ছাল, শিপা, কাণ্ড, জন্তুৰ দেহৰ বিভিন্ন অংশ, মাছৰ বিভিন্ন অংশ ইত্যাদি বহু দুষ্পাপ্য সামগ্রী মায়ঙৰ 'মায়ং গ্রাম্য সংগ্রহালয় আৰু গৱেষণা কেন্দ্র'টিয়ে যথাসাধ্যে সংৰক্ষণ কৰাৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। তেনে কেতবোৰ মন্ত্রত ব্যৱহৃত আপুৰুগীয়া সামগ্রী হ'ল— পলৰীয়া এৰি, আমঠু, সুৱগা, কাচৰ নখ আৰু মুখ, তেজপীয়াৰ মুখ, বাঘৰ যোনী, শিঙিমাছৰ মূৰ, নাঙল ভাঙা গছৰ মূল, একুহীয়া গুটি, গৰুৰ কলিজা, কেটেলা পহুৰ নেজ, মাকৰি ঘিলা, কাঠফুলা, কাছৰ চলং, সখনৰ ছাল, হৰিণাৰ শিং, বৰ বাদুলীৰ মঙহ, বতা বাঘিনীৰ লটা, আমেৰীৰ মূল, ফেঁচাৰ কলিজা, ফেটিসাপৰ ৰাজহাড়, সাপক আমন্ত্রণ কৰা কড়ি ইত্যাদি অনেক মূল্যৱান সম্পদ সংগ্রহালয়টোত সযতনে ৰখাৰ ব্যৱস্থা কৰা হৈছে।[৬]

তন্ত্র-মন্ত্রৰ নগৰী মায়ঙত ক্রমাৎ শিক্ষা-দীক্ষাৰ প্রসাৰ আৰু চিকিৎসা শাস্ত্রৰ উন্নতিৰ ফলস্বৰূপে সাম্প্রতিক সময়ত প্রাচীন বেজ-ওজাসকলৰ যাদু-মন্ত্রৰ প্রভাৱ বহুখিনি হ্রাস পোৱা পৰিলক্ষিত হৈছে। তদুপৰি পুৰণি সেই মন্ত্রসমূহৰ বেছিভাগ মন্ত্রই লিখিত ৰূপত নথকাৰ বাবে মৌখিক ৰূপত এটা প্রজন্মৰ পৰা আন এটা প্রজন্মলৈ বাগৰি অহাত মন্ত্রৰ উচ্চাৰণত বহুখিনি পার্থক্য আহি পৰিছে। যাৰ ফলত যথেষ্ট সংখ্যক মন্ত্র ধ্বংসৰ গৰাহলৈ গ'ল। অৱশ্যে বর্তমান সময়তো মায়ঙৰ ভিতৰুৱা গাঁওসমূহলৈ গ'লে দেখিবলৈ পোৱা যায় প্রায় প্রত্যক ঘৰ মানুহৰে বয়োজ্যেষ্ঠ লোকসকলে বহুকেইবিধ মন্ত্র জানে আৰু তাৰ জৰিয়তে বহুলোকৰ চিকিৎসা কৰাও পৰিলক্ষিত হৈছে। পেটৰ বিষ জাৰি দিয়া, কঁকালৰ বিষ জৰা, হাত-ভৰিৰ বিষ নাইকিয়া কৰা, দাঁত পোকৰ মন্ত্র, কেচুমুৰীয়াৰ দৰৱ, পেলুৰ দৰৱ, ঋতু বন্ধৰ দৰৱ, গৰুৰ বেমাৰৰ দৰৱ, জিভাত হোৱা ঘা ভাল হোৱাৰ দৰৱ, বেচুৰ দৰৱ ইত্যাদিকে ধৰি ৰোগ নিৰাময়ৰ মন্ত্র তেওঁলোকে জানে আৰু বহুলোকৰ ক্ষেত্রত সেই মন্ত্র প্রয়োগ কৰি ৰুগীয়া লোকসকলক সুস্থ কৰাও দেখিবলৈ পোৱা গৈছে।[৭] কিন্তু বর্তমান নতুন প্রজন্ম সেই বিদ্যা শিকাৰ প্রতি আগ্রহী নহয় যাৰ বাবে কিছু মন্ত্র এতিয়া আছে যদিও সেই বয়োজ্যেষ্ঠ লোকসকলৰ অবিহনে এই মন্ত্রসমূহ যে বর্তি থাকিব পাৰিব তাক লৈ সন্দেহৰ থল নথকা নহয়। হাজাৰ বছৰীয়া পুৰণি এই মূল্যৱান মন্ত্রসমূহক কিদৰে সংৰক্ষণ কৰিব পাৰি সেই সম্পর্কে সজাগ হোৱাটো অত্যন্ত দৰকাৰ। তন্ত্র-মন্ত্র যাদু কলাৰ বাবেই যিহেতু মায়ং সর্বজন পৰিচিত গতিকে পুৰণিকলীয়া এই মন্ত্রসমূহ সংৰক্ষণৰ ক্ষেত্রত মায়ঙৰ ৰাইজৰ লগতে চৰকাৰেও এই ক্ষেত্রত কিছু ব্যৱস্থা লোৱাৰ অত্যন্ত প্রয়োজন।

**সামৰণি ঃ**

'মায়ঙৰ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ সাধনা ঃ এক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়ন' শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনৰ পৰা স্পষ্ট যে অতীজৰে পৰা মায়ঙত পৰম্পৰাগতভাৱে তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ সাধনা কৰি অহা হৈছে। তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ পীঠস্থান মায়ং অসমৰ লগতে সমগ্ৰ ভাৰতবৰ্ষতে যাদু-মন্ত্ৰ-তন্ত্ৰ আদি লোকবিশ্বাসৰ কাৰণে অতীজৰে পৰা জনপ্ৰিয় হৈ আহিছে। দেশী-বিদেশী বিভিন্নজনে যাদু-মন্ত্ৰৰ নামতে আকৰ্ষিত হৈ এই ভূ-খণ্ডত এবাৰ হ'লেও ভুমুকি মাৰিছে। তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ পৰা আদি কৰি মায়ং অঞ্চলে লোকভাষা, উৎসৱ-পাৰ্বণ সকলোতে এক নিজস্বতা কঢ়িয়াই অনাৰ প্ৰয়াস কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে।

কিন্তু পৰিৱৰ্তিত সময়ৰ লগে লগে মায়ং অঞ্চলৰ লোকাচাৰ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰ, বেজ-বেজালিৰ কিছু পৰিৱৰ্তন হৈছে। আধুনিকতাৰ প্ৰভাৱত মায়ঙৰ পৰম্পৰাগত কেতবোৰ তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ প্ৰচলন কালৰ সোঁততে বিলুপ্ত হৈছে নাই বা সংৰক্ষণশীলতাৰ অভাৱত বহুখিনি মন্ত্ৰ ধ্বংসৰ গৰাহত নাইকিয়া হৈ পৰিছে আৰু তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰ ধাৰাত নব্য সাহিত্যৰ সৃষ্টিত বাধা জন্মিছে। মন্ত্ৰৰ বাবেই যিহেতু মায়ং বিখ্যাত গতিকে হাজাৰ বছৰীয়া সংস্কৃতিক জীয়াই ৰাখিবৰ বাবে নৱ প্ৰজন্মক মন্ত্ৰৰ গুৰুত্ব, মন্ত্ৰৰ সঠিক ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে যথাযোগ্য জ্ঞান দিয়াটো অত্যন্ত আৱশ্যক। পৌৰাণিক মন্ত্ৰপুথিসমূহ পুনৰ উদ্ধাৰ কৰি সেইসমূহৰ গৱেষণামূলক অধ্যয়ন হোৱাটো প্ৰয়োজন। ❑

**অন্ত্যটীকা ঃ**

১. নাথ, কমলচন্দ্ৰ ঃ মায়ঙৰ মন্ত্ৰ সাহিত্য, পৃ. ৩৫
২. তথ্যদাতা ঃ পদ্মিনী ৰৱদলৈ (তিৰা); বুঢ়া মায়ং, ৫০
৩. তথ্যদাতা ঃ ভদ্ৰেশ্বৰ টিমুং (কাৰ্বি); বুঢ়া মায়ং, ৬০
৪. তথ্যদাতা ঃ উৎপল নাথ (অসমীয়া); সহকাৰী অধ্যাপক, মায়ং আঞ্চলিক মহাবিদ্যালয়, ৩৫
৫. তথ্যদাতা ঃ মাজাৰী লাল চৰকাৰ (বঙালী); ভকতগাঁও, মায়ং, ৬০
৬. তথ্যদাতা ঃ কৰুণা নাথ (অসমীয়া); মায়ং গ্ৰাম্য সংগ্ৰহালয় আৰু গৱেষণা কেন্দ্ৰৰ কৰ্মকৰ্তা, ৫০
৭. তথ্যদাতা ঃ ৰূপেশ্বৰ টিমুং, মঞ্জুলা টিমুং (কাৰ্বি), বুঢ়া মায়ং, ৭০, ৫০

**গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ**


নাথ, উৎপল (সম্পা.)। তন্ত্ৰম। ভবানী অফছেট এণ্ড ইমেজিং চিষ্টেম প্ৰাইভেট লিমিটেড, ২০১৭।
নাথ, কমলচন্দ্ৰ। মায়ঙৰ মন্ত্ৰ-সাহিত্য। উত্তৰ-পূৰ ভাৰত লোক-সংস্কৃতি গৱেষণা কেন্দ্ৰ, ২০১৬।
নেওগ, মহেশ্বৰ। অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা। চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ১৯৮৭।
শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ আৰু চহৰীয়া কনক চন্দ্ৰ (সম্পা.)। অসমৰ সংস্কৃতি-সমীক্ষা। চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ২০০০।
শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ। অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ আভাস। বাণী প্ৰকাশ, ১৯৮৯।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ মৃত্যুঞ্জয় উপন্যাসৰ চৰিত্ৰ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

স্বাগতা মহন্ত

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
৮৪০৩৮৬০২৫৩
mahantaswagata25@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

সৃষ্টিশীল সাহিত্য সৃষ্টিত লেখকৰ ব্যক্তিগত জীৱনৰ অভিজ্ঞতা তথা পাৰিপার্শ্বিক অৱস্থাই লেখকক বিভিন্ন ধৰণে প্ৰভাৱিত কৰে। অসমীয়া সাহিত্যৰ এজন অন্যতম সাহিত্যিক বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ উপন্যাসৰ মাজত তেওঁৰ আদর্শ, জীৱন-দর্শন তথা বিভিন্ন বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ প্ৰতিফলন হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ উপন্যাসসমূহ সমাজ-জীৱনৰ দলিল স্বৰূপ। সামাজিক আৰু ৰাজনৈতিক চেতনা তেওঁৰ চিন্তাশীলতাৰ প্ৰধান উপাদান। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচার্য্যই ৰচনা কৰা উপন্যাসসমূহৰ ক্ষেত্ৰত 'বীৰেন্দ্ৰ-উপন্যাস-মালাৰ ত্ৰিৰত্ন' ৰূপে অভিহিত *প্ৰতিপদ, ইয়াৰুঈঙ্গম* আৰু *মৃত্যুঞ্জয়*ৰ ভিতৰত জ্ঞানপীঠ বঁটাৰে সন্মানীত *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখন এখন অন্যতম সৃষ্টি। উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে তেওঁ স্বাধীনতা আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত অসম তথা ভাৰতৰ জাতীয় জীৱনত প্ৰভাৱ পেলোৱা সমসাময়িক সময়ছোৱাৰ এক বাস্তৱ অৱস্থাৰ চিত্ৰণ কৰিছে। অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসত ঊনবিংশ শতিকাৰপৰা সাম্প্ৰতিক সময়লৈকে অসমীয়া উপন্যাসসমূহৰ বিভিন্ন ধৰণৰ গৱেষণামূলক অধ্যয়ন কৰা হৈছে। পাশ্চাত্যৰ বিভিন্ন সাহিত্য সমালোচনা তত্ত্বৰ আধাৰত এই সাহিত্য পাঠসমূহৰ আলোচনা বর্তমান সময়ছোৱাৰ এক গুৰুত্বপূর্ণ বিষয়। এই আলোচনাত নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে উপন্যাসখনৰ পটভূমি, তদানীন্তন সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক দিশসমূহৰ উপস্থাপনত বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ ভূমিকা সম্পর্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

**সূচক শব্দ ঃ**

নতুন ইতিহাসবাদ, মৃত্যুঞ্জয়, চৰিত্ৰ, আদর্শ, অহিংসা।

**১.০০ অৱতৰণিকা ঃ**

ঊনবিংশ শতিকাতেই আত্মপ্ৰকাশ কৰা উপন্যাস হৈছে অসমীয়া সাহিত্যৰ এটা অন্যতম গুৰুত্বপূর্ণ সাহিত্যিক বিধা। প্ৰথম অসমীয়া উপন্যাস *ভানুমতীৰ*পৰা আদি কৰি বর্তমানলৈকে অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যই এক দীঘলীয়া পৰিক্ৰমা অতিক্ৰম কৰি সাম্প্ৰতিক সময়ছোৱাত নতুন নতুন বিষয়বস্তুৰে সমৃদ্ধ হোৱাৰ লগতে ইয়াক লৈ বিভিন্ন ধৰণৰ পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাও সম্পন্ন হৈছে। পাশ্চাত্যৰ ন ন চিন্তাৰে অসমীয়া সাহিত্যৰ বিশ্লেষণৰ প্ৰসংগই বর্তমান সময়ত বিশেষ স্থান অধিকাৰ কৰিছে। এইক্ষেত্ৰত

পাশ্চাত্যৰপৰা অহা এটা নতুন ধাৰণা বা মতবাদ হৈছে নতুন ইতিহাসবাদী ধাৰণা বা New Historicism। এই ধাৰণা অনুসৰি সাহিত্য অধ্যয়নত ইতিহাসৰ প্ৰভাৰ অনস্বীকাৰ্য। কল্পনাৰ সমাহাৰে সাহিত্য আকৰ্ষণীয় কৰি তুলিলেও ইয়াৰ মাজেৰে প্ৰকাশিত বাস্তৱতাক অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰি। একেদৰে উপন্যাসৰ কথাবস্তুৰ মাজতো বাস্তৱতাৰ প্ৰতিফলন দেখিবলৈ পোৱা যায়। এই আলোচনাত আধুনিক অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰি তোলা এজন অন্যতম ঔপন্যাসিক বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ জ্ঞানপীঠ বঁটাৰে সন্মানীত *মৃত্যুঞ্জয়* শীৰ্ষক উপন্যাসখনক নতুন ইতিহাসবাদী ধাৰণাৰে বিশ্লেষণৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। স্বাধীনতা আন্দোলনৰ পটভূমিত ৰচিত উপন্যাসখনৰ ঐতিহাসিক ঘটনা, ৰাজনৈতিক চিত্ৰ, আঞ্চলিক প্ৰেক্ষাপটৰ লগতে ইয়াৰ ভাৱ-ভাষা, চৰিত্ৰ নিৰ্মাণ, লেখকৰ ভাৱাদৰ্শ আদিৰ মাজেৰে নতুন ইতিহাসবাদী চেতনাৰ প্ৰতিফলন ঘটা দেখা যায়।

অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত একাধাৰে কবি, চুটিগল্প লেখক, ঔপন্যাসিক, নাট্যকাৰ, প্ৰবন্ধকাৰ আৰু সাংবাদিক হিচাপে পৰিচিত বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ (১৯২৪-১৯৯৭) জন্ম হৈছিল শিৱসাগৰ জিলাৰ চাফ্ৰাই চাহ বাগিছাত। পিতৃ শশীধৰ ভট্টাচাৰ্য্য এই চাহ বাগিছাতে চাকৰি কৰাৰ বাবে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যই চাহ বাগিছাৰ বনুৱাৰ বোকোচাত উঠিয়েই শৈশৱকাল অতিবাহিত কৰিছিল। নৈষ্ঠিক ব্ৰাহ্মণৰ ঘৰত জন্মগ্ৰহণ কৰিলেও চাহ বাগিছাত থকা বৰ চাহাব, ছোট চাহাব, বৰ কেৰাণী, বৰ মহৰী, মতা মহৰী, মাইকী মহৰী, বনুৱা আদি সকলোৰে সান্নিধ্যই সৰুৰেপৰাই তেওঁক জাতিভেদ, শ্ৰেণীভেদৰ সম্পূৰ্ণ বিৰোধী কৰি গঢ়ি তুলিছিল। এই চাফ্ৰাই চাহ বাগিছাতে পঢ়াশলীয়া শিক্ষা আৰম্ভ কৰা বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যই ইয়াতেই তেওঁৰ সাহিত্য চৰ্চাও আৰম্ভ কৰে। সৰুৰে পৰা গভীৰ অধ্যয়ন-প্ৰিয় আৰু চিন্তাশীল বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যই ১৯৬১ চনত *ইয়াৰুঙ্গম* উপন্যাসৰ বাবে 'সাহিত্য একাডেমী বঁটা' আৰু ১৯৭৯ চনত *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসৰ বাবে জ্ঞানপীঠ বঁটা লাভ কৰাৰ সময়ত তেওঁ আছিল পূৰ্বৰ বিজয়ী সকলৰ ভিতৰত কণিষ্ঠতম ব্যক্তি। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ সাহিত্য কৰ্মৰ ভিতৰত জ্ঞানপীঠ বঁটাৰে সন্মানীত *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখন এখন উৎকৃষ্ট সৃষ্টি। স্বাধীনতাৰ পূৰ্বৱৰ্তী সময়ছোৱাত জন্মগ্ৰহণ কৰাৰ বাবে তেওঁৰ সৃষ্টিৰ মাজত সমসাময়িক সময়ছোৱাৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক সমাজখনৰ চিত্ৰ দেখিবলৈ পোৱা যায়। যাৱবাবে তেওঁৰ সাহিত্যৰ মাজত বহুপৰিমাণে ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলন আৰু সমাজবাদী চেতনাৰ প্ৰতিফলন হোৱা দেখিবলৈ পাওঁ।

*নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ মৃত্যুঞ্জয় উপন্যাসৰ চৰিত্ৰ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন* শীৰ্ষক আলোচনাটোত নতুন ইতিহাসবাদৰ আলোকত বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ মাজেৰে কিদৰে সমসাময়িক সামাজিক, ৰাজনৈতিক দিশৰ উপস্থাপন কৰা হৈছে সেই বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

**১.০১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ**

*নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ মৃত্যুঞ্জয় উপন্যাসৰ চৰিত্ৰ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন* শীৰ্ষক আলোচনাৰ মূল উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল-

১। নতুন ইতিহাসবাদৰ তাত্ত্বিক দিশ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

২। নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসৰ চৰিত্ৰসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা।

৩। উপন্যাসখনৰ চৰিত্ৰৰ নিৰ্মাণত নতুন ইতিহাসবাদে কিদৰে গুৰুত্ব লাভ কৰিছে তাক বিচাৰ কৰা।

**১.০২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ**

প্ৰস্তাৱিত অধ্যয়নটোত অধ্যয়নৰ পদ্ধতি হিচাপে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱাৰ লগতে তাত্ত্বিক আধাৰৰূপে নতুন ইতিহাসবাদ তত্ত্বক গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

**১.০৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ**

প্ৰস্তাৱিত অধ্যয়নত নতুন ইতিহাসবাদৰ পৰিচয়মূলক বৰ্ণনা আগবঢ়াই বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ *মৃত্যুঞ্জয়*উপন্যাসৰ চৰিত্ৰসমূহ নতুন ইতিহাসবাদৰ আলোকত আলোচনা কৰা হৈছে।

**১.০৪ পূৰ্বকৃত অধ্যয়নৰ সমীক্ষা ঃ**

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ উপন্যাসসমূহৰ বিষয়ে ইতিমধ্যে ভালেমান গৱেষণা কৰ্ম সম্পাদন কৰা হৈছে যদিও নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিভংগীৰে তেওঁৰ উপন্যাসৰ বিষয়ে কোনোধৰণৰ গৱেষণামূলক অধ্যয়ন বৰ্তমানলৈ দৃষ্টিগোচৰ হোৱা নাই। অৱশ্যে অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত নতুন ইতিহাসবাদৰ আধাৰত সাহিত্যৰ আলোচনা বিষয়টো নতুন যদিও ভাৰতীয় সাহিত্য তথা পাশ্চাত্যত ইতিমধ্যে বিভিন্ন ধৰণৰ চৰ্চা হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। যেনে- M. H. Abrams-ৰ *A Glossary of Literary Terms*, Peter Barry-ৰ *Beginning Theory*, Terry Eagleton-ৰ *Literary Theory An Introduction*, H. Aram Veeser-ৰ *The New His-*

*toricism* আদি গ্ৰন্থত নতুন ইতিহাসবাদ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে। অসমীয়া সাহিত্যৰ সমালোচকসকলেও সাহিত্যতত্ত্ব সম্পৰ্কীয় গ্ৰন্থত নতুন ইতিহাসবাদৰ তাত্ত্বিক আৰু প্ৰায়োগিক দিশৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে- হীৰেন গোহাঁইৰ *উত্তৰণৰ সাধনা* (১৯৯৩), আনন্দ বৰমুদৈৰ *সাহিত্যত মতবাদ* (২০০১) আদিৰ লগতে জুৰি দত্তৰ *সাহিত্য, সমাজ আৰু সাহিত্যতত্ত্ব* (২০২২) শীৰ্ষক গ্ৰন্থত নতুন ইতিহাসবাদ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে।

**২.০০ নতুন ইতিহাসবাদ ঃ**

সাহিত্য সমালোচনাৰ এটা নতুন সাহিত্যিক মতবাদ হৈছে নতুন ইতিহাসবাদ (New Historicism)। নতুন ইতিহাসবাদ শব্দটো প্ৰথমবাৰৰ বাবে ষ্টিফেন গ্ৰীনব্লাটে তেখেতৰ Genre Vol 15 (1982) নামৰ জার্নেলখনৰ পাতনিত উল্লেখ কৰিছিল।[১] সাহিত্য সমালোচনা তত্ত্বৰ ক্ষেত্ৰখনত এটা নিৰ্দিষ্ট সময়ত এটা মতাদৰ্শই যেতিয়া ব্যাপ্তি আৰু প্ৰচাৰৰ তুংগত উঠে, তেতিয়াই জন্ম হয় ঠিক তাৰ বিপৰীতমুখী ধ্যান ধাৰণাৰে অন্য এক মতাদৰ্শ।[২] বিংশ শতিকাত গঢ় লৈ উঠা নতুন সমালোচনা (New Criticism) তত্ত্বৰ বিপৰীতমুখী প্ৰতিক্ৰিয়া স্বৰূপে ইয়াৰ পৰৱৰ্তী সময়ছোৱাত নতুন ইতিহাসবাদৰ জন্ম হৈছিল। এই নতুন সমালোচনা তত্ত্বই কোনো এটা সাহিত্য কৰ্মক স্বয়ংসম্পূৰ্ণ বুলি বিবেচনা কৰি তাৰ স্বকীয় মূল্যায়নৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। এই ধাৰণা মতে সাহিত্যকৰ্ম এটা নিজেই সম্পূৰ্ণ আৰু ইয়াৰ বিশ্লেষণৰ বাবে সামাজিক পৰিৱেশ, সাহিত্য-সৃষ্টিৰ সময়, সাহিত্যিকৰ জীৱন আৰু দৰ্শন বা আন যিকোনো বাহ্যিক প্ৰভাৱৰ ভূমিকা তাৎপৰ্যহীন। কিন্তু নতুন ইতিহাসবাদে পূৰ্বৰ পাঠৰ স্বয়ংসম্পূৰ্ণতাৰ ধাৰণাক অস্বীকাৰ কৰি তাৰ পৰিৱৰ্তে ইতিহাসৰ নতুন ৰূপত মূল্যায়নৰ পোষকতা কৰে। এই ধাৰণা অনুসৰি ধৰ্মীয়, দাৰ্শনিক, ন্যায়িক, বৈজ্ঞানিক আদি সকলো দিশৰপৰা একোটা সাহিত্য পাঠ ইয়াৰ সৃষ্টিৰ সময়, পৰিস্থিতি আৰু নিৰ্দিষ্ট পাৰিপাৰ্শ্বিক অৱস্থাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। তদুপৰি লেখকৰ বাস্তৱ অভিজ্ঞতা তথা ভাৱাদৰ্শ আদিৰো প্ৰত্যক্ষ প্ৰভাৱ পাঠ এটাৰ ওপৰত পৰাটো স্বাভাৱিক। এই তত্ত্বই একোটা পাঠ বা সাহিত্যকৰ্ম স্বয়ংসম্পূৰ্ণভাৱে বা অকলশৰীয়াকৈ আলোচনা কৰাৰ পৰিৱৰ্তে সেই সময়ৰ ইতিহাস তথা সংস্কৃতিৰ মাজত এক ওতঃপ্ৰোত সম্পৰ্ক প্ৰত্যক্ষ কৰে। নতুন ইতিহাসবাদীসকলৰ মতে লেখকৰ পাৰিপাৰ্শ্বিকতা, সামাজিক, মানসিক পটভূমি, তেওঁক প্ৰভাৱিত কৰা কিতাপ তথা তত্ত্ব দৰ্শন; মূলতঃ সৃষ্টিকৰ্মক প্ৰভাৱিত কৰিব পৰা সমাজ, পৰিৱেশ, ৰীতি নীতি, আদৰ্শ, বিশ্বাস, মূল্যবোধ, সংস্কৃতি, ইতিহাস আদি যিকোনো কাৰকেই এই ধাৰণাত বিশ্লেষণযোগ্য। উল্লেখ্য যে, পূৰ্বৰ ইতিহাসবাদী সমালোচনাই সাহিত্য সৃষ্টিৰ মাজেৰে কিদৰে একোটা নিৰ্দিষ্ট সময় প্ৰতিফলিত হয় তাৰ আলোচনা কৰাৰ পৰিৱৰ্তে নতুন ইতিহাসবাদে কিদৰে একোটা পাঠ ইয়াৰ সৃষ্টিৰ সময়ৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত সেয়া মূল্যায়ন কৰে। গতিকে, এই নতুন ইতিহাসবাদৰ ধাৰণা হৈছে মূলতঃ ইতিহাসক নকৈ চোৱাৰ এক আহ্বান।

**৩.০০ উপন্যাসৰ পটভূমি ঃ**

১৯৪২ চনৰ ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলনৰ পটভূমিত ৰচিত *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনৰ ঘটনাৰ স্থান অসমৰ নগাঁও জিলাৰ মায়ং, বেবেজীয়া আদি অঞ্চল। দৰাচলতে ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলনত অসমৰ নগাঁও আৰু ইয়াৰ দাঁতিকাষৰীয়া অঞ্চলৰ মানুহখিনিয়ে এক সক্ৰিয় ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছিল। ১৯২১ চনত মহাত্মা গান্ধী পোনপ্ৰথম অসমলৈ আহি দেশজুৰি হোৱা অসহযোগ আন্দোলনত অসমৰ মানুহক অংশগ্ৰহণ কৰিবলৈ অনুপ্ৰাণিত কৰিছিল। যাৰ বাবে জাতি-বৰ্ণ-ধৰ্ম নিৰ্বিশেষে অসমৰ সকলো অঞ্চলৰ লোকসকল ঐক্যবদ্ধ হৈ স্বাধীনতা আন্দোলনত জঁপিয়াই পৰিছিল। সেই সময়ত নগাঁৱৰ কনক চন্দ্ৰ শৰ্মা, হলধৰ ভূঞা আৰু পূৰ্ণ চন্দ্ৰ শৰ্মাৰ নেতৃত্বত জিলাখনত তীব্ৰ ৰূপত অসহযোগ আন্দোলনে গা কৰি উঠিছিল। এই আন্দোলনৰ ঘাই উদ্দেশ্য আছিল- ইংৰাজ চৰকাৰৰ বিৰুদ্ধে অসহযোগিতাকে ধৰি বিভিন্ন উপায়েৰে অহিংস আন্দোলন গঢ়ি তোলা। নগাঁৱৰ উত্তৰ-পশ্চিম ফালৰ ভালেমান অঞ্চল যেনে- মায়ং, মনহা, মৰিগাঁও, ৰহা, বেবেজীয়া, ৰৱপূজীয়া, হাতীচোং আদিত আন্দোলনৰ কাৰ্যসূচী পৰিচালনা কৰাত আগভাগ লৈছিল।

মহাত্মা গান্ধীৰ নেতৃত্বত গঢ়ি উঠা ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলন আছিল একধৰণৰ অহিংস সংগ্ৰাম। অহিংসাৰ পথেৰে আগবাঢ়ি ব্ৰিটিছসকলৰপৰা ভাৰত তথা অসমক মুক্ত কৰাই আছিল গান্ধীৰ অহিংস আন্দোলনৰ মূল আদৰ্শ। একেদৰে, ১৯৪২ চনত মহাত্মা গান্ধীৰ নেতৃত্বত আৰম্ভ হোৱা স্বাধীনতা আন্দোলনৰ শেষ পৰ্যায়ত সংঘটিত 'ভাৰত ত্যাগ আন্দোলনে' আগষ্ট মাহত এটি বিশেষ মুহূৰ্তৰ ফালে গতি কৰিছিল। ১৯৪২ চনত মহাত্মা গান্ধীয়ে 'ভাৰত ত্যাগ'ৰ প্ৰস্তাৱ গ্ৰহণ কৰিছিল। কিন্তু, প্ৰস্তাৱৰ ভিত্তিত কাৰ্যসূচী নিৰ্ধাৰণৰ আগতেই মহাত্মা গান্ধী প্ৰমুখ্যে শীৰ্ষ স্থানীয় নেতাসকলে কাৰাগাৰলৈ যাবলগীয়া হৈছিল। তেনে কাৰণতে গান্ধীজীৰ 'কৰিম কিম্বা মৰিম' কথাযাৰৰ বেলেগ বেলেগ ধৰণেৰে ব্যাখ্যা কৰা হৈছিল। বহু কংগ্ৰেছ কৰ্মীয়ে

ইংৰাজৰ বিৰুদ্ধে বিভিন্ন হিংসাত্মক কার্য যেনে- মিলিটেৰীৰ ৰেলগাড়ী বগৰোৱা, টেলিগ্রাম লাইন উঠাই দিয়া, এয়াৰড্রম জ্বলাই দিয়া, ৰাস্তা-ঘাটৰ ক্ষতিসাধন কৰা আদিত লিপ্ত হৈছিল। এনে হিংসাত্মক আন্দোলনে অসমৰ নগাঁও আৰু তাৰ দাঁতি কাষৰীয়া অঞ্চলবোৰতো প্রভাৱ পেলাইছিল। বিয়াল্লিছৰ স্বাধীনতা আন্দোলনৰ পটভূমিত ৰচিত এই *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনৰ মাজেৰে স্বাধীনতাৰ কাৰণে সাধাৰণ মানুহৰ অসীম ত্যাগ, মানসিক দ্বন্দ্ব, মহৎ আদর্শ, পুলিচৰ অত্যাচাৰ-উৎপীড়নৰ চিত্র অতি কলা সুলভভাৱে অংকন কৰা হৈছে। উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে ঔপন্যাসিকে অসমৰ পটভূমিত স্বাধীনতা সংগ্রামৰ এখন বাস্তৱ ছবি অংকন কৰিছে।

**৪.০০ উপন্যাসখনৰ চৰিত্র ঃ**

উপন্যাসখনত প্রতিফলিত ৰাজনৈতিক চেতনাৰ এটা উৎস হ'ল ঔপন্যাসিকৰ প্রত্যক্ষ অভিজ্ঞতাৰ জৰিয়তে আর্জিত লিপ্ততা। *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনত উল্লিখিত প্রায়বোৰ চৰিত্র তেওঁ বাস্তৱৰ পটভূমিত সৃষ্টি কৰিছিল। উপন্যাসখনৰ চৰিত্রবোৰৰ সম্পর্কে বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যই "মোৰ উপন্যাস : নেপথ্যৰ কথা" শীর্ষক প্রবন্ধত উল্লেখ কৰিছে যে, ইয়াৰ চৰিত্রবোৰ নির্দিষ্ট ঠাইৰপৰা লোৱা, নাম কিছুমানো আছিল মানুহৰপৰা লোৱা। এনেকৈ নাম ল'লে, নামে পৰিস্থিতিৰ বাস্তৱতাৰ লগত তাল মিলাই আগবাঢ়িবলৈ কল্পনাক একোটা অৱলম্বন দিয়ে। তেওঁ উল্লেখ কৰিছে যে, "মৃত্যুঞ্জয়ৰ চৰিত্র কিছুমানৰ নামো বাস্তৱৰ পৰা বোটলা। উদাহৰণ স্বৰূপে, আহিনা কোঁৱৰ। আহিনা কোঁৱৰ বুলি এজন মানুহ আজিও জীয়াই আছে; তেওঁ বিপ্লৱতো ভাগ লৈছিল। কিন্তু তেওঁ 'কৃষ্ণক চিন্তি বুলি কথা নকয়, নতুবা কানিও নাখায়। তেওঁ উপন্যাসৰ কানীয়া আহিনা কোঁৱৰৰ মাজত নিজৰ বিকৃত ৰূপ দেখি অসন্তুষ্টি প্রকাশ কৰিছিল। আনবিলাক চৰিত্রও ঠিক বাস্তৱৰ লগত হুবহু নিমিলে।"[৩]

উপন্যাসখনৰ চৰিত্রবোৰৰ সম্পর্কে উপেন্দ্র ৰৰকটকীয়ে উল্লেখ কৰিছে যে, "বিয়াল্লিছৰ এক অবিস্মৰণীয় পাণবাৰীত ৰেল বগৰোৱা ঘটনা গোস্বামীৰ নির্দেশতে সংঘটিত হৈছিল। অৱশ্যে এই ৰেল বগৰোৱা কার্যত প্রত্যক্ষভাৱে জড়িত আছিল মায়ং-দৈপড়াৰ মহদানন্দ দেৱগোস্বামী আৰু তেওঁৰ সহযোগী বেণুধৰ ডেকা, ভোগৰাম ডেকা, দধি ৰৰদলৈ, মধু কেওট, বিকাৰাম ডেকা, বিৰহু মেধি, লয়ৰাম মেধি, ভগীৰথ কোঁৱৰ আৰু ভুৱন মেধি। এওঁলোকৰ লগত লগ লাগিল কামপুৰৰ ভিবিৰাম ৰৰা, ধনপুৰ লস্কৰ, মাণিক ৰৰা আৰু ৰহা অঞ্চলৰ আন দুজন সতীর্থ ৰূপৰাম সুত আৰু কামেশ্বৰ ৰৰদলৈ। ভিবিৰাম ৰৰাৰ মতে- 'এই ঘটনাৰ পটভূমি শ্রীলঐপ্রসাদৰ সৃষ্টি আছিল। দৈপড়াৰ মহদা গোসাঁইৰ দলে সহায়-সাৰথি নকৰা হ'লে আৰু আমি কামপুৰীয়া দলে তালৈ গৈ সহযোগ নকৰা হ'লে সেই কার্য নহলহেঁতেন। এই কৃতকার্যতাৰ গুৰিতে লয়ৰামৰ নির্ভুল পথ প্রদর্শন প্রশংসনীয়।' এই চিৰস্মৰণীয় ঘটনাকে মুখ্য কৰি বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যই ৰচনা কৰা বিখ্যাত *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনে পাছত সন্মানীয় 'জ্ঞানপীঠ বঁটা' অর্জন কৰিছিল। উপন্যাসখনত কামপুৰ আৰু বিশেষকৈ নগাঁৱৰ পশ্চিম অঞ্চলৰ জনসাধাৰণে আন্দোলনত লোৱা ভূমিকাৰ মনোগ্রাহী বিৱৰণ আছে।"[৪]

উপন্যাসখনৰ চৰিত্রবোৰৰ মাজত সৃষ্টি হোৱা হিংসা-অহিংসাৰ দ্বন্দ্বৰ সমান্তৰালভাৱে মহাভাৰতৰ দৰে ন্যায়-অন্যায়, ধর্ম-অধর্ম, নিন্দনীয়-কৰণীয়, কর্তব্য-অকর্তব্য আদিৰ নিচিনা প্রশ্নবোৰো উপস্থাপন কৰা হৈছে। উপন্যাসখনত বিভিন্ন চৰিত্রই অহিংসাৰ পটভূমিত প্রতিষ্ঠিত হোৱা স্বাধীনতা আন্দোলনত হিংসাত্মক নীতিৰে আগবাঢ়ি. ভাৰতক ব্রিটিছৰপৰা মুক্ত কৰাৰ চেষ্টা কৰিছিল। উপন্যাসখনৰ শেষত সকলো কর্তব্যৰ উর্দ্ধত দয়া-প্রেম-ক্ষমা আদিৰ নিচিনা ধর্মকে আগস্থান দিছে। উপন্যাসখনৰ কাহিনীৰ মাজত তেওঁ নিজৰ জীৱন কালত প্রত্যক্ষ কৰা জনজাগৰণৰ সৈতে নিজস্ব চিন্তাৰ ৰহণ সানি প্রকাশ কৰিছে। য'ত পৰাধীন অসমৰ সাধাৰণ মানুহৰ মাজত স্বাধীনতা লাভৰ দুর্বাৰ আকাংক্ষা ভিভিৰাম চৰিত্রৰ মাজেৰে উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিতে ব্যক্ত কৰিছে যে- "কেঁচা ৰৰলক জোকাই ল'লে গা সাৰিবলৈ টান।"[৫] অর্থাৎ, স্বাধীনতাকামী অসমীয়াই যিকোনো প্রকাৰে ব্রিটিছৰ সাম্রাজ্যবাদী নীতি ওফৰাই স্বাধীনতা প্রতিষ্ঠা কৰিব পাৰে তেনে এক আভাস দিছে। একেদৰে উপন্যাসখনত মাণিক ৰৰাৰ মহাত্মা গান্ধীৰ প্রতি থকা আস্থাৰ বর্ণনাৰ মাজেৰে মানুহৰ মাজত অহিংসাৰ প্রতি থকা বিশ্বাস প্রকাশ পাইছে। উপন্যাসখনত পৰিস্থিতিৰ তাগিদাত দেশৰ স্বাধীনতাৰ কাৰণে মহাত্মা গান্ধীৰ অহিংস পন্থাৰ বিপৰীতে হিংসাৰ পথ গ্রহণ কৰিছে যদিও বহুসময়ত চৰিত্রবোৰে মানসিক দ্বন্দ্বত ভুগিছে। এই মানসিক দ্বন্দ দৰাচলতে ঔপন্যাসিকৰো মানসিক দ্বন্দ। কিয়নো বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ চিন্তা আৰু ভাৱধাৰাত যেনেকৈ প্রগতিবাদ আছে তেনেকৈ পুৰণিৰ প্রতিও তেওঁৰ সমান অনুৰাগ থকা দেখা যায়। তেওঁ নতুন আৰু পুৰণিৰ মিলন সেতু স্বৰূপ। উপন্যাসখনত বিভিন্ন চৰিত্রৰ মাজত এই নতুন আৰু পুৰণিৰ মাজৰ দ্বন্দ্ব দেখিবলৈ পোৱা গৈছে।

কিন্তু, সেয়া হ'লেও ধনপুৰ, ভিভিৰাম, মাণিক বৰা, মধু কেওট, আহিনা কোঁৱৰ প্ৰভৃতি মহদা গোসাঁই চৰিত্ৰবোৰে তীব্ৰ জাতীয় চেতনাৰে এই দ্বন্দ্বক পৰাভূত কৰি সংগ্ৰামী চেতনাক গুৰুত্ব প্ৰদান কৰিছে।

উপন্যাসখনৰ চৰিত্ৰৰ প্ৰসংগত গোবিন্দ প্ৰসাদ দাসে কৈছে যে, "উপন্যাসখনত অংকিত অভিযানটিৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ মহদা গোসাঁই এজন বাস্তৱ লোকেই। মায়ঙৰ মহদানন্দ গোস্বামী নামৰ এই লোকজন বাস্তৱতো জাগীৰোডৰ ওচৰৰ ৰে'ল বগৰোৱা অভিযানটোৰ নায়ক আছিল। সেইদৰে বিয়াল্লিছৰ আন্দোলনৰ সময়ৰ ব্ৰিটিছ চৰকাৰৰ অনুগত পুলিচ বিষয়া লম্বোদৰ শইকীয়াই হ'ল উপন্যাসৰ পুলিচ বিষয়া শইকীয়া। একেদৰে উপন্যাসৰ চৰিত্ৰ লয়ৰাম, ভিভিৰাম, দধি বৰদলৈ, আহিনা কোঁৱৰ, মধু কেওট, মাণিক বৰা আদি সকলোবোৰ বাস্তৱ লোক আৰু তেওঁলোকৰ আচল নামকেই উপন্যাসতো ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।"[৫]

উপন্যাসখনৰ মহদানন্দ গোসাঁইৰ চৰিত্ৰটো দৈপাৰা সত্ৰৰ গোসাঁইৰ লগতে কংগ্ৰেছৰ সভাপতি হিচাপে সমাজৰ এজন আগশাৰীৰ ব্যক্তি। উপন্যাসখনত বিভিন্ন সময়ত এই চৰিত্ৰটোৰ মাজত একধৰণৰ আদৰ্শগত দ্বন্দ্ব দেখিবলৈ পোৱা যায়। এফালে তেওঁ সশস্ত্ৰ বিপ্লৱৰ জৰিয়তে দেশক স্বাধীনতা দিবলৈ আগবাঢ়িছে যদিও আনফালে অহিংস যুদ্ধৰ প্ৰতিহে তেওঁ বিশ্বাসী। সেয়ে জীৱনৰ শেষ মূহূৰ্তত তেওঁ কৈছে যে, "এই হাতখনত মানুহৰ তেজ লাগি আছে। এইটো মোৰ সহ্য হোৱা নাই। মোৰ বিবেক বিকল হৈ গৈছে। আচলতে মোৰ নৈতিক দ্বন্দ্ব ঘটিছে। মিছা কথা কৈ লাভ নাই। মই অহিংস যুঁজহে ভাল পাওঁ। সেই যুঁজহে আচল যুঁজ।"[৬] উপন্যাসখনত বৈষ্ণৱ সত্ৰাধিকাৰ এজনে হাতত বন্দুক তুলি লোৱাৰ বৰ্ণনাটো ঐতিহাসিক দিশৰপৰা অতি তাৎপৰ্যপূৰ্ণ। কাৰণ, ইয়াৰ পূৰ্বে বৈষ্ণৱ সত্ৰাধিকাৰে পোনপটীয়াকৈ কোনোধৰণৰ হিংসাত্মক বিপ্লৱত যোগ দিয়াৰ কথা পোৱা নাযায়। তেওঁলোক আছিল নৱহত্যাৰ পৰিপন্থী। অৱশ্যে ধলৰ সত্ৰৰ অধিকাৰ তীৰ্থনাথ গোস্বামী বিয়াল্লিছৰ কংগ্ৰেছৰ অহিংস আন্দোলনৰ লগত জড়িত আছিল।[৭] উল্লেখ্য যে, বিস্তৰ ভূ-সম্পত্তিৰ গৰাকী সত্ৰাধিকাৰসকলৰ ধৰ্মপৰায়ণ ৰাইজৰ ওপৰত থকা প্ৰভাৱক আন্দোলনৰ হকে খটু�ৰাবলৈ ৰাজনৈতিক নেত্ৰীবৃন্দয়ো চেষ্টা কৰিছিল। সেয়েহে স্বাধীনতা লাভৰ সংগ্ৰামখনত তেওঁলোককো সামৰি ল'বলৈ বিচৰা হৈছিল আৰু এই কথাৰ প্ৰকাশ *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনৰ মাজেৰেও পৰিস্ফুৰ্ত হৈছে।

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্য আদৰ্শগতভাৱে ৰামমনোহৰ লোহিয়াৰ সামাজিক চেতনাৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈছিল। এহাতে গান্ধীজী আৰু আনহাতে ৰামমনোহৰ লোহিয়া এই দুয়োজনেই তেওঁৰ আদৰ্শ ৰাজনৈতিক গুৰু আছিল। সেয়ে উপন্যাসখনত ব্ৰিটিছৰ ৰাজনৈতিক অধিকাৰ আঁতৰাই পেলোৱাৰ লগতে ভাৰতত সমাজবাদ স্থাপনৰ আদৰ্শৰ কথাও পোৱা যায়। এই সমাজবাদী আদৰ্শ তেওঁ ধনপুৰ চৰিত্ৰটোৰ মাজেৰে মূৰ্ত কৰি তুলিছে। উপন্যাসখনৰ ধনপুৰ এটা বহুমাত্ৰিক চৰিত্ৰ। এটা গতিশীল চৰিত্ৰ হিচাপে ধনপুৰ চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তে মানুহৰ মাজত থকা জটিলতাবোৰ ফুঁটি উঠিছে। উপন্যাসখনত ধনপুৰে এখন শোষণহীন মুক্ত সমাজৰ বাবে যুঁজিছে, জাত-পাত, ধনী-দুখীয়াৰ প্ৰভেদ নথকা এখন সমাজ গঢ়িবলৈ হিংসাৰ আশ্ৰয়ো লৈছে। এখন স্বাধীন ভাৰতৰ সপোন দেখি সি কৈছে, "আমাৰ গাঁওবোৰত মাটি নাইকিয়া মানুহ ঢেৰ। সেইবোৰক মাটি দিব লাগিব। অকল মাটি দিয়াই নহয়, সকলোকে কাম দিব লাগিব। অকল কাম দিয়াই নহয়, উদ্যোগ পাতিব লাগিব। পাৰিলে জমিদাৰ, পুঁজিপতি এইবোৰ উচ্ছেদ কৰিব লাগিব। প্ৰত্যেকৰে ল'ৰা ছোৱালীক শিক্ষা দিয়াৰ কথাটোতো আছেই।"[৮]

উপন্যাসখনত ১৯৪২ চনৰ হিংসাবাদী আন্দোলনৰ ছবিখন ফুটি উঠিছে। মহাত্মা গান্ধীৰ অহিংসা নীতিৰ প্ৰতিফলন ইয়াত কমকৈহে দেখিবলৈ পোৱা যায়। কাৰণ ১৯২১ চনৰ আন্দোলনৰ বিফলতাৰ পাছৰ পৰা গান্ধীজীৰ অহিংসা নীতিৰ প্ৰতি থকা মানুহৰ অটল বিশ্বাসতো কোনোবাখিনিত ঘূণে ধৰিবলৈ লৈছিল। উপন্যাসখনত মধু কেওঁটৰ চৰিত্ৰটোৰ মাজত হিংসা-অহিংসাৰ এক আদৰ্শগত দ্বন্দ্ব দেখা যায়। মধু কেওঁটে মহদা গোসাঁইৰ যিকোনো কথাই বাধা নিদিয়াকৈ দেৱতা মনাৰ দৰেই পালন কৰে। কিন্তু তথাপি তেওঁৰ মনত সংশয় আহিছে। সেয়ে, ৰেল বগৰাবলৈ যোৱা সময়ছোৱাত তেওঁৰ শংকৰদেৱৰ কুকুৰ শৃগাল গদৰ্ভৰো আত্মা ৰাম, জানিয়া সবাকো পৰি কৰিবা প্ৰণাম কথাষাৰেই মনলৈ আহিছে। একে সময়তে তেওঁৰ মনত মহাত্মা গান্ধীৰ অহিংসাৰ আদৰ্শই এনে কাম কৰিবলৈ বাধা দিছে- "মহাত্মাই জেলৰ বাহিৰত থকা হ'লে এনে কাম কেতিয়াও কৰিবলৈ নিদিলেহেঁতেন।[৯] একেদৰে ৰেল বগৰাই অনুতপ্ত হোৱা মহদা গোসাঁয়ে যেতিয়া গান্ধীৰ আদৰ্শৰে কৈছে, "মানুহ নমৰাকৈ যদি যুঁজিব পৰিলোহেঁতেন তেন্তে কিমান সুন্দৰ হ'লহেঁতেন।[১০] তেতিয়া ডেকা ৰূপনাৰায়ণৰ মনৰ ভাৱ প্ৰকাশ পাইছে এইদৰে, "মানুহৰ মুক্তিৰ যুঁজ অহিংসাৰে নহয়। হোৱা হ'লে ইমানদিনে স্বাধীনতা পালেহেঁতেন ভাৰতে। কিন্তু ভাৰতে স্বাধীনতা নেপালে। কাৰণ মহাত্মা গান্ধী নহয়নে?

সুভাষ বসুৰে ঠিক কথা কৈছে। যুদ্ধ কৰিব লাগিব। জয়প্ৰকাশ-লোহিয়াই আচল বাট দৰ্শাইছে। গৰিলা যুঁজ কৰিব লাগিব আমি।[১১]

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ উপন্যাসত মাৰ্কিন ঔপন্যাসিক আৰ্ণেষ্ট হেমিংৱেৰ উপন্যাসৰ প্ৰভাৱ পৰা দেখা যায়। *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনৰ সৈতে আৰ্ণেষ্ট হেমিংৱেৰ *For whom the Bell Tolls* (1940) শীৰ্ষক উপন্যাসখনৰ ভালেমান সাদৃশ্য দেখা যায়। *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসৰ কাহিনীৰ ক্ষেত্ৰত হেমিংৱেৰ উপন্যাসখনৰ প্ৰভাৱ স্পষ্ট। কিন্তু, *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখন হেমিংৱেৰ উপন্যাসখনৰ কাহিনী আৰু ঘটনাবিশেষৰ অনুকৰণ নহয়, ইয়াত বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ নিজস্ব পৰিকল্পনাৰ চাপ আছে। অসমীয়া পৰম্পৰাগত সমাজখন আৰু মহাত্মা গান্ধীৰ স্বাধীনতা আন্দোলনৰ প্ৰভাৱ উপন্যাসখনৰ মাজত আছে। উপন্যাসখনৰ চৰিত্ৰৰ ক্ষেত্ৰত গোবিন্দ প্ৰসাদ শৰ্মাই কৈছে যে, "হেমিংৱেৰ প্ৰভাৱত সৃষ্টি কৰা এক জীৱন্ত আকৰ্ষণীয় চৰিত্ৰ হ'ল প্ৰতিপদৰ সৈতে একে বছৰতে প্ৰকাশিত উপন্যাস *মৃত্যুঞ্জয়*ৰ 'ধনপুৰ' চৰিত্ৰটি। নিষ্ঠা, কাৰ্যক্ষমতা, সবল ব্যক্তিত্ব আৰু বাস্তৱমুখিতা- এনেবোৰ গুণৰ বাবে ধনপুৰো গিয়াছুদ্দিনৰ দৰে উপন্যাসখনত আকৰ্ষণৰ কেন্দ্ৰবিন্দু।"[১২] উপন্যাসখনত হিংসাৰ যি যুক্তিযুক্ততা তাক প্ৰতিপন্ন কৰিবলৈ কৈছে যে- মানৰ দিনতো বোলে ইমান অত্যাচাৰ হোৱা নাছিল। ফুলগুৰি ধেৱাতো হোৱা নাছিল। সিহঁতে সকলোকে চেৰ পেলালে।[১৩] ইয়াৰ প্ৰতিবাদ স্বৰূপে উপন্যাসখনত ধনপুৰ চৰিত্ৰটোৱে কৈছে- মানিক ভকত, ভিভিৰাম এইবোৰে কিয় গৰিলা যুদ্ধৰ কথা ভাবিবলৈ ল'লে ক'ব পাৰেনে? আন একো উপায় নাই। ইহঁতক ভাৰতৰ পৰা খেদিবই লাগিব।[১৪]

বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্য আছিল সমাজমুখী ব্যক্তিত্বৰ অধিকাৰী। সেয়েহে তেওঁৰ সৃষ্টিৰ মাজত সমাজ কেন্দ্ৰিক চিন্তা-চেতনাই গুৰুত্ব লাভ কৰা দেখা যায়। সমাজবাদী আদৰ্শৰ দ্বাৰা অনুপ্ৰাণিত বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্য ৰাজনীতিৰ সৈতে জড়িত আছিল যদিও তেওঁ ক্ষমতাৰ বাবে ৰাজনীতি কৰা নাছিল।[১৫] সমাজবাদী চিন্তাৰ লগতে পাশ্চাত্যৰপৰা সেই সময়ৰ সমাজলৈ অহা আন এটা প্ৰৱাহ আছিল ঊনবিংশ শতিকাৰ য়ুৰোপৰ মানৱতাবাদী আৰু উদাৱনৈতিক ঐতিহ্যৰ ধাৰণা। উপন্যাসখনত মহদা গোসাঁইৰ চৰিত্ৰটোৰ মাজে�ৰে এই ভাৱাদৰ্শৰে প্ৰকাশ পোৱা দেখা গৈছে। ধৰ্মীয় নীতি-নিয়মৰ প্ৰসংগত গোসাঁয়ে কৈছে যে, এইখন দেশত আচল ধৰ্ম নাইকিয়া হ'ল। কেৱল নীতি-নিয়ম হ'লেই দেখনিয়াৰ ব্ৰাহ্মণ হয়, ভকত হয়, দেখনিয়াৰ মৌলবী-মোল্লা হয়। আচল ধৰ্ম হৈছে মানৱধৰ্ম। মানুহৰ দুখ নিবাৰণ কৰিবলৈ গৈয়েই বুদ্ধ অৱতাৰ হ'ল। চৈতন্য মহাপ্ৰভু আৰু শংকৰ গুৰুৱেও প্ৰেমৰ ওপৰতে জোৰ দিছে। মানুহৰ মাজতেই ঈশ্বৰ আছে। বুদ্ধদেৱেও ক'লে, বহুজনৰ হিত, বহুজনৰ সুখেই মোৰ ধৰ্ম। মই গোটেই ভাৰতবৰ্ষ ঘুৰি এটা কথা দেখিলো। মঠ-মন্দিৰ, মছজিদ-গীৰ্জা-এইবোৰত পুৰোহিত-মৌলবী-বিশ্বপ থাকে। ভগৱান থাকে দুখীয়া মানুহৰ লগত। তেওঁ দৰিদ্ৰ নাৰায়ণ। তেওঁত মজি মুক্তিৰ বাবে দুৰ্লভ মনুষ্য তনু নিপাত কৰাটোৱেই এই যুগৰ ধৰ্ম।[১৬] অৰ্থাৎ, সংস্কাৰ সৰ্বস্ব ধৰ্মৰ বাহ্যিকতাৰ খোলা ভেদ কৰি তাৰ সাৰবস্তু মানৱসেৱাক অন্তঃকৰণেৰে গ্ৰহণ কৰাই যে শ্ৰেয় সেয়া ইয়াত বুজোৱা হৈছে।

**৫.০০ উপসংহাৰ ঃ**

*মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনৰ নামকৰণৰ ফালে চালে দেখা যায় যে মৃত্যুক জয় কৰি জীৱনৰ সম্ভাৱনা ইয়াত স্পষ্ট ৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে। উপন্যাসখনত ৰে'ল বগৰোৱা কার্যত লিপ্ত হোৱাৰ পিছত এই চৰিত্ৰসমূহৰ মৃত্যুৱে যেন মৃত্যুৰেই জয় ঘোষণা কৰিছে। উপন্যাসখনত সমকালীন সমাজৰ ৰাজনৈতিক চিন্তা-ধাৰণাৰ প্ৰকাশ ঘটাৰ উপৰিও এই ৰাজনৈতিক অৱস্থাই জনজীৱনক কিদৰে প্ৰভাৱিত কৰে, জীৱনৰ ভঙা-গঢ়াত ইয়াৰ ভূমিকা আদি বিভিন্ন দিশ প্ৰতিফলিত হৈছে। বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ উপন্যাসত তেওঁৰ ৰাজনৈতিক ভাৱাদৰ্শৰ প্ৰতিফলন হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায় যদিও তেওঁ কোনো ৰাজনৈতিক নেতা নাছিল। কিন্তু ছাত্ৰ অৱস্থাৰ পৰা ৰাজনীতিৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হৈ তেওঁ এখন স্বাধীন আৰু শোষণমুক্ত সমাজৰ সপোন দেখিছিল। এইক্ষেত্ৰত শৈশৱৰ চাহবাগিচাৰ বনুৱাসকলৰ জীৱনৰ দুখ-দুৰ্দশাই তেওঁৰ জীৱনক কিছু পৰিমাণে প্ৰভাৱিত কৰা বুলি ভাবিব পাৰি। সমসাময়িক ভাৰতৰ স্বাধীনতা আন্দোলনে বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ মনত স্বদেশ-চেতনাৰ জন্ম দিছিল। *মৃত্যুঞ্জয়* উপন্যাসখনত তেওঁ হিংসাত্মক বিপ্লৱৰ জৰিয়তে স্বাধীনতা লাভৰ পোষকতা কৰিছে যদিও বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ মাজত দেখিবলৈ পোৱা তীব্ৰ স্বদেশানুৰাগে নিৰুপায় হৈ হিংসাৰ বাটেৰে গৈ দেশক স্বাধীন কৰিবলৈ আগবাঢ়িছে।

উপন্যাসখনৰ শেষলৈ ধনপুৰ, গোসাঁই মৰিও মৃত্যুৰেই মৃত্যুক জয় কৰাৰ মাজেৰে উপন্যাসখনৰ সার্থকতা প্রকাশ পাইছে। মৃত্যুৰ জৰিয়তে যেন স্বাধীনতাৰ বাটত এখোজ আগবাঢ়ি যায়, এই অনুভৱ হৈছে। মৃত্যুৰেই যেন সমাজত তেওঁলোকৰ নাম খোদিত কৰাই থৈ গৈছে। উপন্যাসখনৰ কাহিনীটো আৰু ইয়াৰ চৰিত্রসমূহ এটা আনটোৰ ওপৰত নির্ভৰশীল। ইয়াৰ কাহিনীটো বিভিন্ন সৰু সুৰা গাঁথনিৰ মাজেৰে আগবাঢ়ি যোৱা দেখা গৈছে। কাহিনীৰ গাঁথনিৰ ইটোৰ সিটোৰ লগত থকা সম্পর্কই কাহিনীৰ ব্যাখ্যা আগবঢ়াই নিয়াত সহায় কৰিছে। উপন্যাসখনৰ ধনপুৰ, আহিনা কোঁৱৰ, ৰূপনাৰায়ণ, ডিমি, অনুপমা প্রতিটো চৰিত্রৰে নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আছে। এই চৰিত্রসমূহৰ মাজত থকা কার্যকলাপ আৰু চিন্তাধাৰাৰ পার্থক্যই কাহিনীটোক সুন্দৰভাৱে গাঁথি দিয়াত সহায় কৰিছে। উপন্যাসখনত মহদা গোসাঁইয়ে অহিংসাৰ পথেই শুদ্ধ বুলি বিচাৰ কৰা স্বত্বেও তেওঁ পৰৱর্তী সময়ত হিংসাত ব্রতী হ'ব লগা হৈছে। গোসাঁইৰ এই মানসিক দ্বন্দ্বৰ মাজেৰে যেন ঔপন্যাসিকৰ নিজৰ মনৰ দ্বন্দ্ব প্রকাশ পাইছে। উপন্যাসখনৰ বিভিন্ন চৰিত্রৰ সৃষ্টিত ঔপন্যাসিকে বাস্তৱ জীৱনৰ ভালেমান চৰিত্রৰপৰা অনুপ্রাণিত হৈছে। বহুসময়ত ঔপন্যাসিকৰ ব্যক্তিগত জীৱনৰ আদর্শও ভালেমান চৰিত্রৰ মাজেৰে প্রকাশ পাইছে। সাহিত্য সমালোচনাৰ নতুন ইতিহাসবাদ তত্ত্বই এই আটাইবোৰ দিশৰ ওপৰত আধাৰ কৰি সাহিত্য পাঠ একোটাৰ অধ্যয়নৰ পোষকতা কৰে। এই অধ্যয়নত নতুন ইতিহাসবাদৰ দৃষ্টিৰে *মৃত্যুঞ্জয়.* উপন্যাসখনৰ চৰিত্রসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে। পৰৱর্তী সময়ত এই তত্ত্বৰ আধাৰত উপন্যাসখনত প্রতিফলিত সামাজিক বা ৰাজনৈতিক ঘটনাৰাজিৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰাৰ থল আছে। ❑

**প্রসঙ্গসূত্র**

১। জুৰি দত্ত, *সাহিত্য, সমাজ আৰু সাহিত্যতত্ত্ব,* পৃ.৪১
২। উল্লিখিত, পৃ.৪৩
৩। শোণিত বিজয় দাস আৰু মুনীন বায়ন, *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ ৰচনাৱলী,* পৃ.৭৯৫
৪। উপেন্দ্র বৰকটকী, *আন্দোলন আলোচনী আৰু ব্যক্তি,* পৃ.৬৪
৫। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্য, *মৃত্যুঞ্জয়,* পৃ.৭
৬। গোবিন্দ প্রসাদ শর্মা, *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যঃ ঔপন্যাসিক,* পৃ.৯৩
৭। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্য, *মৃত্যুঞ্জয়,* পৃ.২১০
৮। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্য, *মৃত্যুঞ্জয়,* পৃ.১২০
৯। উল্লিখিত, পৃ.৮৭
১০। উল্লিখিত, পৃ.১৮৯
১১। উল্লিখিত, পৃ.১৯১
১২। হেমন্ত কুমাৰ শর্মা (সম্পা.), *বীৰেন্দ্র ভট্টাচার্য্যৰ সাহিত্য-কৃতি,* পৃ.৮২
১৩। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্য, *মৃত্যুঞ্জয়,* পৃ.১৫
১৪। উল্লিখিত, পৃ.৫০
১৫। অমৰজ্যোতি চৌধুৰী, *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্য স্মাৰক বক্তৃতা,* পৃ.২
১৬। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্য, *মৃত্যুঞ্জয়,* পৃ.৩৩

**সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী**


১। কটকী, প্রফুল্ল। *স্বৰাজোত্তৰ অসমীয়া উপন্যাস সমীক্ষা*। বীণা লাইব্রেৰীঃ গুৱাহাটী, পুনৰ মুদ্রিত সংস্কৰণ, ২০০৯।
২। দত্ত, জুৰি। *সাহিত্য, সমাজ আৰু সাহিত্যতত্ত্ব*। পূর্বায়ণ প্রকাশনঃ গুৱাহাটী, প্রথম প্রকাশ, ২০২২।
৩। দাস, শোণিত বিজয় আৰু মুনীন বায়ন। *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ ৰচনাৱলী*। কথা পাব্লিকেশ্বন, প্রথম প্রকাশ, ২০১৩।
৪। দেৱ গোস্বামী, ৰঞ্জিৎ কুমাৰ। *প্রবন্ধ*। লয়ার্ছ বুক ষ্টলঃ গুৱাহাটী, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৯।
৫। বৰকটকী, উপেন্দ্র। *আন্দোলন আলোচনী আৰু ব্যক্তি*। অসম প্রকাশন পৰিষদঃ গুৱাহাটী, ২০০৮।
৬। বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ সোঁৱৰণী ন্যাস। *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ স্মাৰক বক্তৃতা*। ২০০৮।
৭। ভট্টাচার্য্য, বীৰেন্দ্র কুমাৰ। *মৃত্যুঞ্জয়*। চন্দ্র প্রকাশঃ গুৱাহাটী, নৱম প্রকাশ, ২০১৯।
৮। মিশ্র, কৃষ্ণ কুমাৰ। *প্রসংগঃ উপন্যাস*। অসম প্রকাশন পৰিষদঃ গুৱাহাটী, প্রথম প্রকাশ, ২০০৮।
৯। শইকীয়া, নগেন (সম্পা.)। *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যৰ ৰামধেনুৰ সম্পাদকীয়*। বনলতাঃ গুৱাহাটী, প্রথম প্রকাশ, ২০০৭।
১০। শর্মা, গোবিন্দ প্রসাদ। *বীৰেন্দ্র কুমাৰ ভট্টাচার্য্যঃ ঔপন্যাসিক*। বনলতাঃ গুৱাহাটী, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৪।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# মহাপুৰুষ শংকৰদেৱৰ সৃষ্টিত বিজ্ঞানমনস্কতা (নামঘৰৰ বিশেষ উল্লিখনেৰে)

মঞ্জু দাস

সহকাৰী অধ্যাপিকা
দমদমা মহাবিদ্যালয়
কামৰূপ - ৭৮১১০৪
৭০৮৬৭৪৮৮১৯
md6808112@gmail.com

**সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ**

মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ পঞ্চদশ শতিকাৰ ভাৰতীয় নৱ বৈষ্ণৱ ভক্তি আন্দোলনৰ এগৰাকী কাণ্ডাৰী পুৰুষ আছিল। তেওঁ ধৰ্ম প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰৰ বাবে ভালেমান সৃষ্টি আৰু কৰ্ম কৰি থৈ গৈছে, যিবোৰ আজিও অসাধাৰণ আৰু প্ৰাসঙ্গিক। ধৰ্মক ঢাল হিচাপে লৈ তদানীন্তন বহুধা বিভক্ত, কু-সংস্কাৰাচ্ছন্ন সমাজ ব্যৱস্থাক সু-সংহত ৰূপ দিয়াৰ লগতে মানৱ সমাজৰ মঙ্গলার্থে কাম কৰি গৈছে। তেওঁৰ প্ৰতিটো সৃষ্টি আৰু কৰ্মৰ লক্ষ্য কেৱল মাত্ৰ ধৰ্ম প্ৰচাৰেই নাছিল, সমাজৰ ঐক্য, সংহতি, উন্নতি সাধন কৰি জনজীৱনৰ মঙ্গলৰ লগতে এক সুন্দৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ বাতাবৰণ সৃষ্টিৰ হ'কেও কাম কৰিছিল। তেওঁ এগৰাকী মুকলি মনৰ সংশয়বাদী, জিজ্ঞাসু আৰু বিজ্ঞানসম্মত যুক্তি আৰু প্ৰমাণৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল বিজ্ঞানমনস্ক ব্যক্তি আছিল। বিজ্ঞানমনস্কতাৰ এক বিশেষত্ব হৈছে নিৰন্তৰ প্ৰশ্নশীলতা আৰু অনুসন্ধিৎসা; যিবোৰ শংকৰদেৱৰ চৰিত্ৰ মাজত বিৰাজমান। সেয়েহে তেওঁৰ সৃষ্টি-কৰ্মৰ মাজেৰে প্ৰকৃতি সচেতনতা, পৰিৱেশ সু�ৰক্ষা, জনস্বাস্থ্য সচেতনতা আদি দিশৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে।

**বীজশব্দ ঃ**

বিজ্ঞানমনস্ক, নামঘৰ, জনস্বাস্থ্য, পৰিৱেশ, প্ৰকৃতি, ৰোগ, উপশম।

**১.১ প্ৰস্তাৱনা ঃ**

বিজ্ঞানমনস্কতা হ'ল বৈজ্ঞানিক মনোবৃত্তি, যুক্তিবাদী মননশীল চৰ্চা আৰু বিচাৰাত্মক চিন্তা কৌশল। কোনো এটা বিষয়ত এক কথাত সহমত প্ৰকাশ নকৰি সংশয় প্ৰকাশৰ দ্বাৰা যুক্তিনিষ্ঠাভাৱে আৰু বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰাই হ'ল বিজ্ঞানমনস্কতা। প্ৰশ্ন আৰু অনুসন্ধান প্ৰৱণতা বিজ্ঞান মনস্কতাৰ বৈশিষ্ট্য। বিজ্ঞানমনস্কতাৰ বাবে কোনো ব্যক্তি বিজ্ঞানৰ ছাত্ৰ বা গৱেষক হ'ব নালাগে। সাধাৰণ ব্যক্তি এগৰাকীও বিজ্ঞানমনস্কতাৰ অধিকাৰী হ'ব পাৰে। তেওঁ জীৱন জগতৰ ঘটনা পৰিঘটনাবোৰ সুঐভাৱে পৰ্যবেক্ষণ কৰিব পাৰিব লাগিব।

পঞ্চদশ শতিকাৰ ভাৰতীয় নৱবৈষ্ণৱ আন্দোলনৰ এগৰাকী কাণ্ডাৰী পুৰুষ শ্ৰীশ্ৰীশংকৰদেৱ। তেৰাৰ কৰ্মৰাজি আৰু সৃষ্টি সমূহৰ অসাধাৰণত্বই আজিৰ সময়তো প্ৰাসঙ্গিক আৰু ভৱিষ্যতলৈও থাকিব। তেৰাৰ সৃষ্টি আৰু কৰ্মৰ লক্ষ্য ধৰ্ম প্ৰচাৰতে

সীমাবদ্ধ নকৰি সমাজৰ ঐক্য, সংহতি, উন্নতি সাধন কৰি জনজীৱনৰ মঙ্গল কামনাৰ লগতে প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশ আদিৰ উন্নত বাতাবৰণ সৃষ্টিৰ ওপৰতো গুৰুত্ব দিছিল। তেৰাৰ সৃষ্টি-কৰ্মৰাজিৰ মাজেৰে প্ৰকৃতি সচেতনতা, পৰিৱেশ সুৰক্ষা, জনস্বাস্থ্য সচেতনতা আদি দিশবোৰৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। সংস্কাৰমুক্ত,মুকলিমনা, সংশয়বাদী, জিজ্ঞাসুমনা, বিজ্ঞানসম্মত যুক্তি আৰু প্ৰমাণৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল শংকৰদেৱৰ আছিল একৰাকী বিজ্ঞানমনস্ক ব্যক্তি।

**১.২ বিষয়ৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ**

সকলো অধ্যয়নৰ আঁৰত একোটা উদ্দেশ্যই ক্ৰিয়া কৰি থাকে। আমাৰ এই অধ্যয়নৰ আঁৰতো এক উদ্দেশ্য আছে। শংকৰদেৱে নামঘৰ প্ৰতিষ্ঠাৰ দ্বাৰা গণতান্ত্ৰিক পৰম্পৰা প্ৰতিষ্ঠাৰ লগতে এক সুস্থ জীৱন জীৱিকাৰ বাতাবৰণৰ সৃষ্টি কৰিছে। আধ্যাত্মিক, নৈতিক আৰু কলা বিদ্যা চৰ্চাৰ থলি নামঘৰৰ ৰীতি-নীতি, কৰ্ম-কাৰ্যৰ মাজেৰে বিজ্ঞান মনস্কতাৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিছে। শৰীৰ আৰু আত্মাৰ উৎকৰ্ষ সাধানৰ বাবে যোগাসনৰ প্ৰয়োজন। তেওঁ সত্ৰীয়া নৃত্য, মাটি আখৰাৰ চৰ্চা আৰু অনুশীলনৰ দ্বাৰা যোগ চৰ্চাৰ গুৰুত্ব উপলব্ধি কৰিছিল। তেৰাৰ কৰ্ম আৰু ৰচনাৰাজিৰ মাজত প্ৰতিফলিত প্ৰকৃতি আৰু পৰিৱেশ বিষয়ক চিন্তা-চৰ্চা সম্প্ৰতি অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয় হিচাপে পৰিগণিত হৈ পৰিছে।

**১.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ**

আমাৰ এই আলোচনাত শংকৰদেৱৰ সৃষ্ট নামঘৰৰ কাৰ্য প্ৰণালী বিশ্লেষণ তথা ৰীতি-নীতি, মাহ-প্ৰসাদ, সাজ-সজ্জা আদিৰ লগতে জনস্বাস্থ্য সচেতনতা আৰু পৰিৱেশ সচেতনতাক পৰ্যবেক্ষণ আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে বিষয়টোৰ পৰিসৰ সামৰি লোৱা হৈছে।

**১.৪ তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ**

আলোচনাটি প্ৰস্তুত কৰিবৰ বাবে বিষয়ৰ লগত সংগতি থকা বিভিন্ন সমালোচনামূলক গ্ৰন্থৰ সহায় লোৱা হৈছে। সংগৃহীত তথ্যসমূহ নিজস্ব যুক্তিৰে সজাই তোলা হৈছে।

**২.১ নামঘৰ ঃ**

মহাপুৰুষজনাৰ সৃষ্ট নামঘৰ অসমীয়া জাতীয় সংস্কৃতিৰ যাদুঘৰ, জাতীয় ভাওনা ঘৰ। এই ভাওনা ঘৰ ধনী, দুখীয়া সকলোৰে নিমিত্তে কঠ-কুঁহিলাৰ আসন।[১] সুকুমাৰ কলাৰে বেষ্টিত নৈতিক, আধ্যাত্মিক আৰু সমাজ শিক্ষাৰ কৰ্ষণ থলি। গুৰুজনাৰ নৱবৈষ্ণৱ আন্দোলনৰ নিয়ন্ত্ৰণ কক্ষ নামঘৰ ব্যক্তি আৰু সমাজ নিৰ্মাণৰ বিজ্ঞান সম্মত এক ক্ষেত্ৰ। কিছুমান নীতি-নিয়মৰ বেলিকাও কিছু বাধ্য বাধ্যকতা তেওঁ সকলোৰে বাবে আহ্বান জনাইছিল। নাম গোৱাৰ সময়ত যাতে পৱিত্ৰতা বৰ্তাই ৰাখিব পাৰে, তাৰ বাবে নামগোৱা ভকতসকলৰ মাজত বাক্য প্ৰয়োগৰ (ভাষা) সংয়মতা, বস্ত্ৰ পৰিধানত শালিনতা ৰক্ষা কৰা, কৰ্ত্তব্যবোধৰ দায়বদ্ধতা, শৰীৰ আৰু মনৰ মাজত সংযোগ স্থাপন কৰাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছিল। নৱভক্তিৰ অনুশীলনৰ মূল ক্ষেত্ৰ নামঘৰৰ সমস্ত ৰীতি-নীতি, কাৰ্য-প্ৰণালী বিজ্ঞানসম্মত। ভকতে পৰিধান কৰা বস্ত্ৰ, দেউৰী-বিলনীয়াই মুখত ব্যৱহৃত কাপোৰ, পদ্মাসন কৰি বহি নাম-লগোৱা, মাহ প্ৰসাদৰ সামগ্ৰী, ঢাৰি, কুহিলা পাৰি মাটিত বহি নাম কীৰ্ত্তন কৰা, হাত চাপৰি বজাই নাম প্ৰসঙ্গ কৰা আৰু নামঘৰৰ গঠন প্ৰণালী সকলো বিজ্ঞানসম্মত। গুৰুজনাই অতি দূৰ দৃষ্টিৰে বিজ্ঞানসম্মতভাৱে এই কৰ্ম-কাৰ্যসমূহৰ ব্যৱহাৰ দেখুৱাই বিজ্ঞান মনস্কতাৰ পৰিচয় দি থৈ গৈছে।

**২.২ জনস্বাস্থ্য ঃ**

ঃ ভক্তসকলে পৱিত্ৰ অনুষ্ঠান নামঘৰত প্ৰৱেশ কৰোতে গা-পা ধুই পৰিষ্কাৰ শুভ্ৰ বস্ত্ৰ পৰিধান কৰাৰ নিয়ম অদ্যপি প্ৰচলিত হৈ আছে। সাধাৰণতে ধুতি, চেলেং চাদৰ আৰু গামোচা পৰিধান কৰে। ধুতি শব্দৰ অৰ্থ ধোত অৰ্থাৎ সংস্কাৰ, চাদৰ হৈছে দয়াৰ প্ৰতীক আৰু গামোচাখন প্ৰেমৰ প্ৰতীক হিচাপে ধৰা হয়। এই তিনিখন বস্ত্ৰ শুভ্ৰ অৰ্থাৎ বগা। এই শুভ্ৰ বস্ত্ৰই সাত্বিক ভাৱ সৃষ্টি কৰি মনলৈ প্ৰশান্তি আনে। মনৰ প্ৰশান্তিয়ে মানুহক স্থিৰ আৰু দৃঢ় কৰি তোলে। সুস্থিৰ মনে সাৰ্থকতা লাভ কৰে।

ঃ নামঘৰলৈ গৈ ভকতসকলে নাম-কীৰ্ত্তন কৰোঁতে কঠ বা ঢাৰিত বহি লয়। এই আসনবোৰ কুঁহিলা, গোগোল অথবা বাঁহৰ দৈ আদিৰ দ্বাৰা তৈয়াৰ কৰা হয়। এই সমূহ আসনৰ দহিকা শক্তি অতি বেছি। ইয়ে খাদ্যৰ পাচন ক্ৰিয়া প্ৰখৰ কৰাত সহায় কৰে। এনে আসনত বহিলে নাভিমণ্ডলৰ ওপৰ ভাগত থকা পাচক যন্ত্ৰক ৰক্ত সঞ্চালন প্ৰক্ৰিয়াই সক্ৰিয় কৰি তোলে।[২]

ঃ নাম-কীৰ্ত্তন কৰোঁতে জোৰেৰে হাত চাপৰি বজোৱা হয়। চাপৰি বজাওতে হাতৰ আঙুলিবিলাকত চাপ পৰি সিৰা উপসিৰাৰ তেজৰ গতি বাঢ়ি যায়। তেতিয়া সিৰা উপসিৰাৰ মাজৰ বন্ধনবিলাক নাইকিয়া হৈ পৰে। আনহাতে শৰীৰৰ পৰা ঘাম বাহিৰ হৈ শৰীৰত থকা অতিৰিক্ত নিমখ আৰু

বিষাক্ত ৰাসায়ন উলিয়াই দিয়ে। ইয়াৰ দ্বাৰা ভক্তসকলে বহু পৰিমানে যোগ আৰু ধ্যানৰ ফল লাভ কৰে। লগতে শাৰীৰিক সুস্থতা আৰু মানসিক শান্তি লাভ কৰে।

ঃ শংকৰী সংস্কৃতিৰ নিয়ম অনুসৰি ভগৱন্তৰ ওচৰত নৈৱদ্য হিচাপে মাহ প্রসাদ আগবঢ়োৱা হয়। মাহ প্রসাদত মগুমাহ, আৰৈ চাউল, আদা, নিমখ, কুহিয়াৰ, কল আদি প্রধান। এই উপকৰণবোৰৰ খাদ্যগুণ অতি গুৰুত্বপূর্ণ। এইবোৰ বিভিন্ন ৰোগনাশক আৰু সৌন্দর্য বর্দ্ধকো। কেঁচা মগু সর্বাধিক প্রতিজাৰক (High Antioxidant) আৰু ই দীর্ঘদিনীয়া ৰোগ উপসমত সহায় কৰে। ই কলেষ্টৰেলৰ মাত্রাও হ্রাস কৰে। মগুত পটাছিয়াম, মেগনেছিয়াম আদি থাকে বাবে ৰক্তচাপ বহু পৰিমানে কমাই ৰাখিব পাৰে। ইয়াৰ বাহিৰে মগুত কেইবাবিধো ভিটামিনো থাকে।

কেঁচা আদাত জৈৰ মিশ্র জিনজাৰ'ল (Gingerol) থাকে। ইয়াৰ অসংখ্য চিকিৎসা বিষয়ক ধর্ম আছে। আদাই শৰীৰৰ কোনো ঠাই ফুলি বা উখহি উঠা কার্যক নিৰাময় কৰে। তাৰ উপৰিও ই হজম ক্রিয়াত বহু পৰিমানে সহায় কৰে। আদা খালে পাকাস্ত্রীয় কর্কটৰোগৰ বাধা প্রদান বা চিকিৎসাৰ ক্ষেত্রত সহায়ক হয়।[৩]

কল, কুহিয়াৰ আদি প্রসাদৰ উপকৰণ। কলে শক্তি বঢ়াই আৰু কুহিয়াৰে দাঁতৰ গুৰি চাফ কৰে। প্রসাদ খোৱাৰ পাছত দাঁতৰ গুৰিত সোমাই থকা সৰু সৰু প্রসাদৰ টুকুৰাই দাঁতৰ ৰোগৰ সৃষ্টি কৰিব পাৰে। কুহিয়াৰ খোৱাৰ লগে লগে সম্পূর্ণভাৱে মুখখন প্রক্ষালন কৰি পোলায়। কুহিয়াৰৰ ৰসত কেলছিয়াম, মেগনিছিয়াম, পটাছিয়াম, আইৰণ আৰু মেংগানিজ থাকে। কুহিয়াৰৰ ৰসে কর্কট ৰোগ, বিশেষকৈ ব্রেষ্ট কর্কট প্রতিৰোধ কৰিব পাৰে।[৪]

ঃ নাম কীর্ত্তনৰ অন্তত ভকতৰ মাজত প্রসাদ বিতৰণ কৰোঁতে দেউৰী বিলনীয়াই মুখত কাপোৰ বান্ধি লোৱাৰ যি নিয়ম গুৰুজনাই বান্ধি দিছিল, সেয়াও বিজ্ঞানসন্মত। স্বাস্থ্য ৰক্ষাৰ প্রধান বস্তু হৈছে বিশুদ্ধ খাদ্য। খাদ্য বিষক্রিয়া বা অপৰিত্র বস্তুৰ মিশ্রণে মানুহক ৰোগগ্রস্ত কৰিব পাৰে অথবা মৃত্যুও ঘটাব পাৰে। সেয়েহে পৰিত্র স্থানত, পৰিত্র ভাৰেৰে, পৰিত্র শৰীৰেৰে, পৰিত্র আসন পাতি ভগৱন্তক স্থিতি কৰা হয়। নাম-প্রসঙ্গৰ সময়ত জীৱাত্মাৰ সৈতে পৰমাত্মাৰ মিলন অর্থাৎ ভক্ত আৰু ভগৱন্তৰ মাজত এক ঐক্য স্থাপন হয়। তেনে পৰিস্থিতিত ভগৱানৰ নামত অর্পিত দ্রব্য সদাচাৰ সম্পন্ন হৈ পৰিত্র ষট্ দ্বাৰৰ অন্তর্গত মুখখন ভালদৰে বান্ধি বিলনীয়াই নিজৰ কৰিব লাগে আৰু সেই দ্রব্য ভক্তসকলৰ মাজত বিতৰণ কৰিব লাগে।প্রসাদত যাতে বিলনীয়াৰ থু, চুলি আদি নপৰে আৰু তাৰ দ্বাৰা বীজানু ভকতৰ গাৰৈ নাযায়, তাৰেই ব্যৱস্থা। ই এক বিজ্ঞানসন্মত নিয়ম।

ঃ গুৰুজনাই নামঘৰক ধর্মৰ গণ্ডীতে আৱদ্ধ নাৰাখি সংস্কৃতিৰ বিশাল জগতখনকো ইয়াৰ লগত সম্পৃক্ত কৰিছিল। তেওঁ যি সত্রীয়া নৃত্যৰ আদর্শ দেখুৱাই থৈ গৈছে, তাৰ চর্চা হৈছিল সত্রৰ নামঘৰত। সত্রীয়া নৃত্যৰ মূল অংগ হৈছে মাটি আখৰা। মাটি আখৰাৰ লগত যোগ চর্চা জড়িত হৈ আছে। শৰীৰ স্বাস্থ্যসন্মত কৰি তোলাত মাটি আখৰাই সহায় কৰে। ইয়াৰ চর্চা আৰু সাধনাই শৰীৰ নিৰোগী আৰু শ্রীবৃদ্ধিত সহায়তা কৰে। গুৰুজনাই যোগৰ তত্বসমূহ নৃত্যৰ আখৰাত সন্নিবিষ্ট কৰি ইয়াৰ চর্চা আৰু সাধনাৰ দ্বাৰা মানুহক সুস্বাস্থ্যৰ অধিকাৰী কৰি তোলাত অৰিহণা যোগাইছে।

**২.৩ প্রকৃতি আৰু পৰিৱেশ ঃ**

গুৰুজনাই অসমৰ অশিক্ষিত জনতাৰ মাজত প্রকৃতি সম্বন্ধে জ্ঞান আৰু পৰিৱেশ সম্পর্কত এক সজাগতা আনিবলৈ চেষ্টা কৰিছিল। তেওঁ প্রকৃতিৰ ৰম্যভূমিতে শৈশৱৰ অধিক কাল অতিবাহিত কৰি নদ-নদী; পাহাৰ-পর্বত, গছ-গছনি, জীৱ-জন্তু আদিৰ সৈতে সহবাস কৰি প্রাকৃতিক পৰিৱেশৰ মাজত অসমবাসীক বসবাস কৰিবলৈ অনুপ্রেৰণাৰ লগতে আদর্শ দেখুৱাই গৈছে। সেয়েহে তেওঁ সত্র-নামঘৰ প্রতিষ্ঠা কৰিছিল প্রকৃতিৰ মাজত। সত্র-নামঘৰ চাৰিওফালে শিলিখা, নিম, আমলখি, তাল, বেল, কল, নাৰিকল, আম, কঁঠাল, জামু, পনিয়ল, তুলসী, বকুল আদি বিভিন্ন ফল-ফুলৰ গছ ৰোপণ কৰি এক অনুকূল পাৰিপার্শ্বিক পৰিৱেশৰ বাতাবৰণ সৃষ্টি কৰিছিল। উল্লেখ্য যে এনেধৰণৰ ফল দাত্রি আৰু ঔষধি গুণ সম্পন্ন পৰিৱেশ কল্যানকাৰী গছ ৰোপণ কৰি প্রাকৃতিক ভাৰসাম্য বর্তাই ৰাখিছিল। গুৰুজনাই পঞ্চদশ শতিকাতে এগৰাকী পৰিৱেশ বিজ্ঞানীৰ দৰেই মানুহক সচেতন কৰি তুলিছিল।

সম্প্রতি বিশ্বত Global Warming অর্থাৎ গোলকীয় উষ্ণতা বৃদ্ধিৰ কাৰণ হিচাপে প্রকৃতিৰ বিনন্দীয় পৰিৱেশ বিনষ্টকৰণ বুলি সকলোৱে স্বীকাৰ কৰিছে। শংকৰদেৱে সেই কথা তেতিয়াই চিন্তা কৰিছিল। তেওঁৰ মন মগজুত তেতিয়াই ক্রিয়া কৰিছিল। সেয়ে তেওঁ এক প্রাকৃতিক সেউজ বাতাবৰণৰ পৰিৱেশ গঢ়ি তুলিবলৈ গছ-গছনি ৰোপণ কৰাৰ

লগতে তেওঁৰ সাহিত্যৰাজিৰ মাজেৰেও ইয়াৰ সুমধুৰ বৰ্ণনা কৰি পাঠকক উদ্বুদ্ধ কৰিছিল। তেওঁৰ 'দশম' পুথিৰ অন্তৰ্গত 'বৰ্ষা বৰ্ণন', 'শৰৎ বৰ্ণন' 'শ্রীকৃষ্ণৰ জন্ম', 'শ্রীকৃষ্ণৰ বনভোজলৈ গমন' আদি অধ্যায়বোৰত অসমৰ প্রাকৃতিক পৰিৱেশৰ জীৱন্ত আৰু সজীৱ চিত্রই পৰিৱেশ সচেতনতাৰ স্বাক্ষৰ বহন কৰিছে। তেওঁ ভৱিষ্যতৰ এক সেউজীয়া ধৰণীৰ প্রতি মানুহক সজাগ কৰি তুলিছে।

**৩.১ উপসংহাৰ ঃ**

গুৰুজনাই সত্র-নামঘৰ প্রতিষ্ঠা কৰি নামগোৱাৰ পৰা আৰম্ভ কৰি ভকত-বৈষ্ণৱসকলে পৰিধান কৰা পোছাক, মাহ-প্রসাদ বিতৰণ, বহা আসনলৈকে সকলোতে তেওঁৰ বিজ্ঞান মনস্কতা সাঙোৰ খাই আছে। ওপৰে ওপৰে চালে চকুত নপৰে যদিও সুঐভাৰে পর্যবেক্ষণ কৰিলে এইবোৰৰ মাজত ইমান উচ্চ পর্যায়ৰ বিজ্ঞান মনস্কতা সোমাই আছে, ভাৰিলে আচৰিত লাগে।

শংকৰদেৱৰ ধর্ম, আদর্শ পুৰামাত্রাই বিজ্ঞানভিত্তিক আৰু যুক্তিৰ ভিত্তিত প্রতিষ্ঠিত। ধর্ম প্রচাৰৰ উদ্দেশ্য ৰচিত সাহিত্য কর্মৰাজিত বিজ্ঞান মানসিকতাৰ প্রতিফলন ঘটিছে। জনস্বাস্থ্য সচেতনতা, প্রকৃতি আৰু পৰিৱেশ সচেতনতা সৃষ্টি কৰি আধ্যাত্মিক চিন্তা-চেতনাৰে জনসাধাৰণক উদ্বুদ্ধ কৰি তুলিছিল। পঞ্চদশ শতিকাতে গুৰুজনাই অশিক্ষিত জনসমাজত বোধগম্য হোৱাকৈ যি বিজ্ঞান মনস্কতা সৃষ্টিৰ বাবে সাহিত্য ৰচনা কৰিছিল, নামঘৰ প্রতিষ্ঠা কৰি যি আদর্শ দেখুৱাইছিল তাৰ প্রাসঙ্গিকতা আজিৰ সমাজৰ বাবে অনস্বীকার্য। ❑

**প্রসঙ্গটোকা ঃ**

১। বিৰিঞ্চি কুমাৰ বৰুৱা ঃ অসমীয়া ভাষা আৰু সংস্কৃতি, ১৯৮৮, পৃ. ৭৯
২। জগদীন্দ্র ৰায়চৌধুৰী ঃ বাৰেক কৰোহে প্রণাম, ২০২১, পৃ. ৭৪
৩। উক্ত গ্রন্থ, পৃ. ৭৫
৪। উক্ত গ্রন্থ, পৃ. ৭৬

**সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ**

দেৱগোস্বামী, নাৰায়ণ চন্দ্র ঃ সত্রীয়া সংস্কৃতিৰ স্বর্ণৰেখা, লয়ার্ছ বুক ষ্টল, গুৱাহাটী, প্রথম প্রকাশ, ১৯৮৪
দেৱগোস্বামী, পীতাম্বৰঃ প্রতিভা ভাস্কৰ শ্রীমন্ত শংকৰদেৱ, এ. কে. প্রকাশন, ২০০৩
বৰুৱা, বিৰিঞ্চি কুমাৰ ঃ অসমীয়া ভাষা আৰু সংস্কৃতি, জার্ণাল এম্পৰিয়াম, নলবাৰী, ১৯৮৮
ৰায়চৌধুৰী, জগদীন্দ্র ঃ বাৰেক কৰোহো প্রণাম, চন্দ্র প্রকাশ, গুৱাহাটী, ২০২১
শইকীয়া, সংগীতা (সম্পা.) ঃ শ্রীমন্ত শংকৰদেৱ আৰু তেওঁৰ সময়, মিতালী অফছেট প্রিন্টার্ছ, গুৱাহাটী, ২০২১

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

# অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটক ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

উপাসনা বৰা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়
৭০০২০৪৯৮১০
ubora0603@gmail.com

**সংক্ষিপ্ত-সাৰ ঃ**

বিংশ শতিকাৰ শেষার্ধ (১৯৫১-২০০০) ৰ এগৰাকী উল্লেখযোগ্য নাট্যকাৰ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে অসমীয়া নাট্য জগতলৈ বৰণীয় অৱদান আগবঢ়াইছে। মূলতঃ অনাতাঁৰ নাট্যকাৰ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে ১৯৫৯ চনত আকাশবাণী গুৱাহাটী কেন্দ্রত যোগদান কৰাৰ পাছৰ পৰা বর্তমান সময়লৈকে অর্ধশতাধিকতকৈও অধিক নাটক ৰচনা কৰিছে। তেখেতে অসমীয়া সমাজ জীৱন, অসমৰ বিভিন্ন ঐতিহাসিক পৰিঘটনা, ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্রাম আদিক বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ বহুকেইখন মৌলিক নাটক ৰচনা কৰাৰ লগতে কেইবাখনো নাটক আন সাহিত্যিক পাঠ যেনে কবিতা, নাটক, উপন্যাস আদিৰ পৰা অভিযোজনা কৰিছে। তেখেতে মৌলিকভাৱে ৰচনা কৰা নাটকসমূহৰ লগতে এই অভিযোজিত নাট্যপাঠসমূহৰ সাহিত্যিক মূল্য অপৰিসীম আৰু অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিভংগীৰে অভিযোজিত নাট্যপাঠসমূহ আলোচনা কৰাৰ থল নিশ্চিতভাৱে আছে। "অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটকঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীর্ষক এই আলোচনা-পত্রত অভিযোজনা তত্ত্বৰ আধাৰত আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটকৰ বিশ্লেষণৰ চেষ্টা কৰা হ'ব আৰু এইক্ষেত্রত আৰতি দাস বৈৰাগীৰ দুখন নাটক ক্রমে সূৰুযমুখীৰ স্বপ্ন, গৰমা কুঁৱৰী আৰু নির্মল ভকত আলোচনাৰ পৰিসৰৰ অন্তর্ভুক্ত কৰা হৈছে। নাট্যকাৰ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে অসমীয়া সাহিত্যৰ অন্যতম প্রতিষ্ঠিত সাহিত্যিক নৰকান্ত বৰুৱা আৰু ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ উপন্যাস ক্রমে গৰমা কুঁৱৰী আৰু নির্মল ভকত একে নামেৰেই অনাতাঁৰ নাট্যৰূপ প্রদান কৰিছে। বুৰঞ্জীমূলক, ঐতিহাসিক আৰু সামাজিক বিষয়ক আলম হিচাপে লৈ ৰচিত আটাইকেইখন উপন্যাসে অসমৰ সামাজিক, ঐতিহাসিক জীৱনৰ একোখন চিত্র দাঙি ধৰিছে। অভিযোজিত পাঠকেইটাতো আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে এই বৈশিষ্ট্য অক্ষুণ্ণ ৰাখিছে। কিন্তু নির্দিষ্ট মাধ্যমটোৰ প্রয়োজন অনুসৰি কোনো কোনো ক্ষেত্রত পৰিৱর্তন কৰিছে। উপন্যাসকেইখনৰ উচ্চমানৰ সাহিত্যিক মূল্যৰ দৰেই অভিযোজিত ৰূপটোৰো সাহিত্যিক মানদণ্ড উচ্চ পর্যায়ৰ। নাটক যিহেতু পৰিৱেশ্য কলা আৰু নাটকৰ ক্ষেত্রত সাহিত্যিক পাঠৰ লগতে পৰিৱেশন পাঠ একোটাও পোৱা যায়। এই আলোচনা পত্রত নির্বাচিত নাটককেইখনৰ সাহিত্যিক পাঠসমূহ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায়ত আলোচনা কৰা হ'ব।

**বীজ শব্দ ঃ**

অভিযোজনা, নাটক, উপন্যাস, আৰতি দাস বৈৰাগী, সাহিত্যিক পাঠ, নাট্যৰূপ।

**প্রস্তাৱনা ঃ**

অর্ধশতাধিক নাটক ৰচনাৰে অসমীয়া নাট্য সাহিত্যত এগৰাকী আগশাৰীৰ নাট্যকাৰ হিচাপে পৰিচিতি লাভ কৰা নাট্যকাৰ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে অসমীয়া নাট্য জগতলৈ ৰৰণীয় অৱদান আগবঢ়াইছে। যিসময়ত সামগ্রিকভাৱে অসমৰ নাট্য সাহিত্যত নাৰী নাট্যকাৰৰ সংখ্যা অতি নগণ্য আছিল, সেইখিনি সময়তে আৰতি দাস বৈৰাগী নাট্যকাৰ হিচাপে অসমৰ অনাতাঁৰ নাটকৰ ক্ষেত্রখনত এটি পৰিচিত নাম হৈ পৰে। বিংশ শতিকাৰ ষাঠি দশকত সন্দিকৈ ছোৱালী মহাবিদ্যালয়ত পঢ়ি থকা সময়তে নাট্যচর্চা আৰম্ভ কৰা আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে *হে স্বর্গ বিদায়* নামেৰে এখন অনাতাঁৰ নাটক ৰচনা কৰি পুৰস্কৃত হয়, এই প্রয়াসৰ পাছৰ পৰাই নাট্যকাৰ হিচাপে তেখেতৰ সাহিত্যিক জীৱন আৰম্ভ হয় আৰু সাম্প্রতিক সময়লৈকে এই নাট্যচর্চাৰ ধাৰা অব্যাহত আছে। তেখেতে ১৯৫৯ চনত আকাশবাণী গুৱাহাটী কেন্দ্রত যোগদান কৰে আৰু নাটকৰ বিভাগতে নাট সম্পাদনাৰ দায়িত্ব গ্রহণ কৰে। তাৰ লগতে কেন্দ্রৰ পৰা প্রচাৰৰ বাবে নিয়মীয়াভাৱে হিন্দী আৰু বাংলা ভাষাৰ নাটকৰ অনুবাদ কৰিবলৈ লয়। তাৰ সমান্তৰালভাৱে তেখেতে নিজাববীয়াকৈ নাটক ৰচনাত মনোনিৱেশ কৰে। চাকৰিসূত্রেই তেখেতে নাট্যচর্চাৰ এক বিশেষ পৰিৱেশ লাভ কৰিছিল। তেখেতে অসমৰ বুৰঞ্জীমূলক, ঐতিহাসিক, সামাজিক ঘটনা-পৰিঘটনা, অসমৰ সমাজ জীৱন, ভাৰতৰ স্বাধীনতা সংগ্রাম আদিক বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ বহুকেইখন মৌলিক নাটক ৰচনা কৰিছে। স্বাধীনতা সংগ্রামক বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ ৰচনা কৰা নাটকৰ ভিতৰত কনকলতা, মালতীমেম আদি নাটক উল্লেখনীয়। হাস্যৰসপ্রধান নাটকো তেখেতে ৰচনা কৰিছে। তেনে নাটকৰ ভিতৰত ভাৰাতীয়া নাটকখনৰ নাম ল'ব পৰা যায়। মৌলিক নাটকৰ ৰচনাৰ লগতে তেখেতে প্রখ্যাত সাহিত্যিকৰ গল্প, কবিতা, উপন্যাসৰ নাট্যৰূপ প্রদান কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ কবিতা *ধনবৰ-ৰতনী* , গল্প *মুক্তি, ধোঁৱা-খোৱা* , ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতা *দেৱতাৰ গ্রাস*, ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ উপন্যাস *নির্মল* ভকত, লুম্মেৰ দাইৰ উপন্যাস *কইনাৰ মূল্য* , নৱকান্ত বৰুৱাৰ উপন্যাস *গৰমা কুঁৱৰী* আদিৰ নাট্যৰূপ প্রদান কৰিছে। তেখেতে ৰচনা কৰা নাটকসমূহৰ অধিকাংশই মৌলিক যদিও কিছুসংখ্যক নাটক আছিল প্রখ্যাত লেখকৰ গল্প-কবিতা-উপন্যাসৰ অভিযোজনা। মৌলিক নাটক ৰচনাৰ লগতে অভিযোজনাতো তেখেতে বিশেষ দক্ষতা প্রদর্শন কৰিছে। সাহিত্যিক দিশৰ পৰা এই অভিযোজিত পাঠসমূহৰ বিশেষ মূল্য আছে, লগতে ভাল অভিযোজনাৰ শাৰীতো এই নাট্যপাঠসমূহ ৰাখিব পাৰি। গতিকে অভিযোজনা তত্ত্বৰ আধাৰত এই নাট্যৰূপসমূহ আলোচনা কৰাৰ থল নিশ্চিতভাৱে আছে।

**অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ**

"অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটকঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীর্ষক গৱেষণা-পত্রখন অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল---

ক) অভিযোজনা তত্ত্বৰ আধাৰত আৰতি দাস বৈৰাগীৰ দ্বাৰা অভিযোজিত নাটকৰ সাহিত্যিক পাঠৰ বিশ্লেষণ কৰা।

খ) উপন্যাসৰ পৰা নাটকলৈ হোৱা অভিযোজনাৰ প্রকৃতি বিচাৰ কৰা।

গ) অসমীয়া সাহিত্যৰ নাটকৰ অভিযোজনাৰ ক্ষেত্রখনৰ গুৰুত্ব বিচাৰ তথা বৃদ্ধি কৰা।

**অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ**

আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে বহুকেইজন উল্লেখনীয় ঔপন্যাসিকৰ উপন্যাসৰ পৰা নাটক অভিযোজনা কৰিছে। এই গৱেষণা-পত্রখন প্রস্তুতৰ ক্ষেত্রত আৰতি দাস বৈৰাগীৰ দুখন নাটক ক্রমে *নির্মল* ভকত আৰু *গৰমা কুঁৱৰী*অধ্যয়নৰ পৰিসৰৰ অন্তর্গত কৰা হৈছে। এই নাটক দুখন ক্রমে ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ উপন্যাস *নির্মল* ভকত, নৱকান্ত বৰুৱাৰ উপন্যাস *গৰমা কুঁৱৰীৰ* অভিযোজনা। নাটক যিহেতু পৰিৱেশ্য কলা আৰু নাটকৰ ক্ষেত্রত সাহিত্যিক পাঠৰ লগতে পৰিৱেশন পাঠ একোটাও পোৱা যায়। এই আলোচনা পত্রত নির্বাচিত নাটককেইখনৰ সাহিত্যিক পাঠসমূহৰহে আলোচনা কৰা হৈছে।

**অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ**

**তথ্য আহৰণৰ পদ্ধতি ঃ** এই অধ্যয়নৰ বাবে মুখ্য আৰু গৌণ উৎসৰ সহায় লোৱা হৈছে ।

**তথ্য বিশ্লেষণৰ পদ্ধতি ঃ** এই অধ্যয়নৰ বাবে

বিশ্লেষণাত্মক, বর্ণনাত্মক আৰু তুলনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

**তাত্ত্বিক আধাৰ** ঃ এই গৱেষণা পত্ৰৰ তাত্ত্বিক আধাৰ হৈছে অভিযোজনা তত্ত্ব। কোনো এক সাহিত্যিক কৰ্মক এটা ৰূপ বা মাধ্যমৰ পৰা আন এটা ৰূপত উপস্থাপন কৰাৰ যি প্ৰক্ৰিয়া, সেই প্ৰক্ৰিয়াক সাহিত্যিক ক্ষেত্ৰত অভিযোজনা বুলি ক'ব পৰা যায়। সাহিত্যত অভিযোজনা হৈছে এক সৃষ্টিশীল কার্য যাৰ বাবে মূল উৎস আৰু নতুন মাধ্যম, দুয়োটাৰে সকলো বৈশিষ্ট্যৰ তথা সীমাবদ্ধতা সম্পৰ্কীয় জ্ঞান থকাটো প্ৰয়োজনীয়। লিণ্ডা হাডচনৰ মতে "অভিযোজনা হ'ল পুনৰাবৃত্তি, কিন্তু প্ৰতিলিপিবিহীন পুনৰাবৃত্তি।" (Hutcheon 7)। তেখেতৰ মতে অভিযোজনাই এক নতুন সৃষ্টিক নিৰ্দেশ কৰে আৰু এইক্ষেত্ৰত মূল আৰু অভিযোজিত দুয়োটা পাঠেই সমান গুৰুত্বপূৰ্ণ বুলি মত প্ৰকাশ কৰিছে। সাহিত্যিক বিধাৰূপে নাটকৰ অভিযোজনাও সাহিত্যিক অভিযোজনাৰে ভিতৰুৱা। নাটকৰ অভিযোজনাত বিভিন্ন সাহিত্যিক পাঠ নাটকীয় পাঠলৈ ৰূপান্তৰিত কৰা হয় আৰু এইক্ষেত্ৰত মূল পাঠৰ কাহিনী, চৰিত্ৰ আদি নতুন মাধ্যমটোৰ লগত খাপ খোৱাকৈ পৰিৱৰ্তন কৰা হয়। অভিযোজনা তত্ত্বই এই ৰূপান্তৰৰ অন্তৰালৰ বিভিন্ন দিশ পৰ্যালোচনা কৰে।

**মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ**

আলোচনাৰ বাবে নিৰ্বাচিত প্ৰথমখন নাটক হ'ল *নিৰ্মল ভকত*। আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে উপন্যাসৰ পৰা কৰা অভিযোজনাৰ ভিতৰত *নিৰ্মল ভকত* এখন উল্লেখনীয় নাটক। উপন্যাস সম্ৰাট ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ উপন্যাস *নিৰ্মল ভকত* ৰ নাট্যৰূপ প্ৰদানৰ ক্ষেত্ৰত আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে মূল কাহিনী একে ৰাখিছে যদিও মাধ্যমগত সীমাবদ্ধতাৰ বাবে মূলৰ কিছু কাহিনী বাদ দিছে আৰু কিছু চৰিত্ৰ, পৰিস্থিতি সংযোগ কৰিছে। মূল পাঠ অৰ্থাৎ উপন্যাসখনৰ যি সুৰ, সেই সুৰেই অভিযোজিত ৰূপটোতো দেখিবলৈ পোৱা যায়। অভিযোজনা অধ্যয়নৰ লগত জড়িত বিশেষজ্ঞ জুলি চেণ্ডাৰৰ মতে অভিযোজনাৰ লক্ষ্য হৈছে মূল বা মৌলিক ৰচনা বা কৰ্মক সংৰক্ষণ কৰা। অভিযোজনাৰ ক্ষেত্ৰত মাধ্যমগত ভিন্নতাৰ বাবে বা কোনো নতুন সাংস্কৃতিক বা অন্য প্ৰসংগৰ সৈতে খাপ খোৱাবৰ বাবে কিছু ক্ষেত্ৰত পৰিৱৰ্তন কৰা হয় যদিও অভিযোজনাৰ মূল লক্ষ্য মূল পাঠৰ অন্তৰ্নিহিত সুৰক প্ৰত্যাহ্বান জনোৱা নহয়, তাক জীয়াই ৰখা বা পুনৰ্জীৱিত কৰাহে। তেখেতে অভিযোজনাৰ সমান্তৰালভাৱে এক নতুন ধাৰণাৰ উল্লেখ কৰিছে, সেয়া হৈছে- এপ্ৰ'প্ৰিয়েচন। যাৰ লক্ষ্য মূল কৰ্মৰ অন্তৰ্নিহিত সুৰক প্ৰত্যাহ্বান জনোৱা আৰু নতুন ব্যাখ্যাৰে উপস্থাপন কৰা। (Figueiredo 13)। *নিৰ্মল ভকত* উপন্যাসৰ নাট্যৰূপটোতো মূল সুৰৰ প্ৰতি প্ৰত্যাহ্বান দেখিবলৈ পোৱা নাযায়। গতিকে এই ৰূপান্তৰ প্ৰকৃতাৰ্থতেই এক অভিযোজনা।

*নিৰ্মল ভকতৰ* অভিযোজনাক এক যথাযথ বা বিশ্বাসযোগ্য অভিযোজনা বুলি ক'ব পৰা যায়। *নিৰ্মল ভকত* উপন্যাসখন মানৱ দ্বিতীয় আক্ৰমণৰ ঘটনাৰ পটভূমিত ৰচিত। একে নামেৰে নাট্যৰূপ প্ৰদান কৰা নাট্যকাৰ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে নাটকখনতো পটভূমি একে ৰাখিছে, কিন্তু নিৰ্মল আৰু ৰূপহী চৰিত্ৰ দুটাৰ প্ৰেম কাহিনীক অধিক প্ৰাধান্য দিয়া পৰিলক্ষিত হৈছে। তেখেতে নাটকখনৰ কাহিনী, চৰিত্ৰ, অন্তৰ্নিহিত সুৰ উপন্যাসখনৰ ওচৰ চপা কৰি ৰাখিবৰ যত্ন কৰিছে আৰু অভিযোজিত ৰূপত মূল পাঠৰ কাহিনীৰ অনুক্ৰমিক গতিশীলতা ভংগ কৰা নাই।

অভিযোজনাৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্বস্ততাৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিব লগা হয়। মূল পাঠৰ প্লট আৰু চৰিত্ৰ আদিৰ প্ৰতি বিশ্বস্ততা বজাই ৰাখিও মাধ্যমগত বা অন্য সীমাবদ্ধতাৰ বাবে কেতিয়াবা কোনো দৃশ্য বা উপকাহিনী বাদ দিব লগাও হ'ব পাৰে, বা কেতিয়াবা সংযোগ কৰিব লগাও হ'ব পাৰে।। ব্ৰায়ান মেকফাৰ্লেনে *Novel to Film: An Introduction to the Theory of Adaptation-* ত যুক্তি দিছে যে এনেধৰণে বাদ দিয়া আৰু পৰিৱৰ্তন প্ৰতি কৰা প্ৰক্ৰিয়াটো এক ব্যৱহাৰিক প্ৰয়োজনীয়তা। তেখেতৰ মতে "The process of adaptation involves a series of compromises, some of which are essential if the adaptation is to be coherent in its new form" (McFarlane 20)। মেকফাৰ্লেনৰ দৃষ্টিভংগীয়ে অভিযোজনাৰ প্ৰায়োগিক দিশসমূহক উজ্জল কৰি তুলিছে। আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে *নিৰ্মল ভকতৰ* অভিযোজনাত মাধ্যম উপযোগী কৰি ৰাখিবলৈ কিছু কথা অভিযোজিত ৰূপত বাদ দিছে, বা কিছু কথা সংযোগ কৰিছে। উপন্যাসখনত মানৱ আক্ৰমণ তথা সেইসময়ৰ অসমৰ সমসাময়িক ৰাজনৈতিক পৰিস্থিতিৰ বৰ্ণনা, যুদ্ধ পৰৱৰ্তী অসমৰ সামগ্ৰিক পৰিস্থিতিৰ বৰ্ণনা আদি সন্নিবিষ্ট হৈছে। উপন্যাসখনৰ নৱম, দশম আৰু একাদশ অধ্যায়ত মানৱ আক্ৰমণৰ কাহিনীৰেই সজোৱা হৈছে। তাৰ বিপৰীতে নাট্যৰূপটোত এনেধৰণৰ বৰ্ণনা পোৱা নাযায়, কেৱল নিৰ্মল চৰিত্ৰটোৰ সংলাপ আৰু

এটা দৃশ্যৰ জৰিয়তে যুদ্ধৰ কিছু বৰ্ণনা আছে। কাৰণ নাটক হৈছে এক পৰিৱেশ্য কলা আৰু উপন্যাসৰ দৰে বৰ্ণনামূলক শৈলী নাটকৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰযোজ্য নহয়। উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিতেই মূল চৰিত্ৰ নিৰ্মল ভকতৰ চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্যৰ বৰ্ণনা আছে এনেদৰে--- "১৮১০ শক। দক্ষিণপাট সত্ৰৰ নিৰ্মল আতৈ এজন উদাসীন ভকত। বয়স এশ কি তাতোকৈ দুই-চাৰি বছৰ বেছি হ'লেও কম নহয়। যদিও ইমান বৃদ্ধ তথাপি আতৈৰ চলন-ফুৰণ শক্তি এতিয়াও অটুট। দোকমোকালিতে উঠি আতৈয়ে ব্ৰহ্মপুত্ৰত গা ধুই আহি হাতত এডাল লাখুটি লৈ সত্ৰৰ নামঘৰ আৰু মণিকুট প্ৰদক্ষিণ কৰিবলৈ ধৰিছে। লাখুটিত ভৰ দি লাহে লাহে খোজ কঢ়াৰ লগে লগে আতৈয়ে প্ৰফুল্ল মনেৰে, সুৰলা মাতেৰে আৰু মিঠা সুৰেৰে গায়-- পতিত পাৱন জানি নাৰায়ণ....")। (শৰ্মা ২৫৭ )। নাট্যৰূপটোত আতৈ আৰু ডাঙৰীয়া এই দুই চৰিত্ৰৰ কথোপকথনৰ মাজেৰে নাটকৰ আৰম্ভণিতেই উপন্যাসখনৰ দৰেই নিৰ্মল ভকতৰ চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্য ফুটাই তোলা হৈছে। এই উদ্দেশ্যেই নাটকখনত ডাঙৰীয়া চৰিত্ৰটোৰ লগত মূল পাঠত সন্নিবিষ্ট নথকা আতৈ চৰিত্ৰটোৰো সংযোজন কৰা হৈছে। এনেদৰে মূল আৰু অভিযোজিত দুয়োটা ৰূপতে আৰম্ভণিতেই নিৰ্মল ভকত চৰিত্ৰটোৰ চাৰিত্ৰিক গুণৰ সৈতে পাঠক তথা দৰ্শকক পৰিচিত কৰাই লোৱা হৈছে। দুয়োটা ৰূপতে একেই শান্ত-নিৰ্মল ৰূপত নিৰ্মল আতৈৰ চৰিত্ৰটো চিত্ৰিত কৰা হৈছে।

উপন্যাসৰ দ্বিতীয় অধ্যায়ৰ পৰা নিৰ্মল ভকতৰ মুখেৰে প্ৰথম পুৰুষত তেখেতৰ জীৱন কাহিনীৰ বৰ্ণনা আৰম্ভ হৈছে আৰু সমগ্ৰ উপন্যাসখনত এই প্ৰক্ৰিয়া অব্যাহত আছে। নাট্যৰূপটোত আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে প্ৰথম দৃশ্যৰ পৰিৱৰ্তনৰ পাছত নিৰ্মল ভকতৰ মুখৰ এটি সংলাপেৰে তেখেতৰ জীৱন কাহিনী কথন আৰম্ভ কৰিছে আৰু ফ্লেছবেক পদ্ধতিৰে ঘূৰি গৈছে নিৰ্মল ভকতৰ সৰু কালৰ এটি দৃশ্যলৈ। এই দৃশ্যতেই নাটকৰ মূল চৰিত্ৰৰ অন্যতম ৰূপহী চৰিত্ৰটোৰ প্ৰৱেশ ঘটিছে। খেল-ধেমালিৰ এটা দৃশ্যৰ বৰ্ণনা দিয়া হৈছে আৰু তাত খৰ্গ, অনিৰাম, লগতে ৰূপহী আৰু নিৰ্মলে দৰা-কইনাৰ খেল খেলিছে। খেলত নিৰ্ণয় হৈছে যে--- "ৰূপহীঃ হেৰ অনিৰাম। আজিৰ ধেমালিত নহ'লে নিৰ্মলেই মোক বিয়া কৰাওক দে। তই বাৰু মোক কাইলৈকো বিয়া কৰাবি।" (বৈৰাগী ৩০৬)।খেল-ধেমালিৰ দৃশ্যতো নাট্যৰূপটোত উপন্যাসখনৰ তুলনাত অধিক বিস্তাৰিত ৰূপত চিত্ৰিত কৰা হৈছে, কাৰণ নাটক এক ক্ৰিয়াশীল প্ৰক্ৰিয়া। এই দৃশ্যৰ জৰিয়তেই নিৰ্মল-ৰূপহীৰ ইটো-সিটোৰ প্ৰতি আকৰ্ষণ আৰু অনিৰাম চৰিত্ৰটোৰ ৰূপহীৰ প্ৰতি আকৰ্ষণৰ মনোভাৱ স্পষ্ট হৈছে। নাটক এখনত যিহেতু সংঘাত এক অন্যতম মূল উপাদান। আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে নাট্যৰূপটোত সংঘাত সৃষ্টি কৰিছে নিৰ্মল আৰু নিৰ্মলৰ মাকৰ মাজৰ কথোপকথনৰ জৰিয়তে, য'ত নিৰ্মলৰ মাক-দেউতাক যে নিৰ্মল আৰু ৰূপহীৰ প্ৰেমৰ সম্পৰ্কত সুখী নহয় আৰু দেউতাকে বংশৰ মৰ্যাদা ৰক্ষা কৰিবলৈ বেলেগ এখন গাঁৱৰ মেধিৰ ঘৰৰ ছোৱালী এজনী ঠিক কৰিছে সেই কথাও প্ৰকাশ পাইছে। ৰজনীকান্ত বৰদলৈয়ে উপন্যাসখনত মাকৰ চৰিত্ৰটোৰ উল্লেখ কৰা নাই। উপন্যাসৰ কাহিনী অনুসৰি চতুৰ্থ অধ্যায়ত নিৰ্মলে নিজেই প্ৰকাশ কৰিছে যে- "মই ৰূপহীক চেনেহ কৰাৰ কথা অলপ-অচৰপ গম পালেও বোপায়ে নিজৰ বংশ-গৌৰৱ ৰক্ষা কৰিবলৈ গৈ আন এখন গাঁৱৰ মেধিৰ ঘৰৰ ছোৱালী

এজনীলৈ জোৰণ পেলালে। মই এই কথা গম পাই বৰ বেজাৰ পালোঁ। কিন্তু বেজাৰ পালেনো কি হ'ব। দেউতাক মুখ ফুটাই একো কথাকে ক'ব নোৱাৰিছিলোঁ।" (শর্মা ২৬০)। উপন্যাসখনত নির্মল চৰিত্রটোৱে প্রতিবাদী ৰূপটো প্রদর্শন কৰা নাই। কিন্তু নাট্যৰূপটোত মাকৰ মুখৰ পৰা দেউতাকে বেলেগ ছোৱালী চোৱাৰ কথা গম পাই দুয়োৰে মাজত কথাৰ তর্কাতর্কি হৈছে। নির্মলে মাকৰ সন্মুখতে প্রদিবাদী হৈ দেখুৱাইছে। মূল আৰু অভিযোজিত দুয়োটা ৰূপতে এক গুৰুত্বপূর্ণ চৰিত্র হ'ল মাহীয়েকৰ চৰিত্রটো। দেউতাকে বেলেগ ছোৱালী চোৱাৰ কথা গম পাই নির্মলে ৰূপহীক পলোৱাই নি মাহীয়েকৰ ঘৰত ৰাখিছে আৰু মাহীয়েকে দুয়োৰে বিয়াৰ ক্ষেত্রত মধ্যস্থতাকাৰীৰ ভূমিকাত অৱতীর্ণ হৈছে। নাট্যৰূপটোত এটা দৃশ্যত নির্মলৰ মাক-দেউতাক আৰু মাহীয়েক-তেওঁলোক তিনিজনৰ মুখৰ সংলাপৰ মাজেৰে এই দিশটো প্রকাশ পাইছে। উপন্যাসখনত নির্মলৰ মাক-দেউতাকৰ সৈতে নির্মলৰ মাহীয়েকৰ কথা-বতৰাৰ কোনোধৰণৰ উল্লেখ নাই। মাধ্যমে দাবী কৰা প্রয়োজনীয়তাৰ বাবেই এনেধৰণৰ সংলাপ সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে বুলি ক'ব পৰা যায়। উপন্যাসখনত নির্মল ভকতে নিজেই কাহিনীৰ বর্ণনাৰ মাজতে মাহীয়েকৰ হস্তক্ষেপত নির্মল-ৰূপহীৰ বিয়া হোৱাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে।

নাট্যৰূপটোত নির্মলৰ মুখৰ সংলাপৰ মাজেৰে একো-একেটা ঘটনাৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছে আৰু ফ্লেচবেক পদ্ধতিৰ জৰিয়তে ঘটনাটোৰ সামগ্রিক পৰিৱেশ চিত্রিত হৈছে। উপন্যাস যিহেতু বর্ণনামূলক, নির্মল চৰিত্রটোৱেই প্রথম পুৰুষত আটাইবোৰ ঘটনাৰ বর্ণনা উপন্যাসখনত কৰিছে। তেখেত অতীতলৈ ঘূৰি গৈছে আৰু পুনৰ ডাঙৰীয়াজনৰ সৈতে বর্তমানলৈ আহি কথা পাতিছে। মূল-অভিযোজিত দুয়োটা ৰূপেই অতীত আৰু বর্তমানৰ সামঞ্জস্য ৰক্ষাৰ মাজেৰে আগবাঢ়িছে। যুদ্ধৰ আঁৰৰ তথা আভ্যন্তৰৰ প্রায় সকলো দিশৰ বর্ণনা উপন্যাসখনত আছে। কিন্তু নাট্যৰূপ এটাত যুদ্ধৰ আদ্যোপান্ত বর্ণনাৰ অৱকাশ নাথাকে। নাটকত চৰিত্রৰ সংলাপ, কার্যকলাপ, চৰিত্রৰ মুখৰ অভিব্যক্তি, সংগীত, সাজ-পোছাক, পোহৰ, মঞ্চসজ্জা আদিৰ মাজেৰেই পৰিস্থিতি বর্ণনা কৰা হয় ।নাট্যৰূপটোত ফ্লেচবেক পদ্ধতিৰ জৰিয়তে অতীতলৈ ঘূৰি গৈছে আৰু মানৰ আক্রমণৰ পৰিৱেশ বর্ণনাৰ বাবে দুজন ৰণুৱা আৰু নির্মলৰ মাজৰ সংলাপ দিয়া হৈছে। উপন্যাসখনত ৰণুৱাৰ উল্লেখ নাই। উপন্যাসখনত মানৰ আক্রমণৰ পৰৱর্তী সময়ত অসমৰ দুখলগা অৱস্থাৰ বর্ণনাও কৰা হৈছে। নির্মলৰ যুদ্ধত অংশগ্রহণ, অসমলৈ পুনৰাগমন, অনিৰামৰ সৈতে ৰূপহীৰ বিয়া, অনিৰাম-ৰূপহীৰ সন্তানৰ সৈতে নির্মলৰ মুখামুখি আদি উপন্যাসৰ দৰেই নাট্যৰূপটোত একে ৰখা হৈছে। অনিৰামৰ সৈতে ৰূপহীৰ সুখৰ সংসাৰ দেখি দর্শক বা পাঠক বা শ্রৱণ কৰোঁতাজনে যাতে নির্মলৰ মানসিক পৰিস্থিতি বুজিব পাৰে, নির্মলৰ দুখত দুখী হ'ব পাৰে, তাৰ বাবে অনিৰাম-ৰূপহীৰ পুত্রসন্তানৰ সৈ উদাসীন ভকতৰ বেশ ধৰি যোৱা নির্মলৰ কথোপকথন সন্নিবিষ্ট কৰিছে। এই দৃশ্যত ৰূপহীয়েও নির্মলৰ সৈতে কথা পাতিছে। নাট্যৰূপটোত নির্মল ভকতৰ শেষৰ অৱস্থা প্রকাশ পাইছে নির্মলৰ শৱযাত্রাৰ দৃশ্যটিৰ মাজেৰে। ৰূপহীয়েও এই দৃশ্যতে নির্মল ভকতেই যে তাইৰ প্রাণৰ নির্মল সেই কথা গম পাইছে। নাট্যৰূপটোৰ এই দৃশ্যইও পাঠক-দর্শকৰ মনত এক সুকীয়া আৱেগৰ সৃষ্টি কৰিব পাৰে।

এইসকলোখিনি ৰূপান্তৰৰ নাট্যকাৰ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে মূলৰ প্রতি সম্পূর্ণ আনুগত্য ৰক্ষা কৰিয়ে কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

ন-ন চৰিত্রৰ সংযোজন *নির্মল ভকত* নাট্যৰূপটোত দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। উপন্যাসখনৰ পৰা লোৱা বিভিন্ন পৰিস্থিতিৰ উপস্থাপন বা কোনো চৰিত্রৰ চাৰিত্রিক বৈশিষ্ট্য প্রকাশ কৰিবলৈ, নাটকীয় সংঘাত আদি সৃষ্টি কৰিবলৈ আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে উপন্যাসত নথকা চৰিত্রৰ সংযোগ কৰিছে আৰু চৰিত্রসমূহৰ মুখত সংলাপ দিছে। নির্মল ভকত হৈছে এখন অনাতাঁৰ নাটক, মূলতঃ অনাতাঁৰ মাধ্যমৰ জৰিয়তে প্রচাৰৰ বাবে ৰচিত, সেয়ে চৰিত্রৰ সংলাপ, শব্দ-সংগীত আদি দিশত অধিক গুৰুত্ব দিয়া পৰিলক্ষিত হয়। যুদ্ধসুলভ পৰিস্থিতিৰ বাবে ৰণুৱাৰ সংলাপ, ৰণবাদ্যৰ শব্দ, জয় মান ৰজাৰ জয়, জয় সেনাপতি আলুমিঙিৰ জয় ধ্বনি, সৈন্যৰ উল্লাস, কিৰীলি আদি নাট্যৰূপটোত সংযোগ হৈছে। নাট্যৰূপত সন্নিবিষ্ট সংগীত সম্পর্কীয় নির্দেশনা অনুসৰি শব্দ-সংগীতৰ যোগেদি দৃশ্য পৰিৱর্তনৰ আভাস পোৱাৰ লগতে দৃশ্যটোৰ প্রকৃতি গম পোৱা গৈছে। যেনে যুদ্ধৰ পৰিৱেশত ৰণবাদ্যৰ শব্দ, সৈন্যৰ উল্লাস, কিৰীলি, মাহী চৰিত্রটোৰ আগমনৰ পূর্বে মাহীয়েকৰ কণ্ঠত নামৰ শব্দ, বিয়াৰ পৰিৱেশ বর্ণনাৰ বাবে বিয়া নাম, উৰুলিৰ জোকাৰ

ইত্যাদি। নির্মল ভকত এখন অনাতাঁৰ নাটক বাবে শব্দ সংগীতৰ ওপৰত অধিক গুৰুত্ব দিয়া হৈছে। যিহেতু মাধ্যমৰ পৰিৱৰ্তন হৈছে, এনেধৰণৰ পৰিৱৰ্তন নাট্যৰূপটোত লক্ষ্যণীয়।

আলোচনাৰ বাবে নির্বাচিত আন এখন নাটক হ'ল *গৰমা কুঁৱৰী*। নৱকান্ত বৰুৱাৰ উপন্যাস *গৰমা কুঁৱৰীক* একে নামেৰে আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে নাট্যৰূপ প্রদান কৰিছে। বুৰঞ্জীক আধাৰ কৰি উপন্যাসখন ৰচনা কৰা বুলি নৱকান্ত বৰুৱাই পাতনিতে উল্লেখ কৰাৰ লগতে বুৰঞ্জীৰ ঘটনাৰ সাল-সলনি কৰিছে বুলিও উল্লেখ কৰিছে। অভিযোজনা কৰিবলৈ যাওঁতেও নতুন নতুন চৰিত্র, পৰিস্থিতিৰ সংযোগ আদি দেখা পোৱা গৈছে। কিন্তু মূল কাহিনী অভিযোজনাত একে ৰখা হৈছে। জুলি চেণ্ডাৰৰ আগবঢ়োৱা তত্ত্বৰ ভিত্তিত ক'ব পৰা যায় যে এই অভিযোজনাত এপ্র'প্রিয়েচনৰ প্রয়োগ হোৱা নাই। ই এক অভিযোজনা আৰু এক বিশ্বাসযোগ্য অভিযোজনা ৰূপে অভিহিত কৰি পাৰি।

জিঅ'ফ্রি ৰেগনাৰে অভিযোজনাক তিনিটা ভাগত ভাগ কৰিছিল---

Transposition- Transposition হৈছে এনে এক অভিযোজনা, য'ত পোনপটীয়া অভিযোজনা কৰা হয়। এই ধৰণৰ অভিযোজনাৰ মূল উৎসৰ প্রতি সম্পূর্ণ বিশ্বস্ততা থাকে।

Commentary- এই ধৰণৰ অভিযোজনাত মূল পাঠটো অনুসৰণ কৰা হয়, মূল ভাৱটো একেই ৰাখি কোনো কোনো ঠাইত সংযোগ-বিয়োগ কৰা হয়।

Analogy- এই প্রকাৰৰ অভিযোজনা অতি শিথিলভাৱে মূল পাঠৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি কৰা হয়, আৰু এক স্বতন্ত্র শিল্পকর্ম ৰূপে গঢ়ি তোলা হয়। (Sanders 25)।

*গৰমা কুঁৱৰীৰ* অভিযোজনাক Commentary- বুলি ক'ব পৰা যায়। ইয়াত মূলভাৱ একে ৰাখি মাধ্যম উপযোগী কৰি তুলিবলৈ কোনো কথা বাদ দিছে আৰু কোনো ঘটনা সংযোগো কৰিছে।

আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে অভিযোজনা কৰোঁতে বিশ্বস্ত ৰূপত, মূলৰ প্রতি আনুগত্য ৰক্ষা কৰি মূলৰ কোনো কোনো কথা বাদ দিছে, বা নতুন কথাৰ সংযোগ কৰিছে। এইক্ষেত্রত লিণ্ডা হাডচনে কৈছিল যে- "অভিযোজনাই সৃষ্টি আৰু ব্যাখ্যা দুয়োটা ধাৰণাকে নির্দেশ কৰে। তেখেতৰ মতে বিশ্বস্ততা কেৱল প্রতিলিপিকৰণ নহয়, ইয়াত এটা প্রক্রিয়া জড়িত হৈ থাকে য'ত অভিযোজনা কৰাজনে উৎস সামগ্রীৰ পৰা অভিযোজিত পাঠক এনেধৰণে অভিযোজিত কৰে যাতে উৎস পাঠৰ দৃষ্টিভংগী, প্রসংগক ই প্রতিফলিত কৰে"। (Hutcheon 8)। আৰতি দাস বৈৰাগীয়েও অভিযোজনা কৰোঁতে নতুন দৃশ্য বা ঘটনাৰ সংযোগ কৰিছে যদিও মূল পাঠৰ আধাৰত, মূল পাঠৰ দৃষ্টিভংগীৰ কোনোধৰণৰ হানি নোহোৱাকৈ কৰিছে। উপন্যাসখন আৰম্ভ হৈছে চন্দ্রশেখৰ নামৰ চৰিত্রটোৰে নদীত বৰশী বাই থকাৰ দৃশ্যটোৰে। উপন্যাসখনৰ পাছলৈ এই চৰিত্রটোৰ বিশেষ ভূমিকা অৱশ্যে নাই। নাটৰূপটো আৰম্ভ হৈছে পোনপটীয়াকৈ কমতাপুৰৰ ৰজা দুর্লভনাৰায়ণৰ ৰাজকাৰেঙৰ দৃশ্যৰে। আৰম্ভণিতেই দুই নাৰী কণ্ঠৰ সংলাপৰ মাজেৰে গৌড় দেশৰ কুঁৱৰীৰ পৰিচয় আকর্ষণীয় ৰূপত দাঙি ধৰা হৈছে। উপন্যাসখনত প্রথম অধ্যায়ত চন্দ্রশেখৰৰ কথাই বর্ণনা কৰা হৈছে। আনহাতে চন্দ্রশেখৰ চৰিত্রটোৰ উল্লেখ নাট্যৰূপটোত এটা দৃশ্যতহে আছে। নাট্য ৰূপটোত ৰজা দুর্লভনাৰায়ণ আৰু গৌড় ৰাণী গৰমা কুঁৱৰীৰ কথোপকথনৰ মাজেৰে ৰাণীৰ হৰগৌৰী সংবাদৰ পাঠ শুনিবলৈ মন যোৱাৰ কথা প্রকাশ পাইছে আৰু সেই প্রসংগতহে পুৰোহিতৰ পুত্র চন্দ্রশেখৰৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছে। উপন্যাসখনৰ কাহিনী অনুসৰি গৰমা কুঁৱৰী আৰু চন্দ্রশেখৰৰ মাজত এক সম্পর্ক গঢ় লৈ উঠে আৰু ৰজা ৰ সমুখত ধৰা পৰে। উপন্যাসখনত কুঁৱৰীৰ চন্দ্রশেখৰৰ প্রতি থকা মনোভাৱ গৰমা কুঁৱৰীৰ স্বগতোক্তিৰ মাজেৰে এনেদৰে প্রকাশ পাইছে- "আজি হৰগৌৰীৰ বিবাহৰ অধ্যায়টো ব্রাহ্মণ কুমাৰ চন্দ্রশেখৰে আৰম্ভ কৰিছে, এখুজি-দুখুজিকৈ তায়ো যেন আগবাঢ়ি আহিছে শিৱৰ কাষলৈ।"(বৰুৱা ১৮)। নাট্যৰূপটোত কুঁৱৰীৰ এই মনোভাৱকে আধাৰ কৰি কুঁৱৰী আৰু চন্দ্রশেখৰৰ মাজত এটি ৰোমাণ্টিক দৃশ্য অৱতাৰণা কৰা হৈছে আৰু এই দৃশ্যতে ৰজাৰ সমুখত দুয়ো ধৰা পৰিছে। গৰমা কুঁৱৰী আৰু চন্দ্রশেখৰৰ ৰোমাণ্টিক দৃশটোৰ পূর্বে দুই নাৰীকণ্ঠৰ সংলাপৰ মাজেৰে দর্শক-পাঠকক এনেধৰণৰ কার্য ৰাজকাৰেঙত ৰজাৰ অজ্ঞাতে যে ঘটি আছে তাৰ আভাস দিছে। উপন্যাসখনত এনে কোনো নাৰী চৰিত্র বা কোনোধৰণৰ ৰোমাণ্টিক দৃশ্যৰ অৱতাৰণা কৰা হোৱা নাই। উপন্যাসত হৰিণ আৰু হৰিণী এহালৰ চিত্রকল্পৰ জৰিয়তে এনে দৃশ্যক চিত্রিত কৰা হৈছে, যাৰ বাবে উপন্যাসখনত এই দৃশ্য অধিক প্রভাৱশালী হৈছে। গৰমা কুঁৱৰী আৰু চন্দ্রশেখৰৰ সম্পর্ক পোহৰলৈ অহাৰ

পৰা গৰমা কুঁৱৰী দুর্লভনাৰায়ণৰ পৰিত্যক্তা কুঁৱৰী হোৰালৈ সকলো ঘটনাৰ পুংখানুপুংখ বর্ণনা উপন্যাসখনত আছে। গৰমা কুঁৱৰীৰ এই দুর্দশাৰ কথা জানি গৰমাৰ পিতৃ গৌড় বাদছাহে পুনৰ কমতা আক্রমণৰ যো-জাঁ কৰে। ককায়েক তুৰবকক কটকী ৰূপেও পঠায়। কিন্তু ৰজা দুর্লভনাৰায়ণ পলাই সাৰে। উপন্যাসখনৰ ষোল্ল অধ্যায়ত পৰা আহোম-কছাৰীৰ ৰণৰ বর্ণনা দিয়া হৈছে, তাৰে এখন ৰণৰ আহোম জয়ী হয়, কছাৰীক পশ্চিমলৈ ঠেলি দিয়ে আৰু ১৫৩১ চনৰ ৰণত ডিমাপুৰ আক্রমণ কৰি কছাৰী ৰজা ডেটচুঙক ৰজা পাতে। ৰজা হোৰাৰ পাছত ডেটচুঙে ৰাজবিদ্রোহৰ উদ্দেশ্যে সহায় বিচাৰি কমতালৈ আহি নির্বাসিত গৰমা কুঁৱৰীৰ কথা গম পায় আৰু কুঁৱৰীক ডিমাপুৰলৈ লৈ আহে নিজৰ ৰাণী কৰি। বুৰঞ্জীৰ এই কাহিনীকেই উপন্যাসখনত জীৱন্ত ৰূপ দিয়া হৈছে। নাট্যৰূপটোত ৰণৰ সৱিশেষ বর্ণনা নাই। গৌড় বাদছাহৰ উল্লেখো নাই। নাট্যৰূপ অনুসৰি কুঁৱৰীক নির্বাসন দিয়াৰ পাছত অৰণ্যৰ এক দৃশ্যৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছে। এই পৰিৱেশতে গৰমা কুঁৱৰীয়ে পুনৰ ৰাণী, লগতে ৰাজমাতা হোৰাৰ ইচ্ছা প্রকাশ পাইছে। তেওঁ কৈছে-- "মই ৰাণী হৈ আহিছিলোঁ। ৰাণী হৈ থাকিবই লাগিব। কিন্তু অকল ৰাণী হ'লেইতো নহ'ব। ৰাজমাতা হ'ব লাগিব। ...মোৰ সন্তান হ'ব লাগিব ৰাজবীর্যৰ। মই আকৌ ৰাণী হ'ব লাগিব।" (বৈৰাগী ২৭৭)। গৰমা কুঁৱৰী এইবাৰ ডেৰচুংফাৰ ৰাণী হ'ল আৰু ডেৰচুংফাৰ ঔৰসত জন্ম হ'ল মদনকুমাৰৰ। গৰমাই মালতীৰ আগত কৈছে--- "ইন্দ্র বদল হ'লেও শচী বদল নহয়। মোৰ ৰাজা বদল হৈছে। কিন্তু দেখিলি..মই ৰাণী হৈয়ে থাকিলোঁ।" (বৈৰাগী ২৭৮)। উপন্যাসখনতো এই কথাখিনি সদৃশ ৰূপত আছে। কিন্তু কমতালৈ কটকী ৰূপে অহা ককায়েক তুৰ্বকৰ হাতত এখন চিঠিতহে লিখি পঠাইছিল। মূল পাঠৰ কাহিনী অনুসৰি পুনৰ আহোমে কছাৰী ৰাজ্য আক্রমণ কৰিবলৈ আহে। আনফালে আকৌ গৰমা কুঁৱৰীক বিচাৰি গৌড় বাহিনীও আহে। ডেটচুং বিমোৰত পৰে। ৰাণী আৰু মদনকুমাৰৰ সৈতে নগৰৰ পৰা ওলাওতেই আহোম সেনাৰ হাতত ডেটচুঙৰ মৃত্যু হয়। আহোম দুৱলীয়া ফুকনৰ নেতৃত্বত যোৱা আহোম সৈন্যই দোলাত গৰমা কুঁৱৰীক নিজ ৰাজ্যলৈ লৈ যায়। নাট্যৰূপতো প্রায় সদৃশ ধৰণেই ঘটনাসমূহ দেখুওৱা হৈছে। কিন্তু নাট্যৰূপটোত গৰমা কুঁৱৰীও যুদ্ধলৈ সাজু হৈছে। এইবাৰ গৰমা কুঁৱৰী আহোম ৰজাৰ ৰাণী হয়। কিন্তু গৰমাই পুনৰ মাতৃ হ'বলৈ অনিচ্ছা প্রকাশ কৰে। পৰৱর্তী সময়ত কনচেং ৰৰপাত্রৰ সহায়ত মদনকুমাৰৰ ৰজাৰ পদ লাভ, অৱশেষত আহোম ৰজাৰ কন্যা মদনকুমাৰলৈ বিয়া দিয়া আদি সকলো পৰিঘটনা দুয়োটা ৰূপতে একে ৰখা হৈছে। কেৱল নাট্যৰূপৰ শেষৰ দৃশ্যত আহোম স্বর্গদেউ আৰু গৰমাৰ কথোপকথন সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে। উপন্যাসত এনে দৃশ্য নাই। চৰিত্রৰ ক্ষেত্রত চন্দ্রশেখৰৰ লগতে ককায়েক চন্দ্রভাল,ভায়েক দীননাথৰ চৰিত্রটোৰ উল্লেখ আছে। নাট্যৰূপটোত উল্লেখ নাই। গৰমা কুঁৱৰীৰ দাসী মালতী চৰিত্রটোৰ উল্লেখ দুয়োটা পাঠতে আছে। মালতী চৰিত্রটোৱে নাট্যৰূপটোত অধিক গুৰুত্ব পাইছে যেন ধাৰণা হয়। আন এগৰাকী দাসী বিশ্বদাসীৰ উল্লেখ নাট্যৰূপটোত নাই।

মাধ্যম উপযোগী কৰিবলৈ উপন্যাসখনৰ মূল মূল ঘটনাসমূহহে নাটকখনত উপস্থাপন কৰা হৈছে। ঘটনাসমূহৰ পটভূমিৰ ব্যাখ্যা নাট্যৰূপটোত নাই। উদাহৰণস্বৰূপে আহোম-কছাৰীৰ ৰণৰ পটভূমি সম্পর্কে অভিযোজিত ৰূপত নাই। চন্দ্রশেখৰ চৰিত্রটোৰ বিকাশো নাট্যৰূপটোত দেখা পোৱা নাযায়। নাটকত যিহেতু চৰিত্রৰ সংলাপ, কার্যকলাপৰ মাজেৰেই সকলো পৰিস্থিতি দর্শক-পাঠকৰ বোধগম্য হোৰাকৈ প্রদর্শন কৰিব লগা হয়। সেয়ে ৰাণী আৰু ৰজাৰ সংলাপৰ মাজেৰে হৰগৌৰী সংবাদৰ প্রসংগ অনা হৈছে , দুই নাৰীকণ্ঠৰ কথোপকথনৰ মাজেৰে গৰমা কুঁৱৰী আৰু চন্দ্রশেখৰৰ সম্পর্কৰ কথা ব্যক্ত কৰা হৈছে। কার্য-কাৰণৰ উপস্থাপনৰ অবিহনে কেইটামান দৃশ্যৰ অৱতাৰণা লক্ষ্য কৰা যায়। ডেৰচুংফাৰ কথা উপস্থাপনৰ পিছৰ দৃশ্যতে ডেৰচুংফাৰ ঔৰসত জন্ম পুতেক মদনকুমাৰ, গৰমা আৰু দাসী মালতীৰ এক দৃশ্য অৱতাৰণা কৰা হৈছে। ডেৰচুংফাৰ লগত গৰমাৰ সম্পর্ক কেনেকৈ স্থাপন হ'ল সেই সম্পর্কে সৱিশেষ নাই। নাট্যৰূপ এটাত অৱশ্যে সৱিশেষ চিত্রণ সম্ভৱ নহয় যদিও, চৰিত্রৰ কার্যকলাপ তথা সংলাপৰ জৰিয়তে এই সম্পর্কে পাঠক-দর্শকক জনোৱাৰ অৱকাশ আছিল। নাট্যৰূপটোত শব্দ-সংগীতৰ ভূমিকা অতি গুৰুত্বপূর্ণ। এইক্ষেত্রত লিণ্ডা হাডচনে কৈছিল যে "শব্দই মৌখিক বা দৃশ্যগত যিকোনো দিশক অধিক শক্তিশালী কৰি তুলিব পাৰে। (Hutcheon 23)। নাট্যৰূপটোত দৃশ্য সলনিৰ ক্ষেত্রত সংগীতৰেই সহায় লোৱা হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে নাট্যৰূপত সন্নিবিষ্ট নির্দেশনা অনুসৰি ৰণবাদ্যৰ শব্দেৰে যুদ্ধৰ আভাস দিয়া হৈছে, ৰোমাণ্টিক সংগীতেৰে চন্দ্রশেখৰ আৰু গৰমাৰ অন্তৰংগ মূহুর্তৰ কথা বুজোৱা হৈছে, বহু মানুহৰ সমাগম বুজাবলৈ মানুহৰ কোঢ়াল শব্দ দিয়া হৈছে ইত্যাদি।

**উপসংহাৰ ঃ**

অৰুণ শর্মাই আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটকৰ সম্পর্কত মন্তব্য প্রদান কৰি কৈছে যে- "আৰতি দাস বৈৰাগীৰ প্রতিখন নাটকতে এটি এটি সৰল আদর্শক দৃঢ়ভাৱে দাঙি ধৰাত নাটকসমূহে গুৰুত্ব আৰু প্রশংসা লাভ কৰিছে। প্রখ্যাত সাহিত্য ৰচনাৰ পৰা নাট্যৰূপলৈ অভিযোজনা কৰা যি বিশেষশৈলী সেই ক্ষেত্রতো তেখেতৰ দক্ষতা প্রশংসনীয়।" ( বৈৰাগী, পাতনি)। এই দুয়োখন নাটকৰ অভিযোজনাৰ ক্ষেত্রতো তেখেতৰ বিশেষ দক্ষতাৰ প্রকাশ ঘটিছে। "অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে আৰতি দাস বৈৰাগীৰ নাটকঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীর্ষক এই আলোচনা পত্রত আৰতি দাস বৈৰাগীৰ দুয়োখন নাটকৰ অভিযোজনা তত্ত্বৰ দৃষ্টিৰে আলোচনা কৰা হৈছে। নাট্যপাঠ এটাৰ সৈতে পৰিৱেশন পাঠ এটাও জড়িত হৈ থাকে, কিন্তু এই আলোচনা পত্রত পৰিৱেশন পাঠৰ আলোচনা কৰা হোৱা নাই। কেৱল সাহিত্যিক পাঠৰ আলোচনাহে সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে।

এই আলোচনাৰ পৰা তলৰ সিদ্ধান্তসমূহত উপনীত হ'ব পৰা যায়---

১. নির্বাচিত দুয়োটা পাঠৰ অভিযোজনা যথাযথ অথবা বিশ্বাসযোগ্য অভিযোজনা।

২. নির্বাচিত দুয়োটা পাঠৰ অভিযোজনা মূলৰ প্রতি আনুগত্য ৰক্ষা কৰি কৰিছে।

৩. আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে অভিযোজনা কৰোঁতে মূলপাঠৰ অন্তর্নিহিত সুৰক অভিযোজিত পাঠত প্রত্যাহ্বান জনোৱা নাই।

৪. নির্বাচিত দুয়োটা পাঠৰ অভিযোজনালৈ যদি লক্ষ্য কৰা যায় আৰতি দাস বৈৰাগীয়ে অভিযোজিত পাঠসমূহ মাধ্যম উপযোগী কৰিবলৈ যাওঁতে বিভিন্নধৰণৰ সংযোগ-বিয়োগ কৰিছে যদিও ই অভিযোজনাটো অস্বাভাৱিক কৰি তোলা নাই।

৫. বুৰঞ্জীমূলক, ঐতিহাসিক আৰু সামাজিক বিষয়ক আলম হিচাপে লৈ ৰচিত দুয়োখন উপন্যাসে অসমৰ সামাজিক, ঐতিহাসিক জীৱনৰ একোখন চিত্র দাঙি ধৰিছে। অভিযোজিত পাঠকেইটাতো আৰতি দাস বৈৰাগীযে এই বৈশিষ্ট্য অক্ষুণ্ণ ৰাখিছে। ❑

**প্রসংগ-সূত্র ঃ**


বৰুৱা, নৱকান্ত। *গৱমা কুঁৱৰী*। অসম প্রকাশন পৰিষদ, ২০০৫।

বৈৰাগী, আৰতি দাস। *আৰতি দাস বৈৰাগীৰ স্বনির্বাচিত নাটক*, প্রকাশক-ৰঞ্জিত দাস, ২০১৫।

শর্মা, গোবিন্দ প্রসাদ। *ৰজনীকান্ত বৰদলৈ ৰচনাৱলী*। অসম প্রকাশন পৰিষদ, ২০২০।

Figueiredo, Camila Augusta Pires De. "Some Theoretical Models of Adaptation Studies". *19th Century Revisited.* September,2018,https://www.researchgate.net/publication/327562051_Introduction_ Some_ Theoretical_ Models_for_Adaptation_Studies .

Hutcheon, Linda. *A Theory of Adaptation*. Routledge, 2006.

McFarlane, B. *Novel to Film: An Introduction to the Theory of Adaptation*. Clarendon Press, 1996.

Sanders, Julie. *Adaptation and Appropriation,* Routledge, 2016.

# लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2500 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होगा।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

## द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : .....

पदनाम : .....

पूरा पता : .....

: .....

ई-मेल : ..... मोबाइल : .....

RTGS का विवरण : .....

**सदस्यता शुल्क**

| *व्यक्तिगत* | | *संस्थागत* | |
|---|---|---|---|
| प्रति अंक | : रु. 100/- | प्रति अंक | : रु. 150/- |
| वार्षिक | : रु. 1000/- | वार्षिक | : रु. 1,500/- |
| आजीवन सदस्य | : रु. 10,000/- | | |

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary : Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No. : 551802010004619
Name of Bank & Branch : Union Bank of India, Hatigaon Chariali, Dispur-781038
IFS Code : UBIN0555185

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH-127/2025-2027 ❖ Date of Publication : 31st March, 2025 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

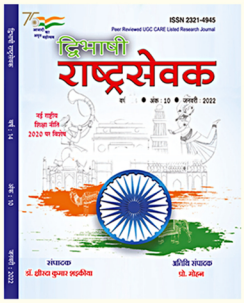

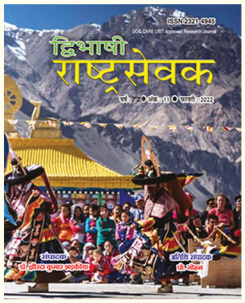

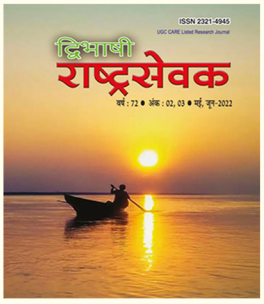

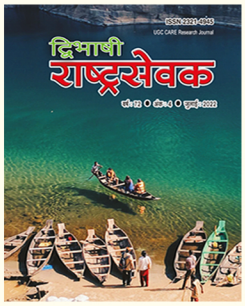

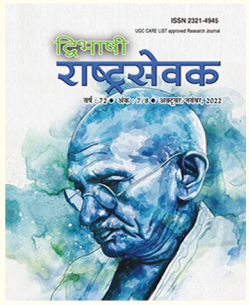

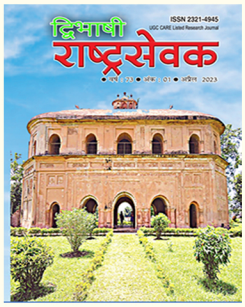

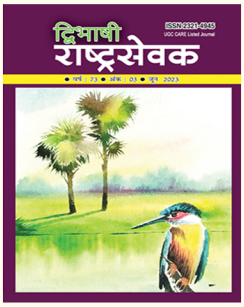

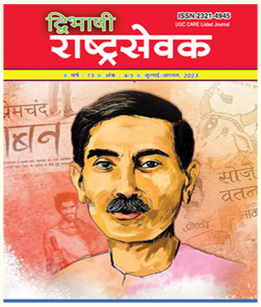

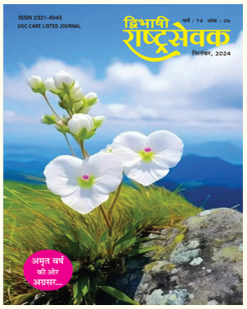

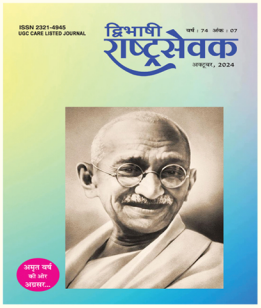

एक हृदय हो भारत जननी
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

*संपादकीय कार्यालय :*
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032
arpsguwahati.com ✉ rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380